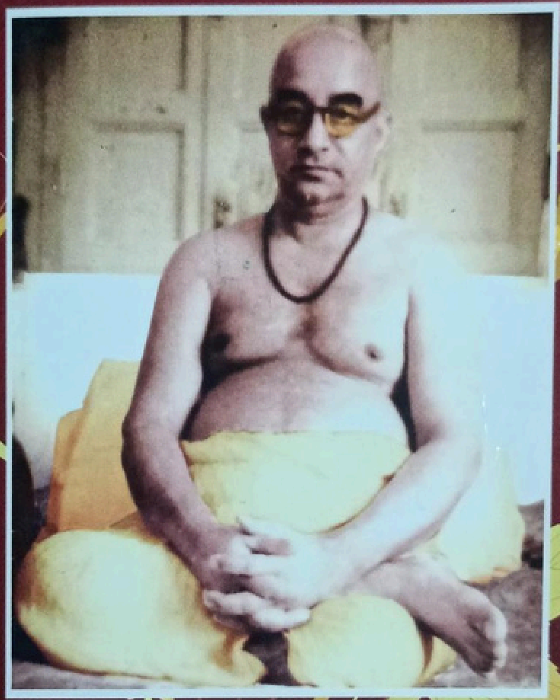


श्रीमद्भागवत रहस्य



प्रवक्ता

महर्षि मुक्त

श्रीमद्भागवत

रहस्य

महर्ष ि मुक्तानुभूतत साहहत्य प्रचारसममतत

आत्मर्वत् ् शोकं तरततं ं

महर्ष ि मुकुत

श्रीमद्भागवत रहस्य

प्रणेता : महर्ष िमुक्त

प्रकाशक : महर्ष िमुक्तानुभूतत साहहत्य प्रचार सममतत
केन्द्र दुगु ि(छ.ग.) पंजीयन क्रमांक 2093/94,
रायपुर (सवाधिकार सुरक्षित प्रकाशकािीन)

फोटोटाईप सेहटंग : नेचर ग्राफफक्स शांतत चौक, पुरानी बस्ती,
रायपुर (छ.ग.) मो.: 93022-30478

मुरक महावीर : आफसेट गीता नगर, चौबे कॉलोनी, रायपुर (छ.ग.)
मो.: 93036-08080

संस्करण : द्रवतीय

प्रतत : 1000 (एक हजार)

हदनांक : 19 जुलाई 2016

पुस्तक ममलने का पता- डॉ. सत्यानंद त्रिपाठी 61/152, बंविपारा,
रायपुर (छ.ग.) मो.: 99261-30014
3

प्रकाशन क्रमांक :

मूल्य : 150/-

श्रीमद्भागवत रहस्य

आख्यान सूची क्रमांक

आरती

आरती सद्‌गुरुदेव नमामी । पार ब्रह्म-प्रभु अन्द्तयामिी ।।
अगुण अपार अलख अर्वनाशी। अचल र्वमल प्रभु ुसब उरवासी ।।
तनगुणि तनर्वकिार सुखरासी । एक अरूप अलेख अनामी ।। 1 ।।

महहमा नेतत नेतत श्रुतत गावें । तनत्य तनरंजन सब बतलावें ।।
शेषे शारदा पार न पावें । जय सप्चचदानंद अमभरामी ।। 211

वचन फकरण तम मोह र्वनाशक । ज्ञान सूय िमाया के शासक ।।
हदव्य दृष्ट के परम प्रकाशक । ब्रह्माहदक सुर सेव्य नमामी ।। 3 ।।

जब तक कृपा न तुम प्रभु करते। र्वधि हररहर क्या भव से तरते े।।
असर्वचारर गुरु भप्क्त जो करते। ममलतेराम उन्द्हें सुखिामी ।। 4 ।।

गुरूवर चरण कमल की छाया। करती दूरू ताप िय माया ।।
जब तक पूण िन होवेदाया। ममलत नहीं ंमशव अन्द्तयामिी ।। 5 ।।

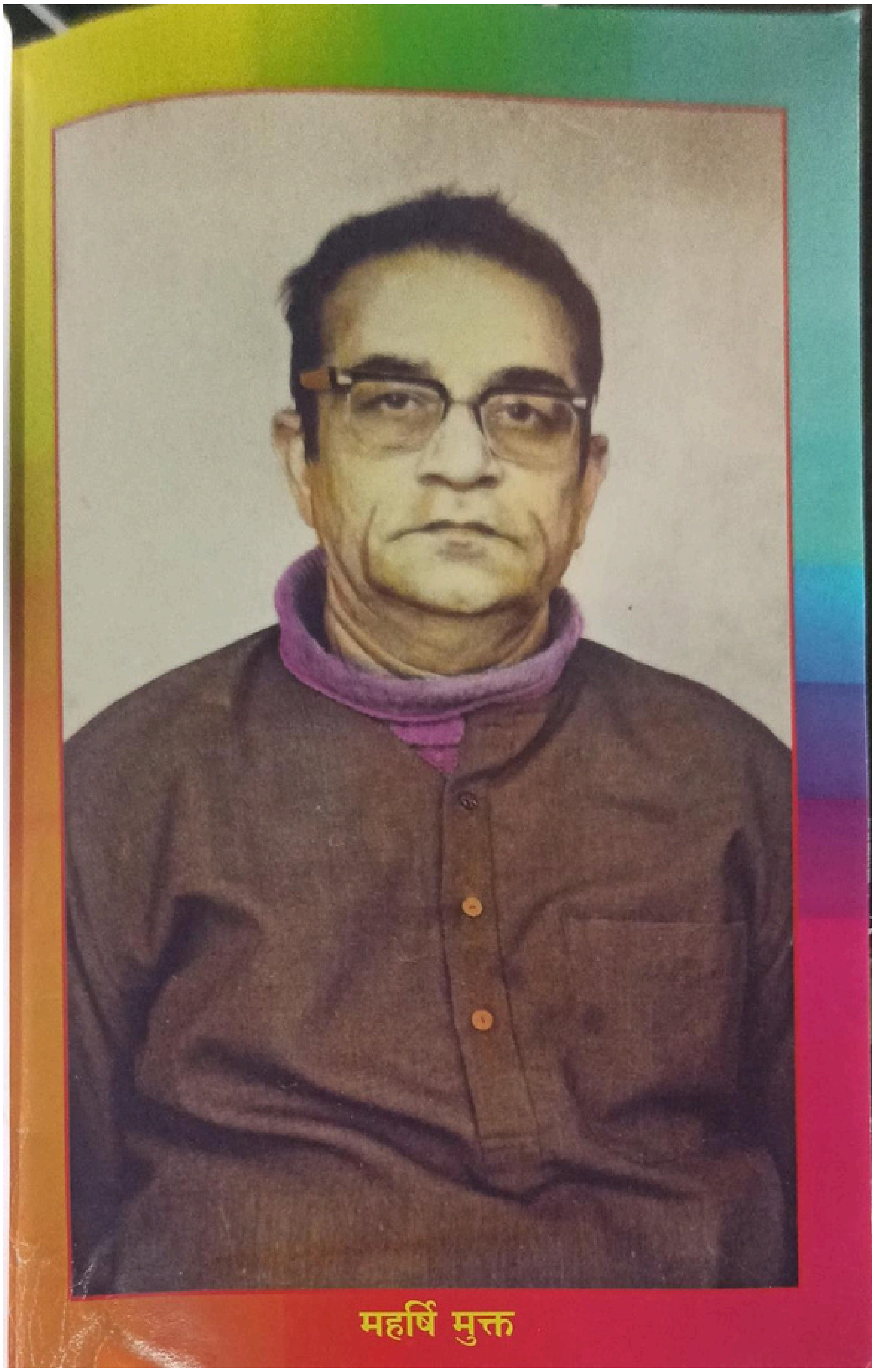
भप्क्त ज्ञान वैराग्य तनयम के। रूप सकल इंहरय संयम के ।।
भूषण शम दम पंच सुयम के । श्रोत्रिय ब्रह्मतनष्ठ मम स्वामी ।। 6 ।।

जीवन िन मंजुल तनज जन के। अंकुश मद मतंग जन मन के ।।
शुधुच पथ परमारथ पधथकन के। इक रस आनंद रूप नमामी ।। 7 ।।

ॐ पूणमिदः पूणमिमदं पूणात्ि्पूणमिुदचयते।
पूणस्यि पूणमिादाय पूणमिेवावमशष्यते।।

ॐ शाप्न्द्तः शाप्न्द्तः शाप्न्द्तः

।। बोलो सद्गुरुदेव भगवान की जय ।।


महर्षि मुक्त

श्रीमद्भागवत रहस्य

महर्ष िमुक्त द्वारा श्रीमद्भागवत परमहंस संहहता के साक्षित्व में सततहदवसीय अध्यात्म तनरूपण हदनांक 8 फरवरी 1969 से 24 फरवरी 1969 तक स्थान- झंडापुर, पोस्ट-त्रबहार, तहसील-कुंडा, प्जला-प्रतापगढ़ (उ.प्र.) पर अिारत यह अनुपमेय और र्वलिण कृतत महर्ष िमुक्तानुभूतत साहहत्य प्रचार सममतत की अन्द्यतम उपलप्धि है।

भागवत का अथ िहोता है-भगवान। चूँफक इसमें भागवत के रहस्यों का उद्घाटन फकया गया है, इसमलए प्रस्तुत साहहत्य को श्रीमद् भागवत रहस्य नाम से अलंकृत फकया गया है। भगवान के चार रहस्य हैं

यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणु कर्कमः ।
तथैव तत्ववववज्ञानर्स्तु ते ेर्दनुग्रहात् ्।।

यावानहं (म ैंजैसा हूँ) - भगवान। म ैंजैसा हूँ का भाव, म ैंजैसा हूँ का रूप, म ैंजैसा हूँ का गुण और म ैंजैसा हूँ का कम।ि ये चार रहस्य-भगवान-के। इन रहस्यों को उजागर करना मसवाय संतों के अन्द्य फकसी र्वद्वान या सिु संन्द्यासी के वश की बात नहीं है। इन रहस्यों का सम्यक् रूप से अपरोि अनुभूतत इस पुस्तक का प्राण है, इसमलए यह चेतन साहहत्य है।

चतुःश्लोकी भागवत के माध्यम से इस तरह का तनरुपण पहले कभी ना हुआ है और ना ही आगे होनेकी संभावना है। इसके अततररक्त इसमें भगवान नारद एवं राजा प्राचीनबहह िसंवाद पुरञ्जनोपाख्यान, गजेन्द्रोपाख्यान, ब्रह्मा स्तुतत, उद्वि गोपी संवाद, हंसोपाख्यान आहद प्रसंगों के माध्यम से जीव-ईश्वर की एकता, कम,ि उपासना, ज्ञान, भप्क्त, मन-माया-जगत आहद का चारों प्रमाणों से संमसद्तिनरुपण की अलौफकक छटा देखते ही बनती है जो फक कहीं और देखने-सुनने में नहीं आता। तनरुपण शैली की सहजता एवंअकाट्य प्रमाणों से वेदान्द्त जैसे प्क्लष्ट र्वषय भी जनसािारण को हृदयंगम हो जाता है। यह प्रवक्ता का तपोबल एवं ं संयम है। यह एक चमत्कार है।

म ैंइस सांगोपांग अनुपम कृतत के प्रवक्ता महर्ष िमुक्त के संबंि में इतना ही कहूँगा फक- 'आप प्रकट भये र्वधि न बनाये।' ये अतनकेत अविूत थे। फकसी पंथ, सम्प्रदाय से सवथिा तनमलतित। अर्वरल रूप से सत्य के सावभिौम प्रचारक महर्ष िमुक्त की सािना-तपस्या का सािी, इनका साहहत्य ही है, जीवन पयन्द्ति, भेद बुद्धि का त्याग करके सत्य का ही प्रचार-प्रसार फकये। 'वसुिैव कुटुम्बकम्' ् की िारणा को िारण करके अपनेमलये एक घास-फूस की कुहटया भी नहीं बनाई उन्द्होंने।

वेकहा करते थे िफक फकीरी हमारी जागीर है और हमेशा हमारी मुट्ठी में है। इनका र्वश्वास था फक पंथ, सम्प्रदाय में आने िसे व्यप्क्त की स्वतंतिा तछन जाती है और वह अध्यात्म से कोसों दूरू हो जाता है।

आज भी इनके लाखों की संख्या में समर्पति अनुयायी हैं लेफकन सभी पंथ, सम्प्रदाय से अलग-थलग एकदम स्वतंि।

इनकी कृततयों में मुक्तानुभव भजन माला, भजन मुक्त लहरी, मुक्त दोहावली, मुक्तोद्गार, पैगाम-ए-मुक्त आहद मौमलक रचनाय ंहैं। इन सभी रचनाओं में महर्ष ि मुक्त सूिावली अनुपम एवं अद्र्वतीय कृतत है। इसमें उपतनषद्, श्रीमद्भागवत परमहंस संहहता, श्रीमद्भागवत गीता एवंरामायण के तत्वपरक आध्याप्त्मक प्रसंगों की रचना की गई है, प्जनकी संख्या लगभग पचचीस हजार के करीब होगी जो र्वश्व मानव के मलए अनुपम िरोहर है। इन्द्हें प्रकामशत कराकर आप तक पहुुँचाने िका प्रयास जारी है।

श्रीमद्भागवत रहस्य का द्र्वतीय संस्करण आपको सौंपते हुए हमें अपार प्रसन्द्नता है। प्रकाशन में र्वलम्ब के मलए हमें खेद है। इस पुस्तक के प्रथम संस्करण में चौथेहदन के द्र्वतीय प्रहर की कथा कृष्ण जन्द्म का अंश अप्रातत होनेके कारण छूट गया था फकन्द्तु अब वह प्रातत हो गया है और उसे जोड़ हदया गया है प्जससे पुस्तक की कमी पूरी होकर अब एक सांगोपांग कृतत बन चुकी है।

प्रथम संस्करण में प्जन महानुभावों का प्रत्यि एवं अप्रत्यज्ञ रुप से सहयोग ममला है, उनकी लगन, श्रम और सहयोग स्तुत्य है। यह उन्द्हीं ंके भगीरथ प्रयास का सुफल है फक देव दुलुभि सदुपुदेश से पररपूण ि कृतत हम आपके समि प्रस्तुत करने में समथ ि हुए हैं। वे सभी महानुभाव सािुवाद के पाि हैं। सममतत उनकी आभारी है। द्र्वतीय संस्करण के संशोिन में श्री रूपेन्द्रनाथ ततवारी जी, एम.ए. (दशनिशास्ि, हहन्द्दी) का सहयोग अत्यंत प्रशंसनीय एवं सराहनीय रहा है। सममतत के संरिक डॉ. सत्यानंदजी महाराज, प्जनकी प्ेरेरणा एवं ंआशीवादि स्वरुप इस श्रम साध्य काय िको हम साकार कर सके, सममतत उनका धचर आभारी है।

नेचर ग्राफफक्स के संचालक भाई तनततन कुमार झा जी प्जन्द्होंने ऐसे कहठन साहहत्य को बड़ी लगन एवं साविानीपूवकि टंकण करके इसकी भाषा को शुद्ि एवं सुवाचय बनाया है वे सािुवाद के पाि हैं। हम उनके आभारी हैं।

हमारा पूरा-पूरा प्रयास रहा है फक कृतत के प्रकाशन में िुहुट अथवा अशुद्धि न रह जाये फफर भी यहद कोई िुहट रह गई हो तो हमें िमा करें। सममतत के इस प्रयास को र्वद्वतजन सराहेंगे और भक्त सािुजन मान्द्यता देंगे एवं प्जज्ञासुगण अवगाहन करेंगे इन्द्हींआशाओं ंके साथ, अलं!

आपका अमभन्द्न

(डॉ. प्रीतम ममश्रा)

अध्यि

महर्ष ि मुक्तानुभूतत साहहत्य प्रचारक सममतत

केन्द्र-दुगु ि (छ.ग.)

स्थान : रायपुर

हदनांक : 19 जुलाई 2016 आषाढ़, गुरु पूर्णिमा

।। श्री गणेशायनमः ।।

।। श्री गुरुवेनमः ।।

नारायणोपतनषत् ्

ॐ अथ पुरुषो ह वै नारायणोऽकामयत प्रजाः सृजेयेतत । गुनारायणात् ्प्राणो जायते। मनः सवेन्न्द्रयार्ण च। खं वायुयोततरापः पृथृथवी र्वश्वस्य िाररणी। नारायणाद् ब्रह्मा जायते। नारायणात् ्रुरो जायते। नारायणाद् इन्द्रो जायते । नारायणात् ्प्रजापततः प्रजायते ।

नारायणाद्वादशाहदत्या सवे रुरा सवे ेवसवः सवार्ण भूतातन सवार्ण छन्द्दांमस नारायणादेव समुत्पद्यन्द्ते । नारायणात्प्रवतन्द्ते । नारायणे प्रलीयन्द्ते ।

अथ तनत्यो नारायणः ब्रह्मा नारायणः मशवश्च नारायणः। शक्रश्च नारायणः। कालश्च नारायणः । हदशश्च नारायणः । र्वहदशश्च नारायणः। ऊध्वं ंच नारायणः । अिश्च नारायणः। अन्द्तबहिहश्च नारायणः।

नारायण एवेदं सवं ंयद्भूतं यचच भव्यम् ्। तनष्कलंको तनरञ्जनो तनर्वकिल्पो तनराख्यातः शुद्धो देव एको नारायणो न द्र्वतीयोऽप्स्त कप्श्चत्। ् य एवं वेद स र्वष्णुरेव भवतत स र्वष्णुरेव भवतत।

ॐ शांततः ! शांततः !! शांततः !!!

प्रथम हदवस

भूममका, महहमा एवं चतु:श्लोकी भागवत

18-2-1969, प्रातः 10.00 से 12.00 बजे तक

अनन्द्त नाम रूपों में अमभव्यक्त, अहमत्वेन प्रस्फुररत, महामहहम, स्वात्मस्वरूप सकल चराचर एवं समुपप्स्थत आत्मप्जज्ञासुगण !

'उविष्ठत, जाग्रत, प्राप्यवरान्ननबोधत ।'

(कठो.उ.)

अनाहदकाल से अर्वद्या के घोर अंकिार में सोनेवालों भव्य जीवो। 'उरि्षत'-उठो । स्वस्वरूप भगवान

आत्मा में जागो। फकसी श्रे्रेष्ठ महापुरुष श्रोत्रिय ब्रह्मतनष्ठ सद्गुरु की शरण होकर अपना आत्म-कल्याण करो।

अनन्द्त जन्द्मों के पूवाप्जिति पुण्यों के उदय होनेपर आज से यहा ूँपर श्रीमद् भागवत, महापुराण परमहंस संहहता के आिार पर अध्यात्म तनरूपण होनेजा रहा है। प्जस प्रकार मंहदरों में फकसी मूतत िकी अध्यिता में भगवान की आरािना होती है उसी प्रकार श्रीमद् भागवत, उपतनषत, श्रीमद्भगवत गीता, श्री रामायण आहद शास्रों की अध्यिता में, उनके साक्षित्व में, मसद्िांतों द्वारा अध्यात्म तनरूपण होता है।

आत्मप्जज्ञासुओं! आज इस पावन बेला में जो कुछ अध्यात्म तनरूपण होगा वह सब श्रीमद्भागवत परमहंस संहहता के साक्षित्व में होगा। भागवत पुराण के माध्यम से होगा अथात् िजो कुछ भी यहाूँकहा जायेगा उसे श्रीमद् भागवत पुराण समथनि करेगा। इस पुराण की अलौफकक महहमा है। एक जन्द्म नहींअनन्द्त जन्द्मों के जब पुण्य होते हैं तभी श्रीमद् भागवत पुराण अध्यात्म तत्व श्रवण करने का अवसर आता है। इसमें स्वस्वरूप प्स्थत श्री परमहंस स्वामी शुकुदेव जी राजा परीक्षित की आत्म तत्व का दशनि करातेहैं। इस पुराण में अनेक वेद मंरों सहहत उनके तत्वों की सुंदर-सुंदर कथा, आख्यानों द्वारा प्रततपादन एवं उपदेश हुआ है।

स एवेद्ँ सवम्ि। नारायणेवेद्ँ सवम्ि। आत्मैवेद् सवम्ि।ँ अहमेवेद् सवमि। वासुदेवः सवमिमतत इत्याहद मंरों का उपदेश श्री स्वामी शुकुदेव जी राजा परीक्षित को फकए हैं।

जनराद्यस्य यतोऽनवयाददतरतश्चाथेष्वभभज्ञः स्वराष्

तेने ब्रह्म हृदाय आददकवये रुहुयन्नत यत्सूरूयः ।

तेजोवाररररृदां यथा ववननर्यो यत्र त्रत्रसगोऽरृषा,

धाम्ना स्वेन सदा ननरस्तकुहकं सत्यं परं धीर्दह ।।

(श्रीमद्भागवत 1/1/1)

धर्:म प्रोन्झितकैतवोऽत्र परर्ो ननर्त्सराणां सतां ं

वेद्यं वास्तवत्रं वस्तु भिवदं तापत्रयोनरूलूनर् ्।

श्रीर्द्भागवते ेर्हारुनुनकृते ककं वा परैरीस्वर:

सद्यो हृद्यवरुध्यतेऽत्र कृनतभभः िुश्रुषुभुभस्तत्षणात् ्।।

(श्रीमद्भागवत 1/1/2)

ननगर्कल्पतरोगभमलतं फलं ंिुकरुखादरृतृद्रवसंयुंतर् ्।

वपवतभागवतंरसर्ालयंरुहुरहोरभसकाभुवुवभावुका:।।

(श्रीमद्भागवत 1/1/3)

ये तीनों श्लोक श्रवण, मनन, तनहदध्यासन के रूप में महर्ष िव्यास जी प्रततपाहदत फकए गये हैं।

आत्र्ा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो र्नतव्यो ननददध्याभसतव्यः ।।

(वृहृदा 4-5-6)

श्री भगवान व्यास जी श्रुतत के इसी मंि को छंद के रूप में छंदबद्ि कर हदये हैं। यह आत्मा रष्टव्यः (देखने योग्य) अनुभव करनेयोग्य, श्रोतव्य:' सुनने योग्य एवं तनहदध्यामसतव्य:- तनहदध्यासन करनेयोग्य है इसीमलए इस आत्म तत्व का र्ववेचन श्रोत्रिय ब्रह्मतनष्ठ सद्गुरु के सामीतय में ग्रहण करना चाहहए।

हा ूँजी-श्रवण, मनन, तनहदध्यासन का इन श्लोकों में तनरूपण हुआ है। तो इनका स्वरूप क्या है? देखो फकसी भी मंि को समुधचत ज्ञान के मलए मंि समझने के मलए, मंि को तीन तरह से परखना चाहहए। अथानिुसंिानि द्वारा भावानुसंिानि द्वारा और लक्ष्यानुसंिानि द्वारा। वृर्ि कहो या मन कहो ये दोनों परस्पर एक ही भाव के द्योतक हैं। संत समाज में इसी को 'सुरतत' कहते ेहैं । सािारण भाव में मन कहते ेहैं। देखो समझो र्वषय (डंडें ेका उदाहरण देकर र्वषय समझते हैं।) डंडें ेका जो आकार है यह हुआ डंडें ेका अथ िऔर इसमें जो वृर्ि की एकाग्रता, उसे े कहते ेहैं अथानिुसंिानि। लकड़ी जो है वह डंडें ेका भाव है। इसमें जो वृर्ि की एकाग्रता, उसे कहते ेहैं भावानुसंिानि और इसका लक्ष्य क्या है? चेतन तत्व भगवान आत्मा। इसमें जब वृर्ि एकाग्र हो जाय तो उसे कहतेहैं लक्ष्यानुसंिानि ।

श्रवणं ंितगुणं ंववद्यानर्ननं र्नादवप ।

ननददध्यासं ंलषगुणुर्ननतं ंननववकमल्पकर् ्।।

(र्ववेक चूड़ार्मर्ण ल.तन. 365)

श्रवण की अपेिा मनन करनेमें सौ गुना अधिक फल होता है। मनन की अपेिा तनहदध्यासन करनेमें एक लाख गुना फल होता है। तनहदध्यासन की अपेिा धचि का तनर्वकिल्प हो जाना-इसका फल अनन्द्त गुना होता है।

धर्ःम प्रोन्झितकैतवोऽत्र परर्ो ननर्त्मसराणां सतां ं।
वेद्यं वास्तवर्त्र वस्तुभिवदं तापत्रयोनर्ूलूनर् ्।।
श्रीर्द्भागवते ेर्हार्ुनुनकृते ककं वा परैरीश्वरः
सद्यो हृद्यवरुध्यतेऽत्र कृनतभभः िुश्रूषुभुभस्तत्षणात् ्।।2।।

यह मनन है।

ननगर् कल्पतरोगभमलतं फलं ंिुकर्ुखादर्ृतद्रवसंयुंतर् ्।
वपबत भागवतंरसर्ालयं र्ुहुरहो रभसका भुवुव भावुकाः ।।3।।

यह तनहदध्यासन है।

देखो-बालक श्रृंगी ऋर्ष ने अपनेर्पता के गले में सप िडालने के अपरि में राजा परीक्षित को श्राप हदया फक आज के सातवें हदन तिक जातत का सप िआकर तुझेडस लेगा। राजा परीक्षित राज्य एवं प्राण का मोह त्याग कर उिरामभमुख हो (उिर हदशा की ओर मुँह करके) व्याकुल दशा में बैठ गया और उसे यह तनश्चय हो गया फक आज के सातवें हदन अवश्यमेव मृतूयु हो जायेगी। इसी कारण उसके हृदय में पूण िवैराग्य जाग्रत हो गया। मछली की तड़प की नाई उसका मन आत्म तत्व को जानने ेके मलए उत्कंहठत हो गया फक मेरा आत्म कल्याण कैसे हो? और यह भी सात ही हदन में। कारण? अब उसे सात ही हदन जीना है।

अत्रत्रवभमसष्ठश्च्यवनः िरद्वानररष्टनेभर्भृगुरुङ्गककराश्च ।
परािरौ गाधधसुतोुऽथ रार् उतध्य इंद्रप्रर्देध्र्वाहौ ।।
रे्धानतधथदेबल आन्ष्टषेणो भारद्वाजो गौतर्ः वपप्लादः ।
र्ैत्रेय औवःम कवषः कुम्भयोननद्वैपायनो भगवानननारदश्च ।
अनये च देववषब्रमह्र्वषवमयाम राजवषवमयाम अरुणादयश्च ।
नानाषेयप्रवरानसर्ेतानभ्यय् मराजा भिरसा ववनदे ।।

(श्रीमद् भागवत 1/19/9-10-11)

उस समय बड़े-बड़े ेदेवर्ष,ि ब्रह्मर्ष,ि राजर्षियों का शुभागमन, जहा ूँराजा परीक्षित बैठे थे ेहुआ। यह तनर्वविाद मसद्धांति है, यह ईश्वरीय विर्िान है फक प्जस समय आत्म प्जज्ञासु को मछली के समान तड़प यानी आत्म प्जज्ञासा जागृत् होती है अथात्ि्उसे आत्मतत्व जाननेकी व्याकुलता होती है, उसका धचि जब संसार से पूणतिया उपराम हो जाता है तब महापुरुषों का दशनि स्वयमेव होता है। स्वयं वे दशनि देंगे, उसका कल्याण करने हेतु आ जाते हैं और इस तरह का समागम संसार से तरनेका नोहटस है। श्रीमद् भागवत के दसवें स्कन्द्कि उिराद्मिं महाराजा मुचकुंद जी भगवान की स्तुतत करते हैं-

भवापवगोभ्रर्तो सदा भवेझजनस्यतहांत्त्युत सत्सङ्गगर्: ।

सत्सङ्गगर्ोयदह मतदैव सद्गतौपरावेरेरोत्वनय जायतेर्नत: । ।

(श्रीमद् भागवत 10/51/54)

हे अचयुत ! हे प्रभो ! भगवान ! जब जीवों के अपवग िअथात्ि्मिो होने को होता है, जब आप संसार से उनके उद्धिर की इचछा करते हैं तो अपने भागवत (संतों) का दशनि, उनका समागम उन्द्हें आप स्वयंही करा देते हैं। अपवग िका अथ िमिो होता है।

अ का अथ िहुआ नहीं, ं प वग िका अथ िहुआ प फ ब भ म ।

जानते ही हो व्याकरण में क वग िअथात्ि्क ख ग घ ङ

च वग िअथात्ि्च छ ज झ ञ इसी तरह प वग िका अथ िहुआ प फ ब भ म ।

हा ूँजी, प का अथ िपापं नाप्स्त। जब पाप नहीं ंतो फफर पुण्य भी नहीं। पुण्य पाप दोनों गए। पुण्यं पापं

नाप्स्त ।

फ का अथ िफलं नाप्स्त। फल की आकांिा नहीं।

व का अथ िबंर्निनाप्स्त। जब फल की आकांिा नहीं ंतो फफर बंनि कैसे? फकए कमफिल कहा।ूँ

भ का अथ ि- भयंनाप्स्त। कम िफल ही तो बंनि का कारण है, प्जससे सुख-दुःख ममलता है। जब बंनि ही

नहीं ंतो भय फकसका ।

म का अथि– मानंनाप्स्त। मान नहीं। जब मान नहीं ंतो अपमान भी नहीं। तो जहा ूँप वग िन हो उसे कहते हैं अपवग।ि

अरे भाई ! बंनि के ही अंदर मान-अपमान है। जहाूँपुण्य पाप नहीं ंवहाूँउसका फल क्या होगा और जब फल ही नहीं तो बंनि फकसका होगा? और जब बंनि नहीं तो फफर भय फकसका। इसी को कहतेहैं अपवग िअथात्ि्

मिो। प्जस समय फकसी को अतीव आत्म प्जज्ञासा, आत्म कल्याण की भूख प्रज्ज्वमलत हो जाती है तो सवप्रिथम संतों का दशनि होता है और संत समागन से उसका मिो हो जाता है।

प्जस समय राजा परीक्षित अपनेआत्म कल्याण की भावना में ध्यान मग्न था उसी समय ध्यान टूटते ेही देखता है फक झुण्ड के झुण्ड महात्मागण आ रहे हैं, प्जससे फक राजा परीक्षित का आत्म कल्याण हो। महात्मागण जब राजा परीक्षित के पास आ गए तब राजा उठा और उन सबको अमभवादन, दण्ड का प्रणाम फकया तथा सबका पूजन फकया और सबके सन्द्मुख हो प्राथनिा फकया का राजा तनवेदन करता है फक हे प्रभो! मेरा जीवन सात ही हदन शेषे है। थोड़ा का समय है। इस थोड़े ेसमय में मेरा आत्म कल्याण कैसे होगा? मुझसे अज्ञानतावश अतनष्ट हो चुका है। पंच वषीय बालक श्रृंगी ऋर्ष के श्राप से आज से सातवें हदन तिक जातत का सप िआकर मुझे ेडस लेगा। मेरी मृतूयु तो सामने खड़ी है। फक मुझे ेउपदेश कररये प्जससे फक मेरा आत्म कल्याण हो।

राजा परीक्षित ने अपने आत्म कल्याण की प्जज्ञासा भगवान व्यास, वामदेव, जा वमसष्ठ महर्षगिणों के समि रखी, परन्द्तु उस समय ऋर्षयों को कोई उपायको नहीं ंसूझा। फकसी की बुद्धि काम नहीं ंआई। उसी समय सोलह वषीय व्यासनंदन श्री शुकुदेव स्वामी हदगम्बर रूप में, अवूित वेश में, श्याम रंग, प्रकीण िजटाएँ,ग लम्बी-लम्बी भुजाएँ आजानुबाहु तनजानंद में मस्त स्वरूप आत्मा में लीन, मुस्कराते ेहुए उस सभा में जहाँ ये महर्षगिण बैठे थे,े आए। राजा परीक्षित ने यही प्जज्ञासा पूण िप्रश्न भगवद्मि िके पररज्ञाता भगवान वादरायर्ण स्वामी शुकुदेवजी के समि रखा फक हे प्रभो! मेरा उद्िार कैसे हो? म ैंआत िहूँ। आज से सातवें हदन ऋर्ष कुमार के शाप से तिक मुझे डस लेगा। म ैंमृतूयु के तनकट हूँ। इस दशा में मेरा आत्म कल्याण कैसे होगा? इस संसार सागर से मेरा उद्िार कैसे होगा? यहीं ंसे श्री स्वामी शुकुदेवजी और राजा परीक्षित का संवाद शुरू होता है।

एवराभावषतः पृषृटः स राज्ञा श्लक्षणया धगरा ।

प्रत्यभाषत धर्ज्ञमो भगवान बादरायणणः।।

(श्रीमद्भागवत 1/19/40)

इस प्रकार सम्राट परीक्षित की प्जज्ञासा देखकर भगवद्मि िके पररज्ञाता भगवान बादरायर्ण श्री स्वामी

शुकुदेवजी बोले-

वरीयानेष ते प्रश्नः कृतो लोकदहतो नृपृ ।

आत्ववत्सम्र्तःपुंसां श्रोतव्याददषुयःपरः ।।

(श्रीमद् भागवत 21/1 / 1)

हे राजन! एष ते प्रश्नः वरीयान् ्। जगत के जीवमिा के कल्याण के मलए यह तुम्हारा प्रश्न महान श्रेष्ठ एवं आत्म र्वत्सम्मत है। यानी बड़े ेसे बड़े ेआत्मवेिा पुरुष भी तुम्हारे इस प्रश्न का समथनि करते हैं। राजा

 परीक्षित का यह आत्मपरक प्रश्न फक फकस तरह संसार सागर से उद्िार हो, जीवमिा का कल्याण कैसे हो? श्री
स्वामी शुकुदेवजी के समि रखा गया।

बड़े–बड़े ेआत्मनैष्ठक र्वद्वान महात्माओंके समि यहद कोई प्रश्न करना हो तो यही एकमिा प्रश्न करना चाहहए फक प्रभो! म ैंकौन हूँ? यथाथ िमें यह प्रश्न सुंदर एवं मौमलक है। हालांफक यह प्रश्न सूक्ष्म है और जैसी आशा की जाती है फक इसका उिर भी छोटा होगा, परन्द्तु ऐसा नहीं ंहै। उिर इतना र्वस्तृत है फक जीवन पयन्द्ति भी इस प्रश्न पर र्ववेचन हो फफर भी वह अनंत है। इस छोटे से प्रश्न में अनेक सारगमभति समािान तनहहत हैं। इस संदभ िमें एक वृद्िा कुमारी का दृष्टांत सुनो- कैसे एक छोटे से प्रश्न में अनेक समस्याएँ भरी रहती हैं।

फकसी समय एक ब्राह्मण कुमारी के शादी योग्य होने पर उसके र्ववाह हेतु वर ढूँढ़ा गया। दैवयोग-कन्द्या का अभाग्य, र्ववाह के पूव िही चुना हुआ वर मर गया। तब गावूँ के लोग उसके मलए दूसूरा उपयुक्त वर ढूँढ़ने ेलगे, परन्द्तु अभाग्य कन्द्या का फक कोई भी ढूँढ़ा गया वर उसे प्रातत न हुआ। र्ववाह के पूव िही वह मर जाता था। समय बीत गया, वह कुमारी अब कुमारी न रही, चालीस वष िकी वृद्िा हो गई। अब कौन शादी करे। र्ववाह न हुआ। एक बार कोई महात्मा उसे उपदेश कर गए फक तू इन्द्रदेव की आरािना कर, तेरे भाग्य फफर सकतेहैं। आरािना से इन्द्रदेव प्रसन्द्न होकर जब वरदान देने के मलए प्रगट होंगे तो उनसे वरदान मांगना फक 'मे पुिाः स्वणपिािे े भुञ्जीरन्।्' मेरे पुि स्वण िपाि में खीर का भोजन करें।

वह वृद्िा कुमारी श्री इन्द्रदेव की बड़ी भष्क्त भाव से आरािना की। कुछ साल बाद उसकी तपस्या फलवती हुई। इन्द्रदेव प्रगट हुए और कहे फक देर्व ! वर वृणीश्व-वर मांगो। वह ब्राह्मणी कहती है फक 'मे पुिाः स्वणपिािे ेभुञ्जीरन् ्।' मेरे पुि स्वणथिाल में भोजन करें और यहा ूँयह हाल फक वृद्िा कुमारी के र्ववाह का ही पता नहीं,ं फफर पुि कहा,ूँ िन कहाूँ। इन्द्रदेव भी चक्कर में पड़े।े वृद्िा कुमारी के र्ववाह का ही पता नहीं,ं परन्द्तु सब कुछ मांग मलया। इन्द्रदेव तथास्तु कहकर अन्द्तिा्न हो गए। इन्द्रदेव की कृपा से वृद्िाकुमारी को कौमायपिन, सुंदर षोडसी रूप ममला। शादी हुई, ििनान्द्य से सम्पन्द्न हुई और पुि लाभ हुआ क्योंफक वर ही ऐसा मांगा गया था। कहीं कंगाल का पुि भी सोनेकी थाली में भोजन करेगा? इन्द्रदेव को उन्द्हें सम्पन्द्न पररवार बनाना पड़ा। तब यह वरदान सत्य हुआ। इसी प्रकार प्रश्न तो छोटा-सा है फक 'म ैंकौन हूँ?'

'अतः पृच्छाभर् संभंसद्धधं ंयोधगनां परर्ं ंगुरुर् ्।

पुरुषस्येहयत्कायंभ्रियर्ाणस्य सवथमा।।

(श्रीमद् भागवत 1/19/37)

श्री चरणों के साष्न्द्नध्य में पड़े ेमशष्य को गुरुओंसे यही उपदेश, यही गुतत ज्ञान प्रातत करना चाहहए फक प्रभो! मेरा आत्म कल्याण कैसे हो?

वरीयानेष ते प्रश्नः कृतो लोकदहतो नृप् ।

आत्र्ववत्सम्र्तः पुंसां श्रोतव्याददषुयः परः ।।

राजन् ्! तुम्हारा प्रश्न बहुत सुंदर सारगमभति एवं ंमौमलक है। इससे तो तुम्हारा ही नहीं ंवरन् ्जीवमिा का कल्याण होगा। तुम धचंतां न करो। तुम्हें तो अभी सात हदन जीना है। वस्तुतः जब आत्मतत्व को जाननेकी प्रबल इचछा हो तो सात हदन का भी समय बहुत अधिक है। इसके मलए तो दो घड़ी का ही समय पयाततत है और यहद आत्म कल्याण की प्जज्ञासा प्रबल नहीं है तो सात हदन क्या एक हजार वषों का समय भी अधिक नहींहै। आत्म प्जज्ञासा र्वहीन पुरुषों का उद्यम वैसा ही है जैसे कुिे की पूँछ। कुिे की पूँछ उसके भी काम की नहींऔर उसे काट दो तो हातन भी नहीं। इसी तरह बकरी के गले की तनदिुग्िस्तिन, उससे दिू तो तनकलता नहीं ंव्यथ िही लटकता रहता है। आत्म प्जज्ञासा के त्रबना वेदों का अध्ययन भी ऐसा ही प्रयास है। यहद आत्म प्जज्ञासा प्रबल है तो दो घड़ी जीवन ही पयाततत है। जैसे राजा खट्वांग को प्जन्दहें दो घड़ी के उपदेश से ही आत्मलाभ हुआ था। वे राजर्ष िसूयवंशि में हुए थे। उनका सारा जीवन ऐश-आराम, आमोद-प्रमोद आहद र्वषयों में ही बीत गया। जब जीवन मसफि दो घड़ी शेषे रहा तो उन्दहें ब्रह्म ज्ञान की उत्कट अमभलाषा हुई। श्री भगवान वामदेव की कृपा से राजा को बोि हुआ और वह संसार सागर से तर गया। इससे मसद्िहै फक आत्म कल्याण के प्जज्ञासुओं के मलए समय का प्रततबंिनहीं ंहै। बशते फक आत्म कल्याण की भावना, प्जज्ञासा प्रबल हो। राजा परीक्षित की प्रबल प्जज्ञासा थी फक मेरा आत्म कल्याण कैसे हो? इसमलए श्री शुकुदेव स्वामी के प्रसाद से उसका आत्म कल्याण हुआ।

श्रीमद् भागवत के द्र्वतीय स्कंिमें भगवान के र्वराट स्वरूप का वणनि है। साथ ही साथ सृपष्ट के सृजन का और भगवान के अवतार आहद का संक्षितत वणनि फकया गया है। द्र्वतीय स्कंिके नवें अध्याय में ब्रह्माजी को भगवान नारायण द्वारा ब्रह्मतत्व के उपदेश का वणनि है प्जसे चतुः श्लोकी भागवत कहतेहैं। यही परम उपदेश बीज मंिहै। यह पावन कथा अब प्रेम से सुनो। आत्म प्जज्ञासुओं! दोनों समाज प्रकृतत एवं ंपुरुष जो जहा ँबैठे हो ध्यान से सुनो- आनंद लो।

सृपष्ट के आहद में श्री शेषेशायी भगवान नारायण के नामभ से कमल उत्पन्दन हुआ और उस कमल में श्री ब्रह्माजी हुए। इसी से इनका नाम कमलोद्भव है- कमल से पैदा हुए हैं। श्री ब्रह्माजी ने दृपष्ट फैलायी, कमल के चारों तरफ उन्दहें मसफि जल ही जल हदखा। जल ही जल अपनेचारों तरफ देख के कुछ तनश्चय न कर सके फक वे कहा ँहैं। उनको प्जज्ञासा उत्पन्दन हुई फक म ैंकौन हूँ, कहाँसे उत्पन्दन हुआ हूँ? तो वे कमलनाल में चक्कर लगाने लगे, परन्दतुवषों बीतनेपर भी जब वे अपनेओिार का पता न लगा सके तो हारकर कमल में बैठकर सोचनेलगे फक अब क्या करना चाहहए? एकाएक उन्दहें प्रणव (ॐ) नाद (शधद) सुनाई पड़ा और 'त', 'प' ये दो अिर तीन बार सुनाई पड़ा-तप, तप, तप सुने तो वे कमल में ही आसन जमा हजारों वष ितपस्या फकए। उस तप से प्रसन्दन होकर ब्रह्माजी के समि भगवान नारायण प्रगट हुए। ब्रह्माजी ने स्तुतत की। उससे प्रसन्दन होकर भगवान नारायण ने ब्रह्माजी के प्रतत आत्म तत्व का उपदेश फकया। वस्तुतः इसी चतुःश्लोकी भागवत में भगवान नारायण द्वारा ब्रह्माजी को जो उपदेश हुआ है यही सम्पूण िभागवत है। इसी की व्याख्या, उपदेश श्री स्वामी शुकुदेवजी राजा

परीक्षित को फकए हैं। बाद में श्री स्वामी शुकुदेवजी के र्पता महर्ष िव्यासजी ने चतु:श्लोकी भागवत को आिार मानकर श्रीमद् भागवत पुराण बड़े ेग्रंथ का तनमाणि फकया है।

वेदानतवेदसुसुनातेगीताया अवप कतरमर ।
पररतापवनत व्यासे रुहुयत्यज्ञानसागरे ।।

(श्रीमद् भागवत महा .2/72)

तदा त्वया पुरा प्रोक्तं ंचतुः श्लोकसर्न्नवतर् ् ।
तदीयश्रवणात्सद्योननबाधमोबादरायणः।।

(श्रीमद् भागवत महा. 2/73)

महर्ष िव्यासजी वेदों की संहहता बनाए, ब्रह्मसिू आहद ग्रन्द्थों की भी रचना फकए, ऋचार्येमलखी, श्री महाभारत ग्रन्द्थ प्जसमें सवा लाख श्लोक हैं, बनाया। इसमें गीता भी आ जाती है। इन सब संहहताओं का तनमाणि फकया और अपनेमशष्यों को पढ़ाते रहे, परन्द्तु इतने ेपर भी उनके धचि को शांतत न ममली। धचत उपराम न हुआ। वे बिोवान नहीं ंहुए। अज्ञान सागर में डूबे रहे।

भैया ! बुद्धि का व्यापार दूसूरी चीज है! वेदों का सुनना सुनाना दूसूरी बात है। परन्द्तु बोि प्राप्त करना, आत्म तत्व प्राप्त करना अलग चीज है। दशनि, ब्रह्मसिू आहद की रचना करने ेपर भी जब श्री व्यासजी का धचि शांत न हुआ तो वे सरस्वती नदी (शम्याप्रास) के तट पर (यह नदी हहमालय प्रदेश में है) खिन्द्न धचि से बैठ गए। श्री व्यास जी ने अपनी इस अशांतत को नारदजी के समि रखा। उस समय देवर्ष िनारद ने श्री व्यास जी के समि इसी चतु:श्लोकी भागवत का प्रततपादन फकया। प्जसे सुनकर महर्ष िव्यास जी का धचि प्रशांत हुआ, अज्ञान का नाश हुआ एवं वे तनबोि हो गए।

तदा त्वया पुरा प्रोक्तं ंचतुःश्लोकसर्न्नवतर् ् ।
तदीयश्रवणात्सद्यो ननबाधमो बादरायणः ।।

जब भगवान नारद ने बादरायण (व्यासजी) को चतु:श्लोकी भागवत सुनाया, तब 'तदीय श्रवणात्सद्यो' अरे ! सुनतेही महर्ष िव्यास जी तनबोि अथात् िसंशय-र्वपयिय रहहत हो गए। तनस्संकल्प हो गए अज्ञान का मूलोचछेद हो गया। धचि को परम शांतत ममली। श्री शुकुदेव जी नेयही चतु:श्लोकी भागवत। राजा परीक्षित को सुनाया था। यही र्वस्तार होनेसे अट्ठारह हजार श्लोकों का महापुराण ग्रन्द्थ बना। यही इसका प्रसंग है। अब हम सबसे यही कहते हैं फक आत्म कल्याण चाहो तो बिना कान के सुनो और बिना बुद्धि के समझो। स्वामी जी ! आप तो बड़ी अटपट बात बतातेहैं, कहीं ंबिना कान के सुना जाएगा और बिना बुद्धि के समझा जाएगा? हाँू भाई ! यही तो हम बता रहे हैं। कान से जो सुनाई पड़ता है और जो कान से सुनाई नहींपड़ता, कान के सुनने और न सुनने को जो सुनता है, वह फकस कान से सुनता है? बुद्धि के समझने ेऔर न समझनेदोनों को जो समझता है वह फकस

 बुद्धि से समझता है? जो कान का कान है, बुद्धि की बुद्धि है, यारों! उसे कान क्या सुनेगा, बुद्धि क्या समझेगी।

हा,ँ चीज यही है। जो मन, बुद्धि, वाणी से परे है, उसको मन, बुद्धि वाणी से कैसे समझोगे? तो बस, जैसे बैठे हो, मस्त रहो।

कोई भी र्वद्वान संन्द्यासी जब अपने मशष्य मंडल को वेदांत का पाठ पढ़ाते हैं, उस समय गुरु परम्परा से गुरुओं ंका स्मरण करके वेदाध्ययन (वेदांत पाठ) करातेहैं। हम भी इसी गुरु परम्परा से आहद गुरुओं का स्मरण करते हुए वेदांत का तनरूपण करेंगे।

ॐ नारायणं ंपद्र्भवंवभसष्ठं िन्क्तं च तत्पुत्र परिारंच,
व्यासं ंिुकं गौड़पदं र्हानतं गोववनदयोगीनद्रर्थास्य भिष्यर् ्।
श्री िंकराचायर्मथास्य पद्मपादं च हस्तार्लकं च भिष्यर् ्।
तं त्रोटकं वानतकमकारर्नयानस्द् गुरुन सनततर्ानतोऽन्स्र् ।।

आत्मज्ञान के प्रथम आचाय िभगवान नारायण हैं। इनके बाद पद्मोद्भव (श्री ब्रह्मा जी) हुए। उनके मशष्य हुए श्री गुरुदेव वमसष्ठ। उनके मशष्य हुए महर्ष िशप्क्त और उनके मशष्य हुए पराशर। फफर इनके मशष्य हुए श्री व्यासजी और फफर शुकुदेव स्वामी। प्जनके मशष्य श्री गौड़पादाचाय।ि उनके मशष्य श्री गोर्वंदपादाचाय िऔर इनके श्री आद्य जगद्गुरु भाष्यकार शंकराचाय।ि उनके चार प्रिान मशष्य हुए हैं- पद्मपादाचाय,ि हस्तामलकाचाय,ि सुरेश्वराचाय िऔर िोटकाचाय।ि इसी तरह गुरु परम्परा से अन्द्यान्द्य अध्यात्मतत्व के ज्ञाता श्रेष्ठ गुरु हुए हैं वे सभी आत्मरत, आत्मर्वत्,् कृतकृत्य पद प्रातत आनंदस्वरूप हुए हैं। भगवान नारायण से आहद लेकर प्जतने भी आज तक गुरु हुए हैं और भर्वष्य में होंगे, इन सब गुरुओं को हम अपनेहृदय से स्मरण कर वेदांत का पाठ आरंभ करते हैं।

श्री भगवनानुवाच -

ज्ञानं परर्गुह्ुयंर्े यद्बवज्ञानसर्न्नवतर् ्।
सरहस्यं तदङ्गं ंच गृहाण गददतं र्या ।।
ववज्ञान संयुक्तंतदङ्गं ंसरहस्यं र्े परर्गुह्ुय ज्ञान गृहाण ।।

हे ब्रह्मन् ्! र्वज्ञान संयुक्त साङ्गोपाङ्ग क्या है? रहस्य क्या है? परम गुह्य क्या है। सूि रूप में इन सबकी व्याख्या की गई है।

'म'ै शरीर नहीं, आत्मा हूँ-यह है ज्ञान।

'म'ै सव िहूँ-यह है र्वज्ञान ।

'म'ै हूँ-यह है परमगुह्य ज्ञान।

शरीर नहीं, ं म ैंआत्मा हूँ, इसका बोि होना ज्ञान और 'म'ै हूँ यह परमगुह्य ज्ञान है। देखो-प्जस शधद के साथ परम लगता है वह अपिेा रहहत होता है। परम वैराग्य, परम पद, परम स्नेह, परम समाधि, परमानंद, परम सुख ये सब अपिेा रहहत हैं।

ज्ञानं परर्गुह्युयंर्े यद्ववज्ञानसर्न्नवतर् ्।

सरहस्यं तदङ्ग च गृहाण गददतं र्या ।।

भगवान कहते हैं- यह जो मेरा परमगुह्य ज्ञान है इसको ग्रहण करो। अरे ! म ैंजो कहता हूँ उसको जानो, आत्मतत्व का अनुभव करो। यह अनुपम है। सम्पूण िअंगों के सहहत ग्रहण करो। साङ्गोपाङ्ग क्या है? वेदांत के छः अंग हैं।

उपक्रर्ोपसंहारावभ्यासोऽपूवूतमा फले ।

अथवमादपपविं ंच भलंङ्गं ंतात्पय मननणयेम ।।

उपक्रमोपसंहार, अपूवतिा, अभ्यास, फल, अथविाद और उपपरि् ।

1. उपक्रर्ोपसंहार- प्जस ब्रह्मतत्व का प्रर्तपादन फकसी ग्रन्द्थ के अथवा वर्द्वान महान पुरुषों के भाषण आहद में फकया गया है उसी का प्रततपादन अंत में फकया जाए। उसे उपक्रमोपसंहार कहतेहैं।

2. अपूवतमा- 'नहह ज्ञानेन सदृशं पविममह वर्द्यते।' नहीं है ज्ञान के समान पविि कोई दूसूरा पदाथ।ि यह अपूवतिा है।

3. अभ्यास- अनेकानेक सुंदर-सुंदर युप्क्तयों द्वारा प्रततपाद्य वर्षय के पुनः-पुनः तनरूपण करनेका नाम अभ्यास है।

4. फल- 'ज्ञात्वा देवं मुचयते सवपािशैः ।' देव को जानकर पंचक्लेश और अष्टपाश से जीव छूट जाता है। यह फल है।

5. अथवमाद-

कुलं ंपववत्रं ंजननी कृताथा मवसुंधंरा पुण्यवती च येन ।

अपार संवंवत्सुखुगारेऽन्द्रून् ्लीने परे ब्रह्मणणयस्य चेतः ।।

स्नातं तेन सर्स्तं तीथ मसभलले दिावपसवावमननयज्ञानां

च कृतं सहस्त्रर्णखलं ंदेवाश्च संपूंन्जताः ।

संसांराच् सरुदुधता स्ववपतरस्त्रैलौक्य पूझयोऽप्यसौ

यस्य ब्रह्मववचारणे षणर्वप स्थैयं ंर्नः प्राप्नुयात् ्।।

यह अथविाद है।

6. उपपवि - वासुदेवः सवमिमतत। यह उपपरि् है।

प्जस र्वद्वान महात्मा के उपदेशों में छः अंग नहीं ंरहेंगे तो प्जज्ञासुको संशय-र्वपययि रहहत पूण िरूप से आत्मतत्व का बिो नहीं ंहोगा। इसीमलए यहाँकी कथा में इन छः अंगों का ध्यान रखा जाता है। ज्ञान तनरूपण में छह अंगों का समावेश यथास्थान होता रहता है। प्जसनेअपनेआपको जान मलया, आत्मतत्व का सािात्कार कर मलया। वह अष्टपाश, पंचक्लेश से छुटकारा पा जाता है। यह वेदांत का फल है। अर्वद्या, अप्स्मता, राग, द्वेष तथा अमभतनवेश ये जीव के पंच क्लेश हैं और घृणृा, शंका, भय, लज्जा, तनंदां, कुल, शील तथा जातत ये जीव के अष्टपाश हैं। असत को सत, चेतन को जड़ और दुःख को सुख यानी साढ़े तीन हाथ के शरीर को आत्मा मानना, यही अर्वद्या है। रष्टा और दृश्य के िमों को एक मानना यही अप्स्मता है। इष्ट पदाथ िऔर वह प्जसके द्वारा प्रातत हों, दोनों के प्रतत जो आसप्क्त है, यही राग है और दोनों के प्रतत जो घृणृा है, यही द्वेष है। अनाहदकालीन परम्परा से प्जस मृतृयु प्रवाह से बड़े–बड़े ेर्वद्वान भी डरते हैं यही अमभतनवेश है। पंच क्लेश एवं अष्ट पाश से वही छुटकारा पा सकता है, प्जसने अपनेआप भगवान को पहहचाना है। यही वेदांत का फल है।

आत्मतत्व के र्वचार में यहद एक िण भी मन लग जाए, प्स्थर हो जाए तो समस्त तीथों का स्नान उसने कर मलया। हजारों गौवों के दान का फल प्रातत कर मलया, उसके र्पतरों का उद्िार हो गया। हजारों बार अश्वमेिाहदक यज्ञ कर चुका, िैलौक्य का पूज्य हो चुका। अब प्जसका धचि परब्रह्म में लीन हो गया है उसका क्या फल है, उसकी क्या महहमा है? उसका कुल पर्वि हो गया। जननी जो माता है वह कृताथ िहो गई, वसुंिरा जो पृथ्ूवी है वह ऐसे आत्मदशी को पाकर पुण्य रूप हो गई। इसको कहतेहैं अथविाद। और उपपरि्- 'एकमेवाद्र्वतीयं ब्रह्म नेह नानाप्स्त फकञ्चन।' 'वासुदेवः सवमिमतत ।' भगवान आत्मदेव से एक ततल भर भी मभन्द्न नहींहै। एक ही चेतन परमात्मा है। इसके मसवाय कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं। वेदांत के चार अनुबंि होतेहैं- अधिकारी, र्वषय, संबंि और प्रयोजन।

प्जसको अपनेआत्म कल्याण के मलए मछली के समान तड़प हो, आत्म तत्व को जानने की, प्रातत करने े की प्रबल प्जज्ञासा हो वही ब्रह्म ज्ञान को प्रातत करने ेका अधिकारी है। सव िभगवान है, एक तृणृ भी भगवान से र्वलग नहीं, यही प्रततपाद्य र्वषय है। प्रततपाहदत र्वषय और उसका प्रततपादक ग्रन्द्थ यही प्रततपाद्य प्रततपादक भाव संबंि है। आत्मतत्व का पूण िरूपेण सािात्कार करा देना यही वेदांत ग्रन्द्थ का प्रयोजन है। हा,ँ जी! चलो आगे-

ज्ञानं परर्गुह्युयंरे् यद्र्वज्ञानसर्न्नवतर् ्।

सरहस्यं तदङ्ग च गृहाण गददतं र्या ।।

भैया ! परमगुह्य ज्ञान पर पहले प्रकाश डालेंगे नहीं ंतो र्वषय समझ में नहींआवेगा।

कोई व्यप्क्त जब कभी फकसी महापुरुष के पास जाता है तो (चाहे मशष्टाचार के ही नाते कहता हो) कहता है फक भगवान! आप तो परम ज्ञानी हैं और में त अज्ञानी हूँ, तो महात्मा कहते ेहैं फक तयारे ! यहद तू ूवस्तुतः अज्ञानी होता व अपने को अज्ञानी और मुझेज्ञानी कैसे कहता? जैसे कोई व्यप्क्त कहे फक हर जा, म ैंपागल हूँ तो क्या हम-तुम उसे पागल कहेंगे? जबफक उसे अपन पागलपन का ज्ञान है तो फफर वह पागल कैसे? इसी तरह जब वह व्यफक अपनेको अज्ञानी कहता है तो वस्तुतः क्या वह अज्ञानी हुआ? अपने आपक अज्ञानी कहता है इससे यही मसद्ि होता है फक ज्ञान का स्वरूप जानकर अपने'म'ै में अज्ञान को आरोर्पत करता है। वास्तव में तू अज्ञानी नहीं ंजबफक तुझे ेज्ञान और अज्ञान दोनों का ज्ञान है। इसमलए तू स्वयं ज्ञान स्वर भगवान आत्मा है। अचछा, ज्ञान, अज्ञान और इससे परे परम गुह्य ज्ञान।

म ैंअमुक हूँ-अज्ञान, 'म'ै हूँ-ज्ञान, दोनों को जो जानता है उसे कहते ेपरमगुह्य ज्ञान। नोट करो-

म ैंअमुक हूँ-प्रगट ज्ञान, 'म'ै हूँ, गुतत ज्ञान, इन दोनों प्रगट ज्ञान और गुज्ञान के परंज्ञाता (जानने वाले)

को परम गुह्य ज्ञान कहते ेहैं।

ये सब चीजें नारायण भाव में, नारायण द्वारा ही तनकल रही है। अब क कसर तो नहींरही, हृदय देश के भाव का हृदय देश से ही अनुभव हो सक है। जहा ूँसमझने की कोमशश फकया तो मसफि साहहत्य ही हाथ लगेगा। यहाँ आत्मतत्व का तनरूपण, तत्व दशनि हृदय से प्रवाहहत हो रहा है और इसे ह से ही ग्रहण करो। यहा ूँपर नारायण तत्व का तनरूपण हो रहा, साहहत्य तनरूपण नहीं। समझो र्वषय- वेदांत का क्या स्वरूप है? वेद का अथ िहोता जानना। प्जसको जानकर फफर जानना बाकी न रहे, उसे कहतेहैं वेदांत। जान का अंत हो जाना, यही वेदांत है।

आत्म तत्व 'म'ै हूँ के स्वरूप का वणनि फकया जा रहा है। उसी तत्व का प्रततपादन हो रहा है। भैया! यह बुद्धि का र्वषय नहीं ंहै। यह जो वेदांहै वस्तुतः भगवान आत्मा का ही कथन है। इसको वही कह रहा है और वही अनेकानेक रूप से सुन रहा है। यह तत्व बुद्धिगम्य नहींहै। यहद ' श्री भगवानुवाच' को 'अहं उवाच' कहें तो गलत न होगा। बस ! म ैंअमुक हूँ, यह प्रगट ज्ञान है और 'म'ै हूँ, यह गुतत ज्ञान है। अब इन दोनों का जो ज्ञान, वही परम गुह्य ज्ञान है। देखो-अभी अनुभव करो- समझो र्वषय को, म ैंअमुक हूँ, इस अमुक भाव को जानकर ही तो कहोगे न फक वैसे ही त्रबना मतलब फालतू ूकह दोगे। त्रबना जानेकैसे कहोगे। अजी! जब वह अपने'म'ै पर अमुक थोपेगा तो उसे जानकर ही तो कहोगे फक म ैंदेह हूँ आहद। उसे समझा है, परखा है, माना है तभी कहता है फक म ैंदेह हूँ, म ैं संसारी जीव हूँ। अब देखो-इसमें 'म'ै अछूता है, अलग है, 'म'ै पर कोई कलङ्क नहींहै।

प्जतने यहाँ पर बैठे हो, इसे ठीक तरह से हृदयङ्गम कर लो। यहाँ पर कोई पंथ-पंथाई, मजहब या सभा सोसायटी की बात नहीं ंहै। इनके दायरे के बाहर आओ। यहाँपर कोई साम्प्रदातयक चीज नहीं ंबताई जा रही है। हम तो हहन्दुओं को ही नहीं,ं वरन् ्मुसलमान, जैन, ईसाई, वैष्णव, शैवै सभी को उपदेश करते हैं। इन दायरों में क्यों पड़े

 हो? अरे ! म ैंस्वयंअपनेको कुछ मानकर ही तो इन दायरों में पड़ा हूँ। अरे राम, राम! बाहर जगत से संबंि तोड़कर
आत्म जगत में आओ। बाह्य जगत को छोड़कर मैदान में आओ। युतनव्हसलि टुथ (सावभिौम मसद्धांत) सारे वश्व का एक होता है। इसमें कोई शंका नहीं। यहद अपना कल्याण चाहो, अपनेकल्याण की तुम्हें भावना है और यहा ँूसे कुछ ले जाना चाहते हो तो वषय को हृदय से समझो। अपनेव्यक्तत्व को अपने आपको जो माना है, उसका लोप करो। व्यक्तत्व को रखकर समझना चाहोगे तो तुम्हारे पल्ले कुछ न पड़ेगा। कुछ भी समझ में नहींआएगा।
व्यक्तत्व को लोप करके ही आत्म तत्व जान सकतेहो। तो म ैंअमुक हूँ, यह प्रगट ज्ञान है। म ैंजानता हूँ फक म ैंदेह हूँ, जीव हूँ, इसमलए यह प्रगट ज्ञान है। तो क्या जाननेवाला भी जीव है? जरा होश में आकर समझो। 'म'ैं का आिार क्या जीव है? म ैंदेह हूँ, म ैंजीव हूँ, म ैंब्रह्म हूँ यहा ँूतक सब प्रगट ज्ञान है और 'म'ैं हूँ यह गुतत ज्ञान है और 'म'ैं
अथात्ि आत्मतत्व यही ब्रह्म ज्ञान है। इसको ग्रहण करो। इसका अनुभव करो।

ज्ञानं परर्गुहुयंरे् यद्धवज्ञानसर्न्नवतर् ्।
सरहस्यं तदङ्गं ंच गृहाण गददतं र्या ।।

आत्मतत्व का क्या रहस्य है? 'म'ैं के रहस्य चार हैं। 'म'ैं (आत्मा) का भाव। 'म'ैं (आत्मा) का रूप। 'म'ैं (आत्मा) का गुण और 'म'ैं (आत्मा) का कमि। आगे श्लोक में भगवान नारायण कहते ेहैं-

यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्कमः ।
तथैवतत्ववज्ञानर्स्तुतेर्दनुग्रहात्।। ्

(श्रीमद् भा. 2/9/31)

जैसा म ैंहूँ 'म'ैं का जैसा भाव, 'म'ैं का जैसा रूप, 'म'ैं का जैसा गुण और 'म'ैं का जैसा कम,ि इन्हीं वषयों का ज्ञान 'म'ैं आत्मा (आत्मतत्व) का रहस्य है। मेरी कृपा से इन तत्वों का अनुभव करो। अचछा, वषय को पूणतिया हृदयङ्गम करनेके मलए प्रफक्रया सुनो। जो सत्संगी गण बाहर से आए हैं (छिीसगढ़ से) उनके मलए प्रफक्रया समझानेकी जरूरत नहीं है। तुम लोग तो प्रफक्रया कहने से ही समझ लेते हो, परन्दतु यह (झंडापुर स्थान) नवीन िै है और नवीन िै होने के कारण प्रफक्रया समझा देना आवश्यक हो जाता है। इसमलए पहहले जरा प्रफक्रया समझा दूं तब बाद में आत्म तत्व के भाव, रूप, गुण और कम िका तनरूपण करूँगा। सािारणतया 'म'ैं का मतलब साढ़े तीन हाथ का शरीर ही मान रहे हैं, हदखाई तो ऐसा ही दे रहा है। जजस तरह मक्खन दिू में व्यातत है, परन्दतु दिू में व्यापक होतेहुए भी स्पश िकरनेपर नहीं ंममलता और जब उसी दिू का मन्दथन फकया जाता है तो मक्खन ऊपर आ जाता है। मक्खन की प्राप्तत दिू के मन्दथन से होती है। इसी तरह वचार रूपी मथानी से इस मान्दयता का मन्दथन करें।

कोई अपनेआपको साढ़े तीन हाथ का शरीर मानता है, कोई अपनेआप को जीव मानता है तो कोई अपने आप को ब्रह्म मानता है। सभी अपनेको एक ही वमशष्ट शरीर, जीव या ब्रह्म नहींमानते। सभी मान्दयताएँ वमभन्दन-वमभन्दन प्रकार की हैं। इन मान्दयताओं को अलग करके समझा दूं। सुनो, ध्यान दो, पहले ये दो शधद 'म'ैं

 और 'मेरा' समझ लो। 'म'ै कतृविाचक है और 'मेरा' संबंिवाचक है। अपने आप के मलए, खुद के मलए 'म'ै कहा जाता
है और अपने से संबंधित सम्बन्द्विाचक है। अपनेआप के मलए, खुद के मलए 'म'ै कहा जाता है और अपनेसे संबंधित के मलए 'मेरा' का प्रयोग होता है। इस तरह म ैका अथ िमेरा नहीं ंहोता और न मेरा का अथ िम ैहोता है।

अचछा, यहद फकसी व्यप्क्त से पूछा जाए फक तेरा नाम क्या है? वह कहता है मेरा नाम जगदीश है। भैया ! यह तो बताओ फक तुम्हारा नाम जगदीश कब रखा गया? तुम्हारे जन्द्म होनेके पूव िरखा गया था या तुम्हारे जन्द्म लेने के बाद? यहद तुम्हारा नाम जन्द्म लेनेके पहले ही जगदीश होता तो जब तुम्हारा जन्द्म हुआ तभी तुम्हारी माँपुकारती फक देखो जगदीश पैदा हो गया है। परन्द्तु, ऐसा कोई नहीं कहता। यह तो मौमलक बात है। तो नाम जन्द्म लेनेके बाद ही रखा जाता है और कहते ेभी हो फक मेरा नाम, नाम 'में' मेरा शधद लगा है। इसमलए यह स्वयं मसद्है फक मेरा कहने ेवाला नाम से अलग है। कुछ तुम्हें नई बात नहीं ंबताई जा रही है। सािारणतया सभी कहते ेहैं फक मेरा नाम, मेरा मसर, मेरी आँख, मेरी नाक, मेरा मुँह, मेरा हाथ, मेरा पावँ, मेरा शरीर। ऐसा कहने ेसे ही मसद्होता है फक नाम से लेकर शरीर तक 'म'ै नहींहूँ। हाँ जी, यहद मेरा का अथ िम ैलगाऊँ तो?

फकसी शहर में एक बड़े ेअचछे पढ़े-मलखे िनवान व्यप्क्त जमींदार साहब रहतेथे। फकसी हदन उसका पुि बीमार पड़ा। उसे डबल तनमोतनयो हो गया। उन्द्होंने ेअपने नौकर को आज्ञा दी फक फौरन अमुक डॉ. साहब को बुलाकर लावो। नौकर थोड़ी दूरू जाकर कहता है फक सरकार ! यहद डॉ. साहब घर पर न हों तो? मामलक ने कहा जल्दी जाता है फक नहीं? हुजूर, म ैयह चला। फफर बाहर जाकर वापस आकर कहता है फक सरकार! डॉ. ममल भी गए और और दवाई न हुई तो? मामलक गुस्सा होकर कहता है फक अबे, जाता है फक नहीं?ं नहींसरकार, चला जाता हूँ, ऐसी बात नहीं ंहै। परन्द्तु, फफर वापस आकर कहता है फक सरकार ! यहद डॉक्टर साहब ममले भी, दवाई भी ममली, लेफकन यहद डॉक्टर साहब आनेको तैयार नहींहुए तो? जमींदार साहब गरम होकर बोले फक बेवकूफ कहींका, जल्दी जाता है फक नहीं,ं बकबक कर रहा है। जल्दी ही डॉ. साहब को बुलाकर ला। हाँ सरकार अभी जाता हूँ। थोड़ी ही देर में फफर वापस कर कहता है फक यहद डॉ. साहब ममले भी, दवाई भी ममली और वे आने ेको तैयार भी हो गए, परन्द्तु उनके आने ेके पहले ही लड़का न रहा तो? भैया। इस, 'तो', का तो कोई इलाज नहीं है। यहद मेरा का अथ िम ै लगाऊँ तो म ैगाड़ी हो जाऊँ, क्योंफक मेरी गाड़ी कहता हूँ। मेरी टोपी कहता हूँ, तो म ैटोपी हो जाऊँगा। इसमलए मेरा का अथ िम ैनहीं।

आजकल जगह व जगह वेदांत के प्रचारक, वेदांत के ठेकेदार ममल सकतेहैं, परन्द्तु ऐसे उपदेशक वेदांत का ठीक अथ िनहीं ंलगाते। वे क्या भगवान की कथा करेंगे। भगवान को कभी देखे हों, उनका अनुभव फकए हो तब न, भगवान को वे क्या लखावेंगे। वे तो भगवान को कभी सुने ेभी नहीं। म ैकथा नहीं करता, म ैवेदांत का प्रचारक हूँ। भगवान को देखना हो तो हमारे पास आवो। जब चाहो, जहा ँजाहो, प्जस समय चाहो हम भगवान को लखा देने का दावा करते हैं। हम उन्द्हें अनुभव करा देंगे फक यही भगवान है। परन्द्तु, उन्द्हें भी भगवान के दशनि की भूख हो तब न?

यहद फकसी व्यप्क्त को प्जसे िन का लोभ है, कोई कहे फक भैया ! तुम्हें कोई काम न करना होगा। त्रबना कमाई के तुम्हें िन ममल जाएगा, तुम्हें लखपतत बना देंगे, यहद तुम्हें िन की इचछा हो तो हदला सकते हैं। तब तो सभी राजी हो जाएँगे, कहेंगे कृपा करो दादा, शीघ्राततशीघ्र िनी बना दो। जब कोई काम ही न करना पड़े ेऔर िन ममलता हो तो सभी स्त्री-पुरुष तैयार हो जाते हैं। िन लेने के मलए शायद ही कोई बचे, े सब तैयार बैठे हैं। हा ूँभाई ! ऐसी ही बातें हैं। परन्द्तु, भगवान को पाने के मलए पता नहीं ंक्या नुकसान हो रहा है- राम ! राम !! घोर तनरा से उठो ! जब चाहो, जहाँूचाहो, प्जस समय चाहो देखो। हम तुम्हें हदखा देंगे फक यही भगवान हैं। बस ! बाकी सब कुछ पाखंड है, गतप बात है। हम वर्श्व के मलए चुनौती देते हैं। वह भगवान नहीं है, प्जसे देखने के मलए तुम ज्योततर्षयों से पूछकर मुहूत ितनकालकर ममलो । ज्योततर्षयों के पास जाकर पूछो फक हमारी जन्द्मकुंडली देखकर बताइये फक हमें भगवान ममलेंगे फक नहींऔर यहद ममलेंगे तो कब ममलेंगे? भगवान ऐसे नहीं ंहैं फक इस तरह से ममलें।

कबहुँक करर करुना नर देही। देत ईस त्रबनु ुहेतु सनेही ।।

(रा. उिर. कां.)

अरे! वर्षय भोग तो कूकर-सूकर भी करते हैं। वर्षय भोग उन्द्हें भी ममलता है। भगवान ने मनुष्य जन्द्म क्यों हदया? भगवान प्रातत करने ेके मलए ही भगवान ने शरीर हदया है, क्योंफक भगवान की प्राप्तत इसी शरीर से ही होती है। मेरी नाक, मेरा कान, मेरा पैर, मेरा शरीर, हम सब यही कहते हैं और अंग्रेजी में भी 'माई बॉडी' कहते ेहैं, 'आई एम बॉडी' ऐसा तो कोई नहीं ंकहता। तो नाम से लेकर शरीर तक 'म'ै नहीं ंहूँ, क्योंफक मेरा कहता हूँ और गौर करो तो शरीर मेरा भी नहीं ंहै।

नछनत जल पावक गगन सर्ीरा। पंच रधचत यह अधर् िरीरा ।

प्रगटसो तनुतवआगेसोवा।जीव ननत्यकेदहलधगतुम्हरोवा ।।

(रा.फक.)

आकाश, वायु, अप्न, जल और पृथ्वी इन पाँूचों तत्वों के पंचीकरण से इस शरीर का तनमाणि हुआ है। यह शरीर मल, मिू का भांड है। मरने-जीनेवाला है। हा,ूँ यह अवश्य है फक 'म'ै इसके अंदर रहता हूँ और इसी गरज से म ै कहता हूँ फक मेरा कान, मेरी नाक, मेरा शरीर, परन्द्तु मेरा कहने ेकी गरज से म ैशरीर नहीं हो जाता। तो समझ गए- वाह रे ममट्टी के शेरे ! प्जस तरह म ैनाक, आँूख नहीं ंइसी तरह से शरीर भी म ैनहीं ंहूँ, क्योंफक मेरा शरीर कहता हूँ और जरा गौर से देखो तो तुम्हें पता लगेगा फक शरीर मेरा भी नहींहै। जैसा मकान ममट्टी, गारे, ईंटों से बना है। इसमें खंभे, दरवाजे, बप्ल्लयाँू, बांस, खपरे आहद लगे हैं। इसी तरह यह शरीर रूपी मकान मांस, मज्जा, अप्स्थ, रक्त आहद से बना है। हाथ-पैर रूपी खंभे लगे हैं। इसके नौ दरवाजेहैं। मकान में बप्ल्लयाँू लगती हैं, इस शरीर रूपी मकान में हड्डी रूपी बप्ल्लयाँू लगी हैं और चमड़ी से छाया गया है। मकान प्जस तरह चूना, खडड़या, ममट्टी, गेरू, नीला थोथा आहद से पोता जाता है इसी तरह यह शरीर कोई काला, कोई गोरा, कोई साव ूँला है। जैसा वह मकान

 वैसा ही यह मकान है। तो फफर शरीर मेरा भी नहीं ़है। मांस, हड्डी आहद से बना है। पंच तत्वों के पंचीकरण से यह

शरीर बना है। चूँफक म ़ैइसमें रहता हूँ, इसमलए रहने ़की गरज से म ़ैइसे अपना ही मान बैठा हूँ फक यह मेरा शरीर है।

याद रखो फक इस समाज में बड़े-ेबड़े ़ेर्वद्वान, वकील, न्यायिीश बैठे हैं। ताजरात हहन्द के दफा 448 का जुम ़िकर रहे हो। दूसूरे के मकान में जबरदस्ती कधजा करना अपरि है। तुम यह अपरि शरीर के र्वषय में कर रहे हो फक यह मेरा शरीर है, जबफक यह वस्तुतः पंचतत्वों का है। तुम पर यह दफा लागू होगा। यहा ़ूँपर आत्मतत्व का तनरूपण हो रहा है। आत्मा अपना आप 'म'़ै है न फक शरीर। कमेटी के पंचों ने यह साढ़े तीन हाथ का मकान बनाकर तुम्हें हदया फक ले भैया इस शरीर को प्रातत कर, इसके द्वारा प्रभु ़ुको प्रातत करो। परन्द्तु, क्या इसे अपना ही समझ मलया और र्वषय भोग में पड़ गए। अरे! कूकर, शूकूर भी र्वषय भोग करते हैं। तो यह मनुष्य का शरीर तुम्हें क्यों हदया गया? क्या र्वषय भोग के मलए? नहीं।

साधन धार् र्षेष कर द्वारा। पाइ न जेदह परलोक संवांरा ।।
एदह तन कर फल ववषय न भाई। स्वगउम स्वल्प अंतं दु:खदाई ।।
नरतन पाई ववषयर्न देहीं। पलदटसुधुातेसठववषलेहीं। .

(उ.कां.)

शरीर ममला है भगवान को प्रातत करने के मलए, ब्रह्म, आत्मा का सािात्कार करने के मलए। परन्द्तु, वाह रे फतह बहादुरु ! इस शरीर पर अपना कधजा कर मलया, हम जैसा चाहें इस शरीर का उपयोग करें। अरे! तुम अनजाने दफा 448 का जुम ़िकर रहे हो। हमारे पास इस संत कोटि में यह मामला आया है। इस कोटि में ऐसे मामले आते रहते हैं। याद रहे, इस कोटि में फकसी की वकालत न चलेगी और यहद अमभयुक्त हाप्जर न हुआ तो एकतरफा डडग्री ठोंक देंगे। हाूँ भाई ! फफर क्या, एकतरफा डडग्री ठोंक देंगे। तो हाूँ, तुम्हारा दावा खाररज कर हदया गया। यह तो संतों की अदालत है। न तुम शरीर हो और न तुम्हारा ही शरीर है। न 'म'़ै शरीर हूँ और न मेरा शरीर है। तो फफर हहन्द्दू,ू़ ब्राह्मण, वैश्य, शूरू, प्रणामी, उदासी, तनमोही, तनरंजनी, रामसनेही, कबीरपंथी, घीसापंथी, गोबरपंथी, कुंडापंथी आहद। अरे! इन्द्हें फकस पर आरोर्पत करोगे? आजकल पंथों का भरमार लगा हुआ है। इस संसार में इस समय दो हजार नौ सौ तनन्द्यानबे पंथ हैं और हदन-प्रततहदन नए-नए बनते ही जा रहे हैं। अपनी- अपनी खंजरी और अपना-अपना राग। इन सभी पंथों में इनके अनुयाइयों में राग-द्वेष भरा पड़ा है। एक-दूसूरे को पावें तो खा जाएूँ और ऊपर से तारीफ, फक सभी पंथी अपने-अपनेपंथ को अनाहद मानते हैं। ऐसा प्रदशनि करते हैं फक इसके पंथ का जन्द्म आहदकाल का है। इनके जो ़िम ़िप्रवतकि हुए हैं वे सब आहद-अन्द्त वाले हैं। परन्द्तु दंभ तो देखो अपनेपंथ को मि ़िको अनाहद बतलाते हैं।

राम-राम, तो भैया ! समझो म ़ैलंबा हूँ, म ़ैचौड़ा हूँ, नीला हूँ, लाल हूँ, ़िमी हूँ, छह र्वकार वाला हूँ। छह उममयों वाला हूँ। ये सब शरीर के ़िम ़िहैं। 'म'़ै के नहीं,़ इस शरीर के हैं। शरीर जन्द्मता मरता है 'म'़ै नहीं। मरना-जीना शरीर का ़िम ़िहै। इसीमलए जब 'म'़ै इसे अपनेपर आरोर्पत कर लेता हूँ तब इससे भयभीत रहता हूँ।

दो ममि एक तीसरे ममि के यहाूँगए। वह ममि पूछता है फक आपके साथ जो आए हैं उनकी क्या तारीफ (पररचय) है? ये कौन हैं? तो वह ममि कहता है- ममि! ये हमारे क्लास फेलो हैं। ये हमारे साथ प्रायमरी में पढ़े, फफर हाईस्कूल में साथ-साथ पढ़े और कॉलेज में भी हम लोग साथ ही साथ पढ़े हैं। तब यहाूँ प्रश्न होता है फक भाई! जब तुम प्रायमरी में पढ़े तो क्या तुम दोनों का यह दाढ़ी-मूंछ वाला शरीर ऐसा ही रहा होगा? तो कहता है फक नहीं। तब तो हम दोनों छोटे रहे। तो अब पहले जैसा शरीर न रहा, बदल गया और सोचो, जब 'म'ैं शरीर होता तो 'म'ैं भी बदल जाता, क्योंफक शरीर बदल गया है। जब 'म'ैं भी बदल जाता तो यह याद फकसको रहती फक ये हमारे सहपाठी हैं। इसमलए 'म'ैं तो वही का वही हूँ, यद्यर्प शरीर बदल गया है। शरीर बालक, युवा (जवान) बूढ़ा होता है और अन्द्त में मर जाता है, परन्द्तु शरीर के मर जाने से म ैंआत्मा मरता नहीं ंहूूँ। यह जो साढ़े तीन हाथ का ढ़ांचा हदख रहा है वह 'म'ैं नहींहूूँ। यद्यर्प 'म'ैं रग-रग में बस रहा हूूँ। मेरा नाम, मेरी नाक, मेरा मूूँह, मेरा शरीर, यह सब म ैंनहीं ंहूूँ। अचछा, देखो जो म ैंकह रहा हूूँ उसको न मानना, जो 'म'ैं कहूूँ उसको जानना। अरे यार! ये तो मस्तों के लतीफे हैं। जो म ैंकहूूँ उसको न मानना और जो 'म'ैं कहूूँ उसको जानना। यानी साढ़े तीन हाथ वाले की बात को न मानना यह जो व्याख्या से परे हैं उसको जानना। वह जो जानने ेकी चीज है, मानने की नहीं। देखो-जो मानने ेकी चीज है वह मरणिमी है, उसको माना जाता है। यहाूँपर सभी समझदार बैठे हैं। दोनों तरफ प्रकृतत और पुरुष सभी र्वद्वत् ् समाज है। पंथों के पंडडत जो हैं, वे ेअपने सेवक मंडल को अपनेपंथ की बातें बतातेहैं। उसी की व्याख्या करते चले जाते हैं, सेवक चाहे समझे ेया न समझे।े बस, हाथ जोड़े ेबैठे रहतेहैं, मानते चले जाते हैं। हा,ूँ सत् ्वचन महाराज। जो उनके गुरु ने बताया, वही उनके िम िहैं। परन्द्तु, यहा ूँपर यह नहीं कहा जा रहा है। जब तक तुम्हारे गले के नीचे न उतरे, तब तक न मानना, नहीं ंतो पंथ-पंथाई आ जाएगी। सब बातें ठीक समझ लो फफर जानने का प्रयत्न करो।

स्वामी जी ! आपनेजो अभी बताया है इसका कोई प्रमाण भी है? जी हाूँ, म ैंप्रमार्णत बात कहूूँगा, ऊटपटांग बातें नहीं। इन सबका वेदोक्त प्रमाण है। प्रमाण सहहत ही बताऊूँगा, जो तुम्हारे धचि को समािान करेगा, जो शंकाओं का मूलोचछेद कर देगा। यहद तुम्हारे धचि को समािान न हुआ तो स्वामीजी ठीक कह रहे हैं, यह न मानना। संसार में ठगों का जाल त्रबछा हुआ है, सम्हल-सम्हल कर पग रखना। पंथ और मजहबी पचड़े ेमें मत पड़ो। यह सब समाज में ठगों का जाल त्रबछा हुआ है और लोग गुमराह हो रहे हैं। फकस- फकस की बात मानें, फकसे ग्रहण करें? तो भैया ! धचि को शांतत तभी ममलेगी और हृदय में बात ठीक-ठीक बैठेगी, जब बात प्रमाणयुक्त होगी। तो 'म'ैं न हाथ, न पावूँ, न कान, न नाक और न शरीर, न मेरा शरीर। अचछा तो स्वामीजी ! क्या 'म'ैं सुन रहा हूूँ? नहीं। म ैंकहता हूूँ फक मेरा मन-तो म ैंमन भी नहीं। म ैंकहता हूूँ-मेरी बुद्धि, तो म ैंबुद्धि भी नहीं। मेरा प्राण-मेरी सांस, तो म ैंप्राण भी नहीं ंहूूँ। म ैंकहता हूूँ फक मेरा जी घबरा रहा है, तो म ैंजी भी नहीं। यहाूँतक कभी-कभी लोग कह देते हैं फक मेरी आत्मा-हालांफक मेरी आत्मा कहना ठीक नहीं, मेरी आत्मा कहना यह युक्तसंगत नहीं ंहै, आत्मा तो अपना आप है, आत्मा का अथ िखुद होता है और 'म'ैं का अथ िभी खुद होता है तो 'म'ैं स्वयं आत्मा हूूँ। तो यह ठीक से समझ लो फक म ैंऔर मेरा एक नहींहै।

यहा ूँपर जो मुस्स्लम भाई हों तो इस्लाम िम िपर गौर करो। खुदा का क्या अथ िहोता है। खुदा की तशरीह क्या है, खुदा की व्याख्या क्या है? यहा ूँपर हाफफज मौलवी सभी बैठे हैं। सभी से पूछता हूूँ फक खुदा की क्या व्याख्या है।

खे दाल पेश-खुद, अमलफ साफकन- खुदा ।

खुद के मायने ें'म ें। जो दुतुनयाँू का खुद है, 'म ें है वह एक है या अनेक ? एक है। अमलफ से एक मलखा जाता है। यही खुदा के मायने ेहैं-सारे जहान का, म.खलूक का जो खुद है, अमलफ मायने ेएक है। 'म ें हूूँ यह स्वामी जी अपनेमलए कहते हैं ऐसा न समझना। अरे! कहा ूँअंरिे में भटक रहे हो। जरा प्रकाश में आओ यार ! अंरिा न ढ़ोवो ! अंरिा ढोने की बात जरा सुना दूं, बहुुत हदन हो गए बताए-

कहीं ंएक भीलों की बस्ती थी। उन भीलों में दीपक जलाने का ररवाज नहींथा, रात्रि में हदया नहीं ंजलतेथे। वरन् ्जब रात्रि होती थी तो गावूँ के सभी भील, स्त्री-पुरुष अंरिा ढोते थे। मसर पर गुड़री बना बड़े-ेबड़े ेटोकरों में अंरूँरी को पैर से दबा दबा कर भर लेते थे ेऔर गांव के बाहर सड़क में फेंकतेरहतेथे। बालक, वृदि् सभी मसर पर टोकरी लादकर अंरिा फेंकते, यह फक्रया रात्रि भर चलती। जब सूय िभगवान का प्रकाश हदखता, रात्रि बीतनेपर जब अंरिा स्वयं दूरू हो जाता तो वे लोग समझतेफक इन लोगों ने सब अंरिा ढो डाली।

एक भील के लड़के की शादी फकसी अन्द्य गाूँव में हुुई। नई दुलुहन घर में आई। नई बहूू के घर में अंरिा ढोने की प्रथा नहींथी, वहाूँकेलोग दीपक जलातेथे। जब रात्रि हुुई तो उसकी सास एक बड़ी-सी टोकरी नई बहूू के सामने रखकर उसको भी अंरिा ढोने को कही। नई बहूू सोचने लगी फक अचछा पागलों के यहाूँआई हूूँ। क्या अंरिा भी कोई ढोनेकी चीज है? वह अंरिा ढोनेको राजी नहीं ंहुुई। बुहढ़या त्रबगड़ गई, कहती है-चली बड़ी आई मेरी सास, मेरी सास की सास सभी अंरिा ढोये हैं-चल उठ। इस तरह जब वाद-र्वाद हो रहा था तो घर का बूढ़ा ससुर आया और बीच-बचाव फकया। उसने समािान फकया फक नई बहूू आज ही आई है और थकी हुुई है, इसमलए इसे अंरिा ढोनेको आज न कहा जाए। वरन् ्अपनेपुि को कहा फक बहूू के हहस्से की भी अंरिा आज तू ही ढो देना। पुि आज्ञाकारी था, वह अपनी पत्नी के हहस्से की अंरिा ढोनेलगा। मुढ़ेरी बांकिर मसर में अंरिा भरकर रात्रि भर ढोया। नई बहूू हदन में पता लगा ली फक पास में बाजार कहा ूँहै-लोगों से मालूमू फकया फक चार-पाचूँ फलांग पर 'त्रबहार' नाम का एक गावूँ है। हाूँभाई ! चश्मदीद ममशाल देनी चाहहए। नई बहूू बाजार से दीपक, तेल, रूई सब ले आई और रात्रि में घर में हदवाली मनाई, घर जगमगा उठा। आगे-पीछे दशों हदशाओं में कहीं भी अंरिा का पता नहीं। तब तो उसकी सास और सभी, बहूू की पूजा करने लगे। यह तो सािात् ्जदगम्बा है। घर में जगत जननी आई है। उसका पतत भी पावूँ पड़ने ेलगा। घर में अंरिा दूरू हो गई और सभी घर में पैर फैला-फैलाकर सोये। यह बात जब गावूँ के अन्द्य लोगों को मालूम हुुई तो पूछने ेआए फक भाई ! आज तुम लोग अंरिा क्यों नहींढोये? तब ये कहने ेलगे फक भैया ! घर में सािात् ्लक्ष्मी देवी आई है। बहूू नहीं, सािात् ्जगदम्बा है, हदया के प्रकाश से अंरिा का नाश बताए तो फफर गावूँ का गावूँ दण्ड प्रणाम करने ेलगे। देवी ! कृपा करो-हमारे घर की भी अंरिा दूरू कर देना। इस तरह इस गाूँव से अंरिा ढोनेकी प्रथा बंद हो गई। प्रकाश होने ेलगा।

यह तो एक दृष्टांत है। इसका राष्टांत है फक अनाहदकाल से हृदय रूपी मकान में अज्ञान की अंरिा छाई हुुई है और इस अज्ञान रूपी अंरिा दूरू करने ेके मलए नाना प्रकार के सािन करते आ रहे हैं। कष्ट साध्य सािन कर

 रहे हैं परन्द्तु भैया ! जब तक कोई सद्गुरु श्रोत्रिय ब्रह्मतनष्ठ संत के शरण नहीं गए, उनकी कृपा नहीं प्रातत फकए
तो अनाहदकाल के सिानों में भी अज्ञानान्द्किार समातत होनेवाला नहीं। अज्ञान का नाश तो संतों की कृपा से ही होता है।

स्वामी जी ! यह दारुण अर्वद्या, जन्द्म-जन्द्म का अज्ञान, कैसे जल्दी से दूरू हो! क्या कोई उपाय है फक अनाहदकाल की अर्वद्या एक िण में दूरू हो जाय ? कैसे होगा? इसका उिर सुनो-

फकसी कन्द्रा में हजारों वषों से अंकिार छाया हुआ है, अनाहदकाल से अंिरा है। वह अंकिार यह नहीं कहता फक हम जल्दी नहीं जाएंगे। यहाँूतो हमारा हजारों वषों का कधजा है, लाखों बरसों का कधजा है, जल्दी नहीं जाएंगे। परन्द्तु, ज्यों ही प्रकाश हुआ, एक हदया जलाया, त्यों ही वह हजारों वषों का अंकिार कहाँू चला जाता है, फकतनी जल्दी अंकिार भाग जाता है, इसकी कोई सीमा नहीं। इसी प्रकार यह हृदय का अंकिार, जन्द्म-जन्द्म का अज्ञान यह नहींकहता फक हम नहीं ंजाएूँगे। जब भी परम ज्ञान, ब्रह्मज्ञान का बोि होगा, अज्ञान का नाश स्वयंहो जाएगा। यह अर्वद्या रूपी अंकिार नहीं कहेगा फक हम नहीं ंजाएंगे। परम ज्ञान को प्रातत करो। परम प्रकाश का अनुभव तुम स्वयं करोगे। इसमलए इस परम ज्ञान को प्रातत करनेकी उत्कट प्जज्ञासा जगाओ। फकसी श्रोत्रिय ब्रह्मतनष्ठ सद्गुरु के समीप जाकर हाथ में पि, पुष्प, फल, सर्मिा लेकर उनके चरण में प्रर्णपात होकर प्राथना करो। सद्गुरु के शरण में जाओ।

तद्ववज्ञानाथं ंसगुरुरे्वाभभगच्छेत्सभत्पार्णणः श्रोत्रत्रयं ंब्रह्मननष्ठर् ्।।

(मुण्डक 1-2-12)

प्जज्ञासुओं! कान खोलकर सुन लो, नदी का बहना तब तक बंद न होगा जब तक फक नदी अपने घर में नहीं ंपहुूँच जाएगी। नदी का घर समुर है और जब तक वह समुर में नहीं पहुूँच जाती तब तक वह अचल नहींहोती।

सररता जल जलननधध हुं जाई। होइ अचल न्जभर् न्जव हरर पाई ।।

(रा.फक.)

लोगों की यह आम भावना हो गई है फक भैया! प्रारधि के त्रबना कुछ नहींममल सकता, तो फफर तकदीर के त्रबना भगवान को प्रातत करना कहाँू संभव है। यह जान लो फक तकदीर के भरोसे न रहो। भगवान को प्रातत करना तुम्हारे स्वयं के उत्कट अमभलाषा पर तनभिर है। यह गलत िारणा छोड़ दो फक तकदीर से, प्रारधि से भगवान ममलतेहैं। भगवान तो तुम्हें स्वयं ममले हुए हैं।

उनहें र्ंज़िल नहीं भर्लती, जो ककस्त के सहारे हैं ।
उनकी ज़िनदगी ही र्ौत, जो वै दहम्त के हारे हैं ।। 1 ।।
जो बेग़जी से हैं जीते, उनहें क्या र्ौत से डर है।

हरिाृ खुद पे जो रिीन, वही रिीन भसतारे हैं ।।2।।
हु.कूर्त रुलुक पर थी न्जनकी, वे दर-दर के भभखारी हैं ।
त्रबगड़ना बनना दोनों ही, ये कुदरत के ऩिारे हैं ।।3।।
जीना सच र्ें उनका ही, जो खुद र्स्ती र्ें जीते हैं ।
सभी से 'रुकुत' हैं हरदर् ये र्स्तों के इिारे हैं ।।4।।

कौन? जो बंिसे मुक्त और मिो से भी मुक्त। सव िसकंल्पों से जो मुक्त है। इसमलए-

जीना सच र्ें उनका ही, जो खुद र्स्ती र्ें जीते हैं ।
सभी से 'रुकुत' हैं हरदर्, ये र्स्तों के इिारे हैं ।।

अरे! ये मस्तों के लतीफे हैं।

उनहें र्ंनं्जल नहीं भर्लती, जो ककस्र्त के सहारे हैं ।
उनकी न्जंदंगी ही र्ौत, जो वै दहम्र्त के हारे हैं ।।
ज्ञानं परर्गुह्युयंर्े यद्धवज्ञानसर्न्नवतर् ्।
सरहस्यं तदङ्गं च गृहाण गददतं र्या ।।30 ।।
यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणुकर्कमः ।
तथैव तत्ववववज्ञानर्स्तु ते र्दनुग्रहात् ्।।31 ।।
अहर्ेवासर्ेवाग्रे नानयद्यत्सदसत्परर् ्।
पश्चादहं यदेत्च योऽवभिष्येत सोऽस्म्यहर् ्।।32 ।।
ऋतेऽथं ंयत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्र्नन ।
तद्धवद्यादात्र्नो र्ायांयथाऽऽभासो यथा तर्ः ।।33 ।।
यथा र्हान्नत भूतानन भूतेषूच्चावचेष्वनु।
प्रववष्टानयप्रववष्टानन तथा तेषुन तेष्वहर् ्।।34 ।।
एतावदेव न्जज्ञास्यंतत्वन्जज्ञासुनुाऽऽत्र्नः ।
अनवयव्यनतरेकाभ्यां यत्स्यात्सवत्रम सवदमा ।।35 ।।

एतनर्तं ्सर्ानतष्ठ परर्ेण सर्ाधधना ।

भवानकल्पववकल्पेषुन ववर्ुह्ययनत कदहधमचत्क्६ ॥॥

(श्रीमद् भागवत 2/9/30-36)

प्रथर् ददवस :

दूसूरी बेला

दोपहर 2.00 से 4.00 बजे तक

प्रपनन पाररजाताय तोत्त्रवेत्रैकैपाणये ।

ज्ञानर्ुद्राय कृष्णाय गीतार्ृत दुहे नर्ः ।।

वसुदेव सुतं देवंकंसचाणूरूर्दमनर् ्।

देवकी परर्ानंदं कृष्णं ्वनदे जगद्गुरुर् ्।।

र्ूकं करोनत वाचालं ्पंङ्गं ्लङ्घयते धगररर् ्।।

यत्कृपा तर्हं वनदे परर्ानंद र्ाधवर् ्।।

प्रसंग चल रहा है- चतु:श्लोकी भागवत-

ज्ञानं परर्गुह्ययंर्े यद्ववज्ञानसर्नन्वतर् ्।

सरहस्यं तदङ्गं ्च गृहाण गददतं र्या ।।30 ।।

यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्कमः ।

तथैव तत्त्ववववज्ञानर्स्तु ते र्दनुग्रहात् ्।।31 ।।

र्वज्ञान समप्न्वतं संयुक्तंसरहस्यं ्च पुनः तदङ्गंमे परम गुह्यं ्ज्ञानम् ्हे ब्रह्मन् ्!

त्वं ्गृहाण। हे ब्रह्माजी ! र्वज्ञान संयुक्त यानी र्वज्ञान सहहत साङ्गोपाङ्ग एवं ्रहस्य सहहत मेरे परमगुह्य ज्ञान को तुम ग्रहण करो।

यावानहं यथाभावो यरूपूगुणकमकिः तथैव तत्वर्ज्ञानंमदनुग्रहात् ्ते ेअस्तु । 'म'ै का जैसा भाव, 'म'ै का जैसा रूप, 'म'ै का जैसा गुण, 'म'ै का जैसा कम।ि हे ब्रह्माजी ! मेरी कृपा से चारों तत्वों का तुम्हें बिो वैसे ही हो

जाए।'म ॆ जैसा हूँ जो 'म ॆ का भाव, रूप, गुण और कम ि आओ, इन रहस्यों का अनुभव करें। भली-भातूँत समझकर ग्रहण करो-अपनेआप 'म ॆ को शरीर से मभन्द्न समझो-यह पहले प्रफक्रया समझाने में बताई जा चुकी है। सिू रूप में जान लो फक प्जन पदाथों को मेरा कहता हूँ वह पदाथ ि'म ॆ से अलग है। तयारे ! जानों फक मेरा कहने वाला 'म ॆ से अलग होता है।

समझो-यहद ऐसा कहा जाए फक 'म ॆ ऐसा हूँ तो 'म ॆ का प्रकार हो जाएगा क्योंफक यहद 'म ॆ ऐसा हूँ तो ऐसा नहीं ंहूँ-ऐसा भी कहा जा सकता है, इसमलए 'म ॆ ऐसा हूँ-ऐसा नहीं ंकहा जा सकता। 'म ॆ जैसा हूँ वैसा ही हूँ। 'म ॆ ही जानेगा फक वह कैसा है। यह दूसूरी चीज है फक 'म ॆ को कोई शरीर मानता है,

तो कोई जीव मानता है और कोई ब्रह्म मानता है, परन्द्तु 'म ॆ तो एक ही हूँ। तो फफर इन वर्परीत दृष्ट वालों को एक नहीं ंअनेक हदख रहा है। ये बात है म ॆजैसा हूँ वैसा ही हूँ, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा । 'यावानहं' की व्याख्या हो रही है।

जो जैसौ है वैसा ही हूँ, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा ।।1।।
हूँ कौन कहा ुँर् ॆकैसा, तिरीह नहीं तकरीर नहीं।

होगएर्सुव्वरसबहैरांकोईकुछदेखाकोईकुछदेखा।।।। **2**

प्जतने भी वेद, पुराण, दशनि शास्िहैं और उनके बनाने वाले ये सब धचिकार हुए। ये सभी परेशान हैं 'म ॆ को जानने में नेतत-नेतत कहते ेहैं, वहाूँमन, वाणी की गम नहीं।

अिेनकाब पोिीदा हूँ, दीदार ए चश्र् पेचीदा हूँ ।
लग गए लबों पर चुप ताले, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा ।।3।।

अशे–आकाश, नकाब-घूंघट, पोशीदा-छुपा हुआ। मुझ भगवान आत्मा पर आकाश का पदाि पड़ा है। 'म ॆ कैसा हूँ यह दृष्टगम्य नहींहै। आूँख से तुम मुझे ेनहीं ंदेख सकते। मुझेदेखने में आखेँ समथ िनहीं ंहैं। 'म ॆ पेचीदा हूँ।

सारी दुतुनया ुँका 'र् ॆ हूँ दुतुनयाुँकफर भी तलाि र्ें कफरती है ।
बस यही तरिंा कुदरत का, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा ।।4।।

एक का नहींसारी दुतुनयाूँ का, प्जतनेबैठे हो चाहे प्रकृतत समाज हो या पुरुष समाज सभी अपने आपको क्या कहतेहो? 'म ॆ। तो सारी दुतुनया ूँका 'म ॆ हूँ फफर भी दुतुनया ूँतलाश में फफर रही है। जन्द्म-जन्द्मांतर अनाहदकाल से उस भगवान को ढूँढ़ रही है। भैया! यही तो माया का खेल है।

ये अजब अनोखी तसवीरें, णखंचं रही तसव्वर र्ें हरदर् ।

तसवीर तसव्वर दोनों को, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा ।।5।।

ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्ति सभी 'म'ै हूँ और उसकी तस्वीर खंचं रही है। अरे ! फकसमें देख रहो हो?फकस पर सारा संसार खंचां हुआ है।

ये अजब अनोखी तसवीरें, णखंचं रही तसव्वर र्ें हरदर् । ओ। हो।
तसवीर तसव्वर दोनों को, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा ।।5।।

देखा तो सभी ने-फफर देखने वाले को भी, क्या देखा? क्योंफक तसवीर और तसव्वर एक ही है। देखने वाले अनेक हैं पर देख फकस को रहे हैं? एक को। स्र्ीि दैखती है फक यह मेरा पतत है। पिु देखता है फक यह मेरा र्पता है। बहहन देख रही है फक यह मेरा भाई है। चाचा देखता है फक यह मेरा भतीजा है। साला के मलए यह बहनोई है। शिु देखता है फक यह मेरा शिु ुहै। मर्ि देखता है फक overline 45 मेरा मर्ि है। तसवीर एक ही है, परन्द्तु देखने वाले मभन्द्न-मभन्द्न देख रहे हैं। इस साढ़े तीन हाथ के शरीर का बूँटवारा अभी तक न हो सका। इसके हहस्सेदार अनेक हैं। पत्नी का पतत, पिु का र्पता, ये भाव उन्द्हींके पास है। यहद यह शरीर सचमुच में पतत होता तो फफर सबको ही वह पतत ही हदखता। तब तो वह सबका ही पतत हो जाएगा, सभी स्र्ीि उसे पतत मानतेहैं। तो बहहन का भाई बहहन के पास है।

तसवीर तसव्वर दोनों को, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा ।।

'म'ै तो आत्म तत्व तसव्वर इसको क्या देखा?

यं ैिवाः सर्मुपासते ेभिव इनत ब्रह्मेनत वेदान्न्तनो,
बौद्धाः बुद्ध इनत प्रर्ाण पटवः कतेनत नैय्यानयकाः ।
अहमन्न्नत्यथ जैनै ािसनरताः कर्ेनत र्ीर्ांसकाः,
सोऽयं वो ववदधातु वान्छछत फलं ंत्रैलौक्यनाथो हररः ।।

प्जस 'म'ै आत्मा को शैवै मशव रूप से उपासना करते हैं। फकसकी? म ैआत्मा की। प्जस आत्मा को बौद्ध बुद्ध नाम से उपासना करते हैं। नैयातयक प्जसे कतिा मानकर उपासना करते हैं। जैन प्जसे अहिन्द्तदेव कहते ेहैं। कमिवादी प्जसे कम िमानकर उपासना करते हैं। इसमलए कोई कुछ देखा, कोई कुछ देखा।

अरे ! जो 'म'ै यही तसव्वर है। यही तुलसी का राम है। सूर का श्याम है। गोर्पयों का कृष्ण है, मीरा का धगरिर है। हहन्द्दुओंका जो ईश्वर है। मुसलमानों का जो खुदा है। ईसाइयों का ईसा है। यहूहदयों का मूसा है। बौद्धों का बुद्ध है। जो आप्स्तकों का 'है' है और नाप्स्तकों का 'नहीं' है।

कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा-

'म'ं जैसा हूँ वैसा ही हूँ, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा। देखो-अज्ञानवश अनाहदकाल से मोह तनरा में सोने वालों! क्या समझे?े आत्मा को साढ़े तीन हाथ का शरीर माना है, उसे जीव माना है, भैया! यह 'म'ं क्या हूँ-इस महत्व को समझो -

प्रकृनत ववकृनत भभननः िुद्ध बोध स्वभावः

सदसदददर्िषें भासयन्ननवविेमषः ।

ववलसनत परर्ात्र्ा जाग्रदाददष्ववस्था,

स्वहर्हभर्नतसाषात्साक्षक्षरूपेणबुद्धेः ।।

(र्ववेक चूड़ामर्ण-137)

जो प्रकृतत और र्वकृतत से परे है यानी जो परमात्मा न फकसी का कारण है, न फकसी का काय िहै। न परमात्मा फकसी से पैदा हुआ है और न परमात्मा से कुछ पैदा हुआ है। अगर मान लो फक परमात्मा फकसी के द्वारा उत्पन्द्न हुआ है, तो फफर यह पता लगाना होगा फक वह फकससे पैदा हुआ है और फफर उसका पैदा करने ेवाला फकससे पैदा हुआ? तो यहा ूँपर वेदांत का चफक्रकापर् दोष आ जाएगा और फफर जब परमात्मा पैदा हुआ तो शायद कहने वाला पुरुष तो देखा ही होगा फक वहाूँ जब पैदा हुआ, पैदा होने ेके टाइम में मानो वहाूँ खड़े ेहों, बुद्धि से समझो-इसमलए परमात्मा फकसी से पैदा नहीं ंहुआ। जब परमात्मा से भी कुछ पैदा नहीं ंहुआ। अथात्ि्संसार पैदा ही नहीं हुआ। प्जज्ञासुओं ! देखो-अरे! अभी पोल खोल देते हैं-परमात्मा न जन्द्मने वाला है, न जन्द्म देता है। कारण, जो जन्द्म लेता है, वह मरता भी है।

सत्यं ज्ञानर्ननतं ब्रह्र् ।

(तै.उप.)

फफर उसे कैसे जन्द्मने वाला मानें? जो जन्द्म रहहत है, अनन्द्त है वह कैसे जन्द्म लेगा जब सब कुछ वही है। जो स्वयं जन्द्म लेना नहीं ंजानता तो पैदा क्या करेगा? अरे भाई! हा–ूँउसे क्या तमीज होगी जो जन्द्मना नहीं जानता, वह दूसूरे को क्या पैदा करेगा? देखो-प्जसने तुमको पैदा फकया वह भी फकसी से पैदा हुआ था-तो फफर उसका जन्द्म देनेवाला उसका बाबा और उसका जन्द्म देने वाला वह भी फकसी से पैदा हुआ था और इसीमलए तो तुमको भी पैदा करने की तमीज है-इसमलए इनसे कोई पैदा नहीं हुआ। इसमलए प्रकृतत र्वकृतत मभन्द्नः शुदिु बोि स्वभावः-प्रकृतत-र्वकृतत से परे, शुदिु बोि ही प्जसका स्वभाव है, अशुदिु बोि नहीं। तो क्या स्वामीजी ! अशुदिु बोि भी होता है? हा,ूँ क्यों नहीं–ं वह भी होता है। म ंैअमुक हूँ, फला हूँ-यह अशुदिु बोि है। 'म'ं का 'म'ं ही हूँ-यह शुदिु बोि है। ' प्रकृतत र्वकृतत मभन्द्नः शुद्ि बोि स्वभावः सदसहददमशेषें भासयन् ्तनर्वशेषे:' जो सत है न असत है। र्वलसतत परमात्मा जाग्रदाहदष्ववस्था- जो जाग्रत अवस्था में र्वलास करता है, जो स्वतनावस्था में र्वलास करता है, जो सुषुप्तत अवस्था में र्वलास करता है। जो तीनों अवस्था में समरूप से र्वलास करता है। जाग्रत अवस्था में कैसे र्वलास करता है? जो जाग्रत अवस्था के प्रपंच को जानता है। यहाूँ पर स्र्ी समझ बैठी है, यहाूँपर

पुरुष समझ बैठा है, इसे कौन जानता है? इसका कौन सिाी है? इसको कौन देखता है? यही परमात्मा का जागृदृाहदक अवस्था का वर्लास है। यही परमात्मा बुद्धि का सिाी, शरीर के अंदर अहममतत 'म' ैं हूँ 'म' ैं हूँ इस शधद के द्वारा जो तनरंतर अमभव्यक्त हो रहा है।

यहा ूँपर सभी वर्द्वान बैठे हैं-इसका अथ िलगाओ, भाव समझो अहममतत- तनरंतर जो आवाज हो रही है- 'म' ैं हूँ 'म' ैं हूँ। स्वहमहममतत सिाात् ्साक्षिरूपेण बुर्द्ेः। जो मन का सिाी है, जो बुद्धि का सिाी है, जो धचि का सिाी है।

प्रकृनत ववकृनत भभननः िुद्ध बोध स्वभावः,

सदसदददरि्षें भासयन् ्ननवविमषः ।

ववलसनत परर्ात्रा जाग्रदाददष्ववस्था,

स्वहर्हभर्नतसाषात्साक्षिरूपेणबुद्धेः ।।

(र्ववेक चूड़ामर्ण)

इसमलए म ैंआत्मा ही हूँ। इसी को समझ लो। बस, इतना ही। यहाँपर सभी वर्द्वान, मशिक वग िबैठे हैं। हम लोग जब चौथी पढ़ते थे ेतो ग्रामर में पढ़ते थे-संभव है यह आजकल छठवींमें पढ़ातेहों-ग्रामर में तीन प्रकार के पुरुष पढ़े-उिम पुरुष, मध्यम पुरुष एवं ंअन्द्य पुरुष । सः, त्वम्, ् अहम् ्। वह, तू, ू म ैंवह-अन्द्य पुरुष है, तू–मध्यम पुरुष है और म ैंउिम पुरुष है-यह बताया गया। गुरुजी ने इसी तरह से मशिा दी फक बेटा! ध्यान देना, 'म' ैं अिम पुरुष नहीं, उिम पुरुष है। म ैंसाढ़े तीन हाथ का पुतला मल-मूि का भांड-अिम पुरुष है और इसके अंदर 'म' ैं हूँ वह उिम पुरुष है। तो भैया ! यह ज्ञान एकदेशीय नहीं वरन् ्व्यापक है। हाँ, भाई! वेदांत तो सभी को मसद्ध करता है।

उिम पुरुष-ठीक से पढ़ना-पुरुष जो उिम है वह, अपने'म' ैं को जान मलया और वह पुरुषोिम हो गया। पुरुषोिम क्यों? क्योंफक वह समझदारी से, ज्ञान से, आत्म तत्व के र्वचार से अपने आपको जाना। अरे ! वह जो जाग्रत का जाननेवाला है, स्वतन को जानता है, सुषुप्तत को जानता है और मूछा िको जानता है, समाधि के आनंद का अनुभव करता है, समाधि के टूटने ेको जानता है, मूछिा के बेहोशी को जो जानता है-

यहा ूँपर बड़े–बड़े ेडॉक्टर बैठे हैं। वे बतावें फक जब वे कोई सीररयस बड़ा ऑपरेशन करते हैं तो वे रोगी को दो-तीन घंटे बेहोश रखते हैं। तो यह प्रश्न होता है फक श्रीमान् ्जी ! उस दो-तीन घंटे की बेहोशी को कौन जानता है? यहद 'म' ैं बेहोश हो जाऊँ तो बेहोशी को कौन जानेगा? शरीर तो हमेशा ही बेहोश है तो फफर वह क्या जानेगा। डॉ. लोग क्लोरोफाम िसुंघाते ेहैं और इस तरह तुम्हें बेहोशी में लाकर शरीर का चीर-फाड़ करते हैं। हा, ूँ मन को ही सुख-दुःख अथवा पीड़ा होती है, इसमलए उसे ही बेहोश फकया जाता है। 'म' ैं तो सदैव सिाी रूप से देख रहा हूँ, अनुभव कर रहा हूँ, इसमलए इस बेहोशी का सिाी 'म' ैं ही हूँ और कौन होगा। तो क्लोरोफॉम िफकसको सुंघाते हैं? मन को। मन बेहोश रहता है, 'म' ैं बेहोश नहीं ंहोता। कारण? मुझे ेआत्मा में होश-बेहोश दोनों नहींहै। 'म' ैं कारण, काय िसे परे हूँ।

तो फफर समझ लो। समाधि के उदय अस्त को 'म' ैं जानता हूँ। 'म' ैं मयािदा से र्वचमलत नहीं होता। सब समय एक रस रहने ेवाला हूँ। शाश्वत हूँ। इसमलए overline 45 म ैंआत्मा 'र्वलसतत परमात्मा जाग्रदाहदष्ववस्था' पुरुषोम हूँ और उसी का प्रततपादन यहाँ हो रहा है। यही वेदांत है, अध्यात्म र्वद्या है। तो 'म' ैं जैसा है वैसा ही है- उसे फकसी ने देखा नहीं–

वाह, जी वाह- कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा-
बेदाल लार् वाले र् ैंको, बेददल होकर न्जसने देखा ।
हो गया रुकुत जंजांलों से, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा ।।6।।

दाल भात नहीं–

दाल जेर लाम-हदल, हहन्दी में जैसे अ, इ, उ की मािा ऐसे ही उदिू में जबर, जेर, पेश है। मुझ आत्म देश में हदल गायब है। हदल नाम की कोई चीज नहीं।

हो गया रुक्त जंजालों से, कोई कुछ देखा कोई कुछ देखा ।।
यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणुकर्कमः ।
तथैव तत्ववववज्ञानस्तुु ते ेर्दनुग्रहात् ्।।

जैसा 'म' ैं का भाव, जैसा म ैंका रूप, जैसा म ैंका गुण, जैसा 'म' ैं का कमि–मेरी कृपा से तुम्हें इन तत्वों का बोि हो जाए। चतुःश्लोकी भागवत के अंतगित कुल सात श्लोक हैं। दो श्लोक प्रस्तावना है, चार श्लोक मूल भागवत है और अन्द्त एक श्लोक इसकी फलश्रुतत है।

अहरे्वासरे्वाग्रे नानयद्यत्सदसत्परर् ्।
पश्चादहं यदेत्च योऽवभिष्येत सोऽस्म्यहर् ्।।
ऋतेऽथंयंत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्रनन ।
तद्ववद्यादात्रनो र्ायां यथाऽऽभासो यथा तर्ः ।।

सुनो, आज के पहले भी 'म' ैं ही था। यह नहीं ंफक आज ही हूँ। आज के पहले भी 'म' ैं ही था और आज के बाद भी 'म' ैं ही रहूँगा। यहा ूँपर आत्मा की व्याख्या हो रही है। इसका र्ववेचन पहले शास्त्रिय पद्तित से कर लें फफर युप्क्तयों से बोि कराएंगे।

'स्थूल, सूकूम्र्, कारण देहादव्यनतररक्तो अवस्थात्रयसाषी
सन्चदानंद स्वरूपो यन्स्तष्ठनत सैवै आत्रा ।।'

स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीरों से परे, जाग्रत, स्वतन, सुषुप्तत तीनों अवस्थाओं का सािी, सत्, ् धचि, आनंद रूप से जो प्स्थत रहे वही आत्मा है। जाग्रत अवस्था में स्थूल शरीर जान लो, स्वतन अवस्था में सूक्ष्म शरीर जान लो और सुषुप्तत अवस्था में कारण शरीर जान लो। इन सबसे परे, परे का अथ ियह नहीं फकसी तरह से अलग कहीं ंऔर। परे का अथ,ि इनके गुण, िम िसे परे आत्मा हूँ इसके अंदर होते हुए भी इनके िमों से परे अलग और जाग्रत, स्वतन, सुषप्तत तीनों अवस्थाओं का सािी, सत् ्धचत् ्आनंद स्वरूप, इन सब अवस्थाओं का अनुभव करने े वाला 'म'ैं आत्मा हूँ। इसी को युप्क्त द्वारा सुनो-प्जसके त्रबना जो नहींमसद्िहो, प्जसका अप्स्तत्व प्जसके त्रबना न रहे, वही उसकी आत्मा है। एक िण भी प्जसके त्रबना जो नहीं ंरह सकता, वही उसकी आत्मा है। देखो-यह डंडा है-यहद डंडा लकड़ी से कहे फक म ैंतुमसे अलग हूँ तो यह मसफि अमभमान होगा, क्योंफक डंडे ेकी आत्मा लकड़ी है। सूत के त्रबना वस्िका अप्स्तत्व नहीं। इसमलए सूत, कपड़े ेकी आत्मा है। आभूषण स्वण िके त्रबना नहीं ंइसमलए स्वण ि आभूषण की आत्मा है। 'म'ैं आत्मा सव िका सव िहूँ। सारे जहान का वजूद, उसकी हस्ती, उसकी सिा 'म'ैं आत्मा ही हूँ। जी हा–ँ

अहरे्वासरे्वाग्रे नानयद्यत्सदसत्परर् ्।
पश्चादहं यदेत्च योऽवमिष्येत सोऽस्म्यहर् ्।।

आज के पहले भी 'म'ैं ही था परन्द्तु 'म'ैं न सत् ्था न असत् ्था-था जरूर। क्या प्रमाण फक आज के पहले म ैं ही था? इसका प्रमाण 'म'ैं के मसवाय और कौन होगा। अरे! 'म'ैं ही प्रमाण हूँ। जैसे फकसी ने कहा फक मेरी प्जह्वा नहीं है-तो फफर भैया ! तुम बोल कैसे रहे हो? सुनो, आज के पहले 'म'ैं था, 'म'ैं नहींथा, 'म'ैं के था और 'म'ैं के नहीं ंथा को जो था उसने देखा या जो नहीं था उसनेदेखा? हा ँऔर समझो भैया ! त्रबना अपने बयान के मुलप्जम छुटकारा नहीं पाता। आज के पहले 'म'ैं नहीं था। 'म'ैं के भाव, अभाव का सािी 'म'ैं ही तो था। ओहो ! 'म'ैं के अप्स्तत्व की अनुभूतत 'म'ैं ही करता हूँ। म ैंकी महहमा का कथन वेद, शास्िसभी करते हैं, परन्द्तु मेरा कथन नहींकर सकते, क्योंफक म ैं मन, वाणी का र्वषय नहींहूँ। भगवान कहते हैं-आज के पहले भी 'म'ैं ही था और आगे भी 'म'ैं ही रहूँगा। अरे भाई ! भगवान की जन्द्मकुंडली को क्या कोई जानता है? 'म'ैं हूँ 'म'ैं नहीं ंहूँ, 'म'ैं था, 'म'ैं नहींथा, 'म'ैं रहूंगा, 'म'ैं नहीं ंरहूंगा इत्याहद। का सािी 'म'ैं ही तो हूँ। यहद 'म'ैं न रहूँ तो मेरी व्याख्या कौन करे? भाव को अभाव बताना यही व्याघात दोष है। यहाँ पर वेदांत का व्याघात दोष आ जाएगा। यहद कोई कहे फक मेरा र्पता अखण्ड ब्रह्मचारी है। है तो तुम क्या आकाश से पैदा हुए हो? मेरी प्जह्वा नहींहै, तो तुम कैसे बोल रहे हो? इसमलए आज के पहले भी 'म'ैं था, आज के बाद भी 'म'ैं ही रहूँगा और अभी भी 'म'ैं ही हूँ।

अहरे्वासरे्वाग्रे नानयद्यत्सदसत्परर् ्।
पश्चादहं यदेत्च योऽवमिष्येत सोऽस्म्यहर् ्।।

फकसी भी पदाथ ि(दृश्य) को देखकर चार कल्पनाएं पैदा होती हैं-देश, काल, वस्तु और कता।ि वह पदाथ ि कोई न कोई देश में बना, फकसी न फकसी समय में बना, फकसी न फकसी वस्तु से बना और इसका कोई न कोई

 बनानेवाला होगा। इसी तरह जब हम संसार को ढ़ूँढते ेहैं फक संसार कब बना, इसको फकसने बनाया, कैसे बना, कहा ूँ
बना आहद तो कुछ नहींममलता, क्योंफक संसार एक र्वकल्प है।

ब्दिज्ञानानुपाती वस्तुिनयो ववकल्पः ।।

(योग दशनि) शधद सुनने ेमें तो आवेपरन्द्तु ढ़ूँढ़ने ेपर वस्तु न ममले, उसे कहते ेहैं र्वकल्प। र्वकल्प भाव शून्द्य है। र्वकल्प को ढ़ूँढ़ने चलो तो हाथ कुछ न लगेगा। जब डंडा र्वकल्प को ढ़ूँढ़ने चलेंगे तो हाथ में लकड़ी ही स्पश िमें आती है, परन्द्तु डंडा कहीं ंनहींममलता। इसी प्रकार संसार सुनने में तो आ रहा है, परन्द्तु संसार कहाँ है, कैसा है, कुछ पता नहीं ंलगेगा। संसार को ढ़ूँढ़ने ेपर इसका पता ही न ममलेगा।

व्याकरण के अनुसार गम्लृ ृगतौ धातु से जगत िब्द भसद्ध होता है।

र् ैतोदह अब जानयौं संसार।

झयोंकदली तरुर्ध्य ननहारत, कबहुंन ननकसत सार ।।

(र्वनय पत्रिका)

कदली के वृि के खंभे को परत-परत तनकालते चलो, फफर चाहे अंत तक तनकाल डालो। कुछ भी न ममलेगा। एकदम पोलमपोल-कुछ भी नहीं। सािारणतया सभी पूछते हैं फक भैया! कौन गावूँ से आये हो? आगन्द्तुक कहता है-भैया ! हम सब झंडापूर से आए हैं। समझना सभी आसपास पढ़े-मलखे बैठे हैं। हम कहते ेहैं फक भैया! उस झंडापुर को हमें हाथ से पकड़ा दो फक यही झंडापुर है। देखो, क्या सामने जो महुआ का वृि है वह झंडापुर है? ऐसी कोई भी जगह हमें बताना प्जसे झंडापुर कहकर पकड़ा सको और तारीफ यही है फक पटवारी के खाते ेमें झंडापुर ही मलखा ममलेगा, परन्द्तु यहद उसे खोजनेजाओ तो वह झंडापुर न ममलेगा यही संसार है। इसको र्वकल्प कहते हैं। इसमलए झंडापुर में रहने वाले अपने आप सभी झंडापूर है। सब बड़ा गड़बड़ गड़बड़ है। यही र्वकल्प है। झंडापुर ढ़ूँढ़ने ेपर नहीं ंममलेगा।

('जो हदखता है वह हदखता है, म ैंहदखता हूँ तब हदखता है। इस रहस्य को जान मलया तब हदखना कहाँ जो हदखता है।)' देखने वाला ही तुमको हदखता है। हदखने वाला और देखने वाला यहद वस्तुतः मभन्द्न-मभन्द्न हैं तो देखने वाले को तनकाल लो तो भी हदखने ेवाला हदखे तब अलग-अलग मान सकतेहो। परन्द्तु, उसका तो अप्स्तत्व ही नहीं ंरहता इसमलए हदखनेवाला, देखने वाले से मभन्द्न नहीं ंहै। तो देखने वाला ही हदखता है। 'म'ैं देखता हूँ, तब हदखता है, क्योंफक अप्स्तत्ववान तो 'म'ैं ही हूँ। इस रहस्य को जान मलया तो फफर हदखना कहाँजो हदखता है।

क्या-क्या कह डालूँ यार! हमको इतना उत्साह है फक क्या-क्या बता दूँ- चाहे सुनने ेवाले को इतना उत्साह न हो, परन्द्तु यहाँतो उत्साह है। हा,ूँ जी! प्जस प्रकार मेले में एक लाख व्यप्क्त जमा हैं। जब कोई मेले में जाकर मेला को खोजे फक मेला कहा ूँहै? प्जससे पूछो फक भैया ! कहाँआए हो? तो यही उिर ममलता है फक मेला देखने आये हैं? बाल, वृद्ि, स्िी, पुरुष सब मेला देखने आए हैं? यहद फकसी व्यप्क्त से पूछो फक महाराज ! क्या आप मेला देखने

 आए हैं? श्रीमान् ्जी जरा हमें बताना फक मेला कहा ूँहै? मेला में दुबे, ततवारी, चौबे, पाण्डेये सभी आये हैं, परन्द्तु

सबकी बोलती बंद है। मेला को बतानेके मलए कोई तैयार नहीं ंहै, परन्द्तु बोलते सभी हैं फक मेला देखने आए हैं। तब फफर मेला कहाूँहै? प्जस-प्जस से पूछो, वे सब के सब मेला देखने आए हैं. ऐसा कहते ेहैं पर वास्तव में वे सब स्वयं ही मेला हैं। इसी प्रकार संसार प्रपंच का देखने वाला म ैंआत्मा स्वयं प्रपंच हूूँ। प्जस प्रकार मेला देखने वाले से मेले की सिा मभन्द्न नहीं ंहै, इसी प्रकार प्रपंच का देखने वाला मुझ आत्मा से प्रपंच की सिा मभन्द्न नहींहै। यहा ूँपर कोई साम्प्रदातयक बात नहीं ंहै। यह युतनव्हसलि टूथ (व्यापक सत्य) है, कोई बाजारु चीज नहीं है।

मसद् किरना है-देश, काल, वस्तु और कता।ि लकड़ी से डंडा, फकवाड़ (दरवाजे)े चौखट आहद बनते हैं, परन्द्तु इन सबमें व्यापक तत्व लकड़ी ही है। लकड़ी खड़की नहींहै, कुसी नहीं ंहै। अरे! प्जसे अपनेअप्स्तत्व का (लकड़ी का) ही पररज्ञान नहीं वह क्या जानेगा फक उसका वास्तर्वक स्वरूप क्या है।

यथा सोम्यैकेन रृनृत्पण्डेने सवं ंरृनृर्यंववज्ञात् ्स्याद्वाचारम्भणं ं
ववकारो नार्धेयं रृवृ िके त्येव सत्यर्् ।।

(छा.उप 6/1/14)

अथात् िप्जस प्रकार एक मृरृिका र्पंड के जान लेनेसे ममट्टी से बनेहुए समस्त घटाहदक पदाथों का ज्ञान हो जाता है, यानी सब ममट्टी ही हैं। घट आहद र्वकास तो केवल कथन के ही मलए हैं, सत्य तो केवल मृरृिका ही है। ममट्टी के बतनि को हाथ लगाओगे तो ममट्टी ही हाथ लगेगी इसमलए मृरृिका का ज्ञान हो जाने पर प्जतने ममट्टी के बनेहंडी, हदया, परई आहद सभी का पररज्ञान हो जाता है। रामायण तो सभी पढ़ते हैं। जब रामायण का पाठ करते हो तो इस पद पर ध्यान क्यों नहींदेते-

आकर चारर लाख चौरासी। जानत जीव जल थल नभवासी ।।
सीय रार्र्य सब जग जानी। करउ ुँ प्रणार्् जेरर जुग पानी ।।

क्योंफक सभी सीय राममय है। राम व्यापक तत्व है। प्जतने गीता के पाठ करने ेवाले हो क्यों नहींतनम्न श्लोक पर ध्यान देते-

र्ि: परतरं नानयन्त्कन्छचदन्स्त धनछजय ।
र्नय सवभम रृंदं प्रोतं् सूतूरे र्णगणा इव ।।

(गीता 7-7)

जब सभी वासुदेव है। वासुदेवः सवमिमतत । जरें-जरें से यही आवाज आ रही है। मुसलमान भाई लाइलाह इप्ल्लल्लाह कहतेहैं। अथ िक्या है-नहींहै अल्लाह के मसवाय दूसूरा कुछ भी।

नाम, रूप ही संसार है और यह वाणी का र्वकार है।

यथा सोम्यैकेन लोहर्णणना सवं ंलोहर्यंववज्ञात्ॅ्ॅ स्याद्वाचारम्भणं ं

ववकारोनार्धेयं लोहभर्त्येव सत्यर् ।। ्

(छा.उप. 5/1/15)

ि्प्जस प्रकार लोहे के एक टुकड़े ेका ज्ञान हो जानेपर लोहे से बने समस्त पदार्थों का ज्ञान हो जाता है (अथार्त ये सब शस्त्रादिक तो लोहा ही है), उसी प्रकार नाम, रूप तो केवल वाणी के र्वकार मि हैं, सत्य तो लोहा ही है।

सारे चराचर का आिार परमात्मा राम है जो सव िका सव िहै। उससे तो तुम्हें वैराग्य हो गया है। आत्मा से तुम वैराग्य मलए बैठे हो और र्वषय से प्रे्रेम, तो फफर तुम्हें कैसे समझ में आएगा। सव िका मूल तत्व, सवािार, तनर्वकिार, कोई मभन्द्न चीज नहींहै। अपना आप 'म'ैं आत्मा, चाहे आत्मा कहो या परमात्मा-

अहरे्वासरे्वाग्रे नानयद्यत्सद्र्त्परर् ्।

पश्चादहं यदेत्च योऽवभिष्येत सोऽस्म्यहर् ्।।

बस, तुम्हें और कुछ नहीं ंकरना है। शीघ्राततशीघ्र र्वकल्प को हटाओ। यह जगत र्वकल्प है और र्वकल्पाभाव 'म'ैं आत्मा हूँ और इसी जगत रूपी र्वकल्प के अभाव में भगवान है। इसमलए र्वकल्प का अभाव कर दो। फफर जो बाकी रहा वह आत्मा ही आत्मा है। आत्मा से यारों! मभन्द्न कुछ भी नहीं। क्या-क्या बताएँ। 'म'ैं का भाव, 'म'ैं का रूप, 'म'ैं का गुण, 'म'ैं का कम।ि

अज्ञानसंज्ंञौ भवबंधर्ोषौ द्वौ नार् नानयौ स्त ऋतज्ञभावात् ्।

अजस्रधचत्यात्र्ननकेवले परे ववचायर्माणे तरणाववववाहनी।।

(श्रीमद्भा. 10/14/26)

प्रश्न है फक चराचर का र्वकल्प क्या है और र्वकल्प का अभाव क्या है? सुनो-र्वकल्प भाव जगत है और र्वकल्पाभाव भगवान आत्मा है। वाह जी, वाह आज इसी का बिो करा दें। भैया! हमारे यहाँ कथा नहींहोती, म ैं कोई कथावाचक नहीं हूँ, यह है एक चलता-फफरता अध्यात्म र्वद्या का र्वश्वर्वद्यालय। यहाँ पर अध्यात्म की पढ़ाई होती है। ध्यान दो फक यहद कल की पढ़ाई समझना हो तो आज की पढ़ाई पक्की कर लेनी चाहहए। अध्यात्म (आत्म तत्व) के र्वद्याधथयों को यहाँ पर त्रबला नागा यही लखाया जाता है। यहद तुम्हारे मन में आत्म तत्व को जानने ेकी प्रबल प्जज्ञासा है, यहद आत्म स्वरूप लखना चाहते हो, यहद तुम्हें 'म'ैं का सािात्कार करने की उत्कट अमभलाषा है, तब हम दावे के साथ कहते ेहैं फक जब यहाँसे जाओगे तो अज्ञानी होकर नहीं, वरन् ्बोिवान होकर ही जाओगे। अचछा तो भगवान ने सबसे प्रथम फकस चीज का र्वकल्प फकया? भगवान आत्मा पर फकसका र्वकल्प सवप्रिथम हुआ?

जीवं ंकल्पयतेपूवं ंततो भावानपृथृन्ववधान् ्।
वाह्यानाध्यान्त्रकांश्चैवयथावववद्यस्तथास्मनृतः।।

(गौ.पा.मा.का.वै.ैप्र.-16)

सबसे प्रथम भगवान (परमात्मा) ने अपने आप में जीवभाव का र्वकल्प फकया। सबसे शुरू में र्वकल्प फकया फक म ैंअज्ञानी जीव हूँ और यह सबसे बड़ा र्वकल्प है। जीव हूँ, इस र्वकल्प से छुटकारा पाना ही ब्रह्म भाव को प्रातत होना है। जीव र्वकल्प के बाद अनेक र्वकल्पों का जाल त्रबछ गया। र्वकल्प पर र्वकल्प होतेगए। जीव ने प्रपंच का जाल त्रबछा हदया। फफर संसार हदखने ेलगा। पिु, पिौ, पिुी, मामा, दादा, दीदी आहद भाव (र्वकल्प) पैदा हो गए। लकड़ी पर डंडें ेका र्वकल्प होतेही फफर अनेक र्वकल्पों का उद्भव होने ेलगा फक इस डंडें ेका कोई न कोई बनानेवाला होगा। यह डंडा कहीं ंन कहीं बना होगा। फकसी काल में बना होगा, फकसी वस्तु से बना होगा। देश, काल, वस्तु और कतिा का र्वकल्प हो गया। इसी तरह र्वकल्पों का जाल बनते चला। इसी तरह भगवान आत्मा म ैं पर जीव भाव का र्वकल्प होते ही इस सृपृष्ट को फकसने ेबनाया, यह सृपृष्ट कब बनी, इस सृपृष्ट का कतिा कौन है? पालन-पोषण करने ेवाला कौन, इसका संहार करने ेवाला कौन है। इत्याहद र्वकल्प पैदा हो गए। अप्स्तत्वहीन भासना ही र्वकल्प है।

ब्दिज्ञानानुपातीवस्तुिनयोववकल्पः।।

(योग दशनि)

शधद का तो ज्ञान हो, परन्द्तु वस्तु का अभाव हो यानी केवल शधद ही सुनने ेमें आवे, परन्द्तु ढूँढ़ने पर प्जसका अप्स्तत्व फकसी काल में न ममले, उसे कहतेहैं र्वकल्प। मतलब यह फक अप्स्तत्वहीन वस्तु को ही र्वकल्प कहते ेहैं। सभी प्रकार का र्वकल्प जीव भाव में तनहहत है। जीवभाव गया तो सभी र्वकल्पों का नाश स्वयमेव हो गया। जीवभाव के जाते ही र्वकल्पों का जाल ममसमट गया, सब लोप हो गया। नहीं ंतो इन्द्हीं ंर्वकल्पों में पड़े ेरहो और इसी में बन्द्ठाढार है। भाई! र्वकल्प असत्य है। वह अप्स्तत्वहीन होता है। सुनो, जीववाहदयों ! जीव र्वकल्प है, अप्स्तत्वहीन, सोलह आने,े इसमें कोई शक नहीं ंकरना। अचछा, क्या समझे?े स्वामी जी! वही जो आपने समझाया।

र्् दरसन फल परर् अनूपा। जीव पाव ननज सहज सरूपा ।।

मेरे दशनि का यह परम अनुपम फल है फक जीव अपने सहज स्वरूप को प्रातत हो जाता है। जीव का सहज स्वरूप क्या है? अपना आप म ैंभगवान आत्मा ही जीव का सहज स्वरूप है। सहज स्वरूप फकसको कहतेहैं? जो स्वरूप सनातन हो, व्यापक हो, अखण्ड हो। तो जीव का सहज स्वरूप जीव नहीं है। अरे ! यह तो र्वकल्प है। प्रभु के दशनि का यही फल है फक वह आत्मा 'म'ैं को प्रातत कर लेता है। म ैंआत्मा को प्रातत कर लेना ही फल है। हा ूँजी, जीव

का वास्तर्वक स्वरूप जीव नहीं ्है, यह तो र्वकल्प है। जीवभाव वैकप्ल्पक है, जो सिाहीन होता है और इसी जीवभाव में अनेकानेक र्वकल्प तनहहत हैं और आत्मभाव में सभी र्वकल्पों का नाश है। आनंदमानन्द्करं प्रसन्द्नं-

अहर्ेवासर्ेवाग्रे नानयद्यत्सदसत्परर् ्।

पश्चादहं यदेत्च योऽवभिष्येत सोऽस्म्यहर् ्।।

ऋतेऽथंयंत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्र्नन ।

तद्वद्यादात्र्नो र्ायां यथाऽऽभासो यथा तर्ः ।।

ऋते–ेत्रबना, यत् ्अथ िप्रतीयेत् ्आत्मतन न प्रतीयेत् ्तद् आत्मनो मायां र्वद्यात् ्अथ िके त्रबना जो प्रतीत होता है और प्जसमें प्रतीत होता है, वास्तव में वह उसमें (आत्मा में) प्रतीत नहीं ्होता। हा ूँभाई! समझने वाले की मौत है। देखो-समझो र्वषय-र्वषय जरा सूक्ष्म है। देखना फकसको कहते हैं और प्रतीत होना फकसको कहते ेहैं? प्जसको म ैंआत्मा जानता हूूँ वह प्रतीतत है। प्रतीतत अहं गम्य है। जो इप्न्द्रयग्राह्य है वह दृश्य है और जो इप्न्द्रय ग्राह्य है वह इदं गम्य होता है। अहं गम्य 'म'ैं हूूँ और इप्न्द्रय गम्य जगत है। देखो, यह माइक्रोफोन है, इसे र्वकल्प कहें फक वस्तु ? भैया ! माइक्रोफोन र्वकल्प है। र्वकल्प सिाहीन होता है। वह अप्स्तत्ववान नहीं ्होता। र्वकल्प हटा दो... र्वकल्प के हटाने ेपर क्या यह रहेगा? कुछ नहीं.्..। र्वकल्पाभाव 'म'ैं हूूँ और यही प्रतीतत है. र्वकल्पभाव जगत है। अरे भाई! देखो, डंडा र्वकल्प है, इसे लकड़ी से हटा दो, र्वकल्प के हटते ेही डंडा का अभाव हो गया। इसमलए पहले र्वकल्प का नाश करो। रामायण में क्या आप लोग नहींपढ़ते-

गो गोचर जहं लधग र्न जाई। सो सब र्ाया जानेहू भाई ।।

इप्न्द्रयाूँगौवें हैं और उन गौवों के चारे पाचूँों र्वषय शधद, स्पश,ि रूप, रस, गंि हैं। तो पहले र्वषय का र्वकल्प होता है फक इप्न्द्रयों का? र्वषय का र्वकल्प पहले होता है, उसके बाद इप्न्द्रयाूँउन र्वषयों को ग्रहण करती हैं। यह तो सिािरण सी बात है, भैया! पहले गाय खरीदते हो फक पहले चारा का बन्द्दोबस्त कर लेते हो तब गाय खरीदते हो, पहले क्या करते हो? चारे का बन्द्दोबस्त पहले करते हो और फफर गाय खरीदतेहो। इसमलए र्वषय पहले होता है फफर इप्न्द्रयाूँ पैदा होती हैं। यह बहुत माके का र्वषय है, ध्यान देकर सुनो-

(पू. श्री स्वामीजी हाथ से ताली बजाकर शधद र्वषय का अनुभव करातेहैं।) पे्रम से सुनो, यह गहन तत्व है। समझो हाूँहम तो भैया! इसके ही मलए मसर मुड़ाये हैं। बाबा बननेका कारण क्या है? और समझाऊूँ? इन्द्हींर्वषयों में इप्न्द्रयाूँ जाती हैं। जब ये र्वषय आते हैं तो इप्न्द्रयाूँउतावली होकर उन्द्हें प्रातत करनेके मलए दौड़ पड़ती हैं। तो सबसे पहले र्वषय का र्वकल्प होता है। (स्वामी जी ताली बजातेहैं) देखो, अभी शधद र्वषय का र्वकल्प मत करो- तो इस अवस्था में यह शधद र्वषय-र्वषय न होकर भास रहता है, यह प्रतीतत है और इसका अनुभव म ैंआत्मा से ही हो रहा है। अब शधद र्वषय का र्वकल्प करो। शधद र्वषय का र्वकल्प होतेही कण िइप्न्द्रय इसे ग्रहण करेगी। इस शधद र्वषय को चरने के मलए पशु रूपी कण िइप्न्द्रय पे्रररत हो जाएगी। ग्राह्य और ग्राहक इसे भी समझ लो। ग्राह्य र्वषय और ग्राहक इप्न्द्रयाूँ ये दोनों एक ही काल में पैदा होते हैं और दोनों र्वकल्प हैं। यहद शधद र्वषय नहीं ्तो कण ि

 इन्द्रिय भी नहीं। इन्द्रियाँखायगी क्या? मर न जाएंगी। जब चारा नहीं ंतो पशु ुकैसे जीर्वत रहेंगे?

जब र्वषय का
र्वकल्प करते हो तब उस घास रूपी र्वषय को खानेके मलए इन्द्रियाँ प्रबल हो जाती हैं। यह बड़े ेतत्व की बात है। ये इन्द्रियाँबड़ी बलवान हैं। फकसी मैदान में चारा डाल दो तो क्या जानवरों को उसे खानेके मलए न्द्यौता देना होगा? अरे भाई! नहीं ंवे स्वयंआ जाते हैं, उन्द्हें बुलाना नहीं ंपड़ता। इसी प्रकार यह जगत र्वषय है और जगत र्वकल्प के अत्यन्द्ताभाव में इन्द्रियाँ आँख, कान, नाक, पैर आहद नहीं ंरहेंगे। यही तो तूष्णी पद है, अतनवाचिय पद है। यही 'म'ैं का रूप है। अहा !!!

जगत (प्रपंच) फकसको कहते हैं? संसार को त्रबना जाने-समझे ेहठयोगी कान में रूई ठूँसते हैं फक कहींशधद र्वषय का भान न होने लगे प्जससे फक बाह्य जगत र्वषय मन में न आए। उसे र्वकल्प से भय लग रहा है। समझो अरे भाई! र्वकल्प है ही नहीं। इसका नाम अध्यात्म है। और क्या देखते हैं? फकससे बचने के मलए योगी ध्यान लगा रहे हैं। अरे! जो है ही नहीं। आया समझ में।

ऋतेऽथंयंत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्र्नन ।
तद्ववद्यादात्र्नो र्ायां यथाऽऽभासो यथा तर्ः ।।

तभी तो ईशावास्योपतनषद (यह यजुवेद का चालीसवां अध्याय है) के प्रथम मंत्रिमें-

ॐईिावास्यभर्दं सवं ंयन्त्कंच जगत्यां जगत ।
तेन त्यक्तेन भुछुजीथा र्ा गृधः कस्य न्स्वद्धनर् ्।। ईि . 1।।

इदं सवर्म्िईशावास्यम्।् यह जो कुछ है सब ईश्वर है। जो कुछ भी जगती में जगत है-जगती है-जगती का अथ िहै भास (प्रतीतत) और इस भास पर जो र्वकल्प उसे कहतेहैं जगत, वह सब भगवान आत्मा है।

तेन त्यक्तेन भुछुजीथा र्ा गृधः कस्य न्स्वद्धनर् ्।।

कस्य प्स्वद्निम् ्- अथाति फकसी के अथ िको ग्रहण मत करो यहा ूँपर िनम् ्को पैसा रुपया नहीं ंसमझना। वरन् ्िनम् ्को 'अथम्िॅ समझना। एवं ंज्ञात्वा भुञ्जीथा-ऐसा जानकर भोग करो। अथ िको क्यों ग्रहण करते हो जबफक अथ िही लगानेमें दुःख है। चलो, तुम्हें उदाहरण देकर समझाएँ फक अथ िसे ही दुःख होता है।

एक गावूँ में कोई फकसान अपनेखेत को जोत रहा था और साथ ही बैलों के मामलक की लड़की को गाली भी दे रहा था। हा ूँभाई! हल जोतनेवाले का यह भजन है। स्वाभार्वक अंड-वंड बकतेरहतेहैं। उसी खेत के पास से एक श्रीमान् ्जी तनकल पड़े ेऔर गामलयों को सुनकर वहाूँखड़े ेहो गए। फकसान उन्द्हें खड़ा देखकर पूछा फक श्रीमान् ्जी क्या देख रहे हो? वह बोला फक म ैंबड़ी देर से देख रहा हूँ फक तू बैलों के मामलक की लड़की को गाली दे रहा है, तो बैलों का मामलक कौन है? फकसान ने कहा बैलों का मामलक तो म ैंही हूँ। तब फफर यह गामलयाँ फकसको पड़ती होंगी? वह

 तपाक से बोला-जो बेवकूफ इस गाली का अथ िलगाता होगा उसी को गाली पड़ेगी। हम तो अपनेस्वभाव में कहे जा
रहे हैं।

तो स्वभाव भाव जगती और 'अथ'ि भाव जगत। अमुक भाव मान्यता है इसमलए अमुक भाव को त्याग करके भुञ्जीथा। भोग करो। जहाँ' अरे' है वहींअटक है, जहाँअटक है वहीं खटक है, जहाँ खटक है वहीं भटक है और जहा ँभटक है वहींलटक है। 'अरे' भाव अपनेहृदय से तनकाल दो। तो इस श्रुतत के मंकिा भाव लगा फक नहीं। देखो, यहद कोई शंका हुई फक अरे ! ऐसा मनैं ेक्यों कहा-बस ! इस अरे में ही अथ िभाव है, न फक भास में (प्रतीतत में)। बचचे हदन भर खेलते रहतेहैं और उनसे पुण्य-पाप काय िहोतेरहते हैं, परन्द्तु उनके मन में इस पुण्य-पाप की कोई रेखा नहीं ंपड़ती। 'अरे' आता ही नहीं। स्वभाव में खेल रहे हैं। बचचे बरसात के हदन में कभी मेढ़क पा जाएँ तो उसके पैर में रस्सी बांकिर हदन-हदन भर घसीटते रहतेहैं, खेल में उसे पटक भी देते हैं। अंततोगत्वा उसे मार भी डालतेहैं, परन्द्तु बचचों के मन में 'अरे' नहीं होता। हा ँ'अरे' उसको होते हैं जो बालक के रिक होतेहैं। रिक वग िकहते ेहैं फक बचचों ऐसा न करो, तुमको पाप लगेगा, क्योंफक वे अथ िलगाते हैं। भैया! अथ िमें 'अरे' है।

ॐइिावास्यभर्दँ॑ ्॑ सवं ंयन्त्कंच जगत्यांजगत् ्।
तेन त्यक्तेन भुछुजीथा र्ा गृधः कस्य न्स्वद्धनर् ्।।

मान्द्यता, अथ िर्वकल्प ये सब पयायिवाची शधद हैं। अथ िअथवा जगत भाव-कस्य प्स्वद्निम् ्मा गृिः- अरे! फकसी के अथ िको ग्रहण मत करो। इत्येव ज्ञात्वा भुञ्जीथा-बस, स्वभाव में रहो।

ऋतेऽथं ंयत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्र्नन ।
तद्वद्याद्दात्र्नो र्ायां यथाऽऽभासो यथा तर्ः ।।

ऊपर के इन दो श्लोकों में 'म'ैं का भाव और 'म'ैं का रूप सुना। अब 'म'ैं का गुण सुन लो।

यथा र्हान्न्त भूतानन भूतेषूचावचेष्वनु।
प्रववष्टानयप्रववष्टानन तथा तेषु न तेष्वहर् ्।।

प्जस प्रकार पंच महाभूत (आकाश, वायु, अप्न, जल और पृथ्वी) सब भूतों में हैं भी और नहीं भी हैं। पंच महाभूत और उनके काय िरूप भूतों को समझो। पांचो तत्व इसमें प्रर्वष्ट भी हैं और अप्रर्वष्ट भी। तो फफर जगत भाद में पांचों तत्व तनहहत हैं और यहद इन पाचौं तत्वों को इससे अलग कर लें, तनकाल लें तो क्या रहेगा और फकसमें रहेगा? इसमलए ये पंच महाभूत अपनेकाय िमें प्रर्वष्ट भी हैं और अप्रर्वष्ट भी हैं। इसी प्रकार 'म'ैं आत्मा सव िमें हूँ भी और नहीं ंभी हूँ। अन्द्वय भाव से 'म'ैं सव िमें हूँ और व्यततरेक भाव से नहीं ंभी हूँ। यही 'म'ैं का गुण है।

कायेषु कारणत्वेनानुवृर्िरनवय ।

कारणावस्थायांच तेभ्यो व्यनतरेकः ।।

काय िमें कारण की जो व्यापकता, वह अन्वय है और कारण में काय िका जो अत्यन्द्ताभाव, वह व्यततरेक है। जो हो उसे काय िकहते हैं और प्जससे हो उसे कारण कहतेहैं। डंडा काय िहै और लकड़ी कारण है। काय िरूप डंडे ेमें कारण रूप लकड़ी व्यापक है, यह अन्वय है और कारण रूप लकड़ी में काय िरूप डंडे ेका अत्यन्द्ताभाव है, यह व्यततरेक है। अन्वय रूप लकड़ी में काय िरूप डंडे ेका अत्यन्द्ताभाव है, यह व्यततरेक है। अन्वय रूप से लकड़ी डंडे ेमें व्यातत है और व्यततरेक भाव में लकड़ी में डंडा नाम की कोई चीज ही नहीं है। इसमलए डंडा कहाूँ? क्योंफक डंडे ेका अप्स्तत्व तो कारण रूप लकड़ी से है। तो अपनेआप 'म'ै आत्मा को जाननेके मलए अन्वय और व्यततरेक है और जगत (प्रपंच) को जानने के मलए अध्यारोप और अपवाद है। अध्यारोप और अपवाद का प्रसङ्ग पीछे कहेंगे। म ै आत्मा सव िमें व्यापक हूँ, यह अन्वय है। मुझ आत्मदेश में प्रपंच का अत्यन्द्ताभाव है, यह व्यततरेक है। यानी मुझ आत्मा के अततररक्त दूसूरी कोई चीज हो तो 'म'ै उसमें व्यापूं। जब 'म'ै पररपूण िहूँ तो कहाूँरहूँ? यही भाव रामायण में भी है-

रार् ब्रह्म व्यापक जग जाना। परर्ानंद परि पुराना ।।

यह अन्वय है।

व्यापक व्याप्य अखंड अनंता। अनुभवगम्य भजदहं ंजेदह संता ।।

यह व्यततरेक है।

एतावदेव न्जज्ञास्यंतत्वन्जज्ञासुनुाऽऽत्र्नः ।
अनवयव्यनतरेकाभ्यां यत्स्यात्सवत्रम सवदमा ।।

एतावदेव प्जज्ञास्यं-इतना ही जानना प्जज्ञासुओंके मलए प्जज्ञास्य है। भगवान नारायण ब्रह्माजी से कहते ेहैं फक हे ब्रह्मन् ्! इससे अधिक कुछ नहीं ंजानना है। बस इतना ही प्जज्ञास्य है। इसे अन्वय और व्यततरेक द्वारा जानो। आज के पहले भी 'म'ै ही था और इसके बाद भी 'म'ै ही रहूँगा और आज भी सव ि'म'ै ही हूँ। जो कुछ स्थावर जङ्गम चराचर है वह सव ि'म'ै ही हूँ। बस ! इससे अधिक जाननेकी जरूरत आत्म प्जज्ञासु को नहीं ंहै। इतना ही जान लेना है और यही आत्मा 'म'ै का कम िहै।

अब यहाूँ शंका होती है फक भगवान आत्मा में, जो सव िमें प्रस्फुहटत, प्रस्फुररत है, सव िमें अमभव्यक्त हो रहा है, कम िकहाूँ? 'म'ै आत्मा का स्वरूप तो अफक्रय है और यहा ूँपर आत्मा में कम िभाव? यह तो आत्मा पर कलङ्क है। क्या आत्मा द्वारा भी काय िहोता है? समािान-

अरे भाई ! यह आत्मा पर कलङ्क नहीं ंहै। मशव.... जानना ही प्जसका स्वरूप है-'सत्यं ज्ञानमनन्द्तं ब्रह्म-इतत श्रुतत प्रमाणत्वात्।्' जो तनत्य ज्ञान स्वरूप है। मुझ आत्मा को फकसी वस्तु को जाननेके मलए फकसी उपकरण की आवश्यकता नहीं है। फकसी उपकरण द्वारा जाना जाय तो वह कम िकलङ्क है। सूि मलखो- "फकसी उपकरण द्वारा कुछ भी करना यह कम िकलङ्क रूप है और फकसी उपकरण द्वारा कुछ जानना, यह भी कम िकलङ्क रूप है। त्रबना उपकरण द्वारा जानना यह कम िस्वरूप ही है।" आँख का देखना, आँख का कम िनहीं ंहै, स्वभाव है। देखना और आँख क्या दो हैं? जी नहीं, देखना और आँख मभन्द्न-मभन्द्न नहीं है। अब आ गई बात समझ में? फकसी भी तरह देखो, कान के सुनने,े न सुनने ेको जो सुनता है-दोनों का अनुभव करता है, दोनो को जानता है, तो यह जानना ही मुझ आत्मा का कम िहै जो फक मुझ आत्मा का स्वरूप ही है। आँख के देखने, न देखनेको जो देखता है, तो वह कम िस्वरूप ही है इसमलए कलङ्क नहीं ंहै। यही 'म'ैं आत्मा का कम िहै।

एतावदेव न्जज्ञास्यंतत्वन्जज्ञासुनुाऽऽत्मनः ।
अनवयव्यनतरेकाभ्यां यत्स्यात्सवत्रम सवदमा ।।

चतु:श्लोकी भागवत के इन चार श्लोकों में पहले श्लोक में 'म'ैं आत्मा का भाव दूसूरे श्लोक में 'म'ैं आत्मा का रूप, तीसरे श्लोक में 'म'ैं आत्मा का गुण और चौथे श्लोक में 'म'ैं आत्मा के कम िकी र्ववेचना की गई है। अन्द्त के श्लोक में इनकी फलश्रुतत बताई गई है।

एतनर्तं ंसर्ानतष्ठ परर्ेण सर्ाधधना ।
भवानकल्पववकल्पेषु न ववरुह्यनत कदहधमचत् ्।।

ब्रह्माजी ! यह जो मनैं ेमसद्ांत आत्मतत्व के र्वषय में बताया है उसमें तुम सम्यक् प्रकार से परम समाधि करके प्स्थत हो जाओ, हटक जाओ। सब ओर से इप्न्द्रयों के कम िको त्याग कर आत्मतनष्ठ बनो-केन प्रकारेण? परम समाधिना- परम समाधि के द्वारा-इसमें हटक जाओ। परम समाधि फकसको कहते हैं? देखो-हठयोग में प्राण की समाधि होती है। राजयोग में धचि की समाधि होती है। ज्ञानयोग में वासना की समाधि होती है। ये सभी समाधियाँप्जस अवस्था में समाधिस्थ हो जाती हैं, उसे परम समाधि कहते ेहैं। परम समाधि को भप्क्तयोग कहते ेहैं। हा–ँयही भप्क्त है। आत्मदेश का ही नाम भप्क्तयोग है। भगवान इसी आत्मदेश में सम्यक् प्रकार से हटकनेके मलए कहते हैं। अरे ! म ैंअमुक हूँ इस अमुक भाव को छोड़कर, मान्द्यता जगत से रहहत होकर, परम समाधि में हटक जाओ। यही इसका फल है और फफर जब तुम कालान्द्तर में प्रपञ्च की रचना करोगे तो तुम्हें शोक, मोह नहींहोगा। मस्त रहोगे। भगवान नारायण ने परमेष्ठी ब्रह्माजी को इस प्रकार आत्म तत्व का साक्षात्कार कराया।

द्र्वतीय हदवस

भगवाननारदएवंराजा प्राचीनबहह िसंवाद द्वारा कमो का र्वश्लेषण, राजा पुरंजनोपाख्यान के माध्यमसे जीव ईश्वर एकता का र्वश्लेषण

19-2-1969, प्रातः 10.00 से 12.00 बजेतक

श्री नारायणोपननषद् पाठ।

अजर्वपजननयोगं ंप्रापदैश्वय मयोगादगनतच

गनत र्िंप्रापदेकं ह्यनेकं ।

ववववध ववषय धर् मग्रादह रुवुधे षणानां ं

प्रणतभय ववहनतृ ृब्रह्म यिननतोऽन्स्र् ।।

प्रपनन पाररजाताय तोत्त्रवेत्रैकै पाणये ।

ज्ञानरुद्रुराय कृष्णाय गीतारृतृ दुह्रे नर्ः ।।

वसुदेवसुतुं ंदेवंकंसचाणुरुर्दमनर् ्।

देवकीपरर्ाननदं कृष्णं ंवनदे जगद्गुरुर् ्।।

रूकूं करोनत वाचालं ंपंगुं ंलंघंयते धगररर् ्।

यत्कृपा तहं वनदे परर्ानंदर्ाधवर् ्।।

अनन्द्त नाम, रूपों में अमभव्यक्त, अहमत्वेन प्रस्फुररत, महामहहम, स्वात्मस्वरूप सकल चराचर एवं समुपप्स्थत आत्म प्जज्ञासुगण। 'उर्ष्ठत जाग्रत प्रातय वराप्न्द्नविोत ।' अनाहदकाल से अर्वद्या की घोर तनरा में सोनेवाले भव्य जीवो ! 'उर्ष्ठत'- उठो स्वस्वरूप भगवान आत्मा में जागो, फकसी श्रे्रेष्ठ महापुरुष की शरण में उपसन्द्न होकर अपना आत्म कल्याण करो।

यहा ूँपर श्रीमद् भागवत परमहंस संहहता के माध्यम से अध्यात्म तत्व का तनरूपण हो रहा है। कल के प्रसङ्ग में राजा परीक्षित का अमभशार्पत होना एवं गंगा तट पर श्री स्वामी शुकुदेवजी का आगमन एवंपरमेश्वर नारायण द्वारा ब्रह्मा के प्रतत चतु:श्लोकी भागवत का उपदेश प्रततपादन हुआ। इस समय का प्रसङ्ग भगवान नारद एवं राजा प्राचीनवहह िके संवाद में आत्म तत्व (र्वमल ज्ञान) का उपदेश है। सुनो, प्ेरम से-

न जानाभर् र्हाभाग परं कर्ापमवववद्धधी: ।
ब्रूदह रे् ववर्लं ंज्ञानंयेन रु्येय कर्भमभ: ।।

(श्रीमद् भागवत 4/25 / 5)

गृहेषु कूटधर्ेषु पुत्रदारधनाथधमी: ।
नपरंववनदतेरूढ़ो भ्राम्यनसंसंारवत्र्सुम ।।ु

(श्रीमद् भागवत 4/25/6)

राजा प्राचीनवहह िभगवान नारद से प्रश्न करता है फक हे महाभाग। कमिापर्वद्धी: परं आत्मानं अहं न जानामम । येन ज्ञानेन कममिभ: मुचयेय: त र्वमलं ज्ञानंमाम् ्प्रतत ब्रूहह। अनाहदकाल से कमि–कमलल में मेरी बुद्धि सनी हु है इसमलए भगवान आत्मा को म ैंनहीं ंजानता। आप मेरे प्रतत उस र्वमल ज्ञान का उपदेश कीप्जये प्जससे फक म ैंकमजिाल से छुटकारा पा जाऊूँ। आत्म प्जज्ञासुओं ! कम िकाण्डी की बुद्धि आत्म तत्व का र्वचार नहीं कर सकती। कारण, फक कमकिांडी देहात्मवादी होता है। वह अपनेको साढ़े तीन हाथ वाला मानता है। जब वह अपनेको साढ़े तीन हाथ वाला न मानेगा तो उसके द्वारा कम िनहीं होगा। कमकिाण्डी की बुद्धि देहात्मवादी होनेके कारण स्थूल होती है। उसका अन्द्तःकरण, उसके र्वचार, उसके संकल्प और उसके काय िसभी सीममत और देहभाव में ही होतेहैं। बात स्पष्ट है फक जब कमकिाण्डी अपनेको साढ़े तीन हाथ वाला मानता है तो उसकी बुद्धि, र्वचार, अन्द्तःकरण कमआिहद सभी साढ़े तीन हाथ वाले ही तो होंगे। यह तनर्वविाद मसद्ान्द्त है फक वह इसी शरीरी भाव तक ही सीममत होता है। तो हे महाभाग ! कमजिाल में मेरी बुद्धि सनी हुई है इसमलए आत्म तत्व का र्वचार करने में म ैंसमथ िनहींहूूँ। अत: आत्म तत्व का कृपया र्ववेचन करें। कमकिाण्डी वेदांत की उपेिा करता है। क्यों न ऐसा हो, वे तो वेदांत को समझते ही नहीं और यही (कारण है फक वे वेदांत के अनुयातययों की खर्ल्ली उड़ाते हैं, प्जसकी बुद्धि सीममत है, साढ़े तीन हाथ की है वह भगवान नारायण आत्म तत्व के सूक्ष्मातत सूक्ष्म भाव को क्या प्रातत करेगा जबफक अहम् ्('म' ैं) शधद करके भगवान आत्मा प्रत्येक शरीरों में प्रस्फुररत प्रस्फुहटत एवं अमभव्यक्त हो रहा है। प्जस भगवान आत्मा के समि आकाश सूक्ष्माततसूक्ष्म होतेहुए भी सुमेरु पवति के समान स्थूल है उसे कम िमें फूँसी हुई स्थूल बुद्धि क्या समझेगी।

न जानाभर् र्हाभाग परं कर्ापमवववद्धधी: ।
ब्रूदह रे् ववर्लं ंज्ञानं येन रु्येय कर्भमभ: ।।

इसमलए राजा प्राचीनबहहं ंप्रश्न करता है फक प्जस ज्ञान से कमों में फूँसी हुई बुद्धि कमजिाल से छूट जाती है, ऐसे र्वमल ज्ञान का प्रततपादन कीप्जए।

र्वमल ज्ञान का भाव और उसका र्वश्लेषण-

इस कथन से यह मसद् होता है फक कहीं ंन कहीं ंमल संयुक्त ज्ञान भी होता है। हा,ूँ र्वमल की अपेेा मल सहहत। तो मल सहहत ज्ञान क्या है?

ववर्ल ज्ञान जल जब सो नहाई। तब रह रार् भगनत उर छाई ।।

देखो, जमें रहो, जहा ूँके तहाूँ अपनेआप 'म'ैं आत्मा को 'म'ैं के साथ आत्मा शधद लगानेकी कोई आवश्यकता नहींहै, क्योंफक 'म'ैं का भाव और आत्मा एक ही है। चाहे आत्मा कहो या 'म'ैं। 'म'ैं का अथ िआत्मा के मसवाय कुछ नहीं, परन्द्तु इसे जोड़कर कहा जाता है, क्योंफक साढ़े तीन हाथ वाले शरीर को भी म ैंका संबोिन लोग करते हैं। सािारणतया म ैंका अथ िसाढ़े तीन हाथ का शरीर मान लेते हैं इसमलए म ैंके साथ आत्मा कह हदया जाता है। नहींतो 'म'ैं कहना काफी है। स्वस्वरूप आत्मा को म ैंअमुक अमुक हूँ ऐसा मान लेना यानी अपने'म'ैं को कुछ न कुछ मान लेना ही ममलन ज्ञान है। जानता तो है परन्द्तुर्वमल नहीं, मल सहहत, क्योंफक माना हुआ ज्ञान है और मान्द्यता के हटते ही 'म'ैं का 'म'ैं शुद्ि भाव रह जाता है। यही र्वमल ज्ञान है। इसी को भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते ेहैं-

नाहं प्रकािः सवस्मय योगर्ायासर्ावृतः ।
रूढ़ोऽयंनाभ्भिजानानत लोकोर्ार्जर्व्ययर्।। ्

(गीता 7-25)

योगमाया समावृतः (आचछाहदत) अहं आत्मा सवस्यि न प्रकाशः - म ैंआत्मा योग माया करके आचछाहदत यानी ढूँका हुआ सबको प्रकामशत नहींहोता। सब मुझेनहींजान सकते, क्योंफक योगमाया से ढूँका हूँ। पहहले इस ढक्कन को तो समझ लो भगवान का घूंघट क्या है? योग माया। र्वद्वज्जनों ! माङ्-मानेितु से माया शधद बनता है। अरे यार ! जो माना जाय वह माया। 'ममीते र्वश्वममतत या सा माया'- मोहहत कर मलया है र्वश्व को प्जसने,े उसे कहतेहैं माया।

गृहेषु कूटधर्ेषु पुत्रदारधनाथधमीः ।
न परं ववनदते रूढ़ो भ्राम्यनसंसांरवत्र्सुम ु।।

कमिकाण्डी क्या कहते ेहैं? जप करो, तप करो, तीथ िव्रत करो, दान, पुण्य करो। जब तुम्हारा यह शरीर छूट जाएगा तो तुम्हें स्वग िममलेगा। तुम स्वग ितो जाओगे। वस्तुतः यह सकाम कम िका उपदेश अज्ञातनयों को कम िमें प्रवृि करनेका सािन है। इसे कूटिम िअथवा पुष्पता वाणी कहते ेहैं।

याभर्ीां पुन्ष्पतां वाचं प्रवदनत्यववपन्श्चतः ।

वेदवादरताः पाथ मनानयदस्तीनत वाददनः ।।

कार्ात्र्ानः स्वगपमरा जनर्कर्फमल प्रदार् ्। (गीता 2-42)

कक्रयाववशेषबहुलांभोगैश्वयगमन्ांप्रनत।।

(गीता 2-43)

भैया ! स्वग िसे कुछ नहींहोता। हा,ँू यहद स्वग िजाना हो तो तीथ,ि व्रत, यज्ञ, दानाहदक करो, मरनेके बाद र्वमान आएगा। हा,ँू जी-तैयारी में बैठे रहो। आज हदन तक तो स्वग िगए लोग-स्वग िजाकर कभी फकसी के नाम, इष्ट ममिों स्वजनों के नाम धचट्ठी नहीं ंमलखे फक उन्दहें वहाँूअचछा मकान ममला है, घर की खबर ठीक रखना, ततल्लो, िान वगैरह ठीक से बोना और पि देते रहना- ऐसा कोई पि नहीं ंदेता। तो कम िसे स्वग िकी प्राप्तत भले हो, परन्दतु आत्म तत्व के बिो त्रबना अज्ञान का नाश नहीं होता। यह स्वयं मसद् है-इसी को तत्व कहते हैं। यही तत्व है। मानो तब भी है, न मानो तब भी है। तो-

न जानाभर् र्हाभाग परं कर्ापमववद्धधीः ।

ब्रूदहर्ेववर्लंज्ञानंयेन र्ुच्येयकर्भमभः ।।

(श्रीमद् भागवत 4/25/5)

कमकिाण्ड-जन्दय, कम िसे छुटकारा नहीं ंदेता, जन्दय, कम िफल देनेवाला है। पुण्यी, स्वग िको प्रातत करते हैं और जब पुण्य िीण होगा तो-फफर ! वही-

षीणेपुण्येर्त्यलमोकंववशन्नत।।

कार्ात्र्ानःस्वगपमराजनर्कर्फमलप्रदार्। (गीता 9-21)

्

कक्रयाववशेषबहुलांभोगैश्वयगमन्ांप्रनत।।

(गीता 2-43)

जीवन भर दंड कसरत करते रहो। जब, तप, यज्ञ, दान, व्रत, तीथाटिन, कूप वाहटका बनाना, मंहदर स्थापना इत्याहद का फल स्वग िप्राप्तत है।

भोगैश्वयप्रमसक्तानां तयापहृतचेतसार् ्।

व्यवसायान्त्र्का बुद्धधः सर्ाधौ न ववधीयते ।।

(गीता 2-44)

र्वद्वानों द्वारा जो समय-समय पर इस ओर लक्ष्य कराया जाता है, इस प्रकार का जो उपदेश देते हैं और स्वग िहदखाते हैं, उन्द्हें स्वग िका पासपोटि दे देते हैं। परन्द्तु धचि की आसप्क्त को नहीं ंममटा सकते। अज्ञानी हृदय कभी भी तनष्काम नहीं हो सकता। सुन लो कान खोलकर-अज्ञानी हृदय यहद कामना रहहत हो जाए तो बन्द्ध्या का पुि हो सकता है। तनरािार आकाश में पुष्प र्खल सकतेहैं। कछुवे की पीठ पर बाल उग सकतेहैं, खरगोश के सींग हो सकते हैं, यह सब होना असंभव है। जब तक तनष्काम कम िनहीं होता तब तक वह कामनासक्त ही है। जो दारासक्त, पुिासक्त, र्विासक्त है, उनके मलए र्वद्वान लोग सकाम कम िका उपदेश देते हैं। अरे भाई ! क्यों नहीं– देखो यहाँ पर हम तुम्हें उपदेश दे रहे हैं और तुम सब यही तो मानोगे फक स्वामीजी जो कुछ कह रहे हैं, सब सत्य है। तो यह तुम्हारी प्जम्मेदारी नहींहै फक हम तुम्हें क्या कह रहे हैं, इसकी परख करें। वरन् ्यह हमारी प्जम्मेदारी है फक हम तुम्हें उधचत सत्य का माग ितनदेश करें। यह सब र्वद्वानों की प्रततष्ठा का प्रश्न है और इसीमलए इतना सब श्रम हो रहा है। इसमलए-

काराृ्नः स्वगपमरा जनर्कर्फमलप्रदार् ्।

कक्रयावर्विेषबहुलांभोगैश्वयगमनृ्ंप्रनत।।

(गीता 2-43)

प्जनकी बुद्धि में वासनाओंका जाल त्रबछा है, कामनाओंसे भरपूर हैं, वे इस आत्मतत्व को क्या जानेंगे। ऐसी बुद्धि को व्यवसायाप्त्मका बुद्धि कहते हैं। वे कोई भी मंहदर में, तीथ िमें, व्रत, दान आहद करते हैं, उनकी बुद्धि में कामना अवश्य रहती है। कामना लेकर ही करते हैं फक हम िनवान हो जाएँ, सुखी रहें, पुि हों, बाल बचचे हों ऐसी कामनासक्त बुद्धि को व्यवसायाप्त्मका बुद्धि कहतेहैं। तो-

व्यवसायान्त्का बुद्धधः सराृधौ न ववधीयते ।।

(गीता 2-45)

अथात् ्ऐसे कामनासक्त जीवों की बुद्धि समाधि (आत्मा) में संलग्न नहींहो सकती। व्यवसायाप्त्मका बुद्धि वालों को आत्म तत्व का र्वचार अचछा नहींलगता। वे ज्ञान का नाम सुनकर उसमें कीचड़ उछालते हैं, तछरान्द्वेषण करते हैं। ज्ञान से दूरू भागतेहैं-जी हा,ूँ मुक्ता को इसका बड़ा अनुभव है, काफी तजुबाहै। चालीस वष िसे यही तो हम देख रहे हैं। श्रीमद् भागवत, श्री रामायण और श्रीमद् भगवद गीता का सदैव हर जगह कायक्रिम होता रहता है और इसमें मशक्षित वग िऔर अपढ़ भी (जो नहीं पढ़े-मलखे हैं, वे सभी) आते हैं। परन्द्तु कभी भी भटककर व्यापारी वगा–व्यवसायाप्त्मका बुद्धि वाले नहींआते, क्या मजाल जो ऐसे वग िआ जाएँ। जी हा!ूँ और यहद कुछ आ भी जाएँ तो यह अपवाद है। भैया ! यह उनका पुण्य है, तप है, फक ऐसों को भी ज्ञान में रुधच है। व्यापारी आयेगा भी तो कुछ न कुछ कामना लेकर ही आएगा। कुछ न कुछ अवश्य मांगेगा। िन, बेटा-बेटी, स्िी मांगेगा, माया ही मांगेगा, भगवान लेकर क्या करेगा। हा–ूँ

कार्त्रानः स्वगपमरा जनर्कर्फमलप्रदार् ्।

कक्रयावविषबहुलां भोगैश्ववयगमनतं ्प्रनत ।।

भोगैश्ववयप्रमसक्तानां तयापहृतचेतसार् ्।

व्यवसायान्त्काबुद्धधः सर्धौनववधीयते ।।

(गीता)

यही व्यवसायाप्त्मका बुद्धि है और श्रीमद् भागवत में इसी को कूटिम कहते ेहैं। तो राजा प्राचीनवहह ि

भगवान नारद से प्रश्न करता है-

न जानाभर् र्हाभाग परं कर्पमववद्धधीः ।

ब्रूदह रे् ववर्लं ंज्ञानंयेन र्ुच्येय कर्भमभः ।।

मूढ़ अज्ञानी पुरुष भगवान आत्मा को नहींप्रातत कर सकता, क्योंफक उसका हृदय कामनाओंसे भरा रहता है। प्जज्ञासुओं! यहा ूँपर कमों का वववेचन हो रहा है। कम िफकतनेप्रकार के होतेहैं और कमों के बंनि से छूटने े का उपाय क्या है? सुनो-आनंद से सुनो, जो जहाूँबैठे हो। देखो यहद ऐसा कहो फक कम िसे अज्ञान का नाश होता है तो जान लो फक कम िसे अज्ञान का नाश नहीं ंहोता। यह बात तनर्वववाद मसद्धि है। समझो-

सन्ननपातलषणो ववधधरननभर्र् ंतद्धवधातस्य ।।

ि्जो कमथि्प्जस संबंि से उत्पन्द्न होता है वह उस संबंि के नाश का कारण नहीं ंहो सकता। तो कमों का मूल कारण अज्ञान है, पुण्य हो या पाप हो, सभी अज्ञान से उत्पन्द्न होतेहैं, अज्ञान से पैदा हुए हैं। जो कम ि अज्ञान से उत्पन्द्न हुए हैं वे अज्ञान का नाश फकस प्रकार कर सकते हैं। अज्ञान से उत्पन्द्न कम िके द्वारा अज्ञान नष्ट नहीं हो सकता।

अज्ञानर्ेवास्य दह र्ूलूकारणं ंतद्धानर्ेवात्र ववधौ ववधीयते ।

ववद्यद्यैवतननिावधौपटीयसीनकर्तमझजंसववर्ोधर्ीररतर्।। ्

(श्री रामगीता 9)

कर्मों का मूल कारण अज्ञान है तो अज्ञान के नाश में कम िसमथ िनहीं है। वद्द्यैव यानी ज्ञान ही अज्ञान का

नाश करनेमें समथ िहै।

छूटइ र्ल कक र्लदह के धोये। घृत् कक पाव कोई वारर त्रबलोये ।।

(उ.का।)

कीचड़ से िोनेसे मल का नाश नहींहोगा। इसी प्रकार अज्ञान से अज्ञान का नाश नहीं ंहोगा। मल से मल का नाश संभव नहीं ंहै। सुनो-यहा ूँपर हम कम िके प्रकार और उनसे छूटने का उपाय बताएूँगे। कम िदो प्रकार के होते हैं- पाप कम िऔर पुण्य कम।ि वेदों में इसी को िम िऔर अिम िकहते हैं।

वेदप्रणणदहतो धर्ोह्यधर्स्मतद्ववपययमः ।

वेदो नारायणः साषात्स्वयम्भूररनत िशुरुर् ।।

(श्रीमद् भागवत 6/1/40)

वेदों में कम िको िमि–अिम िकहते ेहैं। वेद प्जनके मलए आज्ञा देते हैं वह िम िहै और प्जसके मलए तनषेि करते हैं वह अिम िहै। पुराणों में इसी को पुण्य और पाप कहतेहैं तथा िमिशास्र् में इसी को शुभ और अशुभ कहते े हैं। मतलब सबका एक ही है। अन्द्तःकरण में जब तक िारणा के रूप में है तब तक उसका नाम िम िहै और जब शरीर द्वारा बहहमुखि होता है तो िम िका नाम कम िपड़ जाता है। तो िम िका स्थूल रूप कम िहुआ। पुण्य और पाप के पयायिवाची िम िऔर अिम िहै। वस्तुतः िमिाम िकी यह व्याख्या तो उनके मलए तो ठीक है जो वेदों, शास्र्ों से अनमभज्ञ हैं, नहींजानते अथवा जो वेद शास्र्ों को मानते ही नहीं हैं, जो नाप्स्तक हैं, ऐसे व्यप्क्तयों के मलए िमिाम िकी क्या व्याख्या हो? पुण्य-पाप फकस िम िको कहें? नाप्स्तक तो िम िक्या, ईश्वर को ही नहींमानता तो वेदों की आज्ञा को क्यों कर मानेगा। इसमें वर्णति लिणों को नहीं मानेगा तो फफर वह कौन-सी व्याख्या हो जो सावभिौम हो, प्जसको सभी मानें, प्जसे सब समझ सकें? तो सुनो-प्जस काय िके करने से हृदय में लज्जा और भय न लगे। उस काय िको िम िया पुण्य कम िकहते हैं और प्जस काय िको करनेसे हृदय में भय, लज्जा लगे वह कम ि अिम िहै, पाप है। बस, यही सावभिौम मसद्िांत है। अब अपनेआप चुन लो, दुतुनया ूँमें कौन भय के और कौन लज्जायुक्त कम िहै। बस, अपने-अपने हृदय पर हाथ रखकर परख लो, हजारों हृदय यहाूँ पर बैठे हैं-चुन लो भाई- बस, िमिाम िका यही अथ िहै। चमलये आगे। कम िचार प्रकार के हैं। तनत्य कम,ि नैममप्त्तक कम,ि प्रायप्श्चत कम िऔर काम्य कम।ि भैया ! कमों का बड़ा भारी जाल है। समझना- वेदों के मंर्ों की संख्या एक लाख है। इसमें अस्सी हजार मंर् कमकिांड के हैं। सोलह हजार मंर् उपासना के हैं और शेष चार हजार मंर् ज्ञान के हैं। लाखों मन रूई के ढेर को जलाने के मलए एक धचंगारी काफी होती है। देखो- यहाूँपर बहुत से ब्राह्मणों का समुदाय बैठा है और सभी यज्ञोपवीत पहनतेहैं। जब ब्राह्मण जनेऊ बनाता है तो फकतने चौवे का बनाता है? (चौवे- चार अंगुल का) तछयान्द्बे चौवेका। तो भाई ! तछयान्द्बे चौवेही क्यों? क्यों न एक सौ आठ चौवे के बनातेहो? तो इसका कारण यही है फक वेद मंर्ों के अस्सी हजार मंर् कमकिांड के और सोलह हजार मंर् उपासना कांड के, इससे (80+16) तछयान्द्बे हजार हजार मंर्ों के कारण तछयान्द्बे चौवेका जनेऊ बनता है। ब्राह्मण को इन मंर्ों पर अधिकार है। भाई! हम पढ़े भी हैं और पढ़ाएूँ भी हैं। जी हा-ूँ िप्त्रय के मलए नधबे चौवेका जनेऊ बनता है, कारण कुछ मंर् दान प्रततग्रह के हैं, वे िप्त्रय जातत पर लागू नहीं ंहोते। उन्द्हें दान का अधिकार नहीं ंहै, प्जसके कारण नधबे चौवेका जनेऊ पहनते हैं। वैश्य को पचयासी और शूरू को अस्सी चौवे। कहीं–कहींशूरू को भी जनेऊ त्रबना मंर् के वववाह के समय दे हदया जाता है। उनके मलए अस्सी चौवेका जनेऊ होता है। चलो क्या-क्या कहें- बड़ा भारी जाल है। तो कम िके चार भेद-तनत्य, नैममप्त्तक, प्रायप्श्चत और काम्य। तनत्य कम ितो जातत वण िके अनुसार मभन्द्न-मभन्द्न होतेहैं। जैसे ब्राह्मण को

उनके वण िके अनुसार उनके अधिकार के अनुसार उन्द्हें संध्या, अप्ननहो, मं, जाप, गायिी आहद तनत्य करना चाहहए! ये कम ितनत्य कम िहैं। इन कमों के करनेसे कोई पुण्य नहींहै। अरे भाई ! प्जसका करना तुम्हारा सािारण मि िहै, जो तुम्हें तनत्य करना ही चाहहए, तो फफर ऐसे कायों को करनेसे क्या पुण्य, यह तो तुम्हारी ड्यूटी है। तुम्हें करना अतनवाय िहै। यह ब्राह्मण की ड्यूटी है। हा–ँयहद न करो तो पाप अवश्य लगेगा। इसमलए जो कम ितुम्हारे मलए र्वहहत हों उसे करने ेमें पुण्य नहीं,ं पर न करनेसे पाप है। दूसूरी बात हर एक गृहस्थ चाहे वह राजा हो या मभखारी सभी गृहस्थ के यहाँपाचूँ पाप तनत्य होतेहैं- चक्की में, चूल्हे में, ओखली में, झाडू-बुहारु लगानेमें और पाचूँवाँ पानी रखने की जगह में। पाचूँ जगह जाने-अनजाने ेजीव हहंसा होती है। तो चाहे कोई गृहस्थ हो अथवा संन्द्यासी, प्जसके यहाँ चूल्हा-चक्की, आडम्बर होगा उसके यहा ँये पाचूँ पाप तनत्य होंगे। अथात्िजो सािु, संन्द्यासी बनते हैं और आश्रम बनाकर रहते हैं तो फफर उनके यहा ँभी तो ये पाचूँ पाप होते ही हैं। तो गृहस्थ हो या संन्द्यासी-हाँ ने के मलए चलो कुटी बना लें तो क्या मजाल की इसीमलए तो संन्द्यासी को कुटी बनानेका तनदेश नहीं ंहै। मसर ढाकँ चूल्हे का बंदोबस्त न हो। तो चूल्हा-चक्की चाहे सािु के यहा ँहो या गृहस्थ के यहा–ँहम यह सब जानते हैं, यह हमारा अनुभव है फक गृहस्थों की बात क्या कहें-आश्रमिारी सािु ुकिे को एक टुकड़ा भी नहीं ंदेते, मार भगाते हैं। क्योंफक, सािुतो जानते ही हैं फक वे अब सािु हो गए हैं, अब कुिों का क्या काम, वही प्रपंच है वहाँ भी, चाहे गुतत हो या प्रगट वही बात। हम तो धचल्लाकर कह रहे हैं। यहाँ हमको फकसका भय है। अंगूठा रखने की भी जमीन प्जसके पास न हो, वृि के नीचेजो रहे वही यह तनभयि होकर कह सकता है। "महत्पदं ज्ञात्वा वृि मूले वसेत्।्" महानपद भगवान आत्मा को प्राप्तत करके वृि के नीचे रहना चाहहए। अरे यार ! क्या घर-बार इसीमलए छोड़े ेहैं? तो फफर क्या घर छोड़कर फफर घर बसावें? यह ठगनी माया बड़ी र्वधचि है। गृहस्थी बेचारे तो माया में र्परोये ही हैं, परन्द्तु यह ठगनी माया सािुओंके पीछे हाथ िोकर पड़ती है-कहती है हमें छोड़कर कहाँजाओगे। इस माया से बड़ा भय है। इन पाचूँ पापों से मुक्त होने के मलए शास्िों में पंच बमलवैश्व का र्विान है। काग बमल, अप्नन बमल, गो बमल, अततधथ बमल, श्वान बमल। गृहस्थ पाचूँ मुट्ठी अन्द्न, आटा, चॉवल इनके मलए तनकाल देते हैं। कोई-कोई पाचूँ ग्रास तनकाल देते हैं। यह तनत्य कम िहै। प्रश्न होता है यहद ऐसा न करे तो? तो भैया! धयाज सहहत अपना-अपना भाग ले लेंगे। घर में कोई बीमार हुआ तो हजारों तनकल जाएगा, तुम्हारा ब्रह्मपना तनकल जाएगा। इसमलए प्जस आश्रम में रहना, उसका पालन करना चाहहए।

सोधचय गृही जो र्ोहबस करइ करर् पथ त्याग ।
सोधचय यनत प्रपंचरत ववगत वववेक ववराग ।।

'न सुखं न दुःखं, न पुण्यं न पापंमशवोऽहम् ्मशवोऽहम्'्-इससे काम न चलेगा। यह तुम्हारी ड्यूटी है और इसका पालन तुम्हें करना ही होगा।

तीथ,ि व्रत, दान इत्याहद कम िजब सूय िलोक, चन्द्रलोक एवंस्वग िप्राप्तत के तनममि फकए जाएँ तो उसे नैममर्िक कम िकहते ेहैं। ये ही कम िजब स्िी, पुि, िन आहद की कामना से फकये जाए तो उसे काम्य कम िकहते ेहैं। यही कम िजब पापों से छुटकारा पाने के मलए फकये जाएँ तो उसे प्रायप्श्चत कम िकहते हैं। तो कम िचार प्रकार के-

तनत्य, नैममर्त्क, प्रायष्श्चत और काम्य। अब कमों के भेद सुनो- कम ि तीन प्रकार के संधचत, प्रारधि और फक्रयमाण। इनके शधदाथ ि पहहले समझ लो। संधचत कमि–जो जन्म जन्मांतर से एकत्रित हुआ हो। प्रारधि कमि–जो ऊपर जमा हुआ कम ि उसमें से कुछ हहस्सा तनकाल मलया। फक्रयमाण कमि–तनकले हुए हहस्से से कुछ कम ि कज ि में दे हदया। इसे पहले दृष्टान्द्त से समझो, बाद में इसको भाव रूप में घटा लेना। तुम्हारे मकान के अंदर गल्ला रखनेका एक ऐसा स्थान बना होता है प्जसे खिी, ढाबा अथवा बंडा कहते हैं। इस खिी में तुम हजारों मन गल्ला रखते हो। ध्यान दो-उस खिी में साल-साल भर के बचत अन्द्न, मोटा, पतला, महीन, नया-पुराना सभी फकस्म का अन्द्न (गल्ला) कई वषों का भरा पड़ा है। इसकी कोई तादाद नहीं है। इस खिी में फकतना अन्द्न मोटा, फकतना महीन, कब-कब का पुराना नया सभी भरा है, इसकी तादाद नहीं ं है। बस यही संधचत है। अब इसमें से कुछ तनकाल मलया, उसमें मोटा, महीन, पुराना, नया सभी ममला हुआ है। यही प्रारधि होगा। अब उस तनकले हुए अन्द्न से कुछ तुमने े धयाज में फकसी को हदया, सवाया या डेढ़ी। जब लोग एक मन अन्द्न ले जाते हैं तो लुवाई के बाद सवा मन या डेढ़े मन वापस देते हैं। तो यहाँ पर क्या लेते हैं। सवाया। चलो भाई! कुछ तो ईमानदारी है। कहीं-कहीं डेढ़ी वसूल करते हैं। अब यहद कजदिार साल भर में धयाज पटा दे तो ठीक है, नहीं ं तो यहद वह न दे सके तो साल भर में साहूकार उस धयाज को भी मूल ि न में शाममल करके उसके ऊपर भी अगले वष ि धयाज लेता है। इसे चक्रवृद्धि धयाज कहतेहैं। कज ि देनेवाला ऋणी को बुलाकर हहसाब करता है और उसे बताकर धयाज को भी मूल में ममला देता है। तो भैया ! यह चक्रवृद्धि पानी सरीखे बढ़ता है। बड़ी-बड़ी ररयासतें त्रबक जाती हैं। घर- बार सब त्रबक जाता है। तो जो धयाज का अन्द्न आया वह भी उसी खिी में डाल हदया गया यह खिी इतनी र्वशाल है फक कभी भरती ही नहीं, ं सदैव खाली ही रहती है।

आगे अब दृष्टांत का राष्टांत समझो। मतलब यह है फक यह साढ़े तीन हाथ का शरीर ही मकान है। इसके भीतर ही खिी है। उसका नाम मन है, तो मन नाम की खिी है। एक जन्म और अनेक जन्मों के पाप-पुण्य कम ि अनाहदकाल सेमन रूपी खिी में भरे पड़े े हैं। यही संधचत कम ि है। जब कोई शरीर ि ारण फकया तो इसी संधचत कम ि से कुछ पुण्य-पाप कम ि को लेकर वह जन्म ि ारण करता है। इस जन्म के ये ही प्रारधि कम ि हुए। इसको प्रारधि कम ि

कहो चाहे शरीर कहो दोनों का मतलब एक ही होता है। इस साढ़े तीन हाथ के शरीर द्वारा इस समय जो पुण्य-पाप कम ि हो रहे हैं, उन्द्हें फक्रयामाण कम ि कहतेहैं। ठीक-

प्रकृतेः कक्रयर्ाणानन गुणैंः कर्ाणमण सविमः ।

अहंकारववरूढ्ढात्र्ा कताहमभर्नतर्नयते।।

(गीता 3/27)

इन कमों का कतिा, भोक्ता म ैं हूँ ऐसा जो अहंकार यही चक्रवृद्धि धयाज है। इसी कारण जीव कम ि बंनि में स्वयंपड़ा है। तो यह कमजिाल बड़ा भयाक है। सब गड़बड़-सड़बड़ है। भैया ! इस कमजिाल से से तनकलना चाहो तो तुम भी वही करो जो हम फकए हैं। इस कम ि रूपी खिी में आग लगा दो, फूँक से और धयाज लेना बंद करो। इस कम ि जाल से बचना चाहते हो तो हम बता रहे हैं-इस खिी को जला दो और धयाज लेना बंद करो। इिर पूंजी भी खतम

और आमदनी भी बंद। तो फफर हदवामलया हो जाएगा। हााँ भाई ! हदवामलया तो बना ही रहे हैं। रह गया यह साढ़े तीन हाथ का शरीर-प्रारधि कम।ि जब सभी खतम हो गए तो फफर यह भी कब तक चलनेवाला है। इसमलए अपना घर फूाँक दो। ऐसा क्यों? क्योंफक, जो अपना घर फूंका होगा वही ऐसा कहेगा। घर फूंकने की कला सबको थोड़े ेही आती है।

कबीरा खड़ा बाजार र्ें भलये लुवाठी हाथ ।
जो घर फ़ूाँकै आपनो चलैहर्ारे साथ ।।

लुवाठी कहते ेहैं जिलती लकड़ी को। तो तैयार हो जाओ, प्जसको हमारे साथ चलना है। आगे आओ-आग जो लगाना है। गीता भी श्री योगेश्वर भगवान का वचन है-

नैव फकन्चचत्करोर्ीनत युक्तो र्न्येत तत्ववववत् ्।
पश्यंृण्वन्स्पृन्जघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपश्श्वसन् ्।।

(गीता 5-8)

तत्ववेत्ता पुरुष ऐसा मानता है फक 'अहम् ्फकञ्चत् ्न करोमम ।' म ैंकमों का कताि-भोक्ता नहीं ंहूाँ। यह मान्यता क्या समझकर करता है? इस तरह फकस मसद्धांत से मानता है?

अनाददत्वान्ननगुणमत्वात्परर्ात्र्ायर्व्यय:।
र्ीरस्थोऽवपकौन्तेयनकरोनतनभलप्यते। ।

(गीता 13-31)

यह तनर्वविाद मसद्धांत है फक कम िबंधन से छुटकारा पाना ही मोक्ष है। म ैंआत्मा हूाँ, अनाहद हूाँ-जन्म का पता ही नहीं, सत, रज, तम से परे हूाँ। म ैंअव्यय-अर्वनाशी हूाँ, शरीर के अंदर रहते हुए भी म ैंकमों का कताि-भोक्ता नहीं ंहूाँ। न मलतयते, इस तरह मानकर कम िके जाल में मलतत नहीं ंहोता, क्योंफक 'म'ैं साक्षी हूाँ।

एको देव: सवभूमतेषु गूढ़: सवव्मयापी सवभूमतानतरात्र्ा ।
कर्ाध्मयष: सवभूमताधधवास: साषी चेता केवलो ननगुणमश्च ।।

(श्वेता 6-11)

यथा प्रकाियत्येक: कृत्स्नं ंलोकभर्यं रवव: ।
षेत्रं ंषेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाियनत भारत ।।

(गीता 13-33)

सूय िअनेकानेक ब्रह्माण्डों में एक-सा प्रकामशत हो रहा है और जैसे इस स्थान में इसी प्रकाश में यहाँ ब्रह्म तनरूपण हो रहा है, उसी तरह इसी प्रकाश में अन्यि घोर से घोर पाप भी हो रहा होगा-तो यहा ्ँका पुण्य और कहीं ्का घोर पाप जैसे सूय िमें नहींहोता, सूय िमें कति-भोक्ता का भाव नहींहोता, सूय िपर इस प्रकार का आरोप नहीं ्लग सकता चाहे जहाँपुण्य या पाप हो। इसी प्रकार 'म'ै आत्मा पंच ज्ञानेप्न्द्रय, पंच कमेप्न्द्रय, पंच प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान इन सब में एक रस प्रकामशत हूँ, इनको जानता हूँ। यद्यर्प इनके व्यापार हो रहे हैं और 'म'ै आत्मा के साक्षित्व में हो रहे हैं, परन्द्तु 'म'ै पर ये आरोर्पत नहीं ्हो सकते। 'म'ै वास्तव में इन सब का ज्ञाता हूँ। 'म'ै के साक्षित्व में ही काय िहो रहे हैं, परन्द्तु 'म'ै में कमों का कतापिना नहीं है। 'म'ै सािी हूँ। सािी के तीन लिण- रष्टापना, ज्ञातापना और नजदीकपना। कोटि में जब न्द्यायािीश पूछता है फक तुमने ेअमुक को अमुक के मसर पर लाठी मारते देखा है? गवाह कहता है- हाँ सरकार ! मनैं देखा है तो रष्टापना हुआ तुम जानते हो इसकी लाठी लगी है। हा ्ँसरकार! म ैंजानता हूँ फक इसी की लाठी लगी है। यह ज्ञातापना हुआ और जब उसने लाठी मारी तो तुम कहाँ पर थे?े साहब ! म ैंउस समय बहुत करीब था। तो यह हुआ नजदीकपना। इस प्रकार का जो सािी है उसके ही बयान पर अदालत फैसला देती है। तो सािी स्वयं अफक्रय होता है, तनदोष होता है, तनष्कलंङ्क होता है, तटस्थ होता है। इसी तरह 'म'ै आत्मा सािी हूँ। मेरा मन अचछे में जाता है या बुरे में जाता है, प्स्थर होता है अथवा चंचल होता है, दु:खी या सुखी होता है, तनर्वकिार या सर्वकार होता है, इत्याहद भावों को 'म'ै आत्मा जानता हूँ। यथा प्रमाण-

अहं साषीनत यो ववद्यात् ्ववववियैवं पुनः पुनः ।
स एव रुकुतः स ववद्वान इनत वेदांत डडर्डडर्: ।।

कोई ऐसा टाईम नहीं फक मुझसे चोरी करके मेरा मन भले या बुरे में चला जाए। 'म'ै हदन-रात देखता रहता हूँ। मन के सारे व्यापारों (चेष्टाओं) को 'म'ै जानता हूँ और मन से 'म'ै इतना नजदीक हूँ फक 'म'ै स्वयं मन हूँ। हा,ँ इतना नजदीक हूँ फक प्जसको 'म'ै जानता हूँ, वही होकर जानता हूँ। तो मन का ज्ञाता, मन का रष्टा और नजदीक स्वयं'म'ै ही मन हूँ। इसमलए 'म'ै मन का सािी हूँ।

देखो-ध्यान दो। जरा फारमूला बता दूँ-रष्टा जब दृश्य को देखता है, तो दृश्य के दशनिकाल में दृश्य से मभन्द्न होकर देखता है या अमभन्द्न होकर अमभन्द्न होकर देखता है। देखो ऐसा कहने से हम नहींमान लेंगे। बाप का नाम बताओ नहींतो श्राद्ि करो। दृश्य के अनुभवकाल में रष्टा दृश्य से मभन्द्न होकर यहद देखे तो दृश्य नहीं ्और यहद दृश्य से अमभन्द्न होकरदेखे तो भी दृश्य नहीं ्और यहद रष्टा दृश्य से मभन्द्न है तो दृश्य नहीं अमभन्द्न है तो भी दृश्य नहीं। सब अनुभव करो इसको-जैसे डंडा है, यह दृश्य है त्रबल्कुल उसी टाईम यानी दशनिकाल में? इसमलए 'म'ै आत्मा प्जसको देखता हूँ, प्जसको जानता हूँ, वही होकर देखता, जानता हूँ। तो वस्तुतः यहद कुछ रष्टा से दृश्य मभन्द्न हो तो अलग-अलग अनुभव हो, परन्द्तु ऐसा नहींहोता इसमलए प्जसका 'म'ै अनुभव करता हूँ, वही होकर अनुभव करता हूँ।

सरुणिु सयाने करहु अब, सब भर्भल संर्ंत सोई ।।

(रा. अयो.)

क्या मतलब? जी हा,ॉँ रष्टा होकर दृश्य का अनुभव नहींहोता, परन्द्तु रष्टय दृश्य एक होकर ही अनुभव होता है। तो रष्टा कहा ॉँगया और रष्टा ही नहीं,ं तो उसकी अपेिा से ही तो दृश्य था, अतः दृश्य भी नहींऔर रष्टा दृश्य नहीं तो दशनि फकया कहाॉँ। बस, चेतन का चेतन तत्व रह गया 'म'ै का 'म'ै। अरे! क्या यहा ॉँभी झगड़ा है? अभी अनुभव करो तुम्हें कुछ बुद्धि द्वारा या तकि द्वारा नहीं ंकहा जा रहा है। यहा ॉँपर तो स्वरूप का कथन हो रहा है। प्जसको देखते जानते हो, वही होकर देखते जानते हो या मभन्द्न-मभन्द्न होकर देखते जानते हो? प्जसको जो देखता है वही होकर उसको देखता है। यहाॉँतो नकद सौदा है। अनुभव यहींपर कर लो। कोई उिार बात नहीं है। मजा आ गया।

इसमलए 'म'ै सव िका सािी हूॉँ, अतः अफक्रय हूॉँ। सािी में कतापिना, भोक्तापना नहीं होता। तो 'म'ै सािी भाव से सदैव सवदिा सब के हृदय में र्वराजमान हूॉँ। अचछा, तो फफर उस मन रूपी खिी में जो कमों का भंडार है उसमें आग लगा देनी चाहहए। तो लो यह आग लगा दो-कताि, भोक्ता अपनेआप में अज्ञान से ही माना था। 'म'ै कताि, भोक्ता भूतकाल में भी नहीं था, 'म'ै कताि, भोक्ता अब भी नहीं हूॉँ और कताि, भोक्ता भर्वष्य में भी नहीं रहूॉँगा। इस तरह जब कताि, भोक्ता नहीं ंतो कतापिनेके अहंभाव का नाश हो गया। केवल सािी मात्र रह गया। अहंभाव के नाश होतेही पूंजी खत्म। खिी में आग लग गई। आज भी म ैंकताि नहींहूॉँ, धयाज भी गया। फक्रयमाण कम िका नाश हो गया। तो इस तरह पूंजी भी गई और उसका बढ़ता धयाज भी चला गया। आमदनी बंद हो गई। रह गया साढ़े तीन हाथ का शरीर- प्रारधि। कई र्वद्वान प्रारधि का नाश नहीं मानते- ऐसा मानने ेसे गुरु परम्परा की हातन होती है। वे ऐसा समझते हैं फक ज्ञान से संधचत और फक्रयमाण का नाश होता है, परन्द्तु प्रारधि का नहीं। तो भाई ! क्योंकर प्रारधि का नाश नहींहोता? यह सवमान्द्य मसद्धान्द्त है फक प्रारधि भी अज्ञान से उत्पन्द्न हुआ है। इसका भी मूल कारण अज्ञान ही है। जब तीनों कमों का मूल कारण अज्ञान है तो प्रारधि क्यों नहीं जला, अज्ञान रूपी प्रारधि कैसे रह गया। बड़े–बड़े ेब्रह्मज्ञानी प्रारधि का शेष रह जाना मानते हैं। जब संधचत फक्रयमाण एवं ं प्रारधि सभी का मूल कारण अज्ञान है और जब अज्ञान का नाश हो गया तो प्रारधि क्यों कर शेष रह जाएगा? क्या कारण है। तो यहा ॉँपर बड़े-बड़े ेआचाय िबैठे हैं उनसे पूछो-यहा ॉँपर तो बहुत सीना फुलाए बैठे हैं बतावेक्यों प्रारधि बच रहता है? तो उनकी यही एकमात्र दलील है फक भाई! देहािारी गुरु से ही बोि होता है। तो प्रारधि का नाश मानने े से गुरु परम्परा का नाश हो जाएगा। देह भाव रहतेगुरु मशष्य संबंिको कैसे लोप करें तो इस तरह आसूॅँ पोंछतेहैं। यह कोई प्रबल प्रमाण नहीं ंहै। सुनो-भगवान श्री कृष्ण सीिे तो है नहीं, सदैव टेढ़ा रूप बनातेहैं। तो उनका कहना भी टेढ़ा ही होगा, कैसे जल्दी लगे-

नैव फकन्द्चचत्करोमीनत युक्तो मन्द्येत तत्ववववत् ्।

पश्यञ्छृण्वनस्पृशञ्जघ्रन्ननश्ननगचछनस्वपञ्श्वसन् ्।।

(5 - 8)

प्रलपन्न्वसृजन्गृह्णन्नुन्मर्षन्ननमर्षन्ननवप ।

इन्नद्रयाणीन्नद्रयाथेषु वतनमत इनत धारयन् ्।।

(5-9)

म ैंकमों का कतिा भोक्ता नहीं ंहूँ।

ब्रह्मण्याधाय कर्ाणमण संगं ंत्यक्त्वा करोनत यः ।

भलप्यतेन सपापेन पद्र्पत्रभर्वाम्भसा ।।

(गीता 5-10)

इस प्रकार म ैंकमों का कतिा, भोक्ता नहीं ंहूँ। अज्ञान के कारण ही लोग अपनेआपको कतिा, भोक्ता मान लेते हैं। परन्द्तु संसार में ऐसे रहना चाहहए जैसे पद्मपिममवाम्भसा। पानी में रहतेहुए भी कमल का पि पानी से अलग रहता है। यहाूँपर ऐसा प्रतीत होता है फक भगवान प्रारधि को मानते हैं। इस कथन द्वारा प्रारधि का शेषे रहना माना है। अचचा चलो आगे चलें।

यथैधांभस सभद्धोऽधग्रभस्मर्सात्कुरुतेऽजुनम

ज्ञानान्वनः सवकमर्ाणमणभस्र्सात्कुरुतेतथा ।।

(गीता 4-37)

वाह रे कन्द्हैया ! जैसा तू है वैसा ही तेरा कथन है। अब इसको मानें फक उसको मानें? एक जगह भगवान प्रारधि का शेषे रहना कहतेहैं और एक जगह सभी कमों को प्रारधि सहहत भस्मसात् ्करते हैं। फकस अमभप्राय से? भगवान प्रारधि को शेषे रहना आचाय िदेश से मानते हैं और ज्ञानाप्न से सव िकमों का भस्म हो जाना भगवान देश से मानते हैं। भगवान वहाूँ, पर-देश से बोल रहे हैं और भगवान यहाूँ, स्व-देश से बोल रहे हैं। ज्ञान से समस्त कमों का भस्म होना स्व-देश की बात है और प्रारधि का नाश न होना यह पर-देश की बात है। तो पर-देश और स्व-देश क्या है? मजा लो-

नैव ककंधचत् ्करोर्ीनत युक्तो र्नयते तत्वववत् ्।।

'तत्वर्वत् ्इत्येवं मन्द्येत न तु र्वजानीयात् ्1' तत्वर्वत् ्(तत्विवो पुरुष) ऐसा मानता है फक तत्वर्वत् ्ऐसा जानता है। अहं ब्रह्माप्स्म की िारणा वाले को

तत्विवो कहते हैं। अहमप्स्म इस तनश्चय वाले को आत्मनैप्ष्ठक कहते हैं यानी आचाय िदेश में अहं ब्रह्माप्स्म की िारणा होती है और भगवान देश में अहमप्स्म का तनश्चय होता है। देखो, तीन प्रकार का अध्यास होता है। यहाूँ पर बड़े–बड़े ेवेदांत ग्रन्द्थ को तनगल कर बैठे हैं। समझो र्वषय-यहाूँ र्वद्वान लुधियाना, हदल्ली आहद स्थानों से आए हुए एकत्रित बैठे हैं। कान खोलकर सुन लो- अध्यास तीन प्रकार का होता है। क्यों भाई ! चार प्रकार का क्यों नहीं होता? क्योंफक गुण भी तो तीन प्रकार के होते हैं-सत, रज, तम। अचछा, हाूँ जी- देहाध्यास, जीवाध्यास

और ब्रह्माध्यास। म ैंदेह हूँ-यह देहाध्यास है और तमोगुणजन्य है। म ैंजीव हूँ, ऐसा मानना, जीवाध्यास रजोगुणजन्य है और म ैंब्रह्म हूँ, यह ब्रह्माध्यास सतोगुणजन्य है। त्रबल्कुल ठीक-जब 'म'ैं को तीनों से हटा लो- 'म'ैं आत्मा में देह का अध्यास 'म'ैं में जीव का अध्यास और 'म'ैं में ब्रह्म का अध्यास, तो ये तीनों अध्यास फकस पर आिाररत हैं? 'म'ैं पर। तो तीनों का आिार 'म'ैं आत्मा ही हूँ। म ैंदेह हूँ-यह अध्यास मनैं ेमाना। म ैंजीव हूँ-यह अध्यास मनैं माना। 'म'ैं ब्रह्म हूँ-यह भी अध्यास मनैं ही माना। इसीमलए तो भगवान कहते ेहैं 'मन्द्येत'। अरें! 'म'ैं पर से जीव भाव को हटाने ेके मलए ही तो 'म'ैं ब्रह्म हूँ- यह िारणा की गई। जीव भाव का अभाव करने ेके मलए 'म'ैं ब्रह्म हूँ-यह िारणा बनाई गई।

सव मव्यापाररुतुसृझ्य अहं ब्रह्मेनत भावय ।
अहं ब्रह्मेनत ननन्श्चत्य त्वहंभावं पररत्यजेत् ्।।
वविेष दभिनमनः आत्रभाव भावना ववननवृवृः ।।

(यो.द.कै. पाद)

भगवान वेद व्यास स्कन्द्पुिराण के 21वें अध्याय में कहते ेहैं-

अ्युतोऽहं अननतोऽहं गोववंदोऽहं अहं हररः ।
आननदोऽहं भििोऽहं अजोऽहं अरृतोस्म्यहर् ्।।
ननत्योऽहं ननववकमल्पोऽहं ननराकारोऽहर्व्ययः ।
सन्चदानंद रूपोऽहं पररपूणोऽन्स्र् सवदमा ।।
ब्रह्मैवाहं न संसारी रुकुतोऽहं इनत भावयेत् ्।

म ैंअचयुत हूँ, म ैंअनन्द्त हूँ, म ैंगोवंिद हूँ, म ैंआनंदस्वरूप हूँ, म ैंव्यापक हूँ, चैतन्द्य घनभूत हूँ ऐसा अपने आप में भावना करें। इतत भावयेत् ्'म'ैं पर ऐसी भावना करे। यहा ूँपर जानना नहीं ंकहा। देह भाव, जीव भाव को हटाकर इस प्रकार की भावना करे। भावना तो हमेशा कप्ल्पत होती है। अहं ब्रह्माप्स्म-यह भावना है। म ैंब्रह्म हूँ- यह ज्ञान माना हुआ है। कप्ल्पत ज्ञान है। आचाय िद्वारा प्रततपाहदत 'तत्वममस' महावाक्य के श्रवण, मनन, तनहदध्यासन से वृरृि में उदय हुआ। जो ज्ञान, प्जसे अहं ब्रह्माप्स्म की िारणा (भावना) कहते हैं। िर्णक ज्ञान, वर्शेषे ज्ञान, असत्य ज्ञान, अतनत्य ज्ञान, नश्वर ज्ञान, इत्याहद इसके पयायिवाची शधद हैं। यह बिो नहींहै। यहद तुम्हारी यही िारणा है तो इसे तनकाल दो। आगे भी यहद यही िारणा रही तो पूण िबिो नहीं ंहै, बप्ल्क भावनात्मक बिो है। पहले अपनेआपको जीव मानतेथे और अब अपने आपको ब्रह्म मानतेहो। हा,ूँ पहले गरीब थे और अब कुछ अमीर बन गए। तो यह छोटा अमभमान और यह बड़ा अमभमान, यही अंतर रहा। परन्द्तु, ममला क्या? खाक। क्या इसी को ज्ञान कहोगे? इस तरह की मान्द्यता ने ही सब बरबाद कर हदया है। यहाूँपर अध्यास का प्रततपादन नहीं ंहो रहा है। आत्म तत्व का तनरूपण हो रहा है। तो ये अध्यास फकस प्रकार आिाररत है।

इनका आिार क्या है? देखो-तीन प्रकार के वादी होतेहैं।

म ैंदेह हूँ-यह देहात्मवाद है-कमकिांड का वववेचन करते हैं।

म ैंजीव हूँ-यह जीवात्मवाद है-उपासना का वववेचन करते हैं।

म ैंब्रह्म हूँ-यह ब्रह्मात्मवाद है-ज्ञान कांड का वववेचन करते हैं।

यह द्वैतवाद, वमशष्टाद्वैतवाद और अद्वैतवाद। इस तरह ये तीनों वादी छूँट जाते हैं। यहाूँकोई वाद नहीं ंहै। यह तनर्वविाद है। ऊपर के तीनों वाद तनर्वविाद मसद्ांि नहीं हैं। कमविादी, कमकिांडी अपनेको म ैंहूँ, कहता है। उपासक भी अपने को 'म' ैं हूँ, कहता है। और ब्रह्मवादी ज्ञानी भी अपनेको 'म' ैं हूँ कहता है। तो फफर यहद शुद्ि तत्व 'म' ैं आत्मा नहीं ंतो इन तीनों वादों का आिार क्या होगा? अनुभव करो-इस चीज को समझो भगवान पतञ्जमल योग दशनि के कैवल्यपाद में सिू मलखते हैं- 'वशेषेदमशतिनः आत्मभाव भावना वतनवृर्िः ।।' पूण िरूप से स्वरूप ज्ञान होनेपर, आत्म बोि प्रातत होनेपर आत्म भाव की भावना की तनवृर्ि हो जाती है। आत्मभाव की भावना क्या है?

अ्युतोऽहं अननतोऽहं गोववंदोऽहं अहं हररः ।
आननदोऽहं अिेषोऽहं अजोऽहं अमृतोस्म्यहर् ्।।
ननत्योऽहं ननववकमल्पोऽहं ननराकारोऽहर्व्ययः ।
सन्चदानंद रूपोऽहं पररपूणोऽस्स्र् सवदमा ।।
ब्रह्मैवाहं न संसारी र्ुक्तोऽहं इनत भावयेत् ्।

आत्मबोि होने ेपर इस आत्मभाव की भावना की तनवृर्ि हो जाती है। शुद्ि तत्व रह जाता है। समझो वषय-

ज्ञानास्ग्नःसवकमर्ाणमणभस्र्ातकुरुतेतथा।।

(गीता 4-37)

स्जस समय पूण िरूप से आत्म तत्व का बोि हो जाता है तब संधचत, प्रारधि, फक्रयमाण सभी कम िभस्म हो जाते हैं। देखो आत्मदेश के अज्ञान में शरीराहदक प्रपंच हैं ! जब शरीर ही नहीं तो शरीर से मभन्द्न वस्तु तो कम िहै नहीं, ं तो फफर प्रारधि कहा ूँरहेगा? जब तक अज्ञान का नाश न होगा तभी तक प्रारधि रहेगा और यहद अज्ञान का नाश हो गया और फफर भई प्रारधि का अस्स्तत्व मानतेहो तो समझ लो फक अभी अज्ञान का समूल नाश नहीं हुआ है। आत्म तत्व के बोि में सभी भावनाओं की तनवृर्ि हो जाती है और यही कृतकृत्य पद है। जीव यहाूँ पर कृतकृत्य

हो जाता है। प्जज्ञासुओं! समझना जरा, यहाँ पर बड़े-बड़े ारामायणी बैठे हैं-पं्जदगी बीत गई रामायण का पाठ करते-करते- उिर कांड के ज्ञान दीपक का प्रसङ्ग देखो ध्यान देना-सुनो-

एदह ववधध लेसै दीप तेज राभस ववज्ञानर्य ।
जातदहं ंजासु सर्ीप जरदहं ंर्दाददक सलभ सब ।।

जब ज्ञान दीपक जला तो उसकी मशखा क्या है?

सोहन्स्र्् इनत वृवि अखंडा। दीप भिखा सोइ परर्् प्रचंडा ।।

अहं ब्रह्माप्स्म-यह दीप मशखा है। जब यह सिानजन्द्य ज्ञान प्रातत हो गया तो इसके प्रकाश में-

आतर्् अनुभव सुख सुप्रकािा। तब भव रू्ल भेद भ्रर्् नािा ।।
प्रबल अववद्या कर पररवारा। र्ोह आदद तर्् भर्टै अपारा ।।

सब कुछ हो गया। मानस प्रेममयों! फफर उसी प्रकाश में-

तब सोई बुद्धध पाई उन्जयारा। उर गृह बैदठ ग्रन्नथ ननरुआरा ।। जब यहाँपर मानसकार कहते हैं फक प्रकाशमय बुद्धि हृदयदेश में बैठकर ग्रप्न्द्थ खोलती है। अब मानस
प्रेममयों से यह प्रश्न है फक जब प्रबल अर्वद्या का पररवार नष्ट हो गया तब फफर वह कौन-सी ग्रंधथ बच गई प्जसको खोलने के मलए बुद्धि ज्ञान के प्रकाश में हृदय देश में बैठकर प्रयत्न करती है। वह कौन- सी ग्रंधथ को खोलती है? पं्जदगी बरबाद हो गई पाठ करते-करते, परन्द्तु कभी सोचा भी फक कौन-सी ग्रप्न्द्थ बुद्धि को खोलनी बाकी रही? अब शेषे क्या रह गया?

तब सोई बुद्धध पाई उन्जयारा। उर गृह बैदठ ग्रन्नथ ननरुआरा ।।
छोरत ग्रन्नथ पाव जौ सोई। तब यह जीव कृतारथ होई ।।

और प्जसके खुलने ासे जीव कृताथ िहो जाता है और आगे चमलये-

छोरत ग्रन्नथ जानन खगराया। ववघ्न अनेक करइ तब र्ाया ।।

तो फफर माया को क्या पड़ी है जो र्वघ्न कर रही है? और हाँ-माया कौन सा र्वघ्न करती है?

ररद्धध भसद्धध प्रेरइ बहु भाई ! बुद्धधदह लोभ ददखावदहं ंआई ।।

माया को उजाड़ा जा रहा है। जो र्वघ्न करती है, आगे बतावेंगे। अभी प्रसङ्ग पढ़ दें-

कल बल छल करर जादहं ंसरीपा। अंचल बात बिुावदहं ंदीपा ।।
होइ बुद्धध जो परर् सयानी। नतनह तन धचतव न अनदहत जानी ।।
इन्न्द्रय द्वार िरोखा नाना। जहं तहं सुर बैठे कररथाना ।।
आवत देखदहं ंववषय बयारी। ते हदठ देदहं ंकपाट उघारी ।।
जब सो प्रभछजन उरगृह जाई। तबदहं ंदीप ववववयान बिुाई ।।
ग्रन्न्थ न छूदट भर्टा सो प्रकािा। बुद्धध ववकल भई ववषय बतासा ।।
तब कफर जीव ववववध ववधध पावई संसृनृत क्लेि ।।
हरर र्ाया अनत दुसुतर तरर न जाई ववहगेि ।।

सुनो-अब यह शंका होती है फक वह कौन-सी ग्रन्न्थ बाकी रह गई है प्जसको बुद्धि हृदयस्थान में ज्ञान के प्रकाश में खोलने बैठी है। ज्ञान के लाइट में क्या खोलने बैठती है? सोऽहमप्स्म-सोऽहम् ्तक भी कुछ न कुछ अहंकार बाकी है। अज्ञान कुछ न कुछ बाकी रह गया है, वह ब्रह्म म ैंहूँ-इस प्रकाश में कुछ ग्रन्न्थ हैं, अंकिार है। अब प्रश्न होता है फक प्जस ज्ञान से अज्ञान का नाश होता है वह सत्य है फक असत्य? यहद कहो फक वह ज्ञान सत्य है तो एक तो ज्ञान सत्य है और दूसूरा ब्रह्म सत्य, तो वेदांत का द्वैतापरि् दोष आ जाएगा। सत्य एक ही होता है, दो नहीं। तो ब्रह्म और ज्ञान दोनों सत्य नहीं हो सकते। यहद असत्य कहें तो असत्य तो बन्ध्द्या का पिु होता है, वह है ही नहीं। तो असत्य से असत्य की तनवृरि् कैसे होगी? यहद असत्य से असत्य की तनवृरि् होती है तो प्रमाण दो। तो प्रमाण देते हैं फक स्वतन में फकसी को जंगल में शेरे ममला तो उस स्वतन के शेरे को मारनेके मलए क्या जाग्रत अवस्था की गोली बंदूकू की आवश्यकता है? क्या जाग्रत की बंदूकू से स्वतन का शेरे मरेगा? वह तो स्वतन के ही बंदूकू से मरेगा। इसी तरह असत्य से असत्य की तनवृरि् हो जाती है, तो पूवपिी कहता है फक इस तरह स्वतन के आिार से असत्य की तनवृरि् असत्य से तो हो जाती है, यह मान मलए, परन्द्तु श्रीमान् ्जी इस तरह से अज्ञान भी असत्य और उसका नाशक ज्ञान भी असत्य हो जाएगा और फफर इस असत्य ज्ञान से तुमने ेजाना फकसको? सत्य को जाना फक असत्य को? यहद कहो सत्य को जाना तो असत्य से सत्य का ज्ञान कैसे हो सकेगा? वह भी तो असत्य ही हुआ।

नाहं र्नये सुवेुदेनत नो न वेदेनत वेद च ।
योनस्तद्वेद तद्वेद नो न वेदेनत वेद च ।।
यस्यार्तं तस्य र्तं र्तं ंयस्य न वेद सः ।
अववज्ञातंववज्ञानतांववज्ञातर्ववजानतार्।।्

(केनोपतनषत् ्2-3)

जो कहता है मनैं ेब्रह्म को जाना, उसनेनहींजाना और जो कहता है फक मनैं ेब्रह्म को नहींजाना उसने भी नहीं ंजाना। आप अभी अनुभव कर लो, प्जस ब्रह्म को जाना उसे मभन्द्न करके जाना या अमभन्द्न करके ? यहद

मभन्द्न करके जाना तो ब्रह्म नहींऔर अमभन्द्न करके जाना तो जाना फकसको? और प्जस ब्रह्म को जानने की इचछा करता है वह मभन्द्न है तो ब्रह्म नहीं ंऔर अमभन्द्न है तो जानेगा फकसको? यही अर्वद्या की ग्रप्न्द्थ है। इसी ग्रप्न्द्थ को खोलने के मलए अहं ब्रह्माप्स्म इस ज्ञान के प्रकाश में बुद्धि हृदय देश में बैठती है। यह ग्रप्न्द्थ खुल गई तो जीव कृताथ िहो जाता है। ग्रप्न्द्थ क्या है फक म ैंपहले अज्ञानी था अब ज्ञानी हुआ म ैंपहहले बद्धिथा अब मुक्त हुआ। म ैंपहहले जीव था, अब ब्रह्म हुआ। यह ठगनी माया इस समय बड़ों-बड़ों को र्वघ्न करती है। कहती है- यह देखो तो मेरा स्वामी (मायापतत) बननेजा रहा है। जब तक ग्रप्न्द्थ नहींखुली तब तक तो वह माया ही उसका स्वामी है और जहा ूँउसको बोि हुआ तो वह अलग हो गया। वह मायापतत हो गया। क्योंफक, ग्रप्न्द्थ खुलने ेसे वह शुद्धि तत्व 'म'ैं का 'म'ैं भगवान आत्मा रह जाता है। तो-

भिव ववरंधच कहं र्ोहई को है बपुरा आन।
अस न्जय जानन भजदहं ंर्ुनन र्ायापनत भगवान ।।

जी हा–ूँ

यथैधांभस सभद्धोऽन्वनभस्मसात्कुरुतेऽजुनम ।
ज्ञानान्वनः सवकमर्ाणमणभस्मसातकुरुतेतथा ।।

(गीता 4/37)

यही ज्ञान का स्वरूप है और यही र्वमल ज्ञान है। इन ममों को ठीक तरह से जान मलए त्रबना बंिन नहीं छूटेगा। जब तक प्रारधि का अप्स्तत्व मान रहे हो तब तक अज्ञान बना हुआ है। जब तक अपने आप को मान रहे हो फक म ैंब्रह्म हूँ तो अज्ञान कहाूँगया है? ठीक, श्रीमान् ्जी ! अहं ब्रह्माप्स्म से क्या समझे ेफक म ैंदेह नहीं, म ैंजीव नहीं, ं म ैंब्रह्म हूँ। यह समझा हूँ-तो बताओ तुम अपनेको देह नहीं ंमानते, परन्द्तु देह अपनेदेश में है तो सही, कहीं ं न कहींतो देह है, चाहे म ैंभले अपनेको देह न समझें। देह की अपेिा से ही तो आप अपनेको ब्रह्म मान बैठे हो, फफर भी अमभमान करते हो फक म ैंब्रह्म हूँ। तो श्रीमान् ्जी! क्या समझे–देह नहींहूँ म ैंब्रह्म हूँ। देह तुम नहीं ंहो, परन्द्तु देह अपनेदेश में तो है ही और जब तक देह है तब तक देह का अप्स्तत्व तो रहेगा ही, यह अममट मसद्धांत है। अज्ञान के अप्स्तत्व में ही देह है तो तुम्हारा अलग होने ेसे, इससे क्या त्रबगड़ना है-इसमलए आगे बढ़ो और संत कृपाका मभखारी बनो। ज्ञान पढ़ने ेसे नहींहोता। आत्म तत्व का जानना सािनजन्द्य नहींयह तो कृपाजन्द्य है। हा–ूँ वेदों, शास्त्रों का ज्ञान सािनजन्द्य है, परन्द्तु भगवान अपना आप, क्या सािन से ममलेगा? हा–ूँ म ैंब्रह्म हूँ यहाूँतक जीव भाव से परे हुए। पहहले जीवभाव में गरीब थे, अब कुछ अमीर बन गए। हा ूँभाई ! गरीब ही अमीर बनना चाहता है। तो क्या टेटकू घसीटू कहींब्रह्म बनेगा? म ैंजीव हूँ, इस जीवभाव की अपेिा से ही तो म ैंब्रह्म हूँ, अमीर बन गए। पहहले अपनेको गरीब समझता था और अब भावना करता है फक हम बड़े ेआदमी हैं। दरअसल जो ब्रह्म है वह क्यों कहता फफरेगा फक म ैंब्रह्म हूँ, ब्रह्म हूँ। देखो, हम उसको भगवान क्यों कहते हैं? क्योंफक, वह अपने आप को भगवान भी नहीं ंकहता। भगवान अपनेआप को भगवान भी नहींमानता। भगवान, परमात्मा, ब्रह्म यह नाम तो उपासकों ने रखा है। परमात्मा, अपनेआपको भगवान थोड़े ेही कहता है। तो फफर तुम क्यों अकड़तेहो-अहं

 ब्रह्माप्स्म कहकर। इससे साफ मालूम होता है फक तुम्हारी कंगाली अभी नहीं ंगई है। जरा रोशनी में आओ। वाह-

फफर भगवान गीता में कहते ेहैं-

यस्य सवे सर्ारम्भाः कार्सङ्कल्पवन्जतमाः ।

ज्ञानान्वनदवधकर्ाणंम्ं तर्ाहुःपन्ण्डतंबुधुाः ।।

(गीता 4 - 19)

क्या मतलब - रामाश्रय से, गोर्वन्द्राय नमो नमः, जो है सो-अरे, प्जसनेसमारम्भाः माइने ेसब समय तनःसंकल्प है, प्जसके मन में कोई संकल्प- र्वकल्प नहीं। र्वकल्प के बाद ही तो मनीराम की फैक्टरी चालू हो जाती है और जब मन तनःसंकल्प है तो फफर मनीराम की फैक्टरी चालू नहीं ंहोगी। यानी में देह हूँ, म ैंजीव हूँ, म ैं ब्रह्म आहद भावनाएूँ नहीं ंहोंगी। इन भावनाओं का र्वकल्प 'म ैं' के ऊपर होता है। जब भावनारहहत हुआ, योगमाया का पदाि फाड़कर बाहर फेंक हदया, योग माया का पदाि उठ गया-अरे ! वाह रे यार ! खूब पदानिशी है, बुरकावाली है, बुरका वाली सभी को देखती है, परन्द्तु दुतुनया ूँउसको नहीं देख पाती। योगमाया के परदे में छुपा हुआ 'म ैं' आत्मा सबको देखता हूँ, इप्न्द्रयों को, मन को, बुद्धि, धचि, अहंकार इत्याहद को, परन्द्तु सब मुझे ेदेखने में समथ िनहीं ंहै। वाह-

यह खेल कैसा परदानिीं ंका, परदा उठाकर जो हर्ने देखा ।।

इस पद का भाव, अभी नहीं ंइस वक्त नहीं,ं उस वक्त सुनाएूँगे आत्मप्जज्ञासुओं! ज्ञानाप्न में सव िकमि– संधचत, प्रारधि, फक्रयमाण सभी भस्म हो जाते हैं। यह भगवान अपने स्वरूप से बोल रहे हैं, अपने देश से कह रहे हैं और प्रारधि का रह जाना आचाय िदेश से कहे हैं। इस प्रकार भगवान नारद राजा प्राचीनबहहं ंके प्रतत र्वमल ज्ञान का उपदेश कमों के र्वषय में कर रहे हैं।

द्वितीय ददवस : दूसूरी बेला

दोपहर 2.00 से 4.00 बजे तक

उस समय के प्रसंग में कर्मों का वर्श्लेषण फकया गया। अब प्रेम से राजा पुरञ्जन का आख्यान सुनो-

आसीत्पुरंजनो नार् राजा राजनबृहूरवाः ।
तस्यावतवज्ञातनार्ाऽऽसीत्सखाववज्ञातचेन्ष्टतः ।।

(श्रीमद् भागवत 4-25-10)

इसी पृथूवी मंडल पर पुरञ्जन नाम का एक राजा था। उसके सखा का नाम अर्वज्ञात था। इसकी व्याख्या एवं सखा अर्वज्ञात के र्वषय में पीछे बतायगें। फकसी हदन अपने प्रिय सखा अर्वज्ञात को छोड़कर राजा पृथूवी मंडल में र्वचरण करने ेतनकल गया। र्वचरण करते-करते वह जंगल में प्रवेश फकया। वहाूँ उसे एक बड़ी सुंदर नगरी, प्जसके नौ दरवाजे थे ममली। वह राजा उसको सुरम्य देखकर उसके अंदर प्रवेश फकया तो वहाूँ उसे एक सुंदर रमणी बैठी हुई ममली। वह सुंदरी ग्यारह योद्धाओं से सुरक्षित थी और एक सप िप्रहरी था प्जसके पाचूँ मसर थे। सुंदरी के सौंदय िसे मोहहत हो उस षोडशी से राजा पुरञ्जन पूछता है-

का त्वंकछजपलाााक्षष कस्यासीह कुतः सनत ।

इरारुपु पुरींभीरु ककं धचकीषभमस िंस रे् ।।

(श्रीमद् भागवत 4-25-26)

क एतेऽनुपथा ये त एकादि र्हाभटाः ।

एता वा ललनाः सुभ्रु ुकोऽयंतेऽदहः पुरः सरः ।।

(4 - 25 - 27)

राजा पुरञ्जन कहता है फक हे लोक सुंदरी ! तुम कौन हो? फकस कुल की ललना हो और ये ग्यारह योद्धा कौन हैं? यह पाँच मसर वाला नाग कौन है? तो वह सुंदर बाला कहती है-

न ववदार् वयं सम्यक्कतारंम पुरषषभम ।

परस्यावप गोत्रं ंनार् च यत्कृतर् ्।।

(4 - 25 - 33)

इहाद्य सनतरात्र्ानंववदार् न ततः परर् ्।

येनेयं ननभर्तमा वीर पुरी िरणरात्र्नः ।।

(4 - 25 - 34)

एते सखायः सख्यो रे् नरा नायश्मच रानद ।

सुपुतायां र्नय जागनत मनागोऽयं पालयनपुरीर् ्।।

(4 - 25 - 35)

हे नर श्रेष्ठ ! यह तो मुझेर्वहदत नहींहै फक म ंैकौन हूँ, मेरा क्या गोि है, म ंैफकस कुल की हूँ? यह भी म ंै नहीं ंजानती फक ये मेरे ग्यारह सखा कौन हैं।।। म ंैजब इस नौ द्वारवाली पुरी में सो जाती हूँ तो यह पाचूँ फनवाला सप िपुरी की रिा करता है।

प्रथम ममलन में ही दोनों एक-दूसूरे पर आसक्त हो गए और राजा पुरञ्जन और वह सुंदरी दोनों प्ेरमपाश में बंिगए। राजा मोहपाश में बंिकर गृहस्थ जीवन में पदापणि फकया। जब वह सुंदरी मोहहत हो गई तो मोह का आदर समथनि कैसे न हो-दोनों र्ववाह सूि में बंिगए। अंततोगत्वा कालांतर में दोनों के ग्यारह सौ पुि और एक सौ दस कन्यायेंहुईं, समय बीतते गया। अब राजा और रानी दोनों का मृत्यु काल आ गया।

यं ंयं ंवावप स्र्रनभावं ंत्यजत्यनते कलेवरर् ्।

तं तेर्ैवनत कौनतेय सदा तद्भावभाववतः ।।

(गीता 8-6)

भगवान कृष्ण कहते ेहैं फक अन्द्तकाल में जो प्जस भाव को स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है उसी भाव को वह प्रातत होता है। मृतूयु काल में प्जसका धचंतंन करता है, प्राण के छूटने पर कोई भी हो, उसी भाव में प्स्थत हो जाता है। मृतूयु के समय में तो उसी भाव का धचंतंन होगा प्जस भाव में वह जीवन पयन्द्ति आसक्त होगा। जीवन पयन्द्ति प्जस प्रय वस्तु में उसकी आसप्क्त होती है उसी का स्वरूप मरणकाल में होता है, वह उसी का स्मरण करेगा। यही तो आसप्क्त का स्वरूप है। प्राप्तत में हष िहो और वछोह में दु:ख हो। दोनों राजा पुरञ्जन और रानी पुरञ्जनी एक-दूसूरे पर आसक्त थे। दोनों एक- दूसूरे का धचंतंन करते थे, तो मृतूयुके बाद राजा पुरञ्जन चूँफक रानी पुरञ्जनी का स्मरण करता था, उसी में वह आसक्त था इसमलए वह राजकुमारी वैदभी हुआ और रानी पुरञ्जनी मृतूयु के बाद मलयध्वज नामक राजकुमार हुई। ममशल उलट गई। यह अटल तनयम है फक जाग्रत अवस्था में प्जस वषय का धचंतंन करता है स्वतन में भी उसी का स्वतन देखता है-उसी का स्वतन होता है।

अब क्या-समय पाकर जब वे यौवनावस्था को प्रातत हुए तो उनका फफर ववाह हो गया। राजकुमार मलयध्वज (जो पूवजिन्द्म में रानी पुरञ्जनी थी) और वदभ िराजकुमारी वैदभी (जो पूवजिन्द्म का राजा पुरञ्जन था) दोनों प्ेरेम सूि में बंगिए। ववाह हो गया, राजा रानी पुनः बन गए और गृहस्थाश्रमोधचत व्यवहार करने लगे। फफर समय पाकर वृद्िावस्था आई तो दोनों राजा मलयध्वज और रानी वैदभी वन में तप करने ेलगे। काल गतत से राजा मलयध्वज की मृतूयु हो गई। (यह रानी पुञ्जनी थी पूवजिन्द्म की) और राजा पुरञ्जन जो अभी वैदभी रानी है, मृतक के पास वलाप करने ेलगी।

इसी समय राजा पुरञ्जन का वह अवज्ञात सखा ब्राह्मण रूप से उपप्स्थत होकर उपदेश करता है। उसने आत्मतत्व का उपदेश फकया। यह पुरञ्जनोपाख्यान् ्एक रूपक अलंकार है, समझो हमारे यहा ूँॠषि-मुतनयों ने बड़े-बड़े ेमहापुरुषों ने, जीव के कल्याण तनममि सुंदर-सुंदर कथाओं के माध्यम से आत्मतत्व का तनरूपण फकया है। आत्मतत्व का बिो कराए हैं और जीव का आत्मकल्याण फकये हैं। पुरञ्जन का अथ िहुआ। 'स्व पुरं जनयतत यः सः पुरञ्जनो जीवः।' अपनेसंकल्प से, वासना करके साढ़े तीन हाथ का जो शरीर है उसका स्वयमेव तनमाणि कहते ेहैं पुरञ्जन (जीव), पुरञ्जन नाम जीव का है और जीव का सदैव सखा अवज्ञात है। सप्च्चदानंद घनभूत परमात्मा, यह जीव का सखा है।

अवज्ञात-'न वज्ञातः इतत अवज्ञातः ।' तो परमात्मा का वज्ञाता, उसका जानने वाला, उसका रष्टा, ज्ञाता मसवाय परमात्मा के और कौन होगा। परमात्मा के अततररक्त दूसूरा कोई नहीं-तो कैसे नहीं? सुनो-परमात्मा है सप्च्चदानंद- सत्, ् धचत, आनंद। तो आत्मा सत् ्स्वरूप है, धचत (चेतन) है और आनंद स्वरूप है। त्रबल्कुल ठीक, परमात्मा से जीव को अलग करके मानो तो परमात्मा अलग और जीव अलग हो जायेगा और परमात्मा सत्य है तो जीव सत्य से मभन्द्न असत्य हो जायेगा। परमात्मा धचत है। यहद वस्तुतः परमात्मा से जीव मभन्द्न है तो चेतन से मभन्द्न जीव जड़ होगा और परमात्मा आनंद स्वरूप है तो जीवात्मा से यहद परमात्मा को मभन्द्न मानते हो तो जीव दु:खरूप होगा। मभन्द्न मानते ही जीव असत्य, जड़ एवं दु:खरूप हो जाएगा। इसमलए ऐसे जीव को परमात्मा के जानने ेमें क्या अधिकार है? यहद परमात्मा से अपनेआप को जीव वस्तुतः मभन्द्न मानकर परमात्मा को जान लेता

 है तो फफर बन्ध्र्या का पुि शेरे का मशकार कर सकता है। यह असंभव है। जीव अपने आप को परमात्मा से मभन्द्न

मानकर यहद परमात्मा को जान लेता है तो आकाश में उड़तेहुए धचडड़यों के चरण धचन्द्ह वह देख सकता है। यह असंभव है। परमात्मा का नाम अर्वज्ञात है, उसको वही जान सकता है, जो स्वयंवही हो। उसका पररज्ञान दूसूरे को नहीं ंहो सकता। अरे भाई ! समुर को नदी जानेगी फक समुर को समुर जानेगा? समुर को समुर ही जानेगा, नदी नहीं। देखो, सब हमको देखकर न कहो- समझो समुर को समुर जानेगा फक समुर को नदी जानेगी? अरे भाई ! देखो- दोनों समाज पे्रेम से सुनो-जब नदी समुर को जानने ेके मलए चलती है तो यहाूँपर श्रुततया ूँकहती हैं-

यथा नद्यः स्यनदर्ानाः सरुदुेरेऽस्तंग्छन्न्त नार्रूपे ववहाय । तथा ववद्वानननार्रूपाद्ववर्ुकुतः परात्परं पुरुषर्ुपैनत ददव्यर् ्।।

(मुण्डप 3/2/8)

जब नदी समुर को जानने के मलये समुर के फकनारे पहुूँचती है तो नाम, रूप को पररत्याग करके ही समुर को जानती है। समुर को जानकर नहदयाूँसमुर हो जाती हैं। फफर वहाूँ पर गंगा, यमुना आहद नहदयाूँ ढूँढ़ने ेपर भी नहीं ंममलती, नहदयों का अप्स्तत्व ही समातत हो जाता है। प्रवाह नदी का रूप है। जब वह समुर से ममली तो सब कुछ अपनापन छोड़ हदया-नाम, रूप के त्याग के बाद फफर शेषे क्या रहा? नदी भी समुर हो गई। नदी यहद समुर में ममलने पर अपना अप्स्तत्व (वजूद) रखती है तो जान लो अभी समुर से दूरू है और इसमलये जब वह समुर से ममली तो फफर नदी नहींरह गई, स्वयंही समुर हो गई। अचछा, अब देखो-समुर नाम समुर को फकसने ेहदया? नदी ने ही समुर नाम हदया-नहीं ंतो समुर कहा?ूँ समुर कहेगा कौन? तो फफर नदी नहीं ंरही, न समुर। अचछा समुर हो जाने पर नाम, रूप का त्याग करनेपर फफर उसका अप्स्तत्व नहीं ंरहा। तो फफर नदी की अपेिा से समुर था। तो समुर कहेगा फकसको? समुर में ममलने के बाद जब नदी हो तब तो समुर कहा जाए। आज के पहहले जब गंगा नाम, रूप छोड़कर समुर हो गई (यह बारीक चीज है, जरा ध्यान से समझना) तो न पहहले की याद, न अब की। समुर का पररज्ञाता हो तब तो समुर कहे। इसी प्रकार जीव, भगवान को प्रातत करके जीवभाव (नाम, रूप) त्याग कर पूणत्वि को प्रातत हो जाता है। 'स्व' का जब बोि हो गया। बद् था, अब मुक्त हो गया, अज्ञानी था, ज्ञानी हुआ इत्याहद। अतीत और वतमिान की स्मृतत नहीं ंरहती। यहद यह याद है तो यारों! जान लो वह अभी भगवान से सैकड़ों मील दूरू है। खचेडू का खचेडू ही रहा।

यथा नद्यः स्यनदर्ानाः सरुदुेरेऽस्तंग्छन्न्त नार्रूपे ववहाय । तथा ववद्वानननार्रूपाद्ववर्ुकुतः परात्परं पुरुषर्ुपैनत ददव्यर् ्।।

इसमलये मानसकार कहते हैं-

सोइ जानइ जेदह देहु जनाई। जानत तुम्हदह तुम्हदह होइ जाई ।।

श्रीराम को जानकर राम ही हो जाता है।

ब्रह्ववत् ्ब्रह्वैवै भवनत ।।

(मुण्डक 3/2/9)

परमात्मा को जानकर परमात्मा ही हो जाता है। याद रखो, परमात्मा को जानने का जीव की अनधिकार चेष्टा है। परमात्मा से मभन्द्न जीव को परमात्मा को जानने का कोई अधिकार नहीं, इसमलए परमात्मा अर्वज्ञात है। हा ूँजी-

ग्यारह योद्धा कौन हैं? बुद्धि रूपी पुरञ्जनी के पाचूँ ज्ञानेप्न्द्रय और पाचूँ कमेप्न्द्रय एवं ंग्यारहवाूँमन, यही वे ग्यारह योद्धा हैं। पाूँच फण वाला सप िप्राण हैं (प्राण, अपान, उदान, व्यान और समान), पाूँच मसर वाला (प्राण वायु) बुद्धि रूपी पुरञ्जनी जब सो जाती है तो नव द्वार वाली नगरी (शरीर) की रिा करता है। एक-एक इप्न्द्रयों के एक-एक सौ र्वकार बुद्धि में होतेहैं, यही ग्यारह सौ पुि हैं और बुद्धि की एक सौ दस प्रकार की जो र्वृर्ियाूँ, यही एक सौ दस कन्द्याय ें हैं। इस कथा का यही सारांश है। जीव रूपी पुरञ्जन का परम सखा परमात्मा सप्च्चदानंद घनभूत भगवान ही है। यही अर्वज्ञात सखा पुरञ्जन जीव को उपदेश करता है।

आनन्द्द कन्द्द श्री सप्च्चदानंद घनभूत परमात्मा ब्राह्मण का रूप लेकर उपदेश करता है-

का त्वंकस्याभस को वायंयिानो यस्य िोचभस ।
जानाभस ककं सखायं र्ां ंयेनाग्रेर् ववचचथ मह ।।

(4/28/52)

का त्वम्, ् कस्य अमस, अयम् ्कः-तू कौन है? ये कौन है? ओहो-तू र्वलाप फकसके मलए कर रही है। तू ूस्वयं अपनेआप को देख, समझ और इस अज्ञान को छोड़-इतना अज्ञान, इतनी महान भूल। तुमने ेअपनेआप को साढ़े तीन हाथ का देह माना, स्त्री माना-

अहं भवानन चानयस्त्वंत्वर्ेवाहं ववचक्ष्व भोः ।
न नौ पियन्न्त कवयन्श्छद्रं जातु र्नागवप ।।

(4/28/62)

म ैंजो हूूँ, वही तू ूहै। अन्द्यः न-दूसूरा नहीं। त्वमेवाहं-तू ही म ैंहूूँ और म ैंही तू ूहै। मुझ परमात्मा और तुझ जीवात्मा में कर्व महात्मा जन कभी तछरमिा का भी अंतर नहीं ंदेखते। अचछी तरह समझ मलया तो आत्मभाव को प्रातत हो जाएगा और यहद भेद माना तो जीवभाव में पड़ा रहेगा। इतना ही भेद है-

यथा पुरुष आत्ानरे्कर्ादिचमषुषोः ।
द्वधाभूतूर्वेषेत तथैवानतरर्ावयोः ।।

(4/28/63)

प्जस तरह कोई पुरुष हाथ में दपणि लेकर अपना मुँह देखता है तो शीशे ेके भीतर उसका ही प्रततत्रबम्ब हदखाई देता है। इसे वेदांत में आभासवाद कहते ेहैं। प्जस प्रकार त्रबम्ब और प्रततत्रबम्ब का भेद है, इसी प्रकार मुझ परमात्मा और जीव का भेद है। त्रबम्ब और प्रततत्रबम्ब का यह भेद पूणतिया सोपाधिक है, तनरुपाधिक नहीं।

प्रततत्रबम्ब-सखे ! फकस तरह? तू और है और म ैंऔर हूँ।

त्रबम्ब कहता है-तयारे प्रततत्रबम्ब देख तू ूमुझसे अलग नहींहै। म ैंही तू है और तू ही म ैंहूँ। सामने से शीशा हटा लेने पर यहद तू हदखाई दे तब तू ूमभन्द्न है और म ैंमभन्द्न हूँ। मेरा और तेरा भेद शीशाकृत भेद है। यह सोपाधिक भेद है, तनरुपाधिक भेद नहीं। देखो, समझो अब दो हो गए न, त्रबम्ब और प्रततत्रबम्ब, हटा लो शीशे ेको-तो प्रततत्रबम्ब न रहा और समझो तो त्रबम्ब भी न रहा। यहद प्रततत्रबम्ब नहींतो त्रबम्ब भी न रहा। अरे यार ! जब पुि होगा तभी तो र्पता होगा, पुि त्रबना र्पता कैसे? उसको र्पता कौन कहेगा? पुि नहींतो र्पता कहा?ूँ बेटा से बाप या बाप से बेटा? सब हमारे तरफ हो गए। मौज में मौज ममला रहे हैं। भैया ! पुि होगा तब तो र्पता कहने वाला होगा, तो पुि के भाव में र्पता का भाव है और पुि के अभाव में र्पता का अभाव है। अब जो शेषे रह गया वह न र्पता है, न पुि है। देखो यह बालक बैठा है आपके सामने, अभी तक इसका नाम र्पता नहीं ंहै। हा,ूँ इसी में र्पता और पुि का भाव तनहहत है, क्योंफक आगे यही तो र्पता होगा। र्पता, पुि दोनों नामका आश्रय यह बालक है। यहद पुि न रहा, तो र्पता भी न रहा। अब रह गया मसफि भास, जो त्रबम्ब और प्रततत्रबम्ब दोनों का आिार है। इसी तरह जाग्रत और स्वतन प्जस समय मुझ आत्मा के समि, मन रूपी शीशा आ गया, बस, जीव रूप प्रततत्रबम्ब भासने लगा-इस तरह समझो फक जीव रूपी प्रततत्रबम्ब और ईश्वर रूपी त्रबम्ब दोनों पैदा हो जाते हैं। जाग्रत अवस्था में मुझ आत्मा का जो प्रततत्रबम्ब उसे जीव कहते हैं और जीव प्रततत्रबम्ब की अपेिा से मुझ आत्मा का ही नाम त्रबम्ब ईश्वर हो जाता है। इसी तरह स्वतनावस्था में भी आत्मा में मन रूपी शीशे ेउपाधि के कारण जीव और ईश्वर ये दोनों र्वकल्प भासते हैं। परन्द्तु, सुषुप्तत अवस्था में मन रूपी शीशा नहीं ंरहता, मन अज्ञान में लीन रहता है तो दोनों की कल्पना नहींहोती। दोनों र्वकल्पों का सुषुप्तत अवस्था में अभाव हो जाता है, परन्द्तु 'म'ैं आत्मा रहता हूँ। उस अवस्था में यहद 'म'ैं आत्मा न रहूँ तो सुषुप्तत के आनंद का अनुभव कौन करेगा? इस तरह से प्जस आिार पर ईश्वर और जीव की कल्पना होती है, वह आिार मन सुषुप्तत अवस्था में नहीं ंरहता। जो जाग्रत में वही 'म'ैं स्वतन में और जो 'म'ैं जाग्रत और स्वतन में वही 'म'ैं सुषुप्तत गाढ़ी नींद में। जीव और ईश्वर दोनों का अधिष्ठान 'म'ैं ही हुआ त्रबल्कुल स्पष्ट है। जी हा–ूँ

ननरुपर् ननत्य ननरंकिेऽप्यखण्डे ेर्नयधचनत सव मववकल्पादद िूनये ।
घटयनत जगदीी जीव भेदं त्वघदटत घटना पटीयसी र्ाया ।11।।

र्वद्वजनों ! सुनो-म ैंआत्मा तनत्य सप्च्चदानंद तनरुपम (उपमारहहत) हूूँ। 'म'ै आत्मा की ममशाल नहीं। समस्त र्वकल्पों से रहहत, परन्द्तु वाह री माया, जो मुझ तनरुपम, तनत्य, तनरंश आत्मा में जीव और ईश्वर दो की कल्पना कर लेती है। जो चीज न घटनेवाली वह घटा कर बता देती है।

ननरुपर् ननत्य ननरंकेिऽप्यखण्डे ेर्नयधचनत सव मववकल्पादद िूनये ।
घटयनत जगदीि जीव भेदं त्वघदटत घटना पटीयसी र्ाया ।।1।।

जो सुनने में आये उसे प्रत्यि करके हदखा देना माया का ही काम है।

श्रुनत िेत ननगर्ानत िोधकानप्यहह धनादद ननदिनेमन सद्यः ।
कलुषुयनत चतुष्पदाद्यभभननान् ्त्वघदटत घटना पटीयसी र्ाया ।।2।।

श्रुततशत तनगमान्द्त शोिकातयहह िनाहद तनदशनेन सद्यः अहह ! बड़े ेही दुुःख एवं आश्चय िका र्वषय है फक बड़े-ेबड़े ेप्रज्ञावान र्वद्वान जो वेदों एवं ंवेदों के 'तत्वममस' इत्याहद महावाक्यों का संशोिन करते हैं, वे भी िन के लोभ में ऐसे फूँसते हैं फक कलुषयतत चतुष्पदाद्यमभन्द्न त्वघहटत घटना पटीयसी माया- चार पैर के पशु ुमें और ऐसे र्वद्वान में कोई भेद नहींरहता। र्वद्वानों पर ठगनी माया हुूँमक-हुूँमक कर चलती है, उन्द्हें बरबाद कर देती है। तनगमों की व्याख्या करेंगे-कहेंगे फक संसार असार है। प्रदशनि तो ऐसा करेंगे फक संसार ममथ्या है, नाशवान है, बन्द्धनरूप है, रज्जौसपवित् ्है और आसप्क्त है र्वि में। कलंफकत पदाथों में मन र्परोये रहतेहैं, दूर्षत पदाथों में पड़तेहैं। वाह री माया, अघहटत को घहटत करके बता देती है। ऐसी माया ठगनी है फक र्वद्वानों के और चार पैर के पशु ुमें कोई अंतर नहीं ंरखती। पशुवुत् ्वृर्त्ति उनकी हो जाती है। अघहटत घटना पटीयसी माया-न घटने वाली बात को घटा कर बता देती है माया।

सुखुधचदखण्ड ववबोधर्द्ववतीयं ववयनलादद ववननभर्तेम ननयोझय ।
भ्रर्यनत भवसागरे ननतानतं ंत्वघदटत घटना पटीयसी र्ाया ।।३।।

मुझ अव्यक्त ब्रह्म में र्वकृत संसार की भावना कर देती है। पंच महाभूतों की कल्पना कर देती है। पंच महाभूत ही नहीं ंवरन तन्द्मािाय ेंशधद, स्पश,ि रूप, रस, गंि स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीर, चतुष्टय अन्द्तःकरण मन, बुद्धि, ☐ धचि, अहंकार, पंच प्राण-प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान, पंच कमेप्न्द्रय, पंच ज्ञानेप्न्द्रय आहद की कल्पना कर देती हैं। यद्यर्प ये मुझमें फकसी काल में भी नहीं ंहैं, तब भी वाह री ठगनी माया ! इनकी कल्पना तू ूमुझ आत्मा पर कर देती है। ये मुझमें वस्तुतः नहीं ंहै, परन्द्तु कालाहद की भावना माया पैदा कर देती है। मुझ आत्मा में नानात्व आहद का र्वकल्प कर देती है। प्जसके चक्कर में पड़कर जीव अनाहदकाल से भ्रममत है।

अपगत गुण वण मजानत भेदे सुखु धचत ववप्र ववडाद्यहंकृनतंचं ।

स्फुटयनत सुतु दार गेह र्ोहं त्वघदटत घटना पटीयसी र्ाया ।।4।।

मुझ आत्मा में वण िऔर आश्रम आहद का भेद पैदा कर देती है फक म ैंब्राह्मण, ित्रिय, वैश्य, शूर हूँ-म ैं ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी, संन्यासी हूँ, म ैंस्त्री हूँ, म ैंपुरुष हूँ आहद। आत्मा सव िउपाधियों से रहहत है, परन्दतु यह सब होते हुए भी यह माया मुझ र्वशुद्तिनरञ्जन, अवांगमनसगोचर आत्मा में वणाश्रिम आहद का म ैंब्राह्मण, ित्रिय, वैश्य, शूरू, ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी, संन्यासी हूँ आहद की कल्पना कर देती है। ढूँढो तो उसका कहीं भी पता नहींचलेगा।

ववधध हररहर भेदर्प्य खंडेवेतववरचरय बुधानवप प्रकार्् ्।
भ्रर्यनत हररहर ववभेद भावान् ्त्वघदटत घटना पटयसी र्ाया ।।6।।

आश्चय िहै फक बड़े–बड़े ेर्वद्वानों के भी हृदय में एक अद्र्वतीय अखण्ड ब्रह्म में जो माया हरर, हर दो का भेद कर देती है। इसमलए जो बात नहीं ंघटने वाली वह भी घटा कर बता देती है।

प्जस समय भगवान श्रीराम समुर तट पर रामेश्वर र्वजय मलंगं की स्थापना लंका जाने के पेश्तर फकए तो श्रीराम नेर्वजय मलंगं का नामकरण फकया-श्री रामेश्वर। अब वहाँ पर इस नाम के भाव में चख-चख पैदा हो गया फक वास्तव में श्री रामेश्वर का क्या भाव हो? इसका क्या अथ िहो, इस र्वषय में चचािहुई।

रार्स्तत्पुरुषं ंवेवि बहुब्रीहं च िंकरः ।
रार्ेश्वरः पदे प्राप्तेकपयः कर्धमारयः ।
यो हररः सः भिवः साषात् ्यः भिवः सः स्वयंहररः ।
द्वयोभेदं यो जानानत स यानत नरकं प्रनत ।।

रामस्य ईश्वरः-रामेश्वरः षष्ठी तत्पुरुष समास। श्रीराम के जो ईश्वर है रामेश्वर। इसमलए श्रीराम ने यही अथ िफकया फक जो राम के ईश्वर हैं इसमलय रामेश्वर। तो श्री शंकर भगवान ने यह अथ िनहीं ंमाना। रामः ईश्वरो यस्य सः रामेश्वरः-बहुब्रीहह समास-श्रीराम है ईश्वर प्जसके वह रामेश्वर। तब फक फकसको स्वामी कहें और फकसको सेवक। वानरी सेना नल, नील, जामवन्द्न हनुमान, सुग्रीव, अंगद इत्याहद ने कमिारय समास माना। इसी अथ िको स्वीका फकया रामश्चासौ ईश्वरः, रामेश्वरः- राम ही जो ईश्वर और ईश्वर ही जो राम अथात्ि्जो राम है, वही मशव है और जो मशव है, वही राम है। तो श्री हररहा में जो भेद मानता है उसके मलए ठगनी माया ही कारण है। यह सब ठगनी माया का ही खेल है। सत्य नहींहै। तो फफर देखो-कभी-कभी लोग हमसे पूछ बैठनेहैं फक स्वामी जी ! श्री शंकर जी की उपासना कैसे और श्री र्वष्णुकी कैसे करें? अरे ! जब इनमें भेद ही नहीं ंतो उपासना में क्या भेद है। इसमलए कोई हमसे पूछता है तो हम यह सलाह देते हैं फक यहद तुम शंकर के उपासक हो तो श्री शंकर जी का अमभषेक इस मंि से करो-

ानिताकारं भुजगनियनंपद्नाभं ंसुरिं
ववश्वाधारं गगनसदृिं र्ेघवणं ंिुभाङ्गर् ।
लक्ष्ीकांतं ंकर्लनयनं योधगभभध्यानमगम्यं ।
वनदे ववष्णुं ंभयभयहरं सवलमोकैकनाथर् ्।।

इस मंत्र से श्री भगवान शंकर का अमभषेक स्नान कराएँ और खूब डटकर तुलसी पि चढ़ाय ें और जब भी श्री र्वष्णु की आरािना करें तो इस मंत्र से करें।

ॐनर्ो ि म्भवाय च र्योभवनाय च नर्: िंकराय च
र्हेश्वराय च नर्: भिवाय च भिवतराय च ।

(यजुवेद 16-41)

और खूब बेल पि चढ़ायें। जब तक तुम्हारी यह दृष्ट नहीं होती, तुम्हारा कभी भी कल्याण नहीं होगा। जब तक ब्राह्मण, ित्रिय, वैश्य, शूरू, ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी, संन्द्यासी आहद वणाश्रिम का अमभमान रहेगा, तब तक भगवान की प्राप्तत होना दूरू है। अरे! भगवान में भी भेद। इन भेदवाहदयों ने भगवान को भी अछूता नहीं छोड़ा। वण,ि वण िमें भेद, आश्रम, आश्रम में भेद, जातत, जातत में भेद। ठीक है भैया-मौज करो। हा ूँऔर चलो थोड़ा बताय।ें श्री रामचररत मानस के उिर कांड में चलें-

परवस जीव स्ववस भगवनता। जीव अनेक एक श्रीकंता ।।

तो इसका अथ िक्या होगा? अरे ! वही, जो तुम करोगे। परबस जीव-वैसे तो अमूमन अथ िहै फक जीव जो है वह परवश है और भगवान स्ववश है, जीव अनेक हैं और भगवान एक है। यहद ऐसा अथ िलगाय ेंतो त्रबगड़ जायेगा? जब तक परवश है तब तक वह जीव है और इसमें प्जसको शंका हो हमारे पास आयें। अपने आप 'म'ैं आत्मा को जब जीव मानता है तब परवश है और अपनेआप 'म'ैं आत्मा को जब भगवान जानता है तब स्ववश है। जो अपने आप को स्ववश जानता है वह ईश्वर है ही, मानने ेका सवाल ही नहीं। ध्यान रखो-यहाँ पर जानना कहा गया है। परवश मानना ही तो जीवभाव है और अपनेआपको जो स्ववश जाना वही भगवान। बस, यही सुप्रीम कोटि का फैसला है। अब इसकी अपील ही नहीं ंहो सकती। यहा ूँपर जीव और ईश्वर का भेद बतातेहैं और फफर रामायणकार आपको आगाह करते हैं फक भैया! इस भेद को असली रूप में न समझ बैठना, यह मिृा भेद है।

र्ुधा भेद यद्यवप कृत र्ाया। त्रबनु हरर जाय न कोदट उपाया ।।

यहा ूँपर जो भेद बताया गया है, जीवात्मा और परमात्मा में यह ममथ्या है, मायाकृत है, सत्य भेद नहीं है। अरे! यह भेद मिृा है, सोपाधिक है, तनरुपाधिक नहीं। मतलब, देखो, सामनेपेण्डाल के दोनों तरफ दीवाल है तो एक

श्रीमद्भागवत रहस्य 73 दीवाल से दूसूरे दीवाल तक एक ही स्थान है, परन्द्तु जब एक रस्सी इनके बीच में बांदिी जाती है तो

फफर इस पार
और उस पार की कल्पना स्वयंहो जाती है। इस पार और उस पार दो नाम हो जाएगा और जब रस्सी तनकाल दो तो न इस पार और न उस पार। भेद का पता ही नहीं ंरहेगा। स्वयंपाकी लोग जो होतेहैं जानते हो- चूल्हे के पास एक लकीर खींच देते हैं। तब इस पार चौका हो जाता है। अब देखना, भला कोई लकीर के भीतर आ जाए। कोई कुछ चीज देने आएगा तो त्रबगड़कर कहेंगे, उिर, उिर ही रहो ओ हो ! जमीन एक ही है, परन्द्तुवाह रे मनीराम, कहते हैं वहींपर रख दो- भैया ! उिर ही रखना। जबफक उस जमीन पर स्वयं पाकीजी बैठे हैं और उसी जमीन पर वह चीज है और चीज लानेवाला भी उसी एक ही जमीन पर खड़ा है। तो रेखा से ही तो भेद पड़ा इस पार और उस पार का, परन्द्तु सब पढ़कर भी पृथ्वी का ज्ञान नहींहुआ। जमीन का ज्ञान नहीं है, तभी यह भेद है। इस पार और उस पार की कल्पना होती है जबफक जमीन जगह एक ही है। तो जीव भाव और ब्रह्मभाव, जीव और ईश्वा इनका आिार 'म' ैं आत्मा ही हूँ।

एकात्र्के परे तत्वे भेदवाता मकथंभवेत् ्।
सुषुप्तौ सुखुर्ात्रायांभेदः केनावलोककतः ।।

यहद जीवात्मा और परमात्मा में भेद है तो सुषुप्तत अवस्था (गाढ़ी-नींद) में जीव और ईश्वर का भेद
र्वद्यमान होना चाहहए, परन्द्तु ऐसा नहीं ंहोता। सुबह उठनेसे ही भेद की प्रतीतत होती है। तो फफर सुषुप्तत में जीव और ईश्वर का भेद कहाँ चला जाता है?

नुक्तेके हेरफेर से खुद से जुदा हुआ ।
नुक्ता जो देखा गौर से तो खुद ही खुदा हुआ ।।

उदिू भाषा में जीम से मलखा जाता है जुदा और उस नुक्ते को उठाकर उसके मसर पर रख दो तो वह हो जाता है खे-खुदा बन जाता है। अरे यार! मसफि त्रबन्द्दी ही तो हटाना है-क्या कुछ करना है?

नुक्तेके हेरफेर से खुद से जुदा हुआ ।
नुक्ता जो देखा गौर से तो खुद ही खुदा हुआ ।।

जी हा,ूँ लखनऊ के नवाब वाप्जद अली शाह कहा करते थे ेफक एक नुक्ता ने फकया खुदा से मुझको जुदा। खुदा को कहते हैं वाहहद। वाप्जद में जो नुक्ता है उसे हटा दो तो वह शधद वाहहद बन जाता है।

आत्मप्जज्ञासुओं! अरे, इस पर कभी गौर फकया है? चलो अब दृष्टांत द्वारा बताएूँ। पंचदशीकार स्वामी र्वद्यारण्य जी दसवें पुरुष का दृष्टांत देते हैं। फकसी स्थान से दस आदमी अपनेदेश को लौट रहे थे। उनका स्थान नदी के उस पार था। नदी बड़ी थी। नदी पार होकर उन्द्हें जाना था। जब नदी के पास दसों पहुूँचे ेतो वहाूँ पर नदी के पार जाने के मलये नाव, डोंगा, फकश्ती कुछ नहीं ंथा। नदी का पाट चौड़ा था। नदी गहरी थी, पानी भी ज्यादा था।

क्या करें, नदी में सभी कूद पड़े ेऔर तैरते हुए सभी सही सलामत पार आ गए। दसों तैरकर उस पार नदी के फकनारे खड़े ेहो गए। उन दसों में एक लालबुझक्कड़ था। प्जसको अक्ल की बदहजमी थी। फकसी-फकसी को अक्ल की बदहजमी रहती है। तो वह यह सोचने लगा फक चलो पहहले ठीक तरह से देख लें फक हम दसों पार हो गए या कोई बह तो नहींगया। लगा धगनती करने,े एक-एक करके मसर पर हाथ रखकर 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9 तक धगन गया और अपने को धगनना भूल गया। तो नौ ही रहे। इसी तरह दो-चार बार धगनती करने पर भी नौ ही शेषे रहतेथे तो वह दसवें का पता नहीं लगा पाया। नौ तक ही धगन पाता था। दूसूरे साधथयों ने पूछा फक क्या बार-बार धगन रहे हो क्या तुम्हें कोई शंका है? वह अक्ल की बदहजमी वाला घुड़ककर कहता है-क्या शंका? अरे ! देखतेक्या हो दसवें का तो पता ही नहीं ंहै-शायद दसवाँ डूब गया। क्या दसवाँ डूब गया। अब सब परेशान, दूसूरा उठकर धगनने लगा। वह भी सब के मसर पर हाथ रखकर 1, 2, 3, नौ तक धगना और अपनेको भूल गया। दसवाँ गायब, उसनेभी दसवें को नहीं ंपाया। फफर क्या-सभी नौ आदमी एक-दूसूरे के मसर पर हाथ रख धगने और नौ तक ही धगनते रहे। कारण सभी अपनेको धगननेमें भूल करते रहे। तो सचमुच में दसवाँ डूब गया। अब यह सभी को तनश्चय हो गया फक दसवाँ ि्दसों ही बह गए।

सचमुच में डूब गया। यद्यपि दसों वहाँ हैं, परन्तु इस तरह अलग-अलग भूलते ेजाते अथात
यद्यपि सभी मूसरचंद वही हैं। फफर क्या, कोलाहल मच गया हाय रे दसवाँ, हाय रे दसवाँ, कभी पि की आड़ में कभी नदी में खोजें, कहींदसवाँ नदी में अटका हो तो ममले। खोजनेवालों को उनका दसवाँ न ममला, क्योंफक खोजने वालों से अगर दसवाँ मभन्द्न हो तो ममले। कुछ गुमा हो तो ममले। वेलोग छाती पीट-पीटकर रोने लगे। हाय रे मेरा दसवाँ कह करके। हा ूँभाई, कोई फकराये से रोने वाला ममले तब तो, वे ही लोग रोने लगे। उसी समय उिर के एक बूढ़ा, मुसाफफर तनकला। इस तरह से उन लोगों को रोते-पीटतेदेख, वह पूछने ेलगा-भाइयों! क्यों रोतेहो? क्या बात है? तो वे कहने लगे फक हम लोग दस थे,े दसों नदी पार फकये, परन्द्तु हम नौ ही बाहर आये, हमारा दसवाँ नहीं तनकला, संभव है वह नदी में बह गया। हम लोग अपनेदसवें के मलए रो रहे हैं। बूढ़ा मुसाफफर अक्लमंद था। वह मन में िीरे से सभी को धगन मलया और देखता है फक दस के दस मूसरचंद सभी मौजूद हैं। बेवकूफी के कारण दसवाँ-दसवाँ धचल्ला रहे हैं। वह मन ही मन धगनती लगा मलया और कहता है फक भाई! एक बार म ैंभी धगनती लगाऊँ तब मालूम हो। तो वे ेकहते ेहैं फक हम अभी तक धगनती ही तो लगाए हैं तो बूढ़ा मुसाफफर कहता है फक ठीक है, तुम लोग मेरे सामने धगनती लगाओ। बूढ़े के कहने से वे ेधगनती जैसे पहहले लगाये थे े1, 2, 3, 4....9 की धगनती लगाए और फफर अपने को भूलकर दसवें के मलए हाथ मसलने लगे। इस तरह दसों ने धगनती लगाई और हर एक अपनेको धगनना भूलते रहे। बूढ़ा समझ गया फक सभी की बुद्धि खराब है। सभी का हदमाग फेल है। तो वह कहता है फक तुम लोगों का दसवाँ तुम्हीं ंलोगों में है। तो वे कहने ेलगे फक फफर वह ममलता क्यों नहीं?ं अज्ञातनयों की र्वकट खोपड़ी होती है। वह बुड्ढा कहता है फक देखो-क्या तुम दसवाँ देखना चाहते हो? मेरे पास आओ। एक-एक का कान पकड़कर, हाथ पकड़कर हा ूँभाई! हाथ पकड़ना चाहहए, अरे! जो ररसीव्ह करता है हाथ ममलाता है न। देखो-एक ममनट में म ैंदसवें का पता लगाता हूँ। फफर सबके मसर में हाथ रखकर 1, 2, 3... करते-करते दसवें के गाल पर तमाचा लगाया फक प्जस दसवें को ढूँढ़ रहा है वह दसवाँ तू। ममला तुम्हारा दसवाँ? इसी तरह सबको पकड़-पकड़कर दसवाँ हदखा हदया। दसों को तमाचे पड़े।े जब तक दसवाँ नहींममला था तब तक दसवें के मलए रो रहे थे और दसवाँ वे ही सब थे। दसवाँ प्जतना दूरू था उतना ही नजदीक, इसकी भी कोई सीमा नहीं।

अनाहदकाल से नाना प्रकार के सिानों से दुतुनया ूँभटक रही है। फकसी की बात मानता नहीं। फकसी की मशिा मानने को तैयार नहीं, ं परेशान है। जब कोई संत महात्मा महान पुरुष 'तत्वममस' महावाक्य द्वारा (जैसा ऊपर दसवाूँ हदखाया गया) स्वयं में स्वयं को परमात्मा लखा देते हैं। सभी परमात्मा को ढूँढ रहे हैं। परन्द्तु कभी भी र्वचार फकया फक म ैंकौन हूँ? कभी भी सोचा-र्वचारा फक लगे परमात्मा को ढूँढने के मलये। परमात्मा के पीछे डंडा मलए घूम रहे हैं। पहहले समझो फक म ैंकौन हूँ? म ैंकहाूँ हूँ? म ैंक्या हूँ। कभी भी अपनेको समझने ेकी कोमशश नहीं की। अब इसी की शान में एक गजल सुनाता हूँ-

हूँ जझबे जलवागर सबर्ें इकसां, दीवाना होकर जो हर्नेदेखा ।

जज्बे-ठसाठस, जलवागकर-प्रकाशक

गई जहननुर् र्ें सारी दुनुनयाूँ बेताब होकर जो हर्ने देखा ।।1।।

वाह जी वाह-जहन्द्नुम में-गत िमें-भाड़ में।

र् ैंहूँ सभी का हूँ सबसे आला, तकरीर र्ेरी न इस जहाूँर्ें ।
बतानेवाले खार्िो बैठे, नाचीज होकर जो हर्ने देखा ।।2।।

आत्मा होने के नाते 'म ' ैं फकसका नहीं ंहूँ, फकसमें नहीं ंहूँ, क्या नहीं ंहूँ, कहा ूँनहींहूँ-अरे ! लकड़ी, तख्त, र्खड़की, फकवाड़, कुसी, मेज, बेंच इत्याहद फकसमें नहीं है, फकसकी नहीं ंहै, क्या नहीं। त्रबल्कुल इसी तरह आत्मा व्यातत है।

र् ैंहूँ सभी का हूँ सबसे आला, तकरीर र्ेरी न इस जहाूँर्ें ।
बतानेवाला खार्िो बैठे, नाचीज होकर जो हर्ने देखा ।।2।।

तकरीर-व्याख्यान

'म ' ैं आत्मा की कोई व्याख्या नहीं, ं 'म ' ैं पर कोई व्याख्या नहीं ंहोता। शास्ि, वेद, पुराण, सब भगवान आत्मा की महहमा गाते हैं। जो आत्मा शास्ि, वाणी, मन, बुद्धि से परे हैं-तो फफर क्या वाणी 'म ' ैं आत्मा की व्याख्या करनेमें समथ िहै। 'म ' ैं वाणी का र्वषय नहीं ंहूँ। मन, बुद्धि का र्वषय नहीं ंहूँ। भगवान आत्मा व्यापक है, अमर है, पररपूण िहै, उसकी व्याख्या वाणी क्या कर सकती है। शास्ि, वेद, पुराण सब श्री भगवान आत्मा की महहमा की ही व्याख्या कर सकतेहैं। जब वे ेस्वयंपररप्च्छन्द्न है तो वे मुझ आत्मा की क्या व्याख्या कर सकतेहैं।

र् ैंहूँ सभी का हूँ सबसे आला, तकरीर र्ेरी न इस जहाूँर्ें ।
बतानेवाले खार्िो बैठे, नाचीज होकर जो हर्ने देखा ।।2।।

जगत में देखतेही हैं। मशष्टाचार से जब कोई फकसी के पास जाता है तो उसको पूछता है-कहहये, आपका दौलतखाना कहाूँहै? तो वह कहता है-मेरा गरीबखाना लखनऊ में है, इलाहाबाद में है। हुजूर के मुकात्रबले में नाचीज हूाँ। तो नाचीज फकसको कहतेहैं? अपनेआपको कुछ भी माना, तब तक वह चीज है। तब तक म ैंचीज हूाँ जब तक म ैं अपनेआपको कुछ भी मानता हूाँ। जब अपने आपको कुछ नहीं ंमानता, अपनेआप 'म'ैं को 'म'ैं ही जानता हूाँ तब वह नाचीज हो गया। मानापमान से परे हो गया। तो तू भी नाचीज हो जा। 'म'ैं आत्मा की कौन व्याख्या करेगा-आत्मा की व्याख्या नहींहो सकती। जब कुछ कहा नहीं ंजा सकता तो आत्मज्ञानी संत महात्मा क्या कहें, आत्मा के मलए सब खामोश बैठे हैं। इसका ररयलाइजेशन (दशनि) कब हो? जब वह कुछ भी मानना ममटा चुका-नाचीज होकर हमनेदेखा-बताने वाले खामोश बैठे हैं।

र् ैंहूाँ सभी का हूाँ सबसे आला, तकरीर ऱ्ेरी न इस जहाूँर्ें।
बतानेवाले खार्ोश बैठे, नाचीज होकर जो हर्ने देखा ।।2।।
हूाँ जझबे जलवा... वाह जी वाह-
जो कुछ भी ऱ्ाना खुद को ही ऱ्ाना नैं ेही ऱ्ाना ये भूल-भूलैया ।।
यह खेल कैसा पदानमीींका परदा उठाकर जो हर्नेदेखा ।13।।

और है कौन मसवाय मुझ आत्मा के- यह खेल कैसा पदिानशींका परदा उठाकर जो हमने देखा-वाह जी वाह- परदा के अंदर रहने ेवाला-क्या खूब, परदा उठाकर जो हमनेदेखा-र्वकल्प, मान्द्यता यह सब माया का परदा है। 'म'ैं आत्मा इसके अंदर रहने ेवाला परदानशींहूाँ-भाई ! परदा उठाना पड़ेगो। आत्मा का दशनि करना है तो मान्द्यता जगत से ऊपर उठो। र्वकल्प छोड़ दो-परदा फाड़दो-मान्द्यता परदा हैं तो उसे उठाकर फेंक दो-र्वकल्पों को छोड़कर परदानशीं का दशनि हो सकता है। परदा उठाने से ही मालूम पड़ा। र्वकल्प का नाश हुआ-

हूाँ जझबे जलवागर सबर्ें इकसाूँ, दीवाना होकर जो हर्नेदेखा।

अरे !

भटकती दुनुनया ुाँदहरोहरर्ें ददले दफीना हुआ न हाभसल।

अनाहदकाल से जंगल, पहाड़, नदी, गुफा सब जगह ढूँढ रहे हैं। मुद्दत बीत गई, हदन पर हदन तनकल गया भटकते-भटकते-हा ूाँभाई सभी भटक रहे हैं, परन्द्तु हदल के अंदर ही जो खजाना गड़ा है-हदल दफीना मन के अंदर गड़ा हुआ खजाना ('म'ैं आत्मा) न ममला। अनाहदकाल से दुतुनयां ंपरेशान है- भटकती है।

भटकती दुनुनया ुाँदहरोहरर्ें ददले दफीना हुआ न हाभसल।
ददले दफीना तलिागर खुद, नजर उठाकर जो हर्ने देखा ।।4।।

समझना जरा-हदले दफीना- 'म'ै आत्मा को तलाश करनेवाला स्वयं(खुद) ही है हदले दफीना है। कैसे ममले? दुतुनयाँ भटक रही है, खोज रही हैं- हूँ जज्बे जलवागर सबमें इकसाँ, दीवाना होकर जो हमनेदेखा । गई जहन्द्नुम में सारी दुतुनयां, ं बेताब होकर जो हमने देखा ।।

और क्या-

ऱ्ेरी हुकूर्त से िम्स रिीन, कर्र भसतारे हैं जगर्गाते ।

मुझ आत्मा की हुकूमत (आज्ञा सिू) में सूय,ि चन्द्र, मसतारे आकाश में नाच रहे हैं। इन सबका शासक कौन है?

य आददत्ये नतष्ठननाददत्यादनतरो यऱ्ाददत्यो न वेद यस्याददत्य:
रिीरं य आददत्यर्नतरो यर्यत्येष त आत्ऱ्ानतयाम्मयरृ्तृ: ।।

(वृहदा 3/7/9)

जो आहदत्य (सूय)ि के अंदर व्याप्तत है। प्जसको आहदत्य नहीं जानता, जो आहदत्य को जानता है, आहदत्य ही प्जसका शरीर है, आहदत्य पर जो शासन करता है, जो आहदत्य का तनयमन करता है, वह अर्वनाशी अन्द्तयामिी अमृतृ आत्मा तू ूहै।

क्या मजाल है फक सूय,ि चन्द्र की गतत में एक ममनट भर का भी फकि हो जाए, घड़ी लेट हो जाए, परन्द्तु सूय ि की घड़ी लेट नहींहोती। प्जस हदन प्जस समय उसे उदय होना है, त्रबल्कुल ठीक टाइम पर वह उदय होता है। उसी तनयम से काय िहोगा-त्रबल्कुल इिर-उिर नहीं, कभी सोचा फक फकसकी आज्ञा से सूय,ि चन्द्र, ििनि, तारागण काय ि कर रहे हैं? फकसका शासन है?

ऱ्ेरी हुकूर्त से िम्स रिीन, कर्र भसतारे हैं, जगर्गाते ।
सच ऱ्ें रुबुारक बेरुलुकिाही, कुबानम होकर जो हर्ने देखा ।।5।।

तो भैया ! कुरबानी है यहा ूँत्रबना मसर के हो जाना, यही करना चाहहए। अभी, यहींअनुभव करो, प्जतने यहा ूँबैठे हो-जब तक तुम आत्म तत्व 'म'ै को नहींसमझे हो-जब तक तुम अपने से अलग मानतेहो, तभी तक कुदरत तुम्हारा तनयमन करती है, तुम्हारे ऊपर शासन करती है। प्रकृतत तुम्हारा शासक है। हा–ूँतयारे ! मान्द्यता जगत से परे होकर आओ। अपने'म'ै को जानो तब फफर 'म'ै ही शुदि् तत्व रह जाएगा। रह गया शुदि् तत्व भगवान आत्मा-बन्द्दर को जैसे बाजीगर नचाता है उसी प्रकार आत्म तत्व को त्रबना जानेप्रकृतत तुम्हें नचाती है। उसके ऊपर शासन करती है। मान्द्यता जगत के बाहर प्जस हदन प्रकाश में आ जाओगे तो तुम्हीं ंशासक हो, फफर

 क्या कमी है। तुम हो जाओगे शासक ! मुबारक है-मुबारक है–न्यवाद। अरे! प्जसके पास एक अंगूठा रखनेभर की

भी जमीन कहनेके मलए नहींहै, अंगूठा टेकनेकी जगह नहींहै, वह त्रबना ताज के बादशाह बना है।

सच र्ें र्ुबारक बेर्ुल्काही, कुबानम होकर जो हर्ने देखा ।।5।।
हूँ जझबे जलवागर सबर्ें इकसाुँ, दीवाना होकर जो हर्नेदेखा ।
हरेाि लहराता 'र्ुक्त' दररया, हुआ है. गर. काब ए सारा आलर् ।
पता नहीं ंर् ैंथा कौन क्या हूँ, र्स्ताना होकर, जो हर्नेदेखा ।। 6 ।।

कब देखा? मस्ताना होकर-जब हमनेदेखा।

र्स्ताना डोलत कफरै, झयों सरकारी साडुँ ।
डर काहू की है नहीं,ं खसर् त्रबना जस राडुँ ।।1।

गावूँ में देखे होंगे, एक सरकारी और एक लोकल दो प्रकार के साँड़ होते हैं। लोकल साँड़ को कभी-कभी लोग हल में जोत लेते हैं, कांजी हौस में भी दे देते हैं और भैया ! प्जसमें सरकारी मोहर लगी होती है, वह क्या कहीं जाए, कहीं खाये, कहीं सोये, कहीं रहे कौन टोकनेवाला है। मस्ताना वही है प्जसनेअपने व्यप्क्तत्व का, मानापमान का त्याग कर हदया है। प्जसे अपनेआप का भान भी नहीं ंहै। जब तक अपनेआपको कुछ न कुछ मानता है तब तक वह मस्ताना नहीं ंहै। आत्म तत्व को जानने ेके मलये कुरबानी तो करना ही होता है। अपने व्यप्क्तत्व को गला देना होता है। चाहे जागे, चाहे सोवे, कोई क्या कहनेवाला है।

खसर् त्रबना जस राडुँ, चाहे जागे चाहे सोवे।
र्ने र्ाना जग र्ुवा, भला अब ककसको रोवे।। 2 ।।
कहता 'र्ुक्ता' सत्य, र्ान त्रबनु न्जसने जाना ।
हुआ ननरंकुि पुरुष दीवाना र्स्ताना ।। ३ ।।

त्रबना अपने आपको कुछ मानेहुए जो आत्म तत्व को जानता है।

भया ननरंकुि पुरुष दीवाना र्स्ताना ।।

चलो, अब युप्क्त जगत में भ्रमण करें। अभी तक शास्त्रिि प्रमाणों से मसद् फिकया गया और अब जरा युप्क्त जगत में घूमें। देखो-मशव मशव सुनो- पहले जीववाहदयों का तकि सुनो-

जीव अल्पज्ञ है, ईश्वर सवज्ञि है ।

जीव अल्पशप्क्तमान है, ईश्वर सव िशप्क्तमान है।

जीव छोटा है, ईश्वर बड़ा है।

जीव मृतूयु वाला है, ईश्वर अमर है।

जीव पररप्च्छन्द्न है, ईश्वर व्यापक है।

जीव एक देशीय है, ईश्वर सर्वदेशीय है ।।

त्रबल्कुल ठीक-सोलह आने ेठीक-परन्द्तु भैया ! (एक-एक फूल अलग- अलग हाथों में रखकर पू. श्री

स्वामीजी समजा रहे हैं।)

जीव अल्पज्ञ, ईश्वर सवज्ञि ।

जीव अनेक, ईश्वर एक ।

जीव पररप्च्छन्द्न, ईश्वर व्यापक ।।

तो इन दोनों को तौलनेवाला, इन सबका पररज्ञाता फफर तीसरा कौन है, जो ईश्वर और जीव का वजन कर रहा है? तब तो हदखता है फक तौलने वाले को तौलना आता ही नहीं। अरे भाई! अपने को भी तराजू में रखकर तौलता है क्या? जीव और ईश्वर-बुद्धि रूपी तराजू के पलवे पर तुल रहे हैं। यहद मानों फक जीव तौल रहा है तो ईश्वर को जीव कैसे तौलेगा। एक आकाश का और एक जमीन का रहने ेवाला है, तो फफर तीसरा कौन है जो तौल रहा है? 'म'ैं आत्मा । तीसरा तौलनेवाला 'म'ैं आत्मा ही हूँ। मुझमें ही ईश्वर और जीव दोनों कप्ल्पत हैं। तो फफर यह जानता कौन है? इसका सिाी कौन है? जीव अल्पज्ञ हैं और ईश्वर सवज्ञि है-इसका पररज्ञाता कौन है? 'म'ैं आत्मा।

दूसूरी युप्क्त- एक जीव और दूसूरा ईश्वर और तीसरा जीव और ईश्वर का भेद-त्रबल्कुल ठीक-भला बताओ-भेद का आिार कौन है? इस भेद को, इस तकि को समझना है, यह लॉप्जक है। यह भेद यहद ईश्वर में हो तो ईश्वर भेद रूप हो जाएगा। तो ईश्वर भेद रूप है फक अभेद रूप है? इस तकि से ईश्वर। भेद रूप हुआ। तो बाबूजी ! भेद एक में होता है या दो में? ईश्वर एक है या दो? भेद का अप्स्तत्व ही दो में है और यहद ईश्वर भी दो होकर रहेगा तो यह अर्वनाशी नहीं। अथात्िय्हद ईश्वर भेद रूप है तो वह ईश्वर नहींऔर ईश्वर यहद अभेद रूप है तो जीव और ईश्वर में भेद नहीं। ईश्वर से जीव का क्या, एक तृणृ का भी भेद नहींहै। यह ब्रह्मास्त्र् है। इन्द्र का वज्र भले ही कुण्ठत हो जाय, परन्द्तु यह मसद्िांत कुण्ठत नहीं ंहो सकता। सब कुछ भगवान है-जीव भी भगवान है, जरि-जरि भगवान है। भगवान भेद रहहत है अब कहाूँका द्वैत, र्वमशष्टाद्वैत-भेतवाताि कथंभवेत्।् सुनो, अब र्वचार करो- ध्यान दो, यहाूँ कोई मजहबी, पंथ-पंथाई, साम्प्रदातयक चीज नहीं है-पंथ वाला नहीं,ं जो हकीकत है, सचचाई है, सत्य है वही कही जाती है। मसद् किरो भेद को-

यहद भेद रूप है तो वह ईश्वर नहीं,ं अभेद रूप है तो कण-कण (ईश्वर) है। सुई के अग्रभाग से भी भगवान अलग नहीं।

अहं भवानन चानयस्त्वंत्वरेे्वाह वव्क्ष्व भोः ।
न नौ पश्यन्नत कवयन्श्छद्रं जातु र्नागवप ।।

(श्रीमद्भागवत 4-28-62)

जो म ैंहूँ वही तू है। जीवात्मा और परमात्मा में फकञ्च्चन्द्धिा भी भेद नहीं ंहै।
तावत् ्गजन्मनत िास्त्राणण जम्बुकाः वववपने यथा ।
न गजनमत र्हान्क्तयावमद्वेदानत केसरी ।।

जी हा–ँ संसार रूपी जंगल के अनेकों मत मतान्द्तर रूपी मसयार (लोमड़ी) कब तक धचल्लाते हैं जब तक कोई वेदांत रूपी मसंहं की दहाड़ नहींहोती। संसार में अनेकानेक मत, पंथ-पंथाई, साम्प्रदातयकता आहद तभी तक पनपती है, भेदवाहदयों की चाल तभी तक चलती है, जब तक वेदांत मसंहं की दहाड़ नहींहोती। तभी तक वे बोलते े हैं। वेदांत केसरी, आत्मतत्व भगवान 'म'ैं का रूप वेदांत रूपी तालाब में लखा देते हैं फक जानो तुम कौन हो-तुम्हें अपनेआपका आत्मतत्व का, अपने'म'ैं का अनुभव करा देते हैं। यहद तुम र्वद्वान हो तो शास्र्ों का प्रमाण लो- उपतनषदों का, पुराणों का, स्मृततयों का, रामायण, गीता, भागवत आहद ग्रन्द्थों का प्रमाण लो और यहद तुम पढ़े-मलखे नहींहो तो युक्तयों का प्रमाण लो और यहद तुम श्रद्धालिु ुहो तो संत वाक्यों का प्रमाण लो, आतत वाक्यों का प्रमाण लो। शरीर से मभन्द्न होकर, अपनेआपको साढ़े तीन हाथ का न मानकर जब देखोगे तो फफर 'म'ैं ही हूँ हदखेगा। हा,ूँ इस शरीर के अंदर जरूर हूँ, परन्द्तु शरीर दृष्ट छोड़कर समझना तभी आत्म तत्त्व का 'म'ैं का अनुभव कर सकोगे। अनाहदकाल से संसृतत दोष से ग्रमसत हो अपनेआपको शरीर मानेबैठे हो, इसी से यह असाध्य रोग हो गया है। इस अज्ञान को दूरू करना ही होगा और फफर तो तुम स्वयं ज्ञान स्वरूप हो ही। वेद से लेकर हनुमान चालीसा तक सभी इसी तत्व का प्रततपादन करते हैं। हाूँ वेद बड़ा और हनुमान चालीसा छोटी पुस्तक है। शरीर के अंदर रहते जो भगवान आत्मा 'म'ैं अपना आप, जो जाहहर जहूर है, सब में तनरंतर जो 'म'ैं हूँ, 'म'ैं हूँ की आवाज दे रहा है, इससे जो मभन्द्न है वह भगवान नहींहै। इस प्जले का इस प्रान्द्त का यह पहला चांस है फक इस तरह अध्यात्म का प्रचार, डंका बज रहा है और यह डंका झंडापुर में ही सीममत नहीं है। झंडापुर तक ही नहींहै, वरन् ्सारे र्वश्व में गूंज रहा है। हम कथा प्रारंभ करते समय शांतत पाठ के साथ ही घोर्षत कर देते हैं-अनन्द्त नाम, रूपों में अमभव्यक्त, अहमत्वेन प्रस्फुररत, महामहहम, स्वात्मस्वरूप सकल चराचर-यह ब्राडकास्ट यहीं ंके मलये नहीं ंवरन् ् सारे र्वश्व के मलए है ब्रह्मतत्व का प्रततपादन (आत्म तनरूपण) अध्यात्म र्वद्या है। याद रखो, वह हदन आज से दूरू नहीं ंहै, जबफक सारे र्वश्व में यह अध्यात्म र्वद्या ओतप्रोत हो जाएगी, कोना-कोना भर जाएगा। कहीं ंकोई स्थान खाली न रहेगा। ध्यान रहे फक यह अध्यात्म र्वद्या कोई पंथ या मजहबी चीज नहींहै। आजकल का समय प्रेेप्क्टकल एवंर्वज्ञान युग है। यह तो सभी को मालूम है फक र्वज्ञान जगत में फकतनी प्रगतत हो चुकी है और आगे

बढ़ रही है। लोग चंरलोक की यािा कर चुके, वहाूँके िरती का फोटो लेकर यहाूँ आए हैं और आगे वहाूँ कोठी बनाकर रहने ेकी तैयारी हो रही है और यहा ूँअभी वही पुरानी राधगनी आलापी जा रही है। तयारे ! प्रगततशील बनो, अंिेरे ढोते पं्जदगी बरबाद हो रही है। आलोक जगत में आओ-कब तक अंकिार में पड़े ेरहोगे। भेदवाहदयों के बीच पड़कर मन संकुधचत हो चुका है। यह जीव का काम नहीं,ं यह नारायण का काम है फक जो हम तुम्हें घंटों उपदेश दे रहे हैं। अध्यात्म तत्व का अमृत् तुम्हें र्पला रहे हैं। यह तो हमारी सरकारी ड्यूटी है। घंटों आप लोगों को सूक्ष्म से सूक्ष्म तत्व बतला रहे हैं। हम इसमलए शरीर िारण फकए हैं। हमें और कोई काम नहीं,ं बस एकमाि यही धचंता है फक फकतनी जल्दी तुम प्रकाश में आओ-अपने आप 'म'ैं को समझ लो।

हा ूँजी-क्या कोई कुछ पूछता है-स्वामी जी ! कहो भाई-स्वामी जी ! अगर हम जीव को ईश्वर का अंश मान लें तो क्या कोई हज ि है? अपनेआप को ईश्वर का अंश मान लें तो कोई हज ि नहीं ंहै और श्री गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज भी तो रामायण में यही मलखे हैं-

ईश्वर अंि जीव अववनािी। चेतन अर्ल सहज सुखरासी ।।

(उ.कां.)

हा ूँठीक है, मलखा तो है भाई-तो फफर क्या चौपाई गलत है? क्या जीव ईश्वर का अंश नहीं ंहै। इस ऊपर की चौपाई से तो साफ हदखता है फक जीव ईश्वर का अंश है। मेरे आत्मन् ्! पूरी तरह समझकर अथ िकरो-पूरे पद पर गौर करो-आगे श्री गोस्वामी जी क्या कहते हैं-जीव ईश्वर का अंश है और फफर अर्वनाशी है-ईश्वर का अंश जीव अर्वनाशी। जीव का नाश नहीं होता, क्योंफक अर्वनाशी है-जीव मरता नहीं। तो फफर समझो, जीव अजन्द्मा होकर नहीं ंमरता फक जन्द्म लेकर नहींमरता? यह तो अटल मसद्िांत है फक जो जन्द्म लेता है वह अवश्यमेव मरता भी है। जो जन्द्मेगा वह मरेगा भी। तो फफर इस तरह जरा-सा र्वचार करते ही जीव का जन्द्म-मरण टल गया और जो अजन्द्मा अर्वनाशी है उसे ही सत्य कहतेहैं। वही सत्य होता है और आगे समझो जीव चेतन है फक जड़? नहींजीव चेतन है। तब तो फफर जीव अर्वनाशी है और चेतन है-धचत है और फफर जीव अमल है, शुद्ि आनंद स्वरूप है। जीव में मल (र्वकार) नहीं है। सत है, धचत है और आनंद स्वरूप है। जीव अमल है। सहज स्वाभार्वक है, बनावटी नहीं। जीव सुख रामश है फक दु:ख रामश? नहींसुख रामश है। तो भैया ! हम अपनी तरफ से तो कुछ नहीं जोड़ रहे हैं। श्री गोस्वामी जी जो कहे हैं वही हम भी कह रहे हैं।

ईश्वर अंि जीव अववनािी। चेतन अर्ल सहज सुखरासी ।।

हमनेअपनी तरफ से तो कुछ नहींममलाया है। हमारे प्रवचन में तुम यही पावोगे। हम उसी तरह से व्याख्या करेंगे जो भागवत, गीता, रामायण में दशाथये गये हैं जो बात जैसी है, उसी तरह कहेंगे। यह बात अलग है फक गीत उसी के गाये जाते हैं प्जसकी शादी होती है, चाहे दुलुहा काना हो या बहरा-आूँख वाले के ही गीत गाते हैं ऐसा

 नहीं। तो उसी प्रसंग में प्रसंगानुसार शास्त्रि द्वारा अनुमोहदत व्याख्या करता हूँ। यहाँ खींचातानी का अथ िनहीं
होता।

हा,ँ तो र्वषय पर आ जाओ-जीव सोपाधिक है फक तनरुपाधिक? जीव भाव सोपाधिक है, तनरुपाधिक नहीं।
अब देखो-जीव जब सत, धचत, आनंद स्वरूप है तो ईश्वर अंश क्यों कहा? सुनो भैया ! यह जो अंशाशी भाव है वह
सोपाधिक है, तनरुपाधिक नहीं। अब जीव को सगुण ईश्वर का अंश कहें या व्यापक ईश्वर का अंश कहें। यहद जीव
को सगुण का अंश मानो तो सगुण ईश्वर का अंश जीव साकार होगा, व्यापक नहीं। परररच्छिन्न होगा। साकार का
टुकड़ा (जुज) भी साकार ही होगा। र्वज्ञान भी तो यही मसद्ि करना चाहता है, परन्द्तु जीव को आज तक कोई देख
नहीं ंसका। जीव नजर नहींआया। अरे ! यहद सूक्ष्म अंश ही मानो तो भी खुदिबीन (माइक्रोस्कोप) से देख सकतेहैं,
परन्द्तु जीव हदखाई नहीं ंदेता। तो फफर जीव सगुण ईश्वर का अंश नहीं और फफर जीव मानतेहो अनेक। जीव
अनेक हैं देखो- (पूज्य श्री स्वामी जी एक फूल लेकर एक-एक दल तनकालते हैं।) जीव िड़िाड़ तनकल रहे हैं। तो
कभी न कभी सगुण के अंश का भी अंत हो ही जाएगा, क्योंफक सगुण परररच्छिन्न होता है, सीममत होता है। इसमलए
भी जीव सगुण ईश्वर का अंश नहीं मसद्ि होता। चलो-व्यापक ब्रह्म का खंड माने तो व्यापक तनराकार में अंश
भाव नहींहोता। तो फफर श्री गोस्वामी जी ने जीव को अंश कैसे मलखा? तो सुनो बात-

आत्मा ह्याकिावझजीवैघटमाकिौररवोददतः ।
घटाददव्च संघांतैजातमावेतन्ननदिनमर् ्।।

(माण्डू.गौ.का.अद्वै.प्र. 3)

देखो, थोड़ी देर के मलए मान लो यह (एक धगलास को हदखाकर कह रहे हैं।) एक घड़ा है। इसके अंदर का जो पोल है उसको कहते ेहैं घटाकाश। यहद दस घड़े ेहों तो दसों घड़ों में दस घटाकाश हदखाई देगा। आकाश की यह घटाकाश संज्ञा घट उपाधि से ही है। जैसा घट का रूप है वैसा ही उसका पोल आकाश-लम्बे में लम्बा, चौड़े ेमें चौड़ा, गोल में गोल, हदखाई देता है। जो र्वस्तृत आकाश है वही आकाश इस घट में भी है। तो फफर ये आकाश दस नहींहै, एक ही है। आकाश, गोल, लम्बा, चौड़ा नहीं ंहै। जैसा का तैसा बना बनाया है। यहद इसका खण्ड करना चाहो तो नहीं ं हो सकता। दरअसल में अंशाशी भाव आकाश में नहीं ंहै। परन्द्तु घट मठाहदक उपाधियों के कारण उसे घटाकाश मठाकाश आहद कहतेहैं। इस घट उपाधि के कारण घटाकाश को आकाश का अंश मान सकते हैं। नहींतो इसके अंदर का जो आकाश है, घटाकाश, वह कहींसे आया नहीं है और घट के फूट जानेसे वह कहींजाता नहीं।

घटाददव्च संघांतैजातमावेतन्ननदिनमर् ्।।

मन, बुद्धि, धचि, अहंकार चतुष्टय अन्द्तःकरण, पंच कमेन्द्रिय, पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच प्राण इन संघातों
को घटाहद के समान ही समझना चाहहए। भगवान आत्मा आकाशवत है और घट रूपी संघात उपाधियों के कारण वह घटाकाश रूपी जीव चेतनांश कहा जा सकता है।

घटाददषु प्रलीनेषु घटाकिाादयो यथा ।
आकिो ेसंप्रंलीयनते तद्वझजीवा इहात्नन ।।

(माण्डू.गौ.का.अद्वै.प्र. 4)

प्जस प्रकार घट के फूट जाने से घटाकाश महाकाश हो जाता है। इसी प्रकार शरीर के छूट जाने पर जीव सिाात् ्परमात्मा हो जाता है। न कहीं ंजाता है और न कहींसे आया है। सचचाई तो यह है फक घटाकाश संज्ञा घट से जब तक संबंिहै तभी तक है, इसी तरह शरीरोपाधि तक ही जीवभाव है। अपनेआपको ही अनेक जीव मान रहा है। जैसे दस घड़े ेका दस घटाकाश। परन्द्तु यह सब समय में ठीक नहीं है। जब तक अपने आपको साढ़े तीन हाथ का शरीर मानता है, इस मान्द्यता की पररधि में बंिाहुआ है, तभी तक शरीर में जीव की मभन्द्नता भास रही है। वस्तुतः आत्मा को शरीर से मभन्द्न करके जानो तभी बात समझ में आएगी, अन्द्यथा नहीं। इसमलए वस्तुतः जीवभाव सोपाधिक है, तनरुपाधिक नहीं। काल्पतनक है, वास्तर्वक नहीं।

सो र्ायावि भयउ गोसांई। बंधेउ कीर र्ंकट की नाई ।।

सो मायावश, कौन? अरे ! वही सोपाधिक घटाकाश रूपी जीव मायावश भयो। कैसे? जैसे-कीर (तोता और मरकट बंदर)। तोता कैसे फूँसता है?

जंगलों में तोता फूँसाने ेवाला बहेमलया इस झाड़ से उस झाड़ तक एक लम्बी रस्सी बांिदेता है और उस रस्सी में बासूँ की पोली पोंगरी (जैसे पंखों में घुमातेहो) र्परो देता है। फफर तोते ेको लालच देनेके मलए पोंगरी के ऊपर तोतेके खानेके मलए चारा रख देता है ताफक तोता उसे देखकर खानेके मलए पोंगरी पर बैठे। तोता जब खाने के मलए जाता है और पोंगरी पर बैठता है तो उसके ही वजन से पोंगरी घूम जाती है और धगरनेके डर से पोंगरी को मजबूती से पकड़ा तो, तोता उल्टा लटक जाता है। तोते के पकड़ते ही पोंगरी घूम जाती है और तोता समझता है फक पोंगरी ने उसे पकड़ रखा है। ध्यान दो-पोंगरी तोते ेको क्या पकड़ेगी। वस्तुतः उसनेही स्वयंपोंगरी को पकड़ रखा है। पोंगरी जड़ है और तोता चेतन, उसे भला जड़ पोंगरी क्या पकड़ेगी। बस, यही मान्द्यता, फक पोंगरी ने उसे पकड़ मलया है, उसके बंिन का कारण है। वह लटका रह जाता है और इस तरह बहेमलए के हाथ आ जाता है।

देखो बंदर का हाल-जहाूँ पर ज्यादा बंदर होतेहैं, वहाूँपर बंदर पकड़नेवाले कुछ दूरूी पर दस-बारह सुराही प्जसमें िोौ दूरू तक चनेभरे होतेहैं, जमीन में गाड़ देते हैं। चूँफक सुराही का गला सकरा होता है बंदर की भरी मुट्ठी बाहर नहीं ंतनकलती। (अब पू. श्री स्वामीजी बंदर का स्वांग बनातेहैं) - अब बंदर आया इिर-उिर चारों तरफ देखकर सुराही के पास िीरे से जाता है और चना देखकर खाने की लालच से चना तनकालने के मलए सुराही के अंदर हाथ डाल देता है, क्योंफक सुराही के अंदर बंदर का ही हाथ जा सकता है, हमारा तुम्हारा नहीं। अब देखो, मुट्ठी में चना भरा है और हाथ बाहर तनकालने के मलये वह भरसक कोमशश करता है, परन्द्तु सुराही का मुंह छोटा होने ेकी

वजह से ऊपर खींचने से हाथ नहीं ◌ं तनकलता, अटका रह जाता है। इस तरह बंदर समझता है फक सुराही ने उसे पकड़ रखा है। बंदर क्या देखता है फक हाथ नहींतनकल रहा है, अंदर से बंदर की मुट्ठी चनेसे भरी बंधी है-नहीं ◌ं तनकलती-सीधा हाथ रखता तो तनकल जाता। जब हाथ नहीं ◌ं तनकलता तो बंदर

समझता है फक सुराही ने उसे पकड़ मलया है। अब सुराही जड़ है और बंदर चेतन। तो चेतन बंदर को जड़ सुराही क्या पकड़ेगी।

आपन तो आपन ही ववसयो ।
जैसे श्वान काचुँ रंददर रें, भ्रभर्-भ्रभर् चौंकक र्यो ।।
र्कमट रूदठ छाडड़ नदहं ◌ं दीनहीं,◌ं घर-घर द्वार कफयो ।
सूरदास नभलनी को सुवटा, कहु कौने पकयो ।।
आपन को आपन ही ववसयो ।
आप भुलानयो आपरें, बनधेउ आप ही आप ।
जाको ढूँढत कफरत है, सो तू आप ही आप ।।

अपनेआप फूँसा हुआ है। देखो, कोई सज्जन आये हैं-प्रश्न हो रहा है- साहब! आप आये नहीं?◌ं स्वामी जी ! मनैं ◌ े तो सुना जरूर है फक आपका यहाँ वेदांत पर प्रवचन हो रहा है और मेरी इचछा भी सुनने ◌े को हुई, परन्द्तु क्या कहें ऐसा जंजाल है-म ◌ैं तो माया के चक्कर में पड़ा हूँ-

चालीस वष ि◌के अनवरत प्रचार में हमने यही देखा है-लोग कहते हैं फक माया के चक्कर में पड़ा हूँ। कोई नहीं कहता फक माया राडूँ मुझे ◌े पकड़ी है, चक्कर में डाल रखी है। अरे! भीतर वाला सत्य सनातन ब्रह्म कभी झूठ नहीं बोलता। अंदर वाला सत्य ही कहता है। म ◌ैं स्वयं अपने आप माया के चक्कर में पड़ा हूँ। ऐसा नहीं फक मुझे ◌े माया के चक्कर ने डाल रखा है। तो भैया ! बताओ, फकसने तुमको कहा फक तुम माया के चक्कर में पड़ो? तुम स्वयं ही माया के चक्कर में पड़े ◌े हो। तुम अपनेही संकल्प से बंधे पड़े ◌े हो। कोई तुम्हें बांधा नहीं ◌ं है। तोताराम को संत यही उपदेश देते हैं फक ऐ बेटा गंगाराम ! तू चेतन है और पोंगरी जड़ है, तुझे ◌े पोंगरी क्या पकड़ेगी। तू स्वयंपोंगरी को पकड़ा है, पोंगरी तुझे ◌े नहींपकड़ी है, उड़ जा-पोंगरी को छोड़ दे। यहद इस महामंत्र को तोता ने मान मलया तो उसका उद्धार हो गया, नहींतो लटका तो है ही। वैसे ही बंदर के मलए यही उपदेश है फक तू स्वयंमुट्ठी बांधकर पड़ा है, सुराही तुझे नहीं ◌ं पकड़ी है, मुट्ठी खोलकर भाग जा। संत महात्माओंद्वारा यही आत्मतत्व का उपदेश है फक बेटा! तू ◌ू आत्मा है, देह भाव को छोड़ दे और अपनेस्वरूप 'म'◌ैं (आत्मतत्व) को जान, इस गलतफहमी देहभाव को छोड़कर स्वस्वरूप भगवान आत्मा 'म'◌ैं को जानो, पहचानो। तीन काल में जन्द्म, मरण नहीं है। आवागमन के चक्र से बाहर आओ। इस भ्रमण को बंद करो और अपने नारायण स्वरूप में जागो-नहीं तो फफर पड़े ◌े रहो।

समझो, तुम सव ि◌के आधार हो, गुरुजन, वृद्धज्जन, आत्मतत्व का अनुभव कराते हैं। यहद समझ गया तो फफर यही मोक्ष है। अरे! जब बंध ही नहींहै तो उससे मोक्ष कैसा-जीव का बंधन यहद सत्य है तो इसकी तनवृत्ति

नहीं ◌ंहो सकती और यहद असत्य है तो है ही नहींफफर मिो होगा फकससे? अपनेआपको जीव या कुछ भी मान लेना यही बंनि है और अपने आपको 'म'◌ैं आत्मा जान लेना यही मिो है।

उद्धरेदात्‍नात्‍ानं नात्‍ानर्वसादयेत् ◌्।
आत्‍ैवे ह्यात्‍नो बनधुरात्‍ैवे ररपुरात्‍नः ।।

(गीता 6-5)

संत महात्मा उपदेश देते हैं-अरे भाई ! यह उनकी ड्यूटी है। संत तो तुम्हें अपने'म'◌ैं का, आत्मतत्व का

अनुभव करा देंगे-तुम्हें लखा देंगे-र्वचार करता है तो ठीक है। जानना, न जानना तुम्हारा काम है।

नानक ननदरी ननदर ननहाल ।

क्या देरी है, मुक्त हो जा। हृदय में भूख तो लगे, आत्म तत्व को जानने की प्रबल प्जज्ञासा तो जगे वैसे तुम स्वयं आत्मस्वरूप ही हो, अपनेआप को ही जीव मानकर कष्ट पा रहे हो। इस तरह उस वैदभी रानी जो फक पूवजिन्म का राजा पुरञ्जन ही है, उसका अर्वज्ञात सखा, स्वयं सप्च्चदानंद ब्रह्म प्रततत्रबम्ब और त्रबम्ब के माध्यम से घटाकाश, मठाकाश द्वारा जीव का भ्रम ममटा देता है। जीव और परमात्मा (ब्रह्म) दोनों एक ही तो हैं।

तृतीय हदवस

प्रह्लादोख्यानजीवन का लक्ष्य, आनंद की प्राप्तत गृहस्थाश्रम आत्मपात एवं अंकूिप है, उपासना ज्ञान भप्क्त

।। श्री नारायणोपननषत्पाठ ।।

अजर्वप जननयोगं ◌ंप्रापदैश्वययमोगा-दगनत च गनतरिं प्रापदेकं ह्यनेकर् ◌्। वववववधववषय धर्ग्रमादहरुवुधेषणानांप्रणतभयववहनतृ ◌ृब्रह्म यिननऽन्स्र् ।।

वसुदेव सुतं ंदेवंकंस चाणूरू र्दमनर् ् ।
देवकी परर्ानंदं कृष्णं ंवनदे जगद्गुरुर् ् ।।
रूकूं करोनत वाचालं ंपङ्कलङ्घयते धगररर् ् ।
यत्कृपा तर्हं वनदे परर्ानंद र्ाधवर् ् ।।

अनन्द्त नाम, रूपों में अमभव्यक्त, अहमत्वेन, प्रस्फुररत, महामहहम, स्वात्मस्वरूप सकल चराचर एवं समुपप्स्थत आत्म प्जज्ञासुगण !

उविष्ठत जाग्रत प्राप्यवरान्ननबोधत ।।

अनाहदकाल से अर्वद्या की घोर तनरा में सोनेवालों भव्य जीवों ! उर्ष्ठत- उठो। स्वस्वरूप भगवान आत्मा में जागो, फकसी श्रेष्ठ महापुरुष के साप्न्द्नध्य में उपसन्द्न होकर अपना आत्म कल्याण करो। यहाँ पर श्रीमद् भागवत महापुराण परमहंस संहहता के माध्यम से आत्मतत्व का तनरूपण हो रहा है। कल के प्रसंग में कमों की र्ववेचना सुने ेहो। राजा पुरञ्जन के आख्यान में जीव और ब्रह्म की एकता प्रततपाहदत की गई थी। आज का प्रसंग है प्रह्लादोपाख्यान -

फकसी समय दैत्यराज हहरण्यकश्यप ने दैत्यों की महती सभा बुलाकर उन्द्हें साविान फकया। उन्द्हें संबोधित फकया फक ऐ दैत्यों ! तुम लोग मेरी बात सुनो- भगवान र्वष्णुने वनचर वाराह का रूप िारण कर हमारे परम र्प्रय हहतैषी छोटे भाई हहरण्याि का वि कर हदया है और अभी तक मनैं ेउसका तपणि श्राद्ि भी नहींफकया है। अतः, मनैं ेतनश्चय फकया है फक मन्द्दराचल पवति की कन्द्दरा में जाकर परमेष्ठी भगवान ब्रह्माजी को कहठन से कहठन तप करके संतुष्ट करूँगा। तप मसद्ि हो जानेके बाद भगवान र्वष्णु से युद्ि करूँगा। युद्ि में उनका मशरचछेदन करके उसी के रुधिर की िारा से म ैंअपने परम र्प्रय भाई के नाम से तपणि करूँगा। यहाँपर तुम लोग साविानी से राज्य और कुटुप्म्बयों की रिा करना। हो सकता है फक मेरे तप के मलए जाने के बाद देवता लोग यहाँ आकर उपरव करें, तो तुम लोग डटकर उनका सामना करना। तप से उठनेपर म ैंउन सबको देख लूँगा। इस तरह सभी दैत्यों को साविान करके हहरण्यकश्यप तप करने ेमंदराचल पवति की तरफ चला गया।

स तेपे र्नदरद्रोण्यांतपः परर्ादारुणर् ् ।
उध्वबमाहुनभमोदृन्ष्टः पादाङ्गुष्ठाधश्रतावननः ।।

(श्रीमद् भागवत 7/3/2)

हहरण्यकश्यप मन्द्दराचल पवति की कन्द्दरा में जाकर महान दारुण तप करने ेलगा। वह अपनी दोनों भुजाओंको ऊपर की ओर और आँख को आकाश की ओर उठाकर अपनेदाहहने ेपैर के एक अंगूठे के भार से खड़ा

होकर दारुण दु:खदाई तप करनेलगा। इसी तरह बहुत समय व्यतीत हो गया। इस दारुण तपस्या से अंतररि में चारों तरफ आग की भीषण ज्वाला तनकलने ेलगी और वह ज्वाला दसों हदशाओंमें फैल गई। समुर का जल उबलने लगा। आकाश से तारे टूट-टूटकर धगरनेलगे। पृथ्वी डगमगानेलगी। संसार में हाहाकार मच गया। जब अप्ग्न की ज्वाला देवलोक तक पहुँची तो देवता भी जलनेलगे और वे बहुत घबरा गए। इन्द्र इस र्वतलव से डर के मारे सभी देवताओं को लेकर ब्रह्माजी के पास जाकर प्राथनिा करने ेलगे फक प्रभो! इसके तप से स्वग िलोक एवं सारी पृथ्वी दग्् हो रही है। आपकी बनाई सारी सृपृष्ट न रहेगी। आप से हम सभी देवता प्राथनिा करते हैं फक हहरण्यकश्यप के उग्र तप को शांत कीप्जये। देवताओं द्वारा इस प्रकार की प्राथनिा सुनकर परमेष्ठी ब्रह्माजी हंसवाहन पर आरुढ़ हो भृगु आहद ऋर्षयों को लेकर जहा ूँहहरण्यकश्यप तप कर रहा था, पहुँचे। परन्द्तु, जहाँूँहहरण्यकश्यप तप कर रहा था, वहाँूँपहुँचनेपर हहरण्यकश्यप कहीं हदखाई नहीं हदया।

न ददि मप्रनत्छननंवल्ल्मीकतृणृकीचकैः ।
वपपीभलकाभभराचीणर्ेमदस्त्वङ्गासिोणणतर् ्।।

(7/3/15)

वहाँूँपर वल्मीक (बॉबी) में उसका शरीर तछप गया था। ममट्टी, घास, तृणृ आहद से हहरण्यकश्यप का शरीर आचछाहदत हो गया था और अंदर से चीहटयाँूँउसके मेदा, त्वचा, मांस, शोर्णत सब चाटूँ गई थीं। केवल अप्स्थ र्पञ्जर मिा शेषे रह गया था।

ववलक्ष्य ववन्स्तः प्राह प्रहसनहंसवाहनः ।।

(7/3/16)

उसको देखकर ब्रह्माजी भी महान र्वप्स्मत हो गए। उन्द्होंने हूँसते हुए कहा-अरे !

उविष्ठोनतष्ठ भद्रं ते तपः भसद्धोभस काश्यप ।
वरदोऽहर्नुप्राप्तो त्रब्रयतारी्न्प्सतो वरः ।।

(7/3/17)

महर्ष िकश्यप के पुि हे काश्यप ! उठो, उठो बेटा। तुमने तो मुझे ेभी जीत मलया। र्वश्व के इततहास में आज तक ऐसा उग्र तप फकसी ने नहींफकया।

नैतत्पूवषमयमश्चकुन मकररष्यन्नत चापरे ।
ननरम्बुधुारमयेत्प्राणानको वै ैददव्यसराः ितर् ्।।

(7/3/19)

तुमने ेदेवताओं के सौ वष ितक त्रबना जल के तप फकया है। मनुष्य का एक वष िदेवताओं का एक हदन होता है। इस तरह देवताओं के सौ वष ितक तूने उग्रतप फकया है। अन्द्न के त्रबना प्राण रह सकता है, परन्द्तु जल के त्रबना नहीं ंरह सकता। प्राण को रोकनेके मलए जल परमावश्यक है।

ततस्त आभिषः सवा मददाम्यसुरुपुङ्गव ।
र्त्यस्मय तेअर्त्यस्मय दिनंम नाफलं ंर्ई ्।।

(7 - 3 - 21)

उठो, उठो और अपना अभीष्ट वर मांग लो, ऐसा कहकर ब्रह्माजी ने अपनेकमण्डल से हदव्य एवं अमोघ जल लेकर उस बॉबी पर माजनि फकया। छींटा हदया।

कर्ण्डलुजुलेनौषद्दव्येनारो्घराधसा ।।

(7 - 3 - 22)

तो वह हहरण्यकश्यप उठ खड़ा हुआ। उसका शरीर सारा अंग वज्र के समान कठोर एवं तपाये हुये सोने की तरह चमकीला हदव्य हो गया। वह ब्रह्माजी की स्तुतत करनेलगा-

नर् आद्याय बीजाय ज्ञानववज्ञानरूतूयेम ।
प्राणेन्नद्रयर्नोबुद्धधववकारैव्ववयन्क्तरी्युषे।।

(7 - 3 - 28)

स्तुतत के बाद वह वर मांगता है-

यदद दास्यस्यभभर्तानवरानरे् वरदिोर् ।
भूतेूभ्यस्त्वद्ववसृषृटेभ्योरृतूयुरा् मभूनूर्र् प्रभो ।।

(7 - 3 - 35)

नानतबदमहददमवानक्तर्नयस्ा्दवप चायुधैः ।
न भूरूौ नाम्बरे रृतूयुन मनरैन मरृगैरैवप ।।

(7 - 3 - 36)

व्यसुभुभवाऽमसुरुद्धभवा मसुरुासुरुर्होरगैः ।
अप्रनतर्द्वनद्वतां युद्धे ऐकपत्यं च देदहनार् ्।।

(7 - 3 - 37)

सवेषां लोकपालानांर्दहर्ानं यथाऽऽत्र्नः ।

तपोयोगप्रभावाणांयनन ररष्यनत कदहधमचत् ्।।

(7-3-38)

वह वरदान मांगता है फक हे वरदिोम ! यहद आप मुझेमेरा अभीष्ट वर देने आये हो तो सुनो-आपकी बनाई हुई सृपूष्ट में फकसी से भी, मनुष्य हो या देवता मेरी मृत्यूुन हो-यह पहला वर मांगा। न भूमौ नाम्बरै मृत्यूुन ि नरैन िमृगैर्रप। न म ैंपृथ्वी में मरुं न आकाश में, न हदन में मरूँ न रात्रि में, मनुष्य से मरूँ न पशु ुमसंहं आहद से। त्रिलोकी का एकमाि राजा होऊँ। युद्ि में मेरे सामने कोई खड़ा न हो सके। भगवन् ्! यहद आप मेरा अभीष्ट वर देने आये हो तो यही दो। ब्रह्माजी र्वचार में पड़ गए। कुछ देर सोचनेलगे-बड़ा कहठन वर मांगा है।

ततो जगार् भगवानर्ोघानुग्रहो ववभुः ।

पून्जतोऽसुरुवयेण स्तूयर्ानः प्रजेश्वरैः ।।

(7 - 4 - 3)

भैया ! आज तक ऐसा कहठन वर फकसी ने भी नहीं ंमांगा जैसा दुलुभि वर तुमने ेमांगा है। अचछा-जाओ, मनैं ेतुम्हें तुम्हारा अभीष्ट वर दे हदया। ब्रह्माजी वर देकर अपनेब्रह्मलोक को चले गए। हहरण्यकश्यप ऐसा उिम वर प्रातत कर अपनी राजिानी को न लौटकर सिी स्वग िलोक (अमरावती, देवलोक, इन्द्रपुरी) को जा पहुँचा। वहाँ क्या देखता है फक देवता सभी देवलोक छोड़कर पहहले से ही भाग गए हैं, इंरासन खाली है। हहरण्यकश्यप इन्द्रासन पर बैठ गया और गंिव िर्वश्वासु, तुम्बर, फकन्द्नर, र्वद्याির एवं अतसरायें हहरण्यकश्यप का गुणगान करने ेलगे। अरे! हा ूँगंिव,ि फकन्द्नर उसका गुणगान क्यों न करें, यह उसका तपोबल है, तपश्चयाि का फल है-गवनमेंट ही जब बदल गई। पृथ्वी उसके भय के त्रबना जोते-बोये ही अन्द्न पैदा करनेलगी। समुर रत्नों को बहाकर फकनारों पर ढ़ेरी लगा देनेलगे। पवित अपनी घाहटयों के सुरम्य स्थान उसके आखेट खेलने के मलए जुटा देनेलगे। वृि सब ऋतुओं में फूलने–फलनेलगे यह सब ऐश्वय ितप के प्रभाव के हहरण्यकश्यप को प्रातत हो गया। इन सब ऐश्वयों (भोगों) को भोगकर भी, यह सब होने ेपर भी-

यथोपजोषं ंभुञ्जानों नातृपूयदन्जतेन्न्द्रयः ।।

(7 - 4 - 19)

अप्जतेप्न्द्रयः हहरण्यकमशपुः न तृतृयेत्।् यह सब कुछ प्रातत होने ेपर भी उसकी तृपूतत न हुई। स्वग िके कल्पवृि, कामिेनु, अमूल्य रत्न धचंतामर्ण आहद वैभव प्रातत कर लेने पर भी, पृथ्वी और देवलोक का सारा सुख वैभव करतलगत होने ेपर भी तृपूतत नहींहुई। अब र्वचार करना है फक इतना ऐश्वय ि(ररद्धि, मसद्धि) पानेके बाद भी तृषूणा क्यों शांत नहींहुई? मन की भूख, मन की तृषूणा, शांत क्यों नहींहो? कहते हैं-

ननस्स्वोद्रव्यिितीतांदितार् ्सोऽपीह लक्ष्यैतार्,्

लक्ष्यैः क्षषनतराजतां क्षषनतपनतस्चक्रीधरत्वर् ्पुनः ।

चक्रीर्ः सुरुराजतां सुरुपदंब्रह्मास्पदं वाछछनत,
ब्रह्मा ववष्णुपुदं हररन्स्विपदं तृष्णावधधं ःको गतः ।।

चाहे वह सुरपद, ब्रह्मपद को भी क्यों न पा ले, वह मशवपद को भी चाहे क्यों न प्रातत कर ले, तृष्णा शांत नहीं ंहोती, वह संतुष्ट नहीं ंहोता। फकसी के पास एक भी रुपया नहींहै उसे यहद एक रुपया ममल जाए तो फफर उसे तृष्णा पैदा होती है फक उसे सौ रुपये ममल जाये। यहद उसे वह भी ममल जाता है तो वह हजार की प्राप्तत की इचछा करता है। फफर लाख और करोड़पतत बनना चाहता है। तृष्णा यहीं ंशांत नहीं होती। तब फफर वह राजा बनूँ, चक्रवती बनूँ, सम्राट कहाऊँ, मुझे ेदेवराज इन्द्र का मसंहांसन ममले, ब्रह्म पद, शांकर पद, र्वष्णु ुपद पाने की इचछा करता है। परन्द्तु, यहद वह इन्द्हें भी प्रातत कर ले तो भी उसकी तृष्णा शांत नहींहोती। तो फफर देखें, इस प्रश्न पर र्वचार करें फक तृष्णा कैसी बलवती है और कभी तुष्ट क्यों नहींहोती। चलो, र्वचार वाहटका में भ्रमण करें-देखो मन क्या चाहता है? मन की भूख क्या है? मन की तृष्णा, मन की आकांक्षा क्या है। बताओ, हर एक के मन की चाह क्या है? मन अनाहदकाल से क्या चाहता है? देखो दस, पाचूँ आदमी मनोर्वनाद के मलए आपस में चचािकरते हैं फक भाई! हम लोग संसार में आये हैं तो इस संसार में हमारा क्या कतव्यि है? हमें क्या करना चाहहए?

यहद उस गोष्ठी में, उस समाज (मंडल) में कोई संन्द्यासी बैठा हो तो वह कहेगा फक संसार असार है, ममथ्या है कहीं ंजंगल में जाकर भगवान का भजन करना चाहहये। वह वैराग्य की महहमा बताएगा। सब को त्याग कर संन्द्यास ग्रहण करना ठीक कहेगा। यहद उस समाज में कोई देशसेवक होगा तो वह कहेगा फक गरीबों की सेवा करनी चाहहए। राष्र की सेवा करनी चाहहए और उसमें कोई चावाकि का अनुयायी होगा, यहद उसका चेला होगा तो कहेगा-

न स्वगो नापवगो वा नैवात्र्मा पारलौककककः ।
नैव वणाश्रमर्ादीनां ंकक्रयाश्च फलदानयकाः ।।
यावझजीवेत् ्सुखुंजीवेत् ्ऋणं ंकृत्वाघृतं वपवेत् ्।
भस्त्रीभूतूस्य देहस्य पुनरागर्नं कुतः ।।

भारत में चावाकि नाम का एक बड़ा भारी नाप्स्तक हुआ है। उसका मत चावाकि दशनि है। वह कहता है फक यहा ूँक्या करना है, जब तक संसार में प्जयो सुख पूवकि प्जयो। यहद पैसा न हो तो ऋण लेकर घी र्पयो। अरे! देना तो है ही नहीं। 'ऋणंकृत्वा घृतं ंर्पवेत् ्भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनंकुतः।' शरीर के नाश होने पर कौन कहाूँ आता-जाता है। नाशवान देह का कभी कहीं ंकोई आवागमन नहीं,ं वरन् ्शरीर मरनेसे नष्ट हो जाता है। 'न स्वगो नापवगों वा नैवात्मा पारलौफककः' न आत्मा है न परमात्मा है। इस गोष्ठी में क्या भजन, क्या भाव। खैर यह बहुमत हो गया है। मौमलक प्रश्न तो यही है फक मनुष्य मात्र का क्या कतव्यि है? संसार में जन्द्म मलये हैं तो यार। मनुष्य को क्या करना चाहहए और क्या नहींकरना चाहहए? मनुष्यत्व क्या है? तो भैया! यह मौमलक एवं ंसावभिौम प्रश्न है और उसका उत्तर भी मौमलक एवं ंसावभिौम ही होना चाहहए। जन्द्म से लेकर मरण पयन्द्ति मनुष्य प्जस

वस्तु को ढूँढ़ रहा है? उसे प्रातत कर लेना, यही मनुष्यमाि का कतव्यि है। तो क्या ढूँढ़ रहा है? फकसी से भी पूछो सभी एक स्वर में कहेंगे फक मनुष्य की खोज आनंद के मलए है। उसे आनंद चाहहए। फकसी से भी पूछो, क्या वह आनंद का वैरागी है? नहीं, ं सभी को आनंद चाहहए। प्रपंच के वैरागी तो बहुत ममल जायगें, परन्तु सुख का वैरागी, आनंद का वैरागी तो कोई र्वरला ही होगा। कोई न ममलेगा प्जसे फक आनंद से वैराग्य हो। प्जस चीज की अनाहदकाल से तनरंतर तलाश हो रही है वह है आनंद की प्राप्तत। यहाँूपर आप लोग इतनी दूरू से क्यों आये हो? हजारों मील से यहाँ पर क्यों इकट्ठे हुए हो? इसमलए फक स्वामी जी का सत्संग होगा, दशनि होगा-स्वामीजी के दशनि के मलए आये हो- तो भैया! आनंद ही का लक्ष्य करके तो आये हो? लक्ष्य तो सबका एक ही है, मगर सािन में मभन्द्नता है।

मनुष्य ही आनंद चाहता हो, ऐसी बात नहींहै। पशु, ु पिी, कीट पतंग सभी आनंद चाहते हैं। सभी इसके ही मलए काय िकरते हैं फक हमें आनंद ममले। त्रबल्कुल ठीक। प्राणिमाि का लक्ष्य आनंद की प्राप्तत है। संसार में सभी प्राणी नैततक-अनैततक काय िआनंद की प्राप्तत के मलए ही करते हैं। मनुष्य माि संसार में जीवन के मलए नहीं जीता, उसे संसार जीनेके मलए र्प्रय नहींहै, आनंद ममलता है इसमलए र्प्रय है। यही कारण है फक संसार उसे र्प्रय है और आनंद नहीं ममला तो वही संसार बोझ रूप हो जाता है। प्राणिमाि के जीवन का लक्ष्य आनंद ही है। आनंद ही उसका स्वरूप है। प्जसके त्रबना जो एक िण भी न रहे, वही उसका स्वरूप होता है। मनुष्य आनंद के त्रबना, जीवमाि आनंद के त्रबना एक िण भी नहीं ंरह सकता। आनंद न ममले तो वह जहर खा लेगा। आत्महत्या पर उतारू हो जाता है। आत्महत्या कर लेता है, मर जाता है। आनंद का र्वयोग िणभर के मलए भी नहींसह सकता। यहद मन का स्वरूप दु:खरूप होता तो वह दु:ख को ही ढूँढता। त्रबना आनंद के वह प्ंजदा रहता। मछली का आिार उसका घर, उसका स्वरूप जल ही है। मछली जल स्वरूप ही है इसमलए जल के र्वयोग में मछली जीर्वत नहीं ंरह सकती। इसी प्रकार मन की खुराक आनंद ही है। इसके त्रबना वह जी नहींसकता। अनाहदकाल से उसे आनंद ही की तलाश है। बस देखो-एक योगी पवति की कन्द्रा में महान से महान कष्ट सहन कर घोर तप करता है, उसी आनंद को प्रातत करने ेके मलए दूसूरा व्यप्क्त घोर पाप करता है। फकसमलए? आनंद की ही प्राप्तत के मलए। हा, ँू लक्ष्य तो एक ही है, सािन मभन्द्न अवश्य है। प्जस आनंद को ब्रह्मचारी ब्रह्मचय िमें ढूँढ़ता है। गृहस्थी उसी आनंद को स्री-पुिाहदक में खोजता है। वानप्रस्थी तप द्वारा उसी आनंद को प्रातत करनेके मलए प्रयत्न करता है। संन्द्यासी उसी आनंद को संन्द्यास में ढूँढ़ता है। लक्ष्य सबका एक ही है, आनंद की प्राप्तत। र्पता अपनेनन्द्हे मशशु ुको गोद में त्रबठाकर उसके कोमल कपोलों पर बार-बार चुंबन करता है, तयार करता है। इस तयार में उसके मूँछ और दाढ़ी के कड़े ेबाल बालक के कोमल कपोलों में चुभते हैं, तो बालक रोता है, परन्तु र्पता को मजा आता है। यह आनंद र्पता के मलए है न फक पुि के मलए। इसी तरह जीवमाि अनेकानेक सािनों में आनंद को ही खोजते हैं। कई एक को तो दूसूरों की तनंदा करने ेमें ही मजा आता है-आनंद की प्राप्तत में यह भी एक सािन है। कभी-कभी जब लोग रोतेहैं तो उसमें भी आनंद का अनुभव करते हैं। इस समाज में (प्रकृतत समाज की तरफ इशारा करते हैं।) जब दो औरतें (प्स्ियां) आपस में ममलती हैं, तो तीसरी भी रहती हैं। हाँू कंिा बदलने के मलए, तो आपस में आनंदाश्रु बहाते हैं, रोते हैं। इसी तरह जब रोतेभी हैं तो आनंद के मलए। न आनंद आये तो रोना बंद कर दें। हा–ँूरोने में भी आनंद है। गरज तो यह है फक अनाहदकाल से जीवमाि आनंद ही ढूँढ़ रहे हैं। समस्त जीव फकस तरफ बह रहे हैं? आनंद सागर की तरफ। अब र्वचार करना है फक जब आनंद की प्राप्तत के मलए सभी व्याकुल हैं, आनंद का स्रोत िण भर भी बंद न हो यही

सबकी ख्वाहहश है, फफर भी आनंद की प्राप्तत उसे िर्णक ही हो रही है। उसकी तृपूतत नहींहोती। जब िण प्रततिण र्वषयों द्वारा आनंद ममलता ही रहता है तो फफर उस आनंद की प्राप्तत के बाद मंप्जल खतम हो जानी चाहहये। मन की दौड़ खतम हो जानी चाहहए। परन्द्तु एक र्वषय के बाद दूसूरे र्वषय में इस प्रकार नाना र्वषयों के तरफ मन दौड़ रहा है, अभी तक मंप्जल तय न कर सका। अरे। जब तृपूतत नहीं होती तो वह सुख-सुख नहीं ंहै। समझ लो-वह सुख-सुख ही नहींप्जसमें दु:ख है, डर है और रोना है। स्िी की प्राप्तत में दु:ख है, मर न जाय इसका डर है और मर जाये तो रोना है। पुि की प्राप्तत में दु:ख है, उसे कोई बीमारी न आ जाये, इसका डर है और तनिन में रोना है। िन की प्राप्तत में दु:ख है, कहीं खो न जाये, लुट न जाये, चोरी न हो जाय इसका डर है और लुट गया तो रोना है।

वह सुख सुख ही नहीं ंन्जसर्ें दु:ख है, डर है और रोना है।
भर्लावट से जो है खाली उसी का नार् सोना है।
अरुण पर फेंक दो तुर् धूल अंधधयारा नहीं ंहोता ।
करो तुर् चूण महीरों को र्गर काला नहीं ंहोता ।।

तयारे ! वह सुख-सुख नहीं है, िोखे में न पड़ो, प्जसमें दु:ख है, डर है, रोना है। यह जीवन का लक्ष्य नहीं है। तो फफर र्वचार करो वह कौन-सा सुख है, आनंद है प्जसके मलए समस्त प्रार्णवग िभटक रहे हैं? प्जसे पानेके मलए अनाहदकाल से चेष्टा हो रही है? क्या फकसी को ऐसी इचछा होती है फक 23 घंटा 59 ममनट तो आनंद भोगे, परन्द्तु यहद एक ममनट दु:ख भोगने को ममले तो कोई बात नहीं है? ऐसी इचछा फकसी को भी नहींहोती। वह तो चौबीसों घंटे आनंद ही आनंद चाहता है। एक ममनट का भी दु:ख ग्रहण करना नहींचाहता। वह आनंद सागर चाहता है। प्राथनि करता है फक हे भगवान ! हमारे सब दु:ख दूरू हो जाय,ें जीवन सुखमय आनंद से बीते। तो शाश्वत आनंद ही प्रार्णमाि का लक्ष्य है और शाश्वत आनंद ही प्रार्ण माि की खुराक है। जीव िर्णक आनंद नहींचाहता, वह तनत्यानंद चाहता है। अरे भाई ! आनंद आया और चला गया, मन को तो संतोष हुआ ही नहीं। जहा ूँएक र्वषय में मनीराम को कुछ आनंद ममला तो वह तुरंत ही दूसूरे र्वषय में आनंद की फफराक में पड़ जाता है। तो फफर समझ लो फक यह सुख नहींहै प्जसकी खोज मन को है। यह तनत्यानंद ढूँढ़ रहा है। परन्द्तु र्वषयों में उसे िर्णक आनंद ही ममल पाता है। इसमलए अनाहदकाल से संसार भर में सभी की ियाा तनत्यानंद के मलए ही हो रही है। आज से नहीं,ं पता नहींकब से, अनाहदकाल से संसार की महान ियाा शाश्वत आनंद तनत्यानंद, ब्रह्मानंद की प्राप्तत के मलए है और समझ लो खूब ध्यान देकर फक आवागमन का चक्र ममटने वाला नहीं है जब तक फक वह अपनेलक्ष्य तनत्यानंद को प्रातत न कर ले लक्ष्य को प्रातत करने के बाद ही आवागमन का चक्र खतम होगा। जहाूँके मलए ियाा हो रही है, जहा ूँतुम जा रहे हो वह आखरी मंप्जल तुम्हारा घर हीहै, जहा ूँतुम पहुूँचना चाहते हो। यहा ूँपर तू–तू, म–ैं म,ैं ऊूँचा-नीचा, गृहस्थी-वैरागी, चोर-जुआरी का प्रश्न नहीं ंहै। क्या संन्द्यासी, क्या वैरागी सभी ढूँढ़ रहे हैं। इसी की प्राप्तत के मलए पुण्यी और पापी सभी को तलाश है। सभी के जीवन का लक्ष्य आनंदसागर (तनत्यानंद) की प्राप्तत है। प्जस समुर की प्राप्तत के मलए गंगा, यमुना, गोदावरी इत्याहद समस्त नहदयों की ियाा हो रही है वहींको गंदी नाली भी जा रही है। गंगा आहद समस्त पर्वि नहदयों का जो घर है, वही घर गंदी नामलयों का भी है। दोनों के घर में भेद नहीं है। इसी तरह जो तनत्यानंद घर (चरम लक्ष्य) एक संन्द्यासी र्वरक्त महात्मा का, ब्राह्मण का है, वही तनत्यानंद घर स्वपच, महान पापी, वज्र मूख िका भी है। जी हाूँ-उसी को प्रातत करना है। चाहे हहन्द्दू ूहो या

 मुसलमान, फक्रष्श्चयन हो या यहूदी मनुष्य को कौन कहे, कूकर, सूकर इत्याहद सभी जीवमिा का लक्ष्य है
तनत्यानंद की प्राप्तत। चाहे इसकी प्राप्तत एक जन्द्म में हो या अनेक जन्द्मों के बाद। लक्ष्य यही रहेगा। तुम्हारा जीवन, तुम्हारा लक्ष्य, तुम्हारा अभीष्ट तनत्यानंद ही है। चाहे अनेकों जन्द्मों तक ढूँढ़ो लेफकन अंत में यही हल तनकलेगा फक हम तो आनंद चाहते हैं। तब तक उसे वर्श्राम नहीं ंजब तक शाश्वत आनंद की प्राप्तत न हो जाए? आनंद का कहीं भी कोई वैरागी नहीं होता। जब सभी का लक्ष्य आनंद सागर है तो आपस में छोटा बड़ा कैसा? आपस में यहद नहदयाँ लड़े ेफक हम बड़ी हैं, तुम छोटी हो, हम पावन हैं, तुम ममलन हो तो यह उनकी नासमझी होगी। जब उन सबकी यािा एक ही घर की ओर है। र्वचार करें तो सभी सागर की ओर जा रही हैं। गंगा और गंदी नाली सभी की पहुूँच समुर के ही मलए है। नहदयाँूसागर में (अपनेघर, अपनेर्वश्राम स्थल में) पहुूँचने के पहले ही नाम, रूप की मान्द्यताओंका त्याग कर देती हैं। सभी नाम, रूप को छोड़ जल दृष्ट से एक ही हैं। इसी प्रकार शरीरों में भेद है, न फक अंततम लक्ष्य में। भले ही हम सब शरीर दृष्ट से अलग-अलग हदखाई पड़तेहैं, परन्द्तु आंतररक दृष्ट से भैया। हम सब तो एक ही हैं। इस सत्य को समाज, देश एवंसारे र्वश्व को समझना होगा। इसके त्रबना एकता स्थार्पत नहीं ंकी जा सकती। ध्यान रहे फक कानून से समाज में एकता स्थार्पत नहीं ंकी जा सकती। समाज में एकरूपता नहींहोगी चाहे कानून राजनैततक हो या सामाप्जक। आज ऐसी क्राप्न्द्त की अत्यधिक आवश्यकता है। ऐसी क्राप्न्द्त होनी ही होगी। भला बताओ, अरे। शरीर की भी एकता हुई है। चाहे कुछ समय के मलए एकता भले ही हो जाए, परन्द्तु वह हटकाऊ न होगी।

भाई। जो एक है वही एक होगा। जो अनेक है, उसमें तुम एकता चाहते हो? यह कैसे संभव होगा? तो जरूरत है इसी की, राष्र को इसकी परम आवश्यकता है। घर-घर में इस सत्य को पहुूँचाना होगा फक जीवमिा तनत्यानंद को ही ढूँढ़ रहा है। नहदया,ूँ समुर में पहुूँचकर ही पूण िर्वश्राम पाती हैं। यह तो मसद् हुआ फक प्रार्णमिा की आर्खरी मंप्जल तनत्यानंद की प्राप्तत है।

सररता जल जलननधध हुँ जाई ।
होई अचल न्जभर् न्जव हरर पाई ।।

देर्खये, नहदयों का बहना कभी बंद नहीं होता। वह बंद होता है, समुर की प्राप्तत के ही बाद। इसी तरह जीव कहो या मन कहो ये पयायिवाची शधद हैं। जीव का आवागमन ब्रह्मानंद की प्राप्तत के त्रबना बंद नहीं होता, भ्रमण चलता ही रहता है। सुषुप्तत अवस्था (गाढ़ी नींद) में अज्ञान में जब मन का लय हो जाता है, उस प्स्थतत में म ैंजीव हूूँ-यह भाव भी नहीं ंरहता। मन सुषुप्तत अवस्था में अज्ञान में लीन होता है। मूछाविस्था में मन दुःख में लीन होता है और समाधि में चेतन आत्मा में लीन होता है। जब मन नहींरहता तो म ैंजीव हैं-यह भाव भी नहीं ंरहता। जब तक मन का अत्यन्द्ताभाव नहीं ंहोता, अमन नहीं होता, आत्म भाव में लीन नहीं ंहोता तब तक उसका चक्र लगा ही रहता है। आवागमन बंद नहीं होता। तो जीव का परम लक्ष्य तनत्यानंद ही है। दूसूरे शधदों में भगवान की प्राप्तत कहो, परमानंद आत्मा की प्राप्तत कहो। जी हाूँ- मन जब तक भगवान आत्मा तनत्यानंद का दशनि नहीं पा लेता तब तक भटकता ही रहता है। उसका भटकना बंद नहीं होता। बस !

लोगों का कहना है फक जब मन प्स्थर हो जाता है तब आत्मा का अनुभव होता है। तो फफर लक्ष्य क्या है? सेल्फ ररयलाइजेशन होने ेपर ही मन प्स्थर होता है। आत्मदशनि के बाद ही मन प्स्थर होता है। क्या प्रमाण? सुनो हम इस पर लैला मजनूं का दृष्टांत कहते हैं। यह इश्क ममजाजी है और इश्क हकीकी का तो फफर कहना ही क्या है। इस कथानक में मजनूं का वास्तर्वक नाम कैश था, परन्द्तु लैला के प्ेरेम ने उसका नाम मजनूं कर हदया। यह इश्क ममजाजी की ममसाल है। उस मजनूं की दुतुनया,ूँ सब कुछ लैला ही थी। जो इश्क ममजाजी में पागल हो तो उसे मजनूं कहते ेहैं और जो इश्क हकीकी में पागल हो उसे मफतूं कहतेहैं। लैला एक बादशाह की लड़की थी। वस्तुतः लैला काली बदसूरत थी। संसार की तनगाहों में भले ही लैला बदसूरत थी परन्द्तु मजनूं की तनगाह में तो वह बदसूरत नहीं थी। राजा को मजनूं का लैला से प्ेरेम बदाश्ति न हुआ और राजा ने मजनूं को जंगलमें कैद कर हदया। मजनूं के र्वयोग में लैला बीमार पड़ गई। इलाज के मलए हकीमों को बुलाया गया। हकीमों ने देखा फक कोई मज िहो तो दवा दी जाए परन्द्तु, राजा के डर से हकीमों ने सलाह दी फक लैला का खून खराब हो गया है। इसका खून तनकालना होगा, तो नश्तर लगाकर खून तनकाला गया, परन्द्तु कुछ लाभ न हुआ। कारण तो स्पष्ट ही था फक जब कोई बीमारी हो तो कुछ ठीक हो, अतः लैला को अचछा करने ेके मलए प्जतनी भी दवाइयूँ की गई, सब बेकार हुई। लैला फकसी भी हालत में अचछी न हुई तो बादशाह और बेगम सोच में पड़ गए फक फफर क्या करना चाहहए। तो एक रात एकांत में लैला के र्वषय में धचंततत हो सलाह फकए फक जब लैला और मजनूं का इतना प्ेरेम है तो र्ववाह कर हदया जाये, परन्द्तु शत ियह है फक पहले मजनूं का पागलपन दूरू हो जाये। सुबह दरबार लगा। जब बादशाह की महफफल जुड़ी तो बादशाह सलामत ने काप्जयों के समि बेगम साहहबा की सलाह जाहहर की फक लैला और मजनूं की शादी की बात मानी जा सकती है, बशतेफक मजनूं का पागलपन दूरू हो जाये। उसका पागलपन ममट जानेके बाद ही शादी की जा सकती है। काप्जयों ने इसकी ताईद की-जी हुजूरी हुई- मगर उस महफफल में एक सफेद दाढ़ीवाला बूढ़ा काजी उठकर खड़ा हुआ- जहापूँनाह I गुस्ताखी माफ हो-आपका फरमान है फक लैला से मजनूं की शादी हो बशते फक मजनूं का पागलपन पहहले दूरू हो जाये तो हुजूर ने यह भी कभी सोचा फक मजनूं आर्खर पागल क्यों हुआ? त्रबना लैला के ही मजनूं पागल हुआ है। तो मजनूं का पागलपन त्रबना लैला के कैसे ममटेगा?

यही हालत मन की है यहा ूँपर मानो फक लैला आत्मा भगवान है और मजनूं है मन। तो फफर मन फकसकी तलाश में पागल की तरह भटक रहा है? परमानंद की फफराक में। उसे चाहहए सप्चचदानंद घनभूत, प्जस स्वरूप का दशनि प्जसकी तलाश अनाहदकाल से हो रही है। इस मन का जो पागलपन है, जो र्वक्षिप्तत घूम रहा है, जुआड़ी, शराबी, दुराचारी, वैरागी, संन्द्यासी, ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी आहद बनता जा रहा है। मनीराम इनमें आनंद ढूँढ़ रहा है, आनंद को प्रातत करने ेके मलए पागल हुआ घूम रहा है। तो समझ लो फक उसका यह पागलपन, उसका दोष नहीं है, व्यथ िही मनीराम पर आरोप लगाते हो। वह क्या करे पागलपन में रात-हदन भटक रहा है। एक स्त्री मिर गई तो दूसूरा फकया आनंद के मलए, तीसरा, चौथा, घर में बाहर में भटक रहा है। चाहे वैरागी हो या दुराचारी हो- आनंद ममले, करके ही भटक रहे हैं, परन्द्तु मनीराम को तनत्यानंद नहींममला है। और अभी तक अनाहदकाल से घूम रहा है, उसी की तलाश में। जब तक तनत्यानंद की प्राप्तत मन को न हो ले तब तक मन प्स्थर न होगा। यह सुप्रीम कोटि का फैसला है, अब इनकी अपील नहीं। दूसूरे कोटि के फैसले की अपील तो होती है, परन्द्तु सुप्रीम कोटि का

 फैसला आखरी होता है। संतों का कोटि अध्यात्म र्वषयक सुप्रीम कोटि है और यहा ूँका फैसला सवमान्य होता है।

इसको अब गीता द्वारा मंप्जत कर दें-

नासतो ववद्यतेभावो नाभावो ववद्यते सतः ।

उभयोरवप दृष्टोऽनतस्त्वनयोस्तत्वदभिभमभः ।।

(गीता 2-16)

बि तत्वदमशयिों की वाणी भगवान को भी मान्द्य होती है। भगवान का प्रत्यि अनुभव प्रातत कर लेना, यही मनीराम मजनूं के भटकने का कारण है। वह घूमेगा-जब तक 'म'ै का अनुभव न कर ले। ध्यान, िारणा, समाधि आहद मन का घूमना बंद करने के मलए करते हैं, परन्द्तु इन उपायों (ध्यान, िारणा, समाधि, जप, तप) से भी मन प्स्थर नहीं होता। उसे तो आग लगी है लैला, भगवान की। वह भगवान चाहता है। आूँख मूंदने से भगवान नहीं ममल जाते, मन को तो भगवान चाहहए, उसे तनत्यानंद की भूख लगी है, उसे तनत्यानंद ममले। जप, तप, ध्यान, िारणा, समाधि में तनत्यानंद कहा? ूँ हा, ूँ ध्यान िारणा- समाधि (सािन) से मन कुछ देर के मलए रुक जाता है, उसकी प्रवृर्त्त, चंचलता रुक जाती है और िर्णक आनंद की प्राप्तत हो जाती है। जप, तप में जब तक न समाहहत है, आनंद ममला परन्द्तु जप से उठे नहीं फक आनंद चला गया इन सब र्वषयों में आनंद चाहे शुभ से हो या अशुभ से हो स्वरूप वही आनंद है, परन्द्तु यह आनंद िर्णक है, अर्वनाशी, शाश्वत आनंद नहींहै। स्वरूप भगवान आत्मा को प्रातत करना ही शाश्वत (तनत्य) आनंद है और यह आनंद सािन द्वारा प्रातत नहीं हो सकता।

हठ योग में योगी प्राण को ब्रह्माण्ड में चढ़ाकर ब्रह्मरंध्र में स्थार्पत कर लेता है। फफर संसार की तरफ उसका मन नहींभागता, नहींदौड़ता। परन्द्तु, जब योग से उपरत होता है, तो उसी समय, उपरत होते ही संसार सामने आकर खड़ा हो जाता है। मन चंचल हो उठता है। अरे यार! जगह-जगह नदी में तुम बांि डाल दो, परन्द्तु क्या नदी प्स्थर हो जाती है? नदी का काय ितो प्स्थर नहीं होता वह तनरंतर बांि को तोड़ डालनेका प्रयास करती ही रहती है और कभी न कभी बांि को तोड़ डालनेमें समथ िभी हो जाती है। बांि से नदी का प्रवाह बांि के मजबूत रहतेतक रुका रहता है, परन्द्तु प्स्थर नहीं होती। वह प्स्थर तो समुर में जाकर ममलने से ही होती है। समुर में नदी को प्स्थर करनेके मलए बांि डालने की जरूरत नहीं है। अतः यह तनर्वववाद है फक बांि डालने से नदी प्स्थर नहीं होती, नदी तो समुर में ही पहुूँचकर प्स्थर होती है। यह तो सबको र्वहदत ही है फक बांि टूट जाये तो सैकड़ों गावूँ घर बह जाते हैं। बांि से कभी भी नदी का प्स्थर होना मसद्ि नहीं है। मन रूपी नदी की कल्पना रूपी िार संकल्प-र्वकल्प रूपी फकनारों पर तनरंतर बह रही है और त्रबना सािन के डी (बांि के त्रबना ही) तनत्यानंद सागर में ही लीन हो जाती है। प्जस प्रकार बांि से चंद वष,ि समय के मलए नदी की िार रुक जाती है, उसी प्रकार सािन ध्यान, िारणा इत्याहद) से कुछ समय के मलए मन रुक जाता है, परन्द्तु प्स्थर हीं होता। तनत्यानंद भगवान आत्मा को प्रातत फकए त्रबना मन प्स्थर नहीं हो सकता। हा-ूँमन रूपी नदी की कल्पना रूपी िार को भले ही समाधि द्वारा रोक दो, परन्द्तुउससे उठे नहीं फक मन का व्यापार चालू हो जाता है। महर्षि पतञ्जल जी योग दशनि में कहतेहैं-

अभ्यास वैरावयाभ्यार् ्तन्ननरोधः ।।

(योगदशनि)

अभ्यास और वैराग्य द्वारा उसका (धचि का) तनरोि होता है।

योगन्श्चवृवि ननरोधः ।।

(योगदशनि 1/2)

धचिवृवि का तनरोि ही योग है।

योगन्श्चवृवि ननरोधः न तु धचिवृवि न्स्थरः ।।

जी, योग से मन की चंचलता का तनरोि कहते ेहैं, न फक मन का प्स्था होना। यम, तनयम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, िारणा, ध्यान और समाधि इत्याहद सािनों से मन की चंचलता का तनरोि भले ही हो जाये, परन्द्तु तनत्यानंद भगवान आत्मा की प्राप्तत के त्रबना मन प्स्थर न होगा। मन की भूख यही है। मन इसी को प्रातत करना चाहता है, इसमलए प्स्थर नहीं होता और प्रातत कर लेनेपर प्स्थर हो जाता है। बाह्य सािन (समाधि) से मन का तनरोि होता है। अब यह प्रश्न होता है फक सािन से मन का तनरोि ही होता है, प्स्थर नहीं क्या यही बात है स्वामी जी? देखो समझ लो फक मन का तनरोि करने ेके मलए ही सािन की आवश्यकता है, परन्द्तु मन को प्स्थर करने ेके मलए कोई सािन नहीं। अरे! नदी को रोकना है तो सािन (बांि) की आवश्यकता है, न रोको तो वह स्वयं ही समुर में जाकर प्स्थर हो जाएगी। भाई ! न रोकोगे तो नदी क्य आसमान में जाएगी? नदी का प्रवाह स्वभावतः समुर की ओर है, चाहे रोक तब और न रोको तब, वह समुर में ही जाएगी और कहा ूँजाएगी? बांि मसफि रोकनेमा का सािन है। परन्द्तु नदी के वेग को प्स्थर करने ेके मलए कोई सािन नहींहै। इसी तरह मन की चंचलता को रोकने का सािन समाधि है समाधि द्वारा रोकी जा सकती है, परन्द्तु प्स्थर कहाूँ होगी? तनत्यानंद में और तनत्यानंद को प्रातत करनेके मलए कोई सािन नहीं ंहै। तनत्यानंद कृपा साध्य है। मन को तनत्यानंद का दशनि कराना चाहो तो संत कृपा प्राप्तत के मलए सािन करो, उसकी शरण में जाओ। आत्म दशनि की प्राप्तत सद्गुरु ही कराएंगे। इसमलए उन्द्हीं ंकी शरण में जाना होगा। सािनों की कमी नहीं ंहै, परन्द्तु इससे मन को शांतत, मन को र्वश्राम नहीं ंममलना है। आपको इस तरह से प्रमाणों द्वारा एवं ंसंतं वाक्यों द्वारा समझाया गया फक मन की प्स्थरता चाहते हो तो संत कृपामभलाषी बनो। यह कृपासाध्य वस्तु है। जी हाूँ यह भली भातूँत समझ लो फक तनत्यानंद ही मन को चाहहए। आत्मसुख प्रातत करने ेके मलए ही मन व्यग्र है। श्री मानसकार भी यही कहते हैं-

ननज सुख त्रबनु र्न होई कक थीरा। परस कक होई ववहीन सरीरा ।।

अब तो ममल गया प्रमाण। 'तनज सुख त्रबनु मन होई फक थीरा' आत्म सुख, ब्रह्म सुख, तनजानंद, आत्मानंद, ब्रह्मानंद मन को चाहहए।

ननज सुख त्रबनु र्न होई कक थीरा । परस कक होई ववहीन सरीरा ।।

जब तक आत्म सुख, तनजानंद न प्रातत कर ले तब तक मन प्स्थर नहीं होता। 'मशव' लाख सिान करो, कुछ भी करो, मनीराम का पागलपन तो देखो-कभी कोई वेश बनाता है, कहीं ंजाता है, कहीं ंपहाड़ों पर भटकता है-प्जतना स्वांग करता है, जो कुछ भी करता है, मन का ही प्रताप है। प्जस हदन आत्म-दशनि कर लेगा उसी हदन आत्म सुख अनुभव करते ही मंप्जल खतम हो जाएगी। फफर चलना कहाँ? मंप्जल तो घर (मुकाम) पर पहुँचते ही खतम हो जाएगी। अपना घर टूटा-फूटा ही क्यों न हो भैया ! सुख की नींद तो वहीं आती है। क्यों नहीं? पिी आकाश में उड़तेरहते हैं, परन्द्तु वर्श्राम अपनेघोंसले में ही पातेहैं। जब तक अपनेघोंसले में नहींआ जाते तब तक वर्श्राम कहा?ाँ मन रूपी पिी इस वर्स्तृत वर्षयाकाश मंडल में अनाहदकाल से उड़ रहा है। संकल्प-वर्कल्प उसके दोनों पंख हैं। संसार के वर्षयों में आहदकाल से उड़ रहा है और जब तक अपने स्वरूप आत्मा रूपी घोंसले में नहींआ जाता, उसका उड़ना बंद नहीं होता-तब तक मन को शांतत नहींममलती।

यथोपजोषं ंभुछुजानो नातृपूयदन्जतेन्न्द्रयः ।।

(7 - 4 - 19)

अप्जतेप्न्द्रयः हहरण्यकमशपुः नातृतृयत् ्। हहरण्यकश्यप का मन तृतत न हुआ। इतने ऐश्वय िभोगों की उपलप्धि से भी वह संतुष्ट न हुआ। उसका मन शांत न हुआ। उसका वैभव तो उसके तपोबल के प्रभाव से प्रातत हुआ था। हा–ँवह तपोबल है। तप के प्रभाव से उसे इस तरह अर्णमाहदक मसद्धियाँप्रातत हो गई थीं। यह सब तप का प्रभाव है, फल है। व्याकरण में तप-ऐश्वय िाातु है। तप का फल ही है ऐश्वय िकी प्राप्तत। वह तनत्यानंद का फल नहीं ंथा। जो हहरण्यकश्यप ने प्रातत फकया।

मजा आ गया-नातृतृयदप्जतेप्न्द्रयः । हृदय का पता तो लगे फक हम चाहते क्या हैं? हमारा कतव्यि क्या है? और यह भी देखो जब पानी की एक बूंद देखते हो तो अनुमान होता है फक कहीं ंन कहीं इसका सागर है। सांसाररक वर्षयों के ममल जानेसे जो आनंद ममलता है वह कहा ँका कतरा है? वह कहाँकी बूंद है? कहीं ंन कहींइसका सागर होगा ही। जब िर्णक आनंद में मन इतना वर्भोर हो जाता है तो फफर उसका (तनत्यानंद का) क्या कहना है, वणनि नहीं ंहो सकता। वह आनंद मन, वाणी का वर्षय नहीं है।

ब्रह्म वपयूष र्धुर ीतल जो पै र्न सो रस पावै।
तौ कत रृगृजल रूप ववषय कारण ननभिबासर धावै।।

(वर्नय 116)

जैसे मृगृ, मृगृजल (मृगृ तृषूणा के जल) की ओर क्यों दौड़ रहा है? वह कब तक दौड़ेगा। जब तक उसे वास्तर्वक जल नहीं ंममल जाएगा तभी तक वह दौड़ेगा। इसी तरह मन रूपी मृगृ र्वषयानंद रूपी मृगृ तृषूणा के जल की ओर तभी तक दौड़ता है जब तक उसे ब्रह्मानंद रूपी वास्तर्वक जल की प्राप्तत नहीं ंहो जाती।

र्ाधव ! अभस तुम्हारर यह र्ाया ।
करर उपाय, पधच र्रय, तररय नदहं,ं जब लधग करहु न दाया ।।1।।
सुननय, गुननय, सर्ुणिय, सर्ुइिय, दि हृदय नहींआवै ।
जेदह अनुभव त्रबनु र्ोहजननत, भव दारुन ववपनत सतावै ।।2।।
ब्रह्म वपयूष र्ुर िीतल, जो पै र्न सो रस पावै।
तौ कत र्ृगृ जल रूप ववषय, कारण ननभिवासर धावै।।३।।
जेदह के भवन ववर्ल धचंतार्णि, सो कत कांँच बटौरै ।
सपनेबरबस परै जाधग, देखत केदह जाइ ननहोरै ।।4।।
वयान, भगनत साधन अनेक, सब सत्य िूठ कछु नाही ।
तुलसीदास हरर कृपा भर्टै भ्रर्, यह भरोस र्न र्ाहीं।।5।।

हा ंूँजी-

देवता तो हहरण्यकश्यप के देवलोक पहुूँचने ेके पहले ही भाग खड़े ेहुए थे.े पवति की कन्द्दराओं में जा तछपे थे। देवताओं ने भगवान के पास जाकर प्राथनि की, अपने महत् ्कष्टों का वणनि फकया और साष्टांग नत हो प्राथनि की फक भगवन् ्! कृपा होि–हह माम् ्िाहह माम्।् रि करो, रि करो इस हहरण्यकश्यप से। तो भगवान नारायण द्वारा उनका दुःख देखकर मेघ के समान गंभीर आकाशवाणी हुई।

र्ा भैषैर्ट ववबुध श्रेेष्ठाः सवेषां भद्रर्स्तु वः ।
र्द्िनंम दह भूतूानां सवश्रेेमयोपपिये ।।
ज्ञातर्ेतस्य दौरात्म्यंदैतेयोपसदस्य च ।
तस्य िान्न्नतंकररष्याभर् कालं ंतावत्प्रतीषत् ्।।
यदा देवेषुवेदेषुगोषु ववप्रेषु साधुषु ।
धर्े र्नय च ववद्वेषः स वा आिु ववनश्यनत ।।
ननवैराय प्रिानताय स्वसुताय र्हात्र्ने ।
प्रह्लादाय यदा द्रुहुयेद्धननष्येऽवप ववरोन्जतमर् ्।।

(श्रीमद् भागवत 7-4-25, 26, 27, 28)

देवता, देव, गौ, ब्राह्मण, सिाु, िम ितथा मुझसे रोह करने ेवालों का नाश शीघ्र ही हो जाता है। हहरण्यकश्यप के प्रह्लाद नाम का पिु होगा वह महा भागवत (ब्रह्म पारायण) होगा। जब हहरण्यकश्यप उससे द्वेष करेगा तब उसका नाश हो जाएगा। तुम लोग समय की प्रतीिा करो। देवता लोग इस गंभीर आकाशवाणी को सुनकर संतुष्ट हो, अभय होकर लौट गए।

कालांतर में हहरण्यकश्यप के चार पिु हुए- आह्लाद, अनुह्लाद, संह्लाद और प्रह्लाद। प्रह्लाद सबसे छोटे थे ेऔर गुणों में सबसेबड़े।े वे संत, देवी, गौ, ब्राह्मण के सेवक, भक्त सौम्य स्वभाव, सत्य प्रकृतत एवं प्जतेप्न्द्रय थे। उनकी हदनचयाि भगवद्भप्क्त थी। भगवान के ध्यान में तन्मय हो जाते थे।

आत्रवत्सवभूमतूानारे्कः वप्रयसुहृिर्ः ।।

(श्रीमद् भागवत 7-4-31)

वेसमदशी थे,े सदैव हररः शरणं, हररः शरणंकी ध्वतन उसके मुखारर्वन्द्द से तनरंतर तनकलती रहती थी। जब प्रह्लाद पाचूँ वष िके हुए तो हहरण्यकश्यप ने अपनेदैत्य कुल के आचाय िशण्डामकि को बुलाकर प्रह्लाद की मशिा का भार हदया। उन्द्हें सचेत कर हदया फक प्रह्लाद को दैत्यकुल की परम्परानुसार अचछी मशिा दी जाये? प्रह्लाद 4-6 माह पाठशाला तनत्य जाते रहे। एक हदन उसकी माता कयािू ने इसे स्नान कराकर, सुंदर वस्ाभूषण से सुसप्ज्जत करके, र्पता हहरण्यकश्यप के पास नमस्कार करने ेको भेजा। प्रह्लाद ने अपनेर्पताजी को ततनक दूरू खड़ा होकर नमस्कार फकया तो हहरण्यकश्यप ने पे्रम से गोद में त्रबठाकर पूछा-बेटा !

पप्रछ् कथ्यतांवत्स र्नयतेसाधु यद्भवान् ्।।

(7 - 5 - 4)

तुम्हें स्कूल जाते बहुत हदन हो गए, बताओ फक तुम्हारे गुरुजी ने तुम्हें क्या पढ़ाया? बताओ तुम्हें कौन-सी बात अचछी लगती है। प्रह्लाद कहता है- र्पताजी ! सुतनये-

तत्साधुर्नयेऽसुखुयदेमदहनां सदा सरुद्ुववववनधधयार्सद्ग्रहात् ्।
दहत्वाऽऽत्रपातंगृहृरं्धंकूपं ंवनं गतो यद्धररराश्रयेत ।।

(7-5-5)

हे असुरवय ि(दैत्यों में श्रेष्ठ) र्पताजी ! यह मनुष्य जन्द्म बड़े ेभाग्य से ममलताहै, परन्द्तु इस गृहस्थाश्रम में कुछ न कुछ र्विप होता ही रहता है, धचि एकरस नहींरहता। हमेशा कोई न कोई अशांतत मन में बनी ही रहती है। चाहे वह पिु से हो, भाई से हो, कुटुम्बयों से हो, पड़ोमसयों से हो, कोई न कोई उद्र्वग्नता धचि में हमेशा बनी ही रहती है। यह गृहस्थाश्रम आत्मपात और अन्द्धकूप है। इस आश्रम में िण, प्रततिण आत्मा का पतन होता रहता

है। अब र्वचार करना है फक इस आश्रम को प्रह्लाद ने आत्मपात क्यों कहा? आत्मा के पतन का क्या स्वरूप है? शुद्धि तत्व भगवान आत्मा को कुछ न कुछ मान लेना ही आत्मा का पतन है और गृहस्थाश्रम में रहनेसे कुछ न कुछ माना ही पड़ता है। बस, फफर गोर्वन्द्दाय नमो नमः-

शुद्धि तत्व भगवान आत्मा में अपनी मान्द्यता आरोर्पत करते हैं फक म ैंपतत हूँ, र्पता हूँ, पुि हूँ, भाई हूँ आहद। कुछ न कुछ अपने 'म ैं' को मानता ही रहता है और जहा ूँअपने आपको कुछ भी माना तो यही आत्मा का पतन है, सूि मलखो- 'मान्द्यता का पयायि प्रपंच है।' गुफा में बैठना प्रपंच का त्याग नहीं है। 'म ैं' जैसा हूँ वैसा न जानकर कुछ न कुछ मान लेना ही आत्मा का पतन है। इसीमलए यह आश्रम आत्मपात है। चाहे वह ि णभर के मलए ही क्यों न हो प्रपंच (मान्द्यता जगत) में आना ही आत्मा का पतन है। फफर देखो-महात्मा प्रह्लाद कहते हैं फक गृहस्थाश्रम अंिकूप है-अंिकूप फकसको कहते हैं? क्या भाव है? देखो-कहीं पर बड़ा भारी कुआूँहै। उसके चारों ओर लम्बी-लम्बी ि ास उग आई है और इन तृण लताओं करके कुआूँ पूणतिया ढूँका है। बाहर से कुछ भी हदखाई नहीं देता। अब कोई पशु उिर से चरनेको तनकला। लम्बी- लम्बी हरी-हरी सुंदर घास देखकर चरते-चरते ज्यों ही वह आगे पैर बढ़ाता है तो नीचेकुएँ में धगर पड़ता है। धगरा तो तनकलना मुश्ककल है। जी हा–ूँअब इसका भाव क्या है? यह जो गृहस्थाश्रम है वह अन्द्िकूप है। सुंदर स्िी, सुंदर पुि, सुंदर मकान, आज्ञाकारी नौकर, भोग की सारी सामग्री, यह मानो हरी- हरी घास है। इस तृणलता करके गृहस्थाश्रम रूपी कुआूँढूँका हुआ है। अब गृहस्थ पशु ु फकसको कहै? अरे ! वही जो म ैंशरीर हूँ, मेरा शरीर है, म ैंजन्द्मता हूँ, म ैंमरता हूँ, म ैंस्िी हूँ, म ैंपुरुष हूँ, ब्राह्मण हूँ, ि िी हूँ, वैश्य हूँ, शूर हूँ, ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी, संन्द्यासी हूँ, बालक, युवा, वृद्धि हूँ, लम्बा हूँ, चौड़ा हूँ, मोटा हूँ, पतला हूँ, ऊूँचा हूँ, नीचा हूँ, काला हूँ, गोरा हूँ आहद मानता है। 'ईदृशी ि ारणा येषाम् ्ते सवे पशवः।' ऐसी ि्जनकी िारणा है वेसब त्रबना सींग पूछ के पशु हैं। अचछा फफर देखो त्रिगुणात्मक मान्द्यताओंसे परे 'म ैं' आत्मा हूँ। अरे भाई ! इनका साहहत्य अलग-अलग होता है। तुमने ही माना फक शरीर हूँ तो फफर शरीर के ि मि–म ैंवैष्णव हूँ, म ैंशैवै हूँ, म ैंशाक्त हूँ, बौद्ि हूँ, जैन हूँ इत्याहद, वणी हूँ, आश्रमी हूँ, ये शरीर के ि मों की मान्द्यता हो जाती है। जहाूँम ैं शरीर हूँ, ऐसा माना तो फफर 'म ैं' में म ैंशरीर और मेरा शरीर, यह ि म ि सब आ गए। अचछा-अब तुम्हारे ऊपर ममसपरसॉतनफफकेशन (गलत हुमलया) बतानेका जुम ि क्यों न लगाया जाए? ताजरात हहन्द्द जातता फौजदारी की दफा क्यों न कायम की जाये? 'म ैं' जैसा हूँ वैसा न बताकर अपनेआपको साढ़े तीन हाथ का शरीर बतना दफा 468 का जुम ि है। जाओ-वकीलों से पूछ लो और इसकी सजा है जन्द्म और मरण। बोलो 'म ैं' जैसा हूँ वैसा न बताकर, 'म ैं' संसारी जीव हूँ, बताना, अपने आपको जीव मानना यह जुम ि नहीं ंतो और क्या है? जाओ, फफर इसकी सजा भुगतो- चौरासी लाख योतनयों में भटको। यही तुम्हारी इस मान्द्यता की सजा है। जीव मानने की सजा भुगतनी ही होगी। अपनेआपको शुद्धि तत्व आत्मा न जानकर संसारी जीव मानने की यही सजा है आवागमन। म ैंज्ञानी हूँ, म ैं अज्ञानी हूँ, म ैंपुण्यी हूँ, म ैंपापी हूँ, म ैंअिम हूँ, इन सब मान्द्यताओं का चाज ि तुम पर लग गया। हा–ूँत्रबल्कुल और भोगो इनकी सजा-

अरे! यह जो मान्द्यता है फक म ैंब्रह्म हूँ, यह भी गलत हुमलया बताना है। राम राम ! सीता राम !!

जैसा 'म' ै हूँ वैसा ही हूँ। परन्द्तु, पहले अपने 'म' ै में 'म' ै ब्रह्म हूँ, यह आरोर्पत कर रहे हो, बड़े ेबन रहे हो। अकड़कर कहते हो फक म ैत्यागी हूँ, म ैरष्टा हूँ, म ैसिाी हूँ, तनगुणि हूँ, तनराकार हूँ, यह ब्रह्मभाव सतोगुणी मान्द्यता है। अपने को ब्रह्मज्ञानी मानतेहो तो फकसकी अपेिा से? दूसरों को अज्ञानी मानकर ही तो अपनेको ज्ञानी बताते े हो? अतः इसकी सजा है-ज्ञान का प्रमाद? तुम्हारी दृष्ष्ट में जीव हदखाई दे रहा है। तो तुम्हारा यह ब्रह्मभाव जीव की अपेिा से ही तो है फक ब्रह्म की अपेिा से ब्रह्मभाव है? बोि तो उसको कहते ेहैं फक 'म' ै के मसवाय अन्द्य कुछ नहीं, ं और कुछ न हदखै। जब म ैब्रह्म हूँ, ऐसा भाव रखते हो तो जीवभाव इसका वैरी करता है। जीववादी वैरी करेगा। बड़ी मुष्श्कल है। जहाँ देखो वहाँ राग-द्वेष। क्या 'म' ै का भी कोई वैरी है? 'म' ै इस आत्म तत्व में सब वैरी समातत हो जाते हैं, 'म' ै का 'म' ै शुद्ि तत्व का बोि हो जाता है। इसमलए यह गृहस्थाश्रम अन्द्िकूप है। देहासक्त, दारासक्त, पुत्रासक्त यही देहामभमानी पशु ुहै। फफर इसको ध्यान से देखो-क्या सभी गृहस्थाश्रम अन्द्िकूप है? क्या सभी गृहस्थ अन्द्िकूप में हैं। नहीं, ं जो देहामभमानी हैं, अपनेआपको कुछ मानेहुए हैं, वे ही अंिकूप में हैं। वैसे तो भगवान ब्रह्मा, र्वष्णु, मशव, बड़े-बड़े ेमहात्मा, ऋर्षगण, वमशष्ठ, अत्रि, गोते तो अगस्त्य सभी गृहस्थाश्रम में हैं। भगवान कृष्ण तो राम-राम महागृहस्थ हैं- सोलह हजार एक सौ आठ तो प्रमार्णत पत्नियाँ हैं और बाकी भगवान ही जानें। अगर इनमें गृहस्थाश्रम का दोष मानोगे तो अततव्याष्प्तत दोष आ जाएगा। ये भी पशु ुकहे जाने लगेंगे। अरे ! पशु ुतो देहामभमातनयों के मलए कहा गया है। अज्ञानी गृहस्थों के मलए पशु ुसंज्ञा दी गई है, न फक बोिवान गृहस्थ के मलए। यह प्रह्लादोपाख्यान बड़ा ही सुंदर है। जी हाँ-ध्यान से सुनो, अब चीज यहाँ-

तत्साधुर्नयेऽसुरु वयं ंदेदहनांसदा सरुद्ुववववनधधयार्सद्ग्रहात् ्।
दहत्वाऽऽत्पातंगृहर्नधकूपं ंवनं गतो यद्धररराश्रयेत ।।

(भाग. 7-5-5)

इसका इसमलए पररहार फकया जाता है। सीता स्वयंवर के लीला भाग में जब गोस्वामी तुलसीदास जी

रामायण की रचना कर रहे थे, े तो उसी प्रसंग में मलखे फक-

किरचाप जहाज सागर रघुबर बाहुबल ।
बूड़े ेसकल सराज.... ।।

यहाँ ुतक तो मलख गये-फफर र्वचार फकया फक यह क्या अनथ िकर डाला, सीता स्वयंवर में, उस समाज में तो संत महात्मा भी बैठे थे। स्वयंश्री जनक जी महाराज, श्री र्वश्वाममि जी और अन्द्यान्द्य ऋर्षगण बैठे थे। तो फफर क्या वे भी डूब गये? नहीं, ं मुझसे बड़ी गलती हो गई। रामायण में हर ताल तो लगाया नहीं ंजा सकता, काटा नहीं ंजा सकता। तो-

किरचाप जहाज सागर रघुबर बाहुबल ।
बूड़े ेसकल सराज... ।

तीन ही चरण मलखे थे। यह पद उस समय का है जब सहसर्ों राजा महाराजा प्रयत्न करनेपर भी शंकर जी का ि नुष न उठा सके। अरे ! थोड़ा भी न हटा सके तो जनक जी महाराज बड़े ेपररताप में डूब गए।

तजहु आस ननज गृह जाहू। भलखा न ववधध वैदेदह ववववाहू ।।

आहद! उन्दहें बड़ी तनराशा हुई। वहाूँपर गोस्वामी जी मलखते हैं फक भगवान शंकर का ि नुष (चाप) मानो जहाज के समान था और श्रीराम का बाहुबल ही मानो समुर था। तो र्नाक रूपी जहाज में सभी समाज बैठा था। अब 'सागर' रघुबर बाहुबल के ऊपर फफर मलखते हैं फक 'बूड़े ेसकल समाज', तो समाज में तो सभी बैठे थे। बड़े–बड़े े संत महात्मा भी उस समाज में ही थे। तो क्या वे भी डूब गये? उनका मसर चक्कर खा गया। र्वचार करते-करते मसर घूम गया। तो उठ बैठे और चले गए गंगाजी स्नान आहद करने ेके मलए। तीन चरण तो मलख गये थे ेचौथा चरण मलखना बाकी था। तो श्री हनुमान जी उसे पूरा कर हदये फक चढ़े जो प्रथमहहं ंमोहबस ।। यानी शंकरचाप जहाज से वे ही डूबे जो मोहवरा चढ़े थे। अरे! अज्ञानता के कारण जो अहंभाव लेकर गये थे ेफक हम ही सीता से र्वाह करेंगे, वे े डूबे। अतः गलती न हो जाय इसमलए पररहार करते हैं- ब्रह्मा, र्वष्णु, शंकर, राजर्ष,ि ब्रह्मर्ष,ि राम, कृष्णाहदक ये सब गृहस्थ हैं। तो फफर सभी गृहस्थों को पशु नहीं कह सकते। जो देह को ही आत्मा मानेहुए हैं, ऐसे देहामभमानी ही अंकूिप में धगर रहे हैं और वे ेही पशु ुहैं, न फक सब।

तत्साधुर्नयेऽसुरुवय मदेदहनां सदा सरुदुववववनधधयार्सङ्ग्रहात् ्।
दहत्वाऽऽत्पातंगृहर्नधकूपं ंवनं गतो यद्धररराश्रयेत ।।

(भा. 7-5-5)

उपदेश तो ऐसे सब जीववादी गृहस्थों के मलए कर रहे हैं और (दबी जबान में) कहते हैं फक ये भी गृहस्थ हैं- संन्द्यासी हदखनेमिा के जो हैं। उपदेश गृहस्थों का हो रहा है। इने–धगने संन्द्यासी वस्तुतः है जो फक नहींके बराबर। इने–धगने इसमलए, क्योंफक संन्द्यासी का कोई बाजार नहीं है। संन्द्यासी का भाव क्या है? क्या अथ ि है?

ज्ञेयः स ननत्यसननयासी यो न द्वेन्ष्ट न कांषनत ।
ननद्वमनद्वो दह र्हाबाहो सुखुं बनधात् ्प्रर्ुयते।।

(गीता 5/3)

उसे ही तनत्य संन्द्यासी जानो फक जो राग-द्वेष नहीं ंकरता। ऐसा ही तनद्विन्द्र है, वह सुख रूपी बंनि से भी छूट जाता है। प्जसका मोह सम्यक् प्रतनहदिन्द्य नष्ट हो गया है-यही संन्द्यासी का अथ िहोता है। मसफि काशाय वस्ि ारिण कर लेना, मशखा, सूि का पररत्याग कर देना ही संन्द्यासी का लिण नहीं है। काषाय वस्ािीरी मशखा,

 सिूहीन को संन्यासी मान लेना वस्तुतः ठीक नहीं ़है। इसमलए संन्यासी कम हैं। सम्यक् प्रकार से समझने वाले भी
कम हैं। भैया! जी हा–ँू मशव मशव हा ़ूँजी-

तत्साधुर्नयेऽसुरुवय मदेदहनां सदा सरुदुववववनधधयार्सङ्ग्रहात् ़।
दहत्वाऽऽत्र्पातंगृहर्नधकूपं ़वनं गतो यद्धररर्राश्रयेत ।।

(भा. 7-5-5)

इस वैराग्य युक्त वाणी को सुनकर कुछ लोगों के मन में यह भाव उत्पन्द्न हो रहा है फक यहद स्वामी जी पहले ममले होतेतो इस गृहस्थाश्रम के चक्कर में न पड़ते। तो भैया ! अब क्या त्रबगड़ा है? कहतेहैं कृपा करो-बड़े े चक्कर में पड़े ़ेहैं। अगर आप पहले ममले होते तो-खैर, अब क्या त्रबगड़ा है? प्ंजदगी भर क्या गृहस्थी में ही रहने का ठेका मसर पर ले रखे हो? अगर हहम्मत हो तो चलो हमारे साथ तुम भी। अरे, हा ़ूँभाई ! ब्रज की एक बोली है-'राड़ूँ के पावूँ सुहाधगन लागै हो जा बहहना मोसी।' जब कोई सुहाधगन प्स्र्ी फकसी विंवा स्र्ी का पैर पकड़ती है तो भीतर ही भीतर, मन ही मन वह कहती है फक तू ़ूभी मेरे समान हो जा। बाहर कहे तो मसर न फोड़ दे। वह मन ही मन कहती है- जैसे म ़ैंहो गई हूँ, वैसे ही तू भी हो जा। हम भी यही आशीवादि देते हैं फक भैया ! हमारे समान तुम भी हो जाओ। बहुत हदन हो गए गृहस्थी का मजा लेते, अब जरा फकीरी का भी मजा लो। परन्द्तु बात-जैसे चोकर अटक गया हो, बाहर आये न भीतर जाय। चोकर का मतलब (अब स्वामी जी चोकर का मतलब बतातेहैं) हदल्ली शहर में गरीब से गरीब और अमीर से अमीर सभी रहतेहैं। गेहूँ का आटा छान लेनेके बाद चलनी में जो बचा रहता है उसे चोकर कहते ़ेहैं। गरीब बचचों की मातायेंबाजार से चोकर ले आती हैं और उसको साफ कर लेती हैं। चोकर को पंजाब में बूर भी कहते ़ेहैं, जरा घी में उसको भून लेती हैं और थोड़ा गुड़ का शीरा जो फक हुक्का के गुड़ाखू बनानेके काम में आता है, चोकर ममलाकर उससे सुंदर छोटे-छोटे लड्डू बना लेती हैं। फफ शाम के समय उन लड्डूओंको छोटी-छोटी सुंदर टोकररयों में सजा देती है ऊपर से खस, केवड़े ़ेआहद का इि तिछड़क देती हैं। सुंदर गजरा, फूल कायस रखकर गरीब बालक अब उसे बेचनेके मलए शहर के पाकों में जाते हैं। ररस में धचकना चुपड़ा तेल लगाकर बुश शटि पहहने, बड़े े लहजेके साथ ये लड़के दुपुल्ली टोपी लगाकर नजाकत के साथ बेचने तनकलतेहैं। बाहर से आये सैलानी पाकि में बैठे रहतेहैं। फकला ग्राउण्ड और अन्द्य पाकों में जहा ़ूँदेखते हैं फक ये सैलानी बाहर के हैं, एक बेंच में 4-6 बैठे पाकि का मजा लेते देखते हैं तो लहजेसे उनके पास पहुँचते ़ेहैं-बाहरी देख लेते हैं क्योंफक, जानते हैं फक वहाूँके रहने ़ेवालों से सौदा नहीं होगा। अब कहते हैं-ले ले हदल्ली के लड्डू आने में एक, जो खाये वह पछताये, न खाये वह भी पछताये। कहते तो सचची बात हैं। परन्द्तुलहजे से कहतेहैं। बाहर के सैलानी बालक को पैसा देकर सब लड्डू खरीद लेते हैं और एक-एक लड्डू बांटकर जब गप लगाते हैं तो चोकर तो चोकर, ममठास तो अंदर चला जाता है, परन्द्तु चोकर भीतर नहीं जाता। नाक, आूँख, सब भर जाता है, लाल-लाल मुूँह हो जाता है, स्वासूँ लेना बंद हो जाता है। नाहक पैसा फेंका दूसूरी बात। तो भैया! यही हदल्ली का लड्डू है। वैराग्य का उपदेश सुनकर मन में पररवतनि होता है फक स्वामीजी गृहस्थी त्रबना छोड़े ़ेमजा कहाूँममलेगा? परन्द्तु, यही चोकर वाली बात-चोकर का त्याग नहीं कर सकते। गृहस्थाश्रम छोड़ के भाग जाओ कहें तो कहते हो पाप लगेगा। यह भी र्वकल्प ही है। स्र्ी, बाल-बचचों को छोड़कर

 कैसे भागें? उनको कष्ट होगा तो पाप लगेगा। जब स्त्री का बचचा पेट में रहता है तो तुम र्खलानेगए

थे, तुम गए थे े

पालन करने? जो परमात्मा र्वश्वम्भर है क्या उस पर तुम्हारा भरोसा नहीं ंहै, जो भगवान बचचेके पैदा होने ेके साथ ही माँ के स्तन में दूि पैदा कर देता है? अब यहद भैया! रहतेहो तो यह तुम्हारी ही कमजोरी है, क्योंफक चोकर जो अटक गया है।

जी हा–ँजब टट्टी लगती है तो पैदल भागतेहो-तब फकसी की सुनते ेभी नहीं,ं लोटा लेकर भागतेहो, फफर कुछ नहीं सूझता। उस समय लज्जा, भय कुछ नहींरहता। इसी तरह मनीराम को प्रपंच रूपी मल त्याग करने की जब हाजत होती है उस समय फफर न स्त्री, न बाल - बचचे, न घर-बार कुछ भी नहींहदखाई देता। पास में स्त्री सोई हुई है, उठा और चल देता है। तो फफर जुलाब हदया जाता है फक टट्टी लगी-फफर सिु बने। इसे जुलाब लेनेकी जरूरत है। मनीराम को तो सिु ही जुलाब देंगे। संत की वाणी ही जुलाब है।

तत्साधुर्नयेऽसुखुय मदेेदहनांसदा सरुद्ुववववनधधयार्सद्ग्रहात् ्।
दहत्वाऽऽत्र्पातंगृहर्नधकूपं ंवनं गतो यद्धररराश्रयेत ।।

महात्मा प्रह्लाद कहतेहैं-र्पताजी ! इस गृहस्थाश्रम को छोड़ देना और वन में जाकर श्री हरर आत्मदेव की शरण में हो जाना, यही मशिा मनैं ेपाठशाला में अपनेगुरुजी से ली है।

श्रुत्वा पुत्रधगरो दैत्यः परपषसर्ादहताः ।
जहास बुद्धधबालमानांभभद्यते परबुद्धधभभः ।।

(श्रीमद् भागवत 7-5-6)

हहरण्यकश्यप हूँस पड़ा-अरे भाई! अभी यह बचचा है। 5 साल का ही है। तोता-मैना को जैसा मसखा दो वैसा ही वेबोलते हैं। इसी प्रकार बालक तोता- मैना के समान ही होतेहैं जैसा कुछ वे सुनते ेहैं वैसा ही रट लेते हैं। उन्द्होंने प्रह्लाद के आचाय िको बुलाकर साविान फकया फक इसकी मशिा ठीक दैत्य कुल के अनुसार ही होनी चाहहए। ऐसा उपाय करो फक यह सुिर जाये। एकांत में गुरुजी को बता हदया फक साविान रहना, प्रह्लाद का मनोभाव स्पष्टतया त्रबगड़ चुका है। उसकी बुद्धि त्रबगड़ गई है। ले जाओ, इसे ठीक से पढ़ाओ। जान पड़ता है फक आपके घर पर र्वष्णु के पिपाती कुछ ब्राह्मण तछपे पड़े ेहैं। अब वे ेइसको बहकाने न पायें। जब प्रह्लाद गुरुजी के यहा ूँगए तो गुरुजी पुचकार कर पूछतेहैं-

वत्स प्रह्लाद भद्रं ते सत्यं कथय र्ा र्ृषा ।
बालाननत कुतस्तुभ्यरे्ष बुद्धधववपययमः ।।

(श्रीमद् भागवत 7-5-9)

बुद्धधभेदः परकृत उताहो ते स्वतोऽभवत् ्।
भण्यतां श्रोतुकाऱ्ानां गुरूणां कुलननदन ।।

(श्रीमद् भागवत 7-5-10)

बेटा प्रह्लाद ! अभी तुमने अपनेर्पताजी से जो कहा और तुम्हारे र्पताजी ने मशकायत की फक तुम फकसी बहकाने ेमें आ गए हो-तो क्या बात है? क्या सचमुच में तुम फकसी के बहकावे में आ गए हो? तुमने अपनेर्पताजी से कहा फक अंकूिप एवं ंआत्मा का पतन करने ेवाले गृहस्थाश्रम को छोड़कर वन में चले जाना और श्रीहरर भगवान आत्मा की शरण में हो जाना चाहहये, इत्याहद ये सब अंड-बंड तुम क्या बक रहे थे?े यह सब बदनामी की बात है। दैत्यकुल की परम्परा के र्वरुद् है। अतः ठीक-ठीक हमसे बताओ - 'मा मृषा', झूठ २ बोलना, तेरी बुद्धि को फकसने ेहेरफेर कर हदया? तेरी बुद्धि को कौन त्रबगाड़ रहा है? तो प्रह्लाद कहता है-सुतनये गुरुदेव !

स्व परश्चेत्यसद्ग्राहः पुंसां यनऱ्ायया कृतः ।
ववऱोदहतधधयांदृष्टस्तस्ै ैभगवते ेनरः ।।

(श्रीमद् भागवत 7-5-11)

क्या र्वलिण भाव है-गुरुजी सुतनये यह मेरा है, यह तेरा है, म–ैंम ैंहूूँ तू-तू है, तू मभन्द्न है, म ैंऔर हूूँ, तू ूऔर ि्प्जसके अज्ञान से हो है, इस प्रकार का भ्रम असत्य भावना, र्वपरीत भाव, पशु ुबुद्धि प्जसकी माया करके अथात् जाती है।

स यदानुव्रतः पुंसां पिुबुद्धधववभमभद्यते।
अनय एष तथानयोऽहभर्नत भेदगता सती ।।

(श्रीमद् भागवत 7-5-12)

प्जसके अज्ञान से असत्यभाव बुद्धि में बैठ जाता है, ऐसी पशु ुबुद्धि हो जाती है और जब उसका ही ज्ञान (बोि) हो जाता है तो इस पशु बुद्धि का नाश हो जाता है। तब वह कौन? क्या है? इस प्रकार के अज्ञान का लोप हो जाता है. तो फफर वह कौन है?

स एष आत्ऱा स्वपरेत्यबुद्धधभभदुमरत्ययानुक्रर्णो ननरूप्यते ।
रुह्ुयन्नत यद्वत्र्मन वेदवाददनो ब्रह्मादयो ह्येष भभनवि ऱे् र्नतर् ्।।

मशव मशव-वह कौन है? स-भगवान आत्मा, अथात् ि्प्जसके अज्ञान से पशु ुबुद्धि को प्रातत हो जाता है, उसी को जानना चाहहए फक वह कौन है? अरे ! अपना आप आत्मा ही है। अपने आप आत्मा के ही अज्ञान से पशु

बुद्धि हो जाती है। देखो-आत्मा फकसको कहतेहैं? उसका क्या लिण है? प्जसके त्रबना जो एक िण भी न रह सके वहींउसकी आत्मा है। डंडा लकड़ी के त्रबना एक िण भी नहींरह सकता इसमलए लकड़ी हुई डंडें ेकी आत्मा। लकड़ी न हो तो डंडा अपना अप्स्तत्व फकसमें रखेगा? इस तरह डंडें ेकी आत्मा हुई लकड़ी। इसी तरह आभूषण की आत्मा सोना, कपड़े ेकी आत्मा िागा, घड़े ेकी आत्मा ममट्टी। आत्मा कहतेहैं अप्स्तत्व को। जहाँदेश, काल, वस्तु नहीं–ं उसको आत्मा कहते ेहैं। जो प्जसका आिार होता है वही उसका स्वरूप होता है। तो डंडें ेका स्वरूप लकड़ी है। जो प्जसका स्वरूप होता है। वही उसका कारण होता है जो प्जसका कारण होता है वही उसमें व्यापक होता है। प्जस समय यह बोि हो जाता है, जब यह अनुभव कर लेता है उस समय उपरोक्त पशुबुद्धि का नाश हो जाता है, इसमलए अपना आप म ैंआत्मा हूँ, इस बोि को प्रातत करना चाहहए। संसार में बड़े–ेबड़े ेर्वद्वान, शास्त्रज्ञ, षट् शास्त्री हैं, बड़े–े बड़े ेदशनिाचाय िहैं, दशनिशास्त्र के पररज्ञाता हैं, परन्तु उन्हें आत्मतत्व का बोि (अनुभव) नहीं ंहै। वे ही र्वद्वान कहतेहैं फक आत्मा और परमात्मा मभन्न- मभन्न हैं।

दुरुत्ययानुक्रणो ननरूप्यते ।।

संसारी र्वद्वान क्यों न मभन्न-मभन्न मानें क्योंफक बड़े–ेबड़े ेवेदवादी ब्रह्माहदक भी आत्मा का तनणयि करने ेमें मोहहत हो जाते हैं। अतः प्राकृत संसारी र्वद्वानों का आत्मा को न जानना अथवा आत्मा परमात्मा में भेद मानना कोई आश्चय िनहींहै।

रुहुयन्नत यद्वत्रनमन वेदवाददनो ब्रह्मादयो ब्रह्मेष भभनवि रे् र्नतर् ।।

तो संसारी र्वद्वानों की बात ही क्या है।

अब यहा ँूपर प्रश्न होता है फक भगवान आत्मा को ब्रह्माहदक देवता भी नहीं ंजान पाते, जानने ेमें समथ ि नहीं ंहैं, तो कैसे समथ िनहीं हैं? हाँ जी, नहीं है। मशव-देखो-यहद ब्रह्मा, र्वष्णु, महेश आहद भगवान आत्मा से मभन्न हैं तो वे हैं ही नहींऔर अमभन्न हैं तो जानेंगे फकसको? यहद मभन्न होंगे तो आत्मा नहींअनात्मा होंगे। अरे भाई ! देखो वेदवादी ब्रह्मा आत्मा से यहद वस्तुतः मभन्न हैं तो यह अनात्मा हुआ और अनात्मा वस्तु जड़ होती है। तो अनात्मा आत्मा को क्या जानेगा और यहद अमभन्न है तो जानने ेका प्रश्न ही नहींउठता। तो अनात्मा आत्मा को क्या जानेगा और यहद अमभन्न है तो जाननेका प्रश्न ही नहीं ंउठता। यह नई चीज है। यहद तुम अपनेआपको भगवान से मभन्न मानते हो तो तुम हो गये अनात्मा और इस दशा में भगवान आत्मा को कैसे जानोगे? देखो ध्यान से समझना, मेरी बातों को ध्यान से सुनना फक म ैंकब मानना कह रहा हूँ और कब जानना। मानना और जानना में रात-हदन का अंतर है।

भगवान से अपनेआपको मभन्न मानते हो तो मभन्नता मानने में है और अमभन्नता जाननेमें है। मभन्न करके मानते हो तो जड़ हुए इसमलए तुमको भगवान आत्मा को जानने में अधिकार ही क्या है और यहद अमभन्न जानते हो तो जानने का प्रश्न ही नहीं उठता। कोई भी भगवान आत्मा को जानेगा तो भगवान होकर ही जानेगा।

भगवान होकर ही जाना जाता है। नदी समुर होकर ही समुर को जानती है, न फक नदी रहकर। नदी का समुर को जानना समुर होकर ही होगा, नदी रूप से नहीं। 'देवो भूत्वा देवं यजेत्।्' प्जसका पूजन करना है वह तुम स्वयं हो जाओ। देखो जब तुम फकसी कांग्रेसी ममतनस्टर से ममलना चाहते हो तो क्या भेंट करने के मलए जो पहहने ेहो उसी को पहनकर जाओगे? घर में भले ही ममल का कपड़ा, पहनेरहो, परन्द्तुजब ममलना होगा तब जवाहर जाकेट, हाथ में ररस्ट वॉच बाँ, पैर में चतपल और मसर पर श्री नॉट थ्री की टोपी, इस वेश में ममलोगे। हा ूँभाई ! तनशाना अचूक होना चाहहए। यही पोश बनाकर तो नेताजी से ममलोगे? जी हा–ूँजो जैसा होता है, उससे वैसा ही बनकर ममलना होता है। जुआड़ी से दोस्ती करना है तो जुआड़ी बनकर ही दोस्ती होगी। परमशयन में ममयां शेखेशादी का एक शेरे है-

कुनद हर् न्जनस हर् न्जनस परबाज ।
कबूतर बा कबूतर, बाज बा बाज ।।

जो कुछ भी करना है तो वही होकर करना होगा। सजातीय सजातीय से प्रेेम होता है न फक सजातीय र्वजातीय से। हा–ूँसजातीय सजातीय से प्रेेम होता है। तुम वही हो जाओ-इसीमलए हजरत ईसा ने फकसी वक्त कहा है-कम यू नैकेड टू दी नैकेट क्राइस्ट। नंगे ईसा के पास नंगे होकर आओ क्योंफक ईसा नंगा है। ईसा से ममलना है तो तुम भी नंगे हो जाओ। ईसा नंगा है अथात्िईसा मान्द्यता रहहत है। म ैंअमूक हैं-इस अमुक रूपी र्वकल्प से ईसा रहहत है। मुझ आत्मा को जानना हो तो मान्द्यता से परे हो जाओ। यह अटल तनर्वववाद मसद्धांत है। यहद ब्रह्माहदक भी कहे फक म ैंअमूक (ब्रह्मा हूँ) तो वह भी भगवान को जाननेमें समथ िनहींहै।

स एष आत्रा स्वपरेत्यबुद्धधभभदुमरत्ययानुक्रर्णो ननरूप्यते ।
रुहुयन्नत यद्वत्र्नमन वेदवाददनो ब्रह्मादयो होष। भभनवि रे् र्नतर् ्।।

स एष भगवान आत्मा मे मततम् ्(बुद्धिम्)् मभनरि्। महात्मा प्रह्लाद कहते हैं फक ऐसा जो भगवान आत्मा है सव िका सव,ि वही मेरी बुद्धि को त्रबगाड़ता है। मेरी बुद्धि में यह भेद उसी का डाला हुआ है जो सव िका सव ि है। ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्ति उसका ही स्वरूप है। सारे र्वश्व का जो 'म'ैं है वही भगवान आत्मा मेरी बुद्धि को त्रबगाड़ता है और कौन त्रबगाड़ेगा?

'भगवान आत्मा के जानने ेमें ज्ञाता को अनधिकार है और भगवान आत्मा को जानने में ज्ञाता को भी अनधिकार है।'

शधद वही है, परन्द्तु भाव अलग-अलग है। यहद भगवान को आत्मा 'म'ैं से मभन्द्न मानकर जानना चाहता है तो यह ज्ञाता की अनधिकार चेष्टा है और अपनेआपको भगवान आत्मा से अमभन्द्न जानकर जानना चाहते हो तो जानेगा फकसको? अतः यह भी ज्ञाता की अनधिकार चेष्टा है। एक में भी है और एक में भी नहीं ंहै।

भगवान आत्मा मुझसे मभन्न्न है, इस ज्ञाता और भगवान 'म' ैं हूँ, इस ज्ञाता को भी भगवान के जानने में अनधिकार है। वही भगवान आत्मा है, गुरुजी ! मेरी बुद्धि को त्रबगाड़ता है, जो बुद्धि की बुद्धि है, ज्ञान का ज्ञान है। जब महात्मा प्राहाद इस प्रकार अपने गुरुजी से कहे तो फफर गुरुजी का पारा एकदम चढ़ गया। उनका शरीर गुस्से से लाल हो गया और पाठशाला के फकसी र्वद्याथी को बुलाकर कहने लगे फक कहाँहै मेरी बेंत, लाओ, इस मूख िप्रह्लाद को मशिा देनी होगी-

आननयतार्रे वेत्रस्र्काकर्यिस्करः ।

कुलाङ्गारस्य दुबुद्ग्नधेश्चतुथोऽस्योददतो दर्ः ।।

दैतेयचनदनवने जातोऽयं कण्टकद्रुर्ः ।

यनरूलूोनरूलूपरीववष्मणोनालमानयतोऽभकमः ।।

(श्रीमद् भागवत 7, 5. 16. 17)

यह हमारी कीतत िमें कलंक लगा है। इस दुबुद्धि, कुलाङ्गार लड़के को त्रबना दण्ड के होश न आएगा। बेंत के त्रबना होश हठकाना न होगा। दैत्य वंश रूपी मलयाधगरर चंदन के वन में यह कांटेदार बबूल कहाँ से पैदा हुआ? जो र्वष्णु इस चंदन वन की जड़ काटने में कुल्हाड़ी का काम करता है, यह नादान बालक उन्दहीं ंकी बेंठ बन रहा है, सहायक हो रहा है। प्रह्लाद का कान पकडे ेथतपड़ भी लगाये, गाली भी देते हैं, परन्दतु वहाँदूसूरा रंग चढ़नेवाला ही न था। दूसूरा रंग चढ़ा ही नहीं।

कुछ हदन पाठशाला में पढ़ने के बाद फकसी हदन प्रह्लाद की माता कयिाू ने सुंदर स्नान कराकर, सुंदर-सुंदर कपड़ों, गहनों से सुसप्ज्जत करके प्रह्लाद को उसके र्पता हहरण्यकश्यप के पास प्रणाम करनेको भेजा। प्रह्लाद ने र्पता के चरणों में मसर रखकर प्रणाम फकया। हहरण्यकश्यप पे्रेम से ओतप्रोत हो उसे गोद में त्रबठा मलया और पूछा-

प्रह्लादानूप्तां तात स्वधीतंककन्छचदुिर् ्।

कालेनैतावताऽऽयुष्न्् ्यभिषद्गुरोभवमान् ्।।

(7 - 5 - 22)

बेटा प्रह्लाद ! पहहले तो तुमने ेकुछ अंड-बंड कहा था, अब मशिा पाकर आये हो तो तुम्हारे गुरुजी ने तुम्हें क्या पढ़ाया? जरा सुनाओ तो सही-प्रह्लाद कहते ेहैं-सुतनये र्पताजी !

श्रवणं ंकीतनंम ववष्णोः स्ररणं ंपादसेवनर् ्।

अचनंम वनदनं दास्यंसख्यर्ात्ननवेदनर् ्।।

(7-5-23)

यहा ूँपर प्रह्लाद ने नविा भप्क्त का र्ववेचन फकया है। अब इनके लिण सुनो-श्रवणं-भगवान की कथा को सुनना। कीतनं-भगवान के नाम का कीतनि करना। स्मरणं-भगवान का स्मरण (ध्यान) करना। पादसेवनम्–् भगवान के चरणों की सेवा करना। अर्चनं-उनका पूजन करना। वन्दनं-उनकी स्तुतित करना। दास्यं-भगवान का दास हो जाना। सख्यं-भगवान को अपना सखा मानना। और आत्मतनवेदनम्–्भगवान हो जाना। यही नौ प्रकार की भप्क्त है। ये सब भप्क्त के लिण हैं, भप्क्त नहीं। लोग आठ लिण तो बड़े ेप्रेम से सुनते ेहैं, परन्द्तु भगवान हो जाना यह सुनते ेही मनीराम भागतेहैं। और क्या-अरे बाप रे! हम भगवान कैसे हो जाएंगे-देखो-नौवींभप्क्त आत्मतनवेदन है। भगवान की भप्क्त दो प्रकार की होती है-एक परा भप्क्त और दूसूरी अपरा भप्क्त। सगुण ब्रह्म की जो उपासना, उसे अपरा भप्क्त कहते ेहैं और व्यापक तनगुणि ब्रह्म की जो उपासना उसे परा भप्क्त कहते ेहैं। अपरा भप्क्त में भक्त और भगवान का भेद रहता है। सगुण उपासना, भेदोपासना, व्यक्तोपासना, पररप्च्छन्द्न उपासना, भावनात्मक उपासना ये सब अपरा भप्क्त के पयायि हैं और तनगुणि उपासना, अव्यक्त उपासना, व्यापक उपासना, अभेद उपासना, अहंग्रह उपासना, ये सब परा भप्क्त के पयायि हैं। अपरा भप्क्त या सगुण आरािना का आिार भावना है और भावना का फल है प्रेेम। प्रेेम का फल है भक्त भगवान की एकता और इस एकता का फल है धचि की परम शांतत। भगवान र्वष्णु, मशव, राम, कृष्ण, शप्क्त और गुरु, इनमें से प्जनको भी व्यप्क्त अपना भगवान माने, जो प्जसका इष्ट हो, अपने उस इष्ट की मूतत िको भावना द्वारा हृदय में स्थार्पत कर उसका ही मानमसक पूजन, अचनि, वंदन, जप, नाम स्मरण, धचंतंन एवं ध्यान करना यह अपरा भप्क्त का स्वरूप है। यह भावना पर अवलंत्रबत है। भावना का फल है प्रेेम और प्रेेम का फल है भक्त भगवान की एकता। एक हो गये। फकस तरह ?

श्यार् श्यार् रटते रटते राधा श्यार् भई ।
तब कफर पूछत यो सणखयन से राधा कहा ुँगई ।।

प्रेेम जगत में भक्त और भगवान दोनों एक हो जाते हैं। यहद भक्त, भगवान में भेद है, दो हदखाई देते हैं तो समझ लेना फक वह प्रेेम की दुतुनयाँू से इतनी दूरू है, प्जसकी कोई सीमा नहीं। जब यह एकता इश्क ममजाजी में हो जाती है, आमशक माशूकू एक हो जाते हैं तो फफर इश्क हकीकी में तो कहना ही क्या है। उपासक की दृष्ट में उपास्य (भगवान) यहद अलग हदखाई देता है, तो समझ जो फक वह सचचा आमशक नहीं। प्रेेम की दुतुनया ूँसे वह बहुुत दूरू है।

अब दूसूरी भप्क्त है परा भप्क्त-म ैंव्यापक, पररपूण,ि अखण्ड, अजर, अमर, तनमलि, तनरंजन, तनर्वकिार, सनातन ब्रह्म हूँू, इस प्रकार की भावना करनेका नाम तनगुणिोपासना है। इसे ब्रह्मानुसंिानि, अहंग्रह उपासना इत्याहद कहते हैं। इस उपासना का आिार र्वचार है।

कोऽहर् ्कस्त्वर् ्कुत आयातः । का रे् जननी को रे् तातः ।।

को र् ैआयउ ुकहाुँते ेककत जइहौं का सार ।
का रे् जननी को वपता याको कहत ववचार ।।

परा भप्क्त का आिार र्वचार है। इस र्वचार का फल है ज्ञान। जो व्यापक ब्रह्म पररपूण िहै वही म ैहूूँ। और जो म ैहूूँ, वही तू है, फफर फकसमलए पदि) इसका नाम है ज्ञान। इस ज्ञान का फल है जीव ब्रह्म की एकता। उपासक अपनेआपको जीव मानकर ही उपासना करता है, परन्दतु ज्ञान होने पर जीवात्मा का भेद तनकल जाता है। एक ही हस्ती रह जाती है। तू है तो म ैनहीं ंऔर म ैहूूँ तो तू नहीं। तू ही है, तू ही है या म ैही हूूँ, म ैही हूूँ भेद का सवथिा अभाव हो जाता है। एक मुल्क में दो गवनमिेंट नहीं हो सकती। इसका प्रत्यि प्रमाण हहन्दसुतान और पाफकस्तान है। कभी भी सुख की नींद नहींसो सकते। यह जो साढ़े तीन हाथ की दीवार vec 6 , इसका कोई अप्स्तत्व नहीं ंहै। तू रहे या म ैरहूूँ। व्यापक ब्रह्म की उपासना अभेद है और यहद दो मानते हो तो अभेद भप्क्त नहीं।

इन आखूँों का यही वविेषे, र् ैतोदहं ंदेखूूँतू र्ोदहं ंदेख ।
देखत-देखत ऐसा देख कक भर्ट जाय दुववधा रह जाय एक ।।

कुदरत से आूँख देखने को ममली है तो देख, आूँख क्यों बंद करता है और ऐसा देख फक ममट जाये दुर्वािा रह जाय एक। ये बात-इसको परा भप्क्त कहते ेहैं। यहाूँदो नहीं रहते। परा भप्क्त का आिार र्वचार है और र्वचार का फल है ज्ञान। ज्ञान का फल है जीव और ब्रह्म की एकता जीवात्मा और परमात्मा का भेद ममट जाना। इस एकत्व का फल है धचि की परम शांतत। परा भप्क्त और अपरा भप्क्त दोनों का फल एक ही है। धचि की परम शांतत दो में नहीं ंहोती। अरे! दो में तो भय है। परा अथवा अपरा भप्क्त में धचि की शांतत ही परम फल है। ध्यान दो–िारणा दो प्रकार की एक माजारिी िारणा और दूसूरी वानरी िारणा ? ॐमशव, भैया! तो माजारिी िारणा के लिण जैसे त्रबल्ली की माूँअपने बचचे ेको मुूँह में दबाकर जहा ूँजाना है, वहाूँले जाती है। वे अपनी माूँh नहींपकड़े ेरहते। माूँही अपने दातूँों से बचचों को पकड़ी रहती है। त्रबल्ली बचचे ेके मलए माूँ ही सब कुछ है, जहाूँ वह ले जाये। इस प्रकार की िारणा जहा ूँभक्त की है, जहाूँ भक्त पूणतिया भगवान पर आधश्रत है, उसे माजारिी िारणा करते हैं।

दूसूरी िारणा है वानरी िारणा-वानरी अपनेबचचेको नहीं ंपकड़ी रहती वरन् ्बचचा ही वानरी के पेट भाग को अपने हाथों से ऊपर कसकर पकड़ा रहता है, ताफक जब उसकी माूँ डामलयों में कूदती-फांदती है तो वह धगर न जाय। वह स्वयंमाूँ से धचपटा रहता है। इसी प्रकार इस वानरी िारणा में भक्त म ैही हूूँ, यह िारणा रखता है और माजारिी िारणा का उपासक (भक्त) तू ही है, तू ही है-यह भाव रखता है। तो फफर क्या मसद्ि हुआ? अगर तू ही तू है तो म ैनहीं और म ैही, म ैहूूँ, तो तू नहीं। इसी प्रकार परा और अपरा भप्क्त को समझो, अब कुछ रामायण के पदों से इसका माजनि कर दें। एक भप्क्त ऐसी भी है फक प्जसमें न माजारिी भावना है, न वानरी। न अपरा भप्क्त, न परा भप्क्त- कोई नहीं,ं स्वतंभिप्क्त है। प्जस देश में न परा है, न अपरा। न तनगुणि, न सगुण। रामायण में सभी भावनाओं की भप्क्त का तनरूपण फकया गया है। जरा इनका भी स्वाद लें। अपरा भप्क्त के मलए चलें अरण्यकांड में-

गुरु वपतु र्ातु बंधुपनत देवा। सब र्ोदहं ◌कहुँ जानैदृढ सेवा ।।
र्ई गुन गावत पुलक ◌िरीरा । गद्गद धगरा नयन बह नीरा ।।
कार् आदद र्द दंभ न जाकें। तात ननरंतर बस र् ◌ैताके ।।

वचन कर् मर्न र्ोरर गनत भजन करदहं ◌ननष्कार् ।
नतनहके हृदय कर्ल र्हुँ करुउ◌ुँ सदा ववश्रार् ।।

यह अपरा भक्त है-सगुण भगवान की उपासना और-

सो त ◌ैतादह-तोदह नदहं ◌भेदा। वारर वीधच इव गावदहं ◌वेदा ।।
सेवक सेव्य भाव त्रबनुभव न तररय उरगारर ।
भजहु रार् पद पंकज अस भसद्धानत ववचारर ।।

यहा ◌ूँपरा भक्त है। तो इसका क्या अथ ◌िहुआ? यहाूँ पर तो सभी रामायण के प्रकाण्ड र्वद्वान (पंडडत) बैठे हो। सुनो, इसका भाव-सेवक, सेव्य भाव त्रबनु भव न तररय-अपरा भक्त। त्रबना सेवक सेव्य भाव के संसार से नहीं तरता। सेव्य भाव त्रबनु, सेवक, भव न तररय-परा भक्त। सेवक में जब तक सेव्य भाव नहीं ◌आ जाता तब तक वह नहीं ◌तरता। सेवक सेव्य भाव र्वन भवन न-स्वतंभिक्त। सेवक-सेव्य भाव के त्रबना भव (संसार) नहींहै। अस मसद्न्द्ित र्वचारर राम पद पंकज भजहु। ऐसा र्वचार करके भगवान राम के चरण-कमलों को भजो। प्रणाम ?

सोई जानइ जेदह देहु जनाई। जानत तुम्हदह तुम्हई होइ जाई ।।

सेव्य भाव हो गया फक नहीं?◌

श्वेताश्वतरोपतनषत् ◌की एक श्रुतत स्पष्टतया बतलाती है फक जीव के आवागमन का कारण क्या है? कैसे

?

सवाजमीवे सवसंमस्ंथे वृहनते तन्स्र्नहंसो भ्राम्यते ब्रह्र्चक्रे ।
पृथृगात्र्ानं ◌प्रेररतारं च र्त्वा जुषुटस्ततस्तेनार्तृत्वर्ेनत ।।

(1.6)

प्रेररतारं परमात्मानं आत्मानं पृथृक् मत्वा तप्स्मन् ◌ब्रह्मचक्रे संसारे हंसो जीवः भ्राम्यते जुष्टः ततः तेन् ◌् अमृतृत्वं ◌एतत प्रातनोतत इतत भावः ।

परमात्मा मभन्द्न है और म ◌ैमभन्द्न हूँ, इस प्रकार मानकर ही जीव ब्रह्मचक्र संसार में भ्रमाया जा रहा है। इस प्रकार की मान्द्यता ही जीव के चौरासी लाख योतनयों में भटकने का एकमिा कारण है।'

 जुष्टस्ततस्तेनामृतृत्वमेतत'- जब यह जीव परमात्मा से जुड़ जाता है, परमात्मा को अपनेस्वरूप से मभन्द्न नहीं
जानता तब यह अमृतृत्व को प्रातत हो जाता है अथात्ि्आवागमन के चक्र से छूट जाता है। तो फफर परमात्मा के साथ जीव का जुड़ना क्या है? इिर से परमात्मा आये, उिर से जीव, दोनों एक जगह जुड़ गये? जोड़ का अथ ियह नहीं ्है। तो फफर क्या है? म ैंब्रह्म हूँ, म ैंपरमात्मा हूँ, ऐसा कहना क्या परमात्मा से जुड़ना है? नहीं,ं यह जुड़ना नहीं
है। यहद भगवान अपनेआप को भगवान कहे तो म ैंभी अपनेआपको भगवान कहूँऔर यहद भगवान अपने आपको भगवान भी नहीं ंकहता तो मुझको क्या मुसीबत पड़ी है फक म ैंअपनेआपको भगवान कहूँया भगवान मानूँ, यह भी जंजाल है। भगवान का भगवान नाम फकसने रखा? भगवान ने रखा फक भक्तों ने? भगवान नाम भक्तों ने रखा है। इसमलए इसे भगवान कहते हैं फक वह अपनेआपको भगवान नहीं ंकहता। कोई न कोई र्वलिण तत्व है-क्या रहस्य है? जब 'म'ैं भगवान आत्मा पर यह भी मान्द्यता रही फक म ैंभगवान हैं तब 'म'ैं का 'म'ैं शुद्ि तत्व ही रह जायेगा। यह जोड कभी टूटने ेवाला नहीं ंहै। मशव-भैया ! इसमलए 'सेवक सेव्य भाव र्वक जोड़ तररय उरगारी।' जब आ गया सेव्य भाव तो अस मसद्धिंत र्वचारर राम पद पंकज भजहु। यह परा भप्क्त है।

एक तनराली भप्क्त और है, जो फक न परा है और न अपरा। तो फफर वह कौन-सी भप्क्त है?

पावन पवतम वेद पुराना। रार् कथा रुधचराकर नाना ।।
र्ी सझजन सुर्नत कुदारी । वयान ववराग नयन उरगारी ।।

माताजी ने प्रश्न फकया फक-

नर सहस्त्र हुँ सुनुहु पुरारी। कोउ एक होई धर्व्रमतधारी ।।
धर्मिील कोदटक हुँ कोई। ववषय ववरुखु ववराग रत होई ।।
कोदट ववरक्त र्ध्य श्रुनत कहई। सम्यक् ज्ञान सकृत कोउ लहई ।।
वयानवनत कोदटक हुँ कोऊ। जीवनरुकुत सकृत जग सोऊ ।।
नतनह सहस्त्र हुँ सब सुखुखानी । दुलुभम ब्रह्लीन ववज्ञानी ।।

सब ते सो दुलुभि सुरराया। राम भगतत रत गत मद माया ।। तो फफर वह कौन सी भप्क्त है प्जसमें रत होने े पर मद और माया गत हो जाते हैं और वह भप्क्त प्रातत कैसे होती है?

सो हरर भगनत काग ककभर् पाई। ववश्वनाथ र्ोदहं ंकहहु बुिाई ।।

वह कौन-सी भप्क्त है? अपराभप्क्त भावना प्रिान है-भावना की जाती है फक म ैंभक्त हूँऔर पराभप्क्त में भावना की जाती है फक म ैंब्रह्म हूँ। मान्द्यता दोनों में है। परा भप्क्त का अधिकारी इस भाव में रहता है फक म ैं सनातन ब्रह्म हूँऔर तुलसीदास जी कहतेहैं, वह भप्क्त कैसी है?

राम भगतत रत गत मद माया। कभी सोचा है? मानस प्ेरेममयों !

वह कौन सी भप्क्त है?

पावन पवतम वेद पुराना। रार् कथा रुधचराकर नाना ।।
र्ी सझजन सुर्नत कुदारी। वयान ववराग नयन उरगारी ।।
भाव सदहत खोजइ जो प्रानी। पाव भगनत र्नन सब सुख खानी ।।

ज्ञान वैराग्य से परे भप्क्त-तो फफर वह कौन-सी भप्क्त है प्जसकी तरफ श्री तुलसीदास जी तनदेश कर रहे हैं?

ववर्ल ज्ञान जल जब सो नहाई। तब रह रार् भगनत उर छाई ।।

वह कौन-सी भप्क्त है, जरा र्वचार करो-

सो स्वतंत्र अवलंब न आना। तेदह आधीन वयान ववववयाना ।।

वह भप्क्त स्वतं है। ज्ञान की उपिा करने ेवालों को ध्यान से सुनना चाहहये।

सो स्वतंत्र अवलंब न आना। तेदह आधीन वयान ववववयाना ।।

वाह भाई वाह ! भप्क्त कहो या आत्मा-यह तो संतों, महापुरुषों ने, आत्म तत्व को भप्क्त नाम से र्वभूर्षत फकया है-और फफर इस भप्क्त का क्या स्वरूप है? हा–ूँकोई आिार-अवलंब तो होना चाहहए। प्जस भप्क्त के आिीन ग्यान र्वग्यान है-'तेहह आिीन ग्यान र्वग्याना।' ज्ञान र्वज्ञान का क्या स्वरूप है और दोनों प्जसके आिीन हैं वह भप्क्त क्या है? अहूँ ब्रह्माप्स्म-म ैंब्रह्म हूूँ, यह ज्ञान है। अहमेवेद् सवम्ि्- म ैंसव िहूूँ यह र्वज्ञान है या म ैंआत्मा का आिार ब्रह्म है? म ैंसव िहूूँ, इसका आिार म ैंआत्मा का आिार सव िहै? ज्ञान और र्वज्ञान दोनों का आिार 'म'ैं आत्मा हूूँ।

सो स्वतंत्र अवलंब न आना। तेदह आधीन वयान ववववयाना ।।
भगनत तात अनुपर् सुख रू्ला। भर्लदहं ंजो संत होदहं ंअनुकूला ।।
भन्क्त स्वतंत्र सकल सुख खानी । त्रबनु सतसंग न पावदहं ंप्रानी ।।

उस भप्क्त का क्या स्वरूप है जो सकल सुख खानी है? तो यहा ूँपर जानना चाहहए फक भप्क्त है- 'म'ैं पद, कैवल्य पद, आत्म पद और यह सािन का र्वषय नहीं है। यह कोई बाजारु चीज नहीं है। श्रीमानसकार कहते हैं- ऐसी जो स्वतं भप्क्त है उसके मलए सत्संग ही सािन है।

सब कर फल हरर भगनत सुहाई। सो त्रबनु संत न काहू पाई ।।

तो भैया !

भन्क्त स्वतंत्र सकल सुख खानी। त्रबनु सतसंग न पावदहं ◌ंप्रानी।

और-

भगनत तात अनुपर् सुख रूला। भर्लदहं ◌ंजो संत होदहं ◌ंअनुकूला ।।

क्यों नहीं पढ़ते इन चौपाइयों को-संत ममलें और फफर संत अनुकूल हो। लाख जतन करो, सािन करो, परन्द्तु उनसे स्वतंभिप्क्त नहीं ◌ंप्रातत हो सकती इसमलए संत कृपा का मभखारी बनो। हाँ-सािन करने ◌ेसे संत कृपा का अधिकारी है। संत कृपा से ही भगवान आत्मा आत्मा का अनुभव प्रातत करने ◌ेमें संत कृपा ही सािन है।

संत वविुद्ध भर्लदहं ◌ंपरर तेही। धचतवदहं ◌ंरार् कृपा करर जेही ।।

प्जन संतों की कृपा से आत्मतत्व का बोि प्रातत होता है, परम पद, कैवल्य पद की प्राप्तत होती है, प्जसको फक स्वतंभिप्क्त कहते ◌ेहैं, वे संत कब ममलते हैं? जब भगवान की कृपा होती है तो संत ममलते हैं और संत कृपा का फल है परम पद की प्राप्तत । भगवान की भप्क्त ममलती है। दोनों में अन्द्योन्द्याश्रय संबंि है, संत कृपा कहो या भगवत् ◌्कृपा कहो, एक ही पहलू के दो नाम हैं, संत कहो या भगवान। जी हाँ-

र् ◌ैंतो उन संतों का दास न्जनहोंने र्न र्ार ददया ।।
र्न र्ारा तन वि र्ें कीनहा भरर् भये सब दूरू ।
बाहर से कछु दीखत नाहींअंदर बरसे नूर ।। न्जनहोने.
आपा र्ार जगत र्ें बैठे नहींककसी से कार् ।
उनर्ें से कछु अंतर नाहींसंत कहो चाहे रार् ।। न्जनहोंने.
पी भलया प्याला ज्ञान का छोड़ जगत का र्ोह ।
हर्को सतगुरु ऐसे भर्ल गए होनी होय सो हो ।। न्जनहोंने.
नरभसंहं जी के सतगुरु स्वार्ी ददया अभर्य रस प्याय ।
एक बूंद सागर र्ें भर्ल गई कहा करैगा यर्राय ।। न्जनहोंने.

भैया! ऐसे संतों से ही भप्क्त, आत्म पद प्रातत होता है।

नानक ननदरी ननदर ननहाल ।

संतों के दृप्ष्ट मात्र से कल्याण होता है। श्रीमद् भागवत के एकादश स्कन्द्ि में भगवान श्रीकृष्ण उद्धव से कहते ◌ेहैं-

ननरपेषं रुनुनं ंिानतं ंननवैरं सर्दिनमर् ्।
अनुव्रजाम्यहं ननत्यं पूयेयेत्यङ्नररेणुभुभः ।।

(11-14-16)

जो संत तनरपिे हैं, प्जन्हें फकसी की आवश्यकता नहीं ंतनदेर है अथाति प्जनका कोई शिु ुममि नहीं, ं जो शांत हैं और समदशी अथात् िसारे वर्श्व को अपना ही स्वरूप आत्मा देखनेवाले हैं, तो अहं अनुव्रजामम-म ैंतनत्य उन संतों के पीछे-पीछे घूमता रहता हूँ। फकसमलए? पूयेयेतङ्तघ्ररेणुमभः इसमलये फक उनके चरणों की िूल मुझ पर पड़ जाय तो म ैंपर्वि हो जाऊँ।

संत वविुद्ध भर्लदहं ंपरर तेही। धचतवदहं ंरार् कृपा करर जेही ।।

राम कृपा से संत का ममलन और संत ममलन से आत्म दशनि (अनुभूतत) भगवान की भवहरर्ण भप्क्त ममलती है-जो भप्क्त स्वस्वरूप भगवान आत्मा अपना आप है। जी हाँ-राम कृपा से ही आत्मानुभूतत होती है। इसका पयायिवाची नाम है परम प्रकाश। श्री गोस्वामी तुलसीदास जी ने इसी को परम प्रकाश कहा है-

परर् प्रकाि रूप ददन राती। नदहं ंकछु चदहये ददया घृतृ बाती ।।

यही आत्मपद, कैवल्यपद, तूष्णीपद, सिा पद एवं ंपरम प्रकाश है। यह प्रकाश हदया, घृतृ, वाती अथात् ि् सािनवाला नहीं ंहै।

सोऽहन्स्र् इनत वृवि अखंडा। दीप भिखा सोई परर् प्रचंडा ।।

परम प्रकाश सािनसाध्य नहीं है। यह तो संतों की कृपा से ही प्रातत होता है। सािन द्वारा हदया, घृतृ, बाती का प्रकाश प्रातत होता है। इस हदया को हवा बुझा सकती है।

आवत देखदहं ंववषय बयारी। ते हदठ देदहं ंकपाट उघारी ।।
ररद्धध भसद्धध प्रेरइ बहु भाई। बुद्धधदह लोभ ददखावदहं ंआई ।।

आहद। जो परम प्रकाश है वह क्या हवा से बुझेगा? क्या सूय िका प्रकाश हवा से बुझेगा? हदया तो बुझ जाएगा। परम प्रकाश जो फक प्रकाश को भी प्रकामशत करता है वह संत कृपा का फल है।

परर् प्रकाि रूप ददन राती। नदहं ंकछु चदहय ददया घृतृ बाती ।।

देखो, समझो वर्षय-रात्रि के तनर्वड़ अंिकार में खड़े ेहो और कहते ेहो- बड़ा काला अँिरा छाया हुआ है, अपना हाथ भी नहीं सूझता। भैया ! जल्दी टाच िलाओ, कन्द्डील लाओ, बड़ा काला अँिरा है। तो तयारे ! उस काले काले अंिकार को तुम फकस प्रकाश से देख रहे हो-सूय िका प्रकाश, चन्द्रमा का प्रकाश, अप्न का प्रकाश तो इस

 अंकिार का प्रततद्वंद्वी है, उसका नाशक है इसमलए इन प्रकाशों द्वारा तो रात्रि का घोर अंकिार नहीं

ंहदखेगा। तो

फफर तुम फकस आँख से फकस प्रकाश से रात्रि के अंकिार को देख कर कहते हो फक बड़ा अंकिार है. हाथ से हाथ नहीं सूझता। सौम्य । वह कौन-सा प्रकाश है प्जससे रात्रि के अंकिार को देखतेहो? और सुनो-रात्रि में जब तुम सो जाते े हो तो सारी इप्न्द्रयाँमशधथल पड़ी रहती हैं, आँख बंद रहती है और स्वजाते नानात्व का अनुभव करते हो, हदन सा काय िकरते हो, जाग्रत अवस्था के जैसा सभी काय िकरते हो जबफक सूय,ि चन्द्रमा फकसी का प्रकाश नहीं रहता,

तो

वह कौन-सा प्रकाश है प्जसके द्वारा, प्जस प्रकाश से रात्रि के स्वतन में जाग्रत जैसा व्यवहार देखतेहो? जाग्रत का प्रपंच स्वतन में कैसे देखतेहो? यह फकस प्रकार से संभव हुआ? अरे ! प्जस प्रकार से हदन का व्यवहार करते हो वही, उसी प्रकाश से रात्रि का स्वतन भी देखतेहो।

न तत्र सूयो भानत न चनद्र तारकं नेरा ववद्युतो भान्नत कुतोऽयर्धग्रः ।
तरेव भानतर्नुभानत सवं ंतस्य भासा सवभमर्दं ववभानत ।।

(मु. 2-2-10)

प्जसे सूय िका प्रकाश, चन्द्र का प्रकाश, अप्न का प्रकाश प्रकामशत नहीं कर सकता जो स्वयं इस परम प्रकाश से प्रकामशत होते हैं तो वह कौन-सा प्रकाश है प्जसे सूय,ि चन्द्र, नि, तारागण, अप्न प्रकामशत नहीं कर सकती? गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहतेहैं-

न तद्भासयतेसूयो न िाङ्को न पावकः ।
यद्गत्वा न ननवतनमते ेतद्धार् परर्ं ंर् ।।

(गीता 15-6)

भगवान यहाँ भी वही कह रहे हैं। गत्वा िातु के चार अथ– गम्–गत्वाः - प्रातत कर, जानकर, पहुँचकर और मि। 'यदगत्वा न तनवतन्द्ते' जहा ँजाकर फफर नहीं ंलौटता, मि हो जाता है, वही आत्मा 'म'ै हूँ। इसका मतलब यही हैन फक भगवान की कोई कोठी है, कोई िाम है जहा ँवे रहतेहैं। 'म'ै आत्मा हैं। परम प्रकाश हूँ, परम प्रकाश रूप हदन राती। जो जाग्रत के प्रपंच को देख रहा है, जो स्वतन के प्रपंच को देख रहा है, जो सुषुप्तत अवस्था का सािी है, वह कौन है? म ैआत्मा, दूसूरा कौन होगा मसवाय मुझ आत्मा के। इसमलए 'म'ै सािी हूँ। मुझमें प्रपंच नहीं ंहै। जो जाग्रत, स्वतन, सुषुप्तत का अनुभव करता है, वही परम प्रकाश है। 'म'ै अभी हूँ तो क्या 'म'ै रात्रि में न रहूँगा। नहीं 'म'ै रात्रि में भी रहूँगा। हदन के प्रकाश का म ैप्रकाशक हूँ और रात्रि के अंकिार का भी प्रकाशक हूँ। म ैप्रकाश और अंकिार दोनों को जानता हूँ। देखो-आज सुबह जब तुम उठे तो क्या बजेथे? 6 बजेथे। सुबह के 6 बजे को फकसने े जाना? 6 बजेकाल में म ैआत्मा था फक नहीं? था। तभी तो 6 बजेको जाना। उस समय उठा इसका अनुभव फकया। भैया! यहाँपर साहहत्य का कथन नहीं होता। यहा ँपर तो ब्रह्म सूिों एवं चारों वेदों के जो भाव तनकलते हैं, उसका तनरूपण एवं सािात्कार कराया जा रहा है। 6 बजे ेवाले काल को म ैआत्मा न होता तो कौन देखता। फफर 7 बजे

वाला काल आया और चला गया। फफर 8 बजेवाला काल 10, 11 काल ि◌ड़िाड़ आया और चला गया। काल वेग बड़ा र्वलिण है। अत्यंत वेग वाला है। वतमिान भूत हो रहा है और भर्वष्य ि◌ण-प्रततिण वतमिान होता जा रहा है। वाणी की ताकत नहीं ◌ंफक इस वेग को अमभव्यक्त कर सके फक इस काल की फकतनी गतत (स्पीड) है। यह नहीं ◌ंकहा जा सकता फक इसका वेग फकतना है? र्वज्ञान बड़ा वेगशाली राकेट का तनमाणि फकया है। रूस और अमेररका क्या-क्या र्वज्ञापन करते हैं, लाखों मील की स्पीड बतातेहैं। परन्द्तु काल भगवान के सामने सबों की गतत ि◌ीमी ही है। काल जो सबको खाता है, उसको महाकाल भगवान आत्मा म ◌ैंखाता हूँ।

जो कालहु कर काल भयंकर। वरनत उरा सारदा ि◌ंकर ।।

तो मनैं ◌े7 बजे ◌ेवाले काल को खाया। 9, 10, 11 बजनेवाले कालों को खाया, 6 बजेशाम वाले काल को खाऊँगा, फफर आत्मा कालातीत कहलाता है।

परर् प्रकिा रूप ददन राती। नदहं ◌ंकछु चदहय ददया घृत बाती ।।

यहा ◌ूँदीपक जलानेकी जरूरत नहीं ◌ंहै। सबका प्रकाश 'म'◌ैं आत्मा हूँ। ज्ञान दीपक सािन द्वारा जो ज्ञान प्रातत फकया जाय वह जब तक परम प्रकाश रूपी भप्क्त को न प्रातत कर ले-अिूरा है। परम प्रकाश भगवान आत्मा धचंतामर्ण है। तो धचंतामाणि क्या है? महारामायण (योगवामशष्ठ) के तनवाणि प्रकरण में जब श्री गुरुदेव वमशष्ठ जी महाराज भगवान राम को आत्मा का स्वरूप बता रहे थे, वहाूँबतलाते हैं फक आत्म तत्व धचंतामर्ण हैं। धचंतामर्ण को प्जस रूप में देखना चाहते हो उसी रूप में हदखाई देता है। यहद अपने आपको साढे तीन हाथ का मानतेहो तो उसे भगवान आत्मा साढे तीन हाथ का ही है, ऐसा हदखता है। जो अपने आपको जीव मानता है उसे व्यापक ब्रह्म, ब्रह्मा से तुण पयन्द्ति अपना ही स्वरूप हदखता है, क्योंफक भगवान आत्मा धचंतामर्ण है।

रार् भगनत धचंतार्णण सुंदर। बसइ गरुड़ जाके उर अंतर ।।

नारद जी भप्क्त सिू में बतलाते हैं फक भगवान की भप्क्त, महात्माओं(संतों) और भगवान की कृपा से ममलती है। नारद भप्क्त सिू में कहा गया है फक जो भप्क्त है, उसे प्रातत करनेके मलए क्या सािन है?

रुख्ुय तस्तु र्हत्कृपयैव भगवत्कृपा लेिाद्वा।
र्हत्सङ्गस्तु दुलुभमोऽगम्योऽर्ोघश्च । लभ्यतेऽवप तत्कृपयैव ।।

(ना.भ.सू.◌ू38, 39, 40)

संतों महापुरुषों का संग, बड़ा ही दुलुभि एवं अगम्य होता है और यहद प्रातत हो जाय तो अमोघ होता है। लभ्यतेऽर्प तत्कृपयैव- भगवान की जब कृपा होती है तभी वे संत ममलतेहैं, प्जनकी कृपा से भगवान की धचंतामर्ण रूपी भप्क्त प्रातत होती है।

संत वविुद्ध भर्लदहं ापरर तेही। धचतवदहं ारार् कृपा करर जेही ।।

का भाव लग गया न? तो फफर उन संतों के प्रतत हमारा क्या भाव होना चाहहये प्जन संतों की कृपा से भप्क्त (आत्म पद) ममलता है? तो कहते हैं-

तन्स्स्तझजने भेदाभावात् ्।।

(ना.भ.सू. 41)

उस संत में और भगवान में भेद का अभाव रहता है। यानी उस संत के प्रतत हमारे हृदय में जब नारायण भाव होगा तभी हमारी आत्मा का कल्याण होगा। आत्म कल्याण नर से नहीं ंहोता। नर बेचारा नारायण तक क्या पहुुँचाएगा- खुद ही जो गरीब है वह क्या अमीर बनाएगा। नारायण से ही नारायण ममलतेहैं और नारायण, नारायण से ही ममलते हैं। जीव बेचारे की क्या पहुुँच है जो फक स्वयं गरीबी ढो रहा है। नारायण, नारायण को ही ममलेगा।

तदेव साध्यतांतदेवसाध्यतार् ्।।

(नाभसू 42)

भगवत्प्राप्तत के मलए अगर सािन करना है तो संतों के ममलने का सािन करो। संतों को ही सािो प्जसकी कृपा से भगवान आत्मा का दशनि होता है। सािन करना है तो संत दशनि का सािन करो-भगवान तो तुम स्वयं ही हो। जो आत्मा सव िका सव िहै, उसको सािन से कैसे प्रातत करोगे? इसमलए फकसी महान पुरुष की शरण में जानेका सािन करो। प्जसकी शरण में जाने से, जो कृपा करके, करुणा करके भगवान को प्रातत करा देते हैं। महान पुरुषों की आत्मतत्व को लखाने की प्रफक्रया र्वमभन्द्न र्वमभन्द्न प्रकार की होती है। वे प्जज्ञासुओंको करुणा करके आत्म पद, कैवल्य पद, तनवाणि पद अथात्ि्स्वतंभिप्क्त प्रदान करते हैं। यही स्वतंभिप्क्त का स्वरूप है। फफर देखो- भगवान श्रीराम के राज्यामभषेक के अवसर पर चारों वेद भगवान के दशनि हेतु गये थे। वे बन्द्दी रूप से भगवान की स्तुतत करते हैं-

जेज्ञान र्ान ववरि् तब भय हरणण भन्क्त न आदरी ।
ते पाई सुर दुलुभम पदादवप पतत हर् देखत हरी ।।

(रामायण)

जो मानेहुए ज्ञान के भाव में उन्द्मि होकर भगवन् ्! आपकी भवहरर्ण भप्क्त का आदर नहीं ंकरते, उनका सुरदुलुभि पद तनर्वकिल्पावस्था को पाकर भी पतन होतेदेखा है। अहंब्रह्माप्स्म- म ैंब्रह्म हूुँ, यह माना हुआ ज्ञान है फक जाना हुआ। अब भवहरर्ण भप्क्त क्या है? अरे, जहाुँपर अहुँ ब्रह्माप्स्म (म ैंब्रह्म हूुँ) इस अज्ञान नाशक माने े

 हुए ज्ञान का भी नाश हो जाता है वही भवहरर्ण भप्क्त (आत्म पद) है। आत्म देश में संसार नाम की कोई चीज नहीं ं

है। आत्म पद भैया ! वह पद है, प्जसमें और कोई र्वकार नहीं। शुद्ितत्व 'म'ै का 'म'ै यही भवहरर्ण भप्क्त है। जो इसका समुधचत आदर नहीं ंकरते, उसको देव दुलुभि पद को प्रातत करके पतन होतेदेखा है। देखो-तुम्हें क्या चीज समझा दूँ, तृपूतत नहीं ंहोती यार! अघाते नहींहै।

बहूनां जननार्नते ज्ञानवानर्ांप्रपद्यते।
वासुदेवः सवभमर्नत स हार्त्ा सुदुलुभमः ।।

(गीता 7 - 19)

बहुनां ंजन्मनां अन्द्ते जन्मतन-ज्ञानवान् ्माम् ्आत्मानंप्रपद्यते। नीचेका चरण इसकी फलश्रुतत है। बहुत जन्मों के अन्द्त वाले जन्म में ज्ञानवान मुझ आत्मा को प्रातत करता है। अन्द्ते जन्मतन-आगे अब उसको जन्म लेना नहींहै। उस ज्ञानवान का वह आर्खरी जन्म होगा। अन्द्ते ेजन्मतन ज्ञानवान् ्भवतत अथवा ज्ञानवान् ्माम् ् आत्मानंप्रपद्यते-अन्द्त वाले जन्म में ज्ञानवान होता है अथवा ज्ञानवान मुझ आत्म को प्रातत होता है? यहद बहुत जन्मों के अन्द्त वाले जन्म में ज्ञानवान होता है तो फफर प्रातत कौन से जन्म में करेगा और त्रबना मुझ आत्मा को जाने, जन्मों का अन्द्त नहीं ंहोता। जो-जो ज्ञानवान है वह अपनेआप को क्या लक्ष्य करता है, उसका लक्ष्य क्या है? अहं ब्रह्माप्स्म में ब्रह्म हूँ इस प्रकार की िारणा वाला ज्ञानवान कहलाता है। म ैंब्रह्म हूँ, इस िारणा का पुरुष ज्ञानवान हुआ। तो फफर जन्म का अन्द्त नहीं हुआ। भगवान के कथन से मालूम होता है फक जब वह अपने आप 'म'ै आत्मा को प्रातत कर लेता है तभी उसके जन्मों का अन्द्त होता है।

'वासुदेवः सवमिमतत स महात्मा सुदुलुभिः' वासुदेव सवमिमतत, इस मसद्ाांति पद में प्स्थत महात्मा संसार में दुलुभि हैं। समझो, प्रत्येक र्वषय के तनश्चयात्मक भाव को प्रातत करने के मलए चारों प्रमाणों से जो प्रमार्णत हो वही वास्तर्वक भाव होगा।

प्रत्यषेणानुर्ानेन ननगरे्नात्र्संवंवदा ।
आद्यनतवतसद् ज्ञात्वा ननःसंगी ववचरेददह ।।

प्रत्यि, अनुमान, तनगम और स्वानुभूतत, इन चारों प्रमाणों से जो मसद्ि हो वही वास्तर्वक भाव होगा।
सारांश यह है फक इस आत्म पद, कैवल्य पद, भप्क्त स्वरूप, परम प्रकाश देश में न परा, न अपरा भप्क्त, न वानरी न माजारिी िारणा, न व्यक्त, न अव्यक्त उपासना। सूय िदेश में प्जस प्रकार सूय िही है, सूय िके अततररक्त दूसूरी सिा ही नहीं है, इसी प्रकार मुझ आत्मदेश में मसवाय मुझ आत्मा भगवान 'म'ै के दूसूरे का अप्स्तत्व ही नहीं है। यही कृत कृत्य पद है, कैवल्य पद हैं। भगवान पतंजमल योग दशनि में दशायिे हैं-

वविेष दभिनम आत्र्भाव भावना ववननवृविः ।।

(योग.सू. कैवल्य पाद)

महर्ष िपतंजमल कहतेहैं फक स्वरूप का पूण िबिो (अनुभव) हो जानेपर आत्मभाव की भावना की भी तनवृरि् हो जाती है। आत्मभाव की भावना क्या है? अहं ब्रह्माप्स्म - म ैंब्रह्म हूूँ, कूटस्थ हूूँ, सिी हूूँ, अजर-अमर, अखण्ड, अपार, तनममल, तनरञ्जन, तनर्वकार हूूँ इत्याहद। म ैंआत्मा पर इस प्रकार की भावना की जाती है। जब स्वरूप भगवान आत्मा 'म'ैं का बिो हो जाता है तब शुद्ध तत्व 'म'ैं का 'म'ैं रह जाता है।

श्रवणं ंकीतनंम ववष्णोः स्ररणं ंपादसेवनर् ्।
अचनंम वनदनं दास्यंसख्यर्ात्र्ननवेदनर् ्।।

इस प्रकार जब प्रह्लाद ने हहरण्यकश्यप से कहा तो हहरण्यकश्यप क्रिो से लाल हो गया और क्रिोतुर हो कहता है फक इस छद्मवेशी ब्राह्मण ने मेरे पिु प्रह्लाद को त्रबगाड़ हदया है।

ब्रह्मबनधो ककरे्ततेववपषं श्रयतासता ।
असारं ग्रादहतो बालो र्ार्नादृत्य दुरुर्तेम े।।

(श्रीमद् भागवत 7-5-26)

गुरु पिु शण्डामकि को कहता है फक तुम सब ब्राह्मणों ने पिु को त्रबगाड़ हदया है। गुरुपि शण्डामकि ने कहा फक हे राजन् ्! इसकी बुद्धि को हम लोगों ने नहीं ंत्रबगाड़ा है, हमें तो ज्ञान क्या है एवं भप्क्त क्या है यह भी पता नहीं। इसकी बुद्धि नैसधगकि है। सदैव मन ही मन यह ऐसा ही गुनगुनाता रहता है, न मालूम कौन है फक जो अंदर ही अंदर इसकी बुद्धि को त्रबगाड़ रहा है।

न र्त्प्रणीतं ंन परप्रणीतं ंसुतुो वदत्येष तवेनद्रित्रो ।
नैसधगकमीयं र्नतरस्य राजन्ननयच्छ र्नयुं कददाः स्र् र्ा नः ।।

(श्रीमद् भागवत 7.5.28)

हहरण्यकश्यप गरज कर बोलता है फक ऐ दबुद्धि बालक। गुरु पिु क्या कहते ेहैं? तेरी बुद्धि को तेरे हदमाग को कौन त्रबगाड़ रहा है? तो महात्मा प्रह्लाद कहते ेहैं-

र्नतन मकृष्णे परतः स्वतो वा भर्थोऽभभपद्येत गृहव्रतानार् ्।
अदानतगोभभवविमतां तभर्स्रं ंपुनः पुनश्चववतमचवणमानार् ्।।

(श्रीमद् भागवत 7.5.30)

न ते त्रबदु: स्वाथगमनतं ंदह ववष्णुं ंदुरुाया ये बदहरथ मरानननः ।
अनधा यथानयैरुपनीयराना वाचीतनत्यारुदान्म्न बद्धाः ।।

(श्रीमद् भागवत 7.5.31)

नैषांर्नतस्तावदुरुक्रराङ्नर स्पृित्यनथापमगरो यदथःम ।
हीयसां पादरजोऽभभषेकं ननन्ष्कछचनानां न वृणीत यावत् ्।।

(श्रीमद् भागवत 7.5.32)

प्जनकी बुद्धि भगवान श्रीकृष्ण आत्मा में संलग्न नहीं ंहै, जो गृहव्रती अथात्ि्जो दारासक्त, पुिासक्त, र्विासक्त है, वे ेउन पशुओं के समान हैं जो चबाये हुए को चबातेहैं। उनके जीवन में जो कुछ भी शुभाशुभ घटनायें हो चुकी हैं, उन्द्हींका कथन, वे अपनेसमाज में, ममिवगों में एवं जहाँकहींभी बैठते हैं, करते हैं। र्वद्वानों द्वारा सकाम कम िकरनेकी वाणी को सुनकर जो परम स्वाथ िभगवान र्वष्णु को नहींजानते, उनके र्वमुख हैं ऐसे दुराशयी अथित् ्इहलोक परलोक के पदाथों को प्रातत करनेकी आशा से सकाम कम िकरने ेवाले हैं, उनकी बुद्धि पहले की अपेिा और भी दृढ़तापूवकि सकाम कम िकरने ेमें संलग्न हो जाती हैं। प्जस प्रकार अंिे को अंिा रास्तेपर ले जाय उसी प्रकार अनुभव शून्य संसारी र्वद्वानों की सकाम कम िकरनेकी वाणी रूपी रस्सी द्वारा अज्ञानी संसारी जीवों की बुद्धि बंिी रहती है। उनकी बुद्धि इतनी स्थूल हो बाती है फक सूक्ष्म तत्व भगवान आत्मा का र्वचार करने में समथ िनहीं हो सकती।

यावत् ्ननन्ष्कछचनानां हीयसांपादरजोऽभभषेकं न वृणीत तावत् ्।।

"उरुक्रमाङतघ्र भगवचचरणंन स्पृशृतत' जब तक तनष्कञ्चन वीतराग महान पुरुषों के चरण कमलों की वह रज का अमभषेक नहींहो जाता तब तक भगवान के चरणकमलों का वह स्पश िनहींकर सकता। भगवान की भवहरीत भप्क्त नहींप्रातत कर सकता। इससे यह स्पष्ट हो जाता है फक चाहे साकार ब्रा का दशनि हो या तनराकार व्यापक ब्रह्म का, संत कृपा ही सािन है। संत कृपा पर ही भगवत् ्दशनि अवलप्म्बत है।

हहरण्यकश्यप ने प्रह्लाद की इस प्रकार की भप्क्तयुक्त वाणी को सुना तो वह क्रोि से उन्द्मत हो गया और प्रह्लाद को गोद से उठाकर नीचे पटक हदया। क्रोि के आवेश में सेवकों से कहा- इस कुलाङ्गार को ले जाओ।

वध्यताराश्वयं वध्यो ननःसारयत नैऋमताः ।।

(श्रीमद् भागवत 7 - 5 - 34)

सवैरुपायैहमनतव्यः संभोजियनासनैः ।

सुहुन्ल्लङ्गधरः ित्रुरुनेमदुमष्टभर्वेन्नद्रयर् ्।।

(श्रीमद् भागवत 7-5-38)

ले जाओ इसे, मार डालो, र्वष दे दो, जो फक इस छोटी-सी उम्र में हमारे शिपुि की बात कर रहा है। यह मेरा पुि नहीं, शिु है। जाओ ! इसे पहाड़ पर से धगरा दो। जब शरीर में कहीं रोग हो जाये और उससे सारे अंग की हातन की आशंका हो तो उस भाग को काटकर अलग कर देना चाहहये। शरीर का फोडा सारे शरीर को नष्ट कर देता है, इसमलए उस अंग को काटकर फेंक देना चाहहये, क्योंफक उसे काट देनेसे शेषे शरीर तो सुख से जी सकता है। यह स्वजन का बाना पहनकर कोई मेरा शिुही आया है। इसमलए तुरंत इसे ले जाओ और समुर में डुबा दो, आग में जला दो। हहरण्यकश्यप इस तरह से प्रलाप करने ेलगा। दैत्यगण द्वारा प्रह्लाद, जो अभी केवल 7 वष िका है-को मारनेके सभी उपाय फकये गये, परन्द्तु प्रह्लाद का कुछ भी न त्रबगाड़ सके। वे क्रोिपूवकि प्रह्लाद को नाना प्रकार से प्रताडड़त फकये, शूलू से मारने लगे, परन्द्तुप्रह्लाद अडडग रहे। मन, वाणी से अगोचर सवात्मिा समस्त शप्क्तयों के आिार परब्रह्म में प्जसका धचि अडडग है उसके सामने कौन-सी शप्क्त है जो फक उसका कुछ भी अहहत कर सके। दैत्यों के सभी प्रयास वैसे ही तनष्फल हो गए जैसे- भाग्यहीनों के मनोरथ। प्रह्लाद को मतवाले हाथी से कुचलवाया, र्वषिर सपों से डसवाया, कृत्या रािसी द्वारा भी वि करने ेका प्रयत्न फकया गया, माया से अंिकार पैदाकर प्रह्लाद को अंिकार में रखा गया, र्वष हदया गया, दहकती आग में डाल हदया गया, समुर में फेंक हदया गया, परन्द्तु फकसी भी उपाय से तनष्पाप प्रह्लाद का बाल बांका न हुआ। प्रह्लाद की मृतूयु न हुई। कारण, क्यों मृतूयु न हुई? मृतूयुकैसे हो? अरे ! प्जसकी दृष्ष्ट में मृतूयु भी भगवान आत्मा है तो मृतूयु कैसे हो? आत्म प्जज्ञासुओं! आत्म तत्व का फकतना प्रभाव है, यह फकतना सुदृढ़ कवच है। इसके सामने एटम बम, हाइड्रोजन बम सभी फेल हो जाते हैं मसफि आँख बदलनेकी बात है। भगवान आत्मा को जानना ब्राह्मी दृष्ष्ट प्रातत कर लेना, राग-द्वेष की आखूँों को बदल देना है। अरे! करना कुछ नहीं है, केवल दृष्ष्ट ही बदलनी है। देखो-

दो बालक-बामलका बचपन से एक ही क्लास के र्वद्याथी हैं। साथ-साथ पढ़ते हैं। एक ही गुरु के पास दोनों मशिा प्रातत कर रहे हैं। प्रायमरी क्लास में साथ पढ़े, फफर हाई स्कूल में साथ ही पढ़े और कॉलेज में भी साथ-साथ ही पढ़े। इस तरह वयस्क होते एक-दूसूरे को आपस में फकस दृष्ष्ट से देखते रहे? भाई और बहन के रूप में। अब कुछ समय बाद उनमें पे्रेम हो गया और शादी हो गई। भांवर पड़ते ही कौन-सा भाव उहदत हो गया? क्या वह पहले वाला भाई-बहन का भाव रखते हैं? नहीं, ं वह पुरानी दृष्ष्ट नहींरही, वह बदल गई और अब पतत-पत्नी की दृष्ष्ट हो गई। एक-दूसूरे को पतत-पत्नी देखने लगे, दृष्ष्ट बदल गई। शादी होते ही पतत-पत्नी का भाव आ जाता है। यद्यर्प उनका शरीर तथा रूप रंग वही, परन्द्तु दृष्ष्ट बदल गई। अज्ञानी की दृष्ष्ट में यह संसार है। भेदवाहदयों ने संसार दृष्ष्ट दृढ़ कर हदया है। तू ूछोटा है, वह बड़ा है। तू संसारी है, बद्ि है, जीव है, तू कैसे ईश्वर तत्व होगा-परन्द्तु बोिवान, भगवान वासुदेव आत्मतत्व ही देखता है, सभी भगवान है। आप सहहत सबको भगवान आत्मा जानता है। बस ! इतना ही तो करना है और क्या-

गजेऽवप ववष्णुभुजमगेऽवप ववष्णुजुलेमऽवप ववष्णुजुर्धध्वलनेऽवप ववष्णु: ।
त्वनयन्स्थतो दैत्यर्नयन्स्थतश्च ववष्णुं ंत्रबना दैत्यगणोऽवप नान्स्त ।।

यही महात्मा प्रह्लाद की भगवद्धारणा थी। हाथी में भगवान, हाथी स्वयं भगवान। सप िमें भगवान, सप ि स्वयंभगवान, जल में भगवान, जल स्वयं भगवान, अप्ग्न में भगवान, अप्ग्न स्वयं भगवान। ब्रह्मा से लेकर तृण पयन्दि सारा चराचर भगवान है। दैत्यगणों! तुम्हारे अंदर भगवान और मेरे अंदा भगवान, तुम स्वयंभगवान और म ैंस्वयंभगवान। भगवान र्वष्णु से मभन्द्न कुछ भी नहीं। स्वामी जी ! हा ूँजी, बात तो आपनेठीक ही कही फक सब कुछ भगवान है। भाई ! तो खराबी कहा ूँरह गई, इसमें शंका की क्या बात है? यहद तुम्हें कोई शंका हो तो कहो। नहीं,ं स्वामी जी। ऐसी कोई बात नहीं ंहै। बताओ, घबराने की क्या बात है, घबरातेक्यों हो? जब स्वामी जी ! सभी भगवान है ऐसी दृष्ट हो जायेगी तो फफर संसार में व्यवहार कैसे चलेगा? भैया। यह तो तुम्हारी बड़ी भारी शंका है। हम इसका मतलब बतलाय?ें अभी जो तुम व्यवहार कर रहे हो-चला रहे हो वह नर होकर व्यवहार कर रहे हो या नारायण होकर ? अभी जो व्यवहार कर रहे हो वह नारायण दृष्ट से कर रहे हो या नर दृष्ट से? चुप क्यों हो? बोलो ना यार। नर दृष्ट से कर रहे हैं। यहद वही व्यवहार तुम नारायण दृष्ट से करोगे तो क्या अंतर पड़ेगा? अभी तक नर दृष्ट से व्यवहार करते रहे हो अभी उसी व्यवहार को नारायण दृष्ट से करो। म ैंभी भगवान और वह भी भगवान। देखो, माता-र्पता की सेवा कैसे करते हो- नर होकर या पशु ुहोकर? तुम कौन हो? मनुष्य। और तुम्हारे माता-र्पता कौन हैं? वे भी मनुष्य हैं। मनुष्य होकर ही मनुष्य की सेवा कर रहे हो और सभी यही कहते हैं। माता-र्पता को भगवान जानकर सेवा करना और अपनेको भी भगवान ही जानना, यह भगवान द्वारा भगवान की सेवा हुई। जब तक तुम्हारी दृष्ट में राग-द्वेष है, हृदय र्वकारों से भरा हुआ है तब तक आवागमन का चक्र चलता ही रहेगा, बंद नहीं होगा। अचछा, देखो-अभी तुम्हारी शंका का समिाान हो जायेगा। अंग्रेजी शधद गॉड से क्या बना- ईश्वर और इसी को उलट दो तो फफर क्या होगा-डॉग ! डॉग माने कुिा। मसफि दृष्ट उलटनी है, पशु से भगवान हो जाओगे।

एक कहींका जमींदार जो काफी िनवान था, शीशमहल बनवाया। दीवाल शीशे ेका, खंभे भी शीशे ेके, फश ि भी शीशे ेका, छत भी शीशे ेकी, सभी शीशे ेका ही बनवाया। फफर चारों तरफ र्खड़की दरवाजे ेसब मोटे-मोटे काचूँ के बनवाये। इस आलीशान मकान में जाकर वह बीचोंबीच खड़ा हो गया और क्या देखता है फक चारों तरफ उसका ही प्रततत्रबम्ब और प्रततत्रबंबं के प्रततत्रबंबं, हजारों की तादाद में अपनेआपको ही देखता है। मकान मामलक गद्गद होकर प्रसन्द्न हो जाता है। प्ज्िर देखो, अपना ही रूप देखा। जोर से हूँसता है तो उसकी प्रततध्वतन चारों तरफ गुंजायमान हो जाती है। उसके कान में यह ध्वतन श्री सुनाई पडती है। तो कहता है फक यह मेरी ही आवाज है। मतलब सब ओर म ैंही म ैंहूँ।

न्जधर देखता हूँ जहाँदेखता हूँ। र् ैंअपनी ही ताब और िां ंदेखता हूँ।

अभी उसी महल में उसका कुिा जाता है तो क्या देखता है फक चारों तरफ हजारों कुिे हैं, तो उसकी बुद्धि में ये सब अलग-अलग कुिे हदखाई देते हैं। वह अपनेसे मभन्द्न उन्द्हें समझता है। जहाँ उसकी बुद्धि में यह बात

आई फक वे सब उससे मभन्द्न हैं तो उसके मन में राग-द्वेष का भाव जागृतृ हुआ और लगा मूँकने। उसी के भूकने ेकी प्रततध्वतन गुंजायमान हो गई। इस प्रकार शधदों की गाईूँ (प्रततध्वतन) से महल भर गया और क्रुिा भूँकते–ेभकैंतेमर गया। यह संसार शीशमहल है। अपने स्वरूप से ही राग-द्वेष दृष्ट के कारण, मभन्द्न- मभन्द्न देखता है और यह नहीं देखता फक म ैंहूूँ, म ैंही म ैंहूूँ। मुझ आत्मा से मभन्द्न एक भी कण नहीं ंहै। वह अपनेस्वरूप को ही मभन्द्न मानकर पशु ु बुद्धि के कारण नाना प्रकार के दु:ख को प्रातत होता है। तयारे ! तू श्वान दृष्ट छोड़ दे। गाडूँ शधद के मानेईश्वर है, सब अपना स्वरूप है, वरना डाग, नानात्व (पशु दृष्ट) से स्वयंकष्ट पायेगा। अरे बाप रे! कहा ूँम ैंमनुष्य, जीव और कहा ूँईश्वर। एकाकी दृष्ट ईश्वर दृष्ट है और नानात्व दृष्ट श्वान दृष्ट है। कम इन दी वल्ड िलाइक दी मास्टर जी, ओ, डी-गॉड बट नॉट डी, ओ जी-डॉग।

कहने ेका मतलब यह है फक सारे वंश्व को भगवदृष्ट से देखें, भगवान समझें, जानै-सव िको एकत्व दृष्ट, आत्म दृष्ट, से जाने। पुराण, उपतनषद्, र्ता, भागवत, रामायण सभी तारों से यही आवाज आ रही है। महात्मा प्रह्लाद सात्व दृष्ट बदलने के मलए कह रहे हैं। मृतूयु प्रह्लाद का क्या कर सकेगी, अबांके प्रह्लाद की दृष्ट में मृतूयु भी भगवान है। प्रह्लाद का कुछ न त्रबगड़ा। स्वरूप आत्मा का ध्यान करते हुए अचल रहा। राणा ने मीरा को हलाहल (ए) पीने को हदया और उसे मीरा पी गई, परन्द्तु उस वंष को पीने से मीरा श्री नहीं ंहुआ। यह तो सािात् ् धगरिर का ध्यान करके पी गई। कुछ बाल बाकूँा भी न हुआ। हमें इसका खूब तजुबा िहै। हम पर तो बड़ी-बड़ी मुसीबत आई हैं और रहती हैं। प्रचार काय िमें समय-समय पर बड़ी-बड़ी बािायें आती हैं, परन्द्तु कुछ नहीं ंत्रबगड़ा। तुम भी परीिा करके देखो। यह ब्राह्मी दृष्ट बड़ी सुंदर है। तुम जब अपने आपको भगवान आत्मा जानोगे, अपने 'म'ैं का अनुभव करोगे तो तुम्हें 'म'ैं ही 'म'ैं हदखेगा, नारायण ही नारायण तुम्हें भासेगा।

स एवेद ँ् सर्व्म ्- यह सब वही है।

अहरे्वेद् ँ् सवर्म- यह सब र् ैंही हूँ।

आत्रै्वैद् ँ् सर्व्म ्- यह सब आत्र्ा है।

(छ..उ .7-25)

महहष िउद्दालक छान्द्दोग्योपतनषद् में अपने पिु श्वेतकेतु को समझा रहे हैं। आत्मैवेद् ँ् सवमिमतत ।

यथा सौम्यैकेन रृ्नृत्पण्डेने सवं ंरृ्नृर्यंववज्ञात् ँ् स्याद्वाचारम्भणं ं।

ववकारोनार्धेर्य्रृ्विकेल्र्येवसत्यर््।। ्

(छा.उ. 6-1-4)

प्जस प्रकार ममट्टी के बने हुए एक घड़े ेको जान लेनेसे ममट्टी के बने हुए समस्त घटाहदक पदाथों का ज्ञान हो जाता है फक ये सब पदाथ िममट्टी ही है। नाम, रूप तो केवल वाणी का वंकार मिा है। उसी प्रकार अपने स्वरूप आत्मा को जान लो फफर अपनेआप का ज्ञान हो जानेसे सब ओर अपना ही स्वरूप हदखाई देगा। सारा

 संसार भगवान हदखाई देगा। व्यवहार तो चल ही रहा है। अभी तक जीव मानकर व्यवहार पालन करते थे ेऔर अब
भगवान आत्मा जानकर व्यवहार पालन करो।

आये कछु हष मनहीं,ं जाये कछु िोक नहीं।
बड़े ेननद्वमनद्व हूँ, सरि्ने की बात है ।
देह नेह घेरे नहीं, लक्ष्मी के चेरे नहीं,ं
सुत वननतादद ऱेरे नहीं,ं हरर सो कछु वसात है ।।
लोक की रीनत है, ऱानने की प्रनत है,
हार है न जीत है, जानत है न पानत है ।।
ननभयम यही ज्ञान है, सत्य भगवान है,
और कहा ज्ञानी के सींग जर् जात है ।।

लोक रीतत तो चलती ही रहेगी, चाहे अपनेको जीव मानों या ब्रह्म। जीव मानने ेसे दुःख भोगो और ब्रह्म तो हो ही-आनंद ही आनंद है। यह हर तरफ से मसद्ध है। ज्ञान प्रातत करने ेपर ज्ञानी के सींग नहीं ंजम जाते। तो कहर तरफ से यह है फक प्रह्लाद को फकसी तरह से कोई हातन न हुई। प्रह्लाद को मारने की साय िकोमशश ेंव्यथ िगई और प्रह्लाद न मरे। अन्द्ततोगत्वा जब हहरण्यकश्यप ने देखा फक यह फकसी भी उपाय से नहीं ंमरता तो एक हदन स्वयंहाथ में खड्ग लेकर क्रोि से लाल हो गरज कर कहता है फक देखता हूँ, अब तेरा ईश्वर कहा ँूहै? म ैंदेख ूँूफक तू कैसे नहीं मरता। सामने गुरु पुि शण्डामकि खड़े ेथे,े उन्द्होंने हहरण्यकश्यप से कहा फक राजन् ्!

इर् ंतु पौिवरुमणस्य बद्धवा ननधेदह भीतो न पलायतेयथा ।
बुद्धधश्च पुंसो वयसाऽऽयसेमवया यावद् गुरुभागमवम आगभर्ष्यनत ।।

(श्रीमद् भा. 7 - 5 - 50)

अभी इसे एक बार पुनः मेरी पाठशाला में भेज दीप्जये। म ैंइसके सुिार के मलये भरसक कोमशश करूँगा। आगे यहद यह सुिर जाता है तो ठीक है नहीं तो जैसा कुछ इसका भाग्य होगा, देखा जायेगा। यह छोटा बालक है ऐसा न हो फक डर के मारे कहीं भाग जाये, अतः अभी इसे वरुणपाश में बाँूकर रखे रहो जब तक फक दैत्यकुल के आचाय िहमारे र्पता भृगु (श्री शुक्राचाय िजी) न आ जाय।ें हहरण्यकश्यप ने प्रह्लाद को गुरुपुि शण्डामाकि को दे हदया और प्रह्लाद फफर पाठशाला में आ गये। अभी तक तो प्रह्लाद स्वयं भगवान में लीन रहतेथे, भगवतमय प्स्थतत में थे,े अब पाठशाला के र्वद्याधथयों को एकि करके उन सबको भी भागवत िम िका उपदेश करने लगे। स्कूल के र्वद्याधथयों में आत्मतत्व का डंका बजाने लगे। वे इस प्रकार संबोिन करनेलगे-

कौर्ार आचरेत्प्राज्ञो धर्ानमभागवताननह ।
दुलभंम ंर्ानुषं ंजनर् तदप्यध्रुवर्थदमर् ्।।

(7-6-1)

यथा दह पुरुषस्येह ववष्णोः पादोपसपणमर्
् यदेष सवभूमतूानांवप्रय आत्रे्श्वरः सुहुत्
्।। (7-6-2)

सुखुरै्नै्नद्रयकं दैत्या देहयोगेन देदहनार् ्।
सवत्रम लभ्यतेदैवाद्यथा दु्ःखर्यत्नतः ।।

(7 - 6 - 3)

मेरे साधथयों! यह मानव शरीर बड़े ेभाग्य से ममला है। र्वद्याधथयिों की सभा एकि करके महात्मा प्रह्लाद कह रहे हैं फक हमें जानना चाहहये फक हमारा कतव्यि क्या है? मनुष्य जन्म पाकर हम सबको क्या करना चाहहये? भगवद्मि िक्या है? और उसका क्या स्वरूप है? समझो भागवत िम िका मूलभाव-यही समझना है फक ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्दि्त सब भगवान है। वे ेअपनेसहपाठी बालकों को 'सव िको भगवान जानना' ऐसा उपदेश दे रहे हैं। भावगत िम िसवि एकि भाव की प्रे्रणा देता है। मानव शरीर र्वषय भोग के मलए नहींहै। हम लोग र्वषय प्रातत करने ेके मलए पैदा नहीं ंहुुए हैं।

सुखुरै्नै्नद्रयकं दैत्या देहयोगेन देदहनार् ्।
सवत्रम लभ्यतेदैवाद्यथा दु्ःखर्यत्नतः ।।

(7 - 6 - 3)

यह सब र्वषय भोग त्रबना प्रयास के ही प्रातत हैं, प्रारधिानुसार ये सब कुछ ममल जाता है। देखतेभी हैं फक बड़े–बड़े ेराजाओं के यहााँकुिों की सेवा में एक नहीं,ं दो-दो, चार-चार नौकर लगे रहतेहैं, जो फक उन्दहें स्वचछ रखते हैं, स्नान कराते हैं, 40-50 हजार की मोटर गाड़ी में बैठाकर कुिों को सैर करानेले जाते हैं-सुंदर सुगंधित साबूनों से नहलातेहैं और महीन मुलायम तौमलये से पोंछतेहैं, मखमली गद्दों में सुलाते हैं, सुगंधित इि आहद उनके शरीर में लगाते हैं। बताओ, वे कुिे कौन-सा सिान फकए हैं? यह भी उसका भोग ही तो है और मानव समाज में कोई-कोई रात-हदन मेहनत करके भी अपना पेट नहीं ंभर पाते। भैया ! तो फफर सुख या दु्ःख सभी स्वयंप्रातत हैं-करो या न करो, दु्ःख हो या सुख जो तुम्हें ममलना है वह तुम्हें अवश्य ममलेगा। तुम जहा ाँजाओगे तुम्हारा भोग त्रबना प्रयास ही सवि प्रातत होगा। मनुष्य को 100 वष िकी अवस्था ममली है। चलो, देखें-उसका बूँटवारा करें, 50 वष ितो मसफि सोना बनानेमें व्यतीत हो जाता है। हा ाँभाई! सोना क्यों न बनाय–ें महंगाई जो है।

एक वक्त की बात है। (पू. श्री स्वामी जी अपना अनुभव बता रहे हैं। उस समय आप अविूत वेश में रहते े थे। करीब 1941-42 की बात है।) भ्रमण करते हुुए हृर्षकेश से पैदल चलकर रात को भीमगोड़ा पहुुँचे। वहााँपर कुछ और सािुओं से भेंट हुुई, सत्संग चलनेलगा। इस तरह सत्संग में रात्रि के 12 बज गये। हमनेसािुओं से कहा फक रात्रि अब अधिक हो गई है, चलो सोना बनाय ें(भाव था फक चलो र्वश्राम करें, सोय)ें। अब सोना बनाना चाहहये।

 कुहटया के बाहर गश्ती पुमलस घूम रही थी, उसनेसुना फक भीतर सािुलोग सोना बनाने ेमें लगे हैं। उसे शंका हो
गई फक यहाूँ सोना बनाया जा रहा है। यह सोना बनानेवालों का कोई धगरोह है। वह दौड़कर थाना गया और थानेदार से तनवेदन फकया फक हुजूर! अमुक कुहटया में सािु सोना बना रहे हैं। थानेदार पस्तौल, टॉच िलेकर पुमलस गाड िके साथ आकर कुहटया को चारों तरफ से घेर मलया और स्वयं टॉच िलेकर दरवाजेपर टक टक की आवाज लगानेलगा। दरवाजा खोला गया तो भड़भड़ाकर पुमलस कुटी में घुस आई और टाच िकी रोशनी से वे चारों तरफ देखने लगे फक कहा ूँपर सोना बनाया जा रहा है? जब देखा तो वहाूँपर सब नंगों से भेंट हुई। एक-एक लंगोट और एक-एक चादर। जब उनसे पूछा गया फक क्या देख रहे हो? तो थानेदार कुछ घबरा गया और कहा फक स्वामीजी ! हम लोगों को पता लगा है फक यहाूँ पर सोना बनाया जा रहा है। तो हम लोग जाचूँ करनेआये हैं फक यहा ूँपर कोई सोना बनानेवालों का धगरोह ठहरा हुआ है। हम लोग उठकर खड़े ेहो गए। मनैं कहा भैया ! देख लो और सािुओंसे कहा फक चलो शंकर बनो। वे सब इिर-उिर टाच िमारे, फफर वहाूँक्या था, जो उन्द्हें ममलता। उन्द्हें बताया फक भाई ! रात्रि अधिक हो गई थी तो हमने सािुओंसे कहा फक चलो भाई ! अब सोना बनाया जाए, अब सोना चाहहये। सुनते ेही थानेदार बड़ा लज्जित हुआ और कान्द्स्टेबल को सैकड़ों गामलयाूँ सुनाता हुआ चला गया। वह कान्द्स्टेबल कहता रहा फक हुजूर ! हम क्या जानें, बाहर से जो सुना उसका आपको ररपोटि हदया। देख लो अब-

गरज यह फक उमर का पचास वष िबीत गया सोने(नींद लेने) में, पाचूँ वष िखेलने में, पाचूँ वष िप्रायमरी, छह वष िमैहरक, तीन वष िबी.ए. और दो वष िएम.ए. करने में, इस तरह कुल इक्कीस वष ितनकल गये। अब बच गये फकतने ? उन्द्तीस वष।ि अब बाबूजी हो गए इक्कीस वष िके। श्रीमती जी का पदापणि हो गया। प्रपंच का बोझ मसर पर लाद हदया गया। भैया ! यहा ूँतो सरयूपारी लोग र्ववाह आठ साल में ही कर देते हैं। बस, आठ वष िमें ही भौररया देते हैं और फफर जय सीताराम-

अचीकर्द यो न जानानत यो न जानानत बबरमी ।
अजघा मयो न जानानत तस्ैकनया न दीयतार् ्।।

आजकल तो इसमें हरताल लगा हदया गया है, मेंट हदया गया है। क्यों नहीं,ं यहाूँके समाज को भी तो सुिरना है। हा,ूँ समय आने पर सुिरने ेआऊूँगा। फफर श्रीमती जी की उपासना के मलए-गहना, रव्य आहद-आहद। बहरहाल गीता फैल गई। अब बने बाबा और जब मुण्डी हहलने लगी तब कहते ेहैं फक यह अवसर अब अध्यात्म जानने ेका है। जब शरीर बेकाम हो गया, पचपन-साठ वष िके हो गए तो फफर भजन करेंगे, ऐसा सोचते हैं। अरे! भगवान को जानना है तो जवानी में जानो, आगे चलकर जीवन आनंदमय बीतेगा। हदल में जब तक जोश है, हदमाग में होश है तभी तक जल्दी से जल्दी आत्मतत्व का ज्ञान सम्पादन करो, प्रातत करो, समय को मत जाने दो। हा–ूँफफर व्याह करो, नौकरी, रोजगार सब कर सकते हो-आनंद से-परन्द्तु ध्यान रखो, पहहले आत्मतत्व को हामसल करो। शरीर नाशवान है, समय हाथ से मत जानेदो। बूढ़ापे में जजरि शरीर से अर्वनाशी अव्यक्त का ज्ञान कैसे प्रातत करोगे। प्रभु को, आत्मतत्व को प्रातत करने के मलए लंगोट कस लो। देखो, हम तो यही अनुभव कराते े हैं।

महात्मा प्रह्लाद र्वद्याधथयों को अनुभव कराते हैं फक यही भगवत प्ेरेम है जो हृदय को गद्गद कर आनंद से ओतप्रोत कर देता है। आत्मतत्व को जानने ेकी व्याकुलता के त्रबना, आत्म तत्व का बोि अथाित् ्भगवान आत्मा की अनुभूतत नहीं ंहोती। मन में आत्मा को जानने ेकी अमभलाषा तो करो। इस दरबार में तो प्रत्यि अनुभव कराया जाता है और अनुभव कराया ही जा रहा है। शीघ्र अनुभव करो। प्रत्यि, अभी अनुभव करो, इसी जवानी में, बुढ़ापे का इंतजार पत करो-

यथा दह पुरुषस्येह ववष्णोः पादोपसपणमर् ्।
यदेष सवभूमतूानांवप्रय आत्रेश्वरः सुहुत् ्।।

(श्रीमद् भागवत 7-6-2)

महात्मा प्रह्लाद अपने र्वद्याथी बंिुओंको सवात्मिा भगवान का बोि करा रहे हैं-

न ह्यच्युतंप्रीणयतो बह्वयासोऽसुरात्रजाः ।
आत्रत्वात् ्सवभूमतूानां भसद्धत्वाददह सवतमः ।।

(श्रीमद् भागवत 7-6-19)

अचयुत् ्जो भगवान आत्मा हैं, उन्द्हें प्रातत करने ेके मलए बहु आयासः न- अथात्ि्कोई अधिक पररश्रम नहीं है। क्योंफक, भगवान सव िकी आत्मा हैं, सवि हैं, सव िहैं, सभी में ओतप्रोत हैं और उससे ही सारा चराचर मसद्ि होता है। इसमलए आत्म तत्व को प्रातत करना चाहहये, यह थोड़ी सी प्जज्ञासा से ही प्रातत हो जाता है। अब प्रश्न होता है फक बहुत प्रयास नहीं तो थोड़ा प्रयास होगा। तो आत्म प्जज्ञासा होना, भगवान आत्मा को प्रातत करनेके मलए यही प्रयास है। अब यहा ूँपर कुछ श्रुततया ूँआई हैं-उनका भी स्वागत करें-

नायर्रात्रा प्रवचनेन लभ्यो न रे्धया न बहुना श्रुतेन ।
यरे्वैषवृणुतेुतेनलेभ्यस्तस्यैष आत्रा ववववृणुतेुतनूस्वार्ं ।।

(कठो. 3-2-24)

अयम् ्आत्मा प्रवचनेन न लभ्यः, न मेिया, न बहुना श्रुतेन-जीवन भर प्रवचन सुनते ेरहो, परन्द्तु आत्मतत्व का बोि न होगा। न ही बहुत मेिावी (िारणा वाले) को ही इसकी प्राप्तत होती है और न बहुत र्वद्वान को इसका लाभ होता है। आत्म तत्व को जाननेकी जब उत्कट प्जज्ञासा होती है, मछली के समान जब तड़प पैदा होती है तभी इसकी प्राप्तत होती है, अन्द्यथा नहीं। गत-रात भर नींद नहींआती, घर-द्वार कुछ भी नहींसूझता, मसफि सनातन ब्रह्म को बाननेकी प्रबल इचछा जब होगी तब उसके समि भगवान आत्मा 'म'ैं स्वयंप्रगट हो जाता है अथात्ि्उसे भगवान आत्मा की अनुभूतत हो जाती है।

नायरात्र्ा बलहीनेन लभ्यो न च प्रर्ादिपसो वाप्यभलङ्गात् ्।
एतैरुपायैयतमतेयस्तु ववद्वांस्तस्यैष आत्र्ा वविते ेब्रह्र्धार् ।।

(मुण्डक 3-2-4)

बलहीन पुरुष को आत्मलाभ नहीं ंहोता। यहााँपर बल का अथ िशारीररक बल से नहीं है, वरन इसका अथ ि आत्म प्जज्ञासा बल जानना अथात् ्िआत्म प्जज्ञासार्वहीन को आत्म दशनि नहींहोता। इसका लाभ प्रमादी को नहीं होता। तप से इसकी प्राप्तत नहीं होती। मलंगं अथात् ि्वेश िारण करने ेसे भी इसकी प्राप्तत नहीं होती। ' एतैरुपायैयतते यस्तु ववद्वांसस्यैष आत्मा र्वशते ेब्रह्म िाम' आत्म प्जज्ञासुओंका मुख्य बल, सािन है तो यही आत्म दशनि की व्याकुलता। चाहे वह ब्राह्मण, ित्रिय, वैश्य, शूरू हो, ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी, संन्यासी हो, स्ीी या पुरुष हो आत्म प्जज्ञासुओंको प्जज्ञासा बल चाहहये। आत्मा को जाननेका अधिकार दूसूरे को नहीं है। इसका सम्बन्द् मूखतिा, र्वद्विा से नहीं ंहै। वरन आत्म प्जज्ञासा से है। प्रबल आत्मप्जज्ञासा प्जसको है उसी को आत्म तत्व का बोि होता है। आत्मत्वात् ्सवभूितानां ंमसद्त्विाहदह सवतिः 11(7 - 6) सवभूितानां आत्मत्वात्–् भगवान सव िकी आत्मा है, परमात्मा है जो सबका 'म'ै है। आत्मा उसको कहते हैं प्जससे सारे चराचर की मसद्धि होती है। इस प्रकार जब महात्मा प्रह्लाद ने अपनेसहपाहठयों को आत्मतत्व का बोि कराया तो बालक प्रसन्द्न होकर पूछते हैं फक भैया प्रह्लाद ! यह ज्ञान तुम फकसकी कृपा से प्रातत फकये हो? यहा ाँतो गुरु महाराज ये सब नहीं बतलाते फफर तुमने ेकैसे जाना? यहद हम लोगों को बतला सकते हो तो बतलाओ। महात्मा प्रह्लाद कहतेहैं- सहपाहठयों ! सुनो, प्जस समय मेरे र्पताजी मंदराचल पवति की कन्द्रा में परमेष्ठी ब्रह्माजी का तप करनेके मलये गये तो राजिानी को सूना पाकर देवराज इन्द्र, मेरी माता कयािू ूका हाथ खींचकर बरबस देवलोक को घसीटकर ले जानेलगा। मेरी मााँकयािू र्वलाप कर रही थीं, परन्द्तुदेवराज जबरदस्ती ले जा रहा था। इसी समय रास्ते में देवर्ष िनारद ममले। देवर्ष िनारद ने इन्द्र को इस तरह की िृष्टूता के मलये फटकारा और कहा-देवराज ! यह घृरूणत काय ितुम क्यों कर रहे हो? इन्द्र ने कहा-प्रभो! आप जानते ही हैं फक हहरण्यकश्यप फकतना घोर तप करनेके मलए मन्द्दराचल पवति की कन्द्रा में गया है। हहरण्यकश्यप हम लोगों का राज्य छीन लेना चाहता है और यह गभस्थि बालक उसका ही वीय िहै। जब यह बालक पैदा होगा तो यह भी अपने र्पता के ही समान दुष्ुट दैत्य होगा। हम सब लोगों को नष्ट कर देगा। इसीमलये हम कयािू को ले जा रहे हैं फक जब बालक पैदा होगा तो बालक को मार देंगे और कयािू को वापस कर देंगे। इस पर देवर्ष िनारद कहते हैं-

अयं ंननन्ष्कन्ल्बषः साषानर्हाभागवतो र्हान् ्।
त्वया न प्राप्स्यते संसं्थार्ननतानुचरो बली ।।

(7-7-10)

देवराज ! तुम जानते नहीं फक तुम क्या कर रहे हो-अरे! इसके गभ िमें सािात् ्आत्मतनष्ठ बालक है। यह तनष्प्कप्ल्बष अथात् ्ितनष्पाप एवं महान भागवत (भक्त) होगा और भगवान का अनुचर (दास) होगा। इसी की रि

हेतु भगवान अवतार लेंगे। यह बालक परम आत्मदशी होगा। इस तरह इन्द्र को समिाान करके मेरी माता को नारद जी अपनेआश्रम ले आये और कहे फक बेटी ! अब तू यहाँ तनभयितापूवकि रह, जब तेरे पतत तप करके वापस आ जाएंगे तब तू चली जाना। तेरा अब देवराज कुछ भी त्रबगाड़ नहींकर सकता। तेरा कोई अहहत न होगा। तब रानी कयिाूवहाँरहने ेको राजी हो गई और प्राथनिा की फक भगवन् ्! आप ऐसा करें फक जब तक मेरे पतत वापस न आजाय ेंतब तक मेरा यह पावन गभ िस्तंमभत रहे, वह पतत के वापस आने के बाद ही पैदा हो। नारदजी ने उसे अभय हदया और कहा- तथास्तु ! बेटी ! तेरी जैसी कामना है, वैसा ही हो। ऐसा कहने के उपरान्द्त कयिाू नारद जी के आश्रम में रहने लगी। उिर हहरण्यकश्यप ने देवताओं के सौ वष ितक घोर तप फकया और इतने ेकाल तक म ेंअपनी माता के गभ िमें ही रहा। प्रततहदन देवर्ष िनारद मेरी माता कयिाू ूको भगवत् ्ज्ञान, वैराग्य, भप्क्त का उपदेश हदया करते थे ेऔर वह एकाग्रधचि होकर प्रेम से सुनती थी। इस प्रकार म ेंगभ िसे ही भगवत् ्भप्क्त का ज्ञान प्रातत करने े

लगा। मेरे गुरु भगवान नारद हैं। उनकी ही कृपा से गभ िमें ही मुझे ेआत्म तत्व भगवद् भप्क्त ममली। अभी भी हहन्द्ू ूसमाज में गमभणिी को सत्संग करने ेके मलए कहा जाता है। भगवान की लीला कथा आत्मतत्व का अनुभव गभस्थि बालक करता है। गभ िके बालक पर इसका बड़ा संस्कार पड़ता है। यहाँभगवान नारद का उपदेश बालक प्रह्लाद नेग्रहण फकया।

आत्र्ा ननत्योऽव्ययः िुद्ध एकः षेत्रज्ञ आश्रयः ।
अववकक्रयः स्वदृवहेतुव्यापमकोऽसङ्वयनावृतः ।।

(श्रीमद् भागवत 7 - 7 - 19)

एतैद्वमादिभभववद्मवानात्र्नो लषणैः परैः ।
अहं र्ेत्यसद्भावं देहादौ र्ोहजं ंत्यजेत् ्।।

(श्रीमद् भागवत 7 - 7 - 20)

महात्मा प्रह्लाद कहते हैं - साधथयों! सुनो-र्वचारवान पुरुष को चाहहए फक अपने स्वरूप आत्मा के बारह लिणों को भली-भातूँत जानकर देहाहदकों में जा अज्ञान से उत्पन्द्न हुआ म-ैंमेरापन है, इस असत्य भाव को त्याग कर मुक्त हो जाए। अपनेआप म ेंके 12 लिण कौन-कौन से हैं? र्वचार कीप्जये-म ेंतनत्य हूँ, म ेंअव्यय अथात्ि ्पूण िहूँ, म ेंशुद्ि हूँ, म ेंएक हूँ, म ेंिि ेज्ञ अथाति देहाहदक प्रपंच का ज्ञाता हूँ, म ेंसव िका आश्रय (आिार) हूँ, म ेंअफक्रय हूँ, म ें अपनेआप स्वयंका दृष्टा हूँ, म ेंसव िका कारण हूँ, म ेंव्यापक हूँ, म ेंअसंग हूँ, तनलेप हूँ म ेंअनावृत-आवरण (अज्ञान रहहत) हूँ। इन्द्हीं 12 लिणों को अपनेस्वरूप आत्मा 'म'ें में जानकर सुमेरु पवति के समान अचल हो जाना चाहहये। म ेंआत्मा के जान लेनेपर म-ैंमेरा, तू-तेरा इस अज्ञान का नाश हो जाता है। म-ैं मेरा पन यह असत्य भाव अज्ञान से पैदा हुआ है, इसमलए इस अज्ञान को त्यागकर अपनेआप म ेंआत्मा को जानना चाहहये। र्वचारवान मनुष्य के मलए यही ज्ञातव्य है।

स्वण मयथा ग्रावसु ुहेर्कार: षेत्रेषु योगैसै्तदभभज्ञ आप्नुयुात् ्।
षेत्रेषु ुदेहेषु तथाऽऽत्र्योगैरैध्यात्र्ववदब्रह्मगनतं ंलभेत ।।

(श्रीमद् भागवत 7-7-21)

प्जस प्रकार खोट भाग को अलग करके हेमकार (स्वणकिार) खरा भाग को ग्रहण कर लेता है। इस तरह प्जन-प्जन पदाथों को तू मेरा कहता है वह खोट है, उनको छोड़कर शुदि्ु भाग 'म' ैं आत्मा को ग्रहण कर लेना चाहहये। शुद् भिाग 'म' ैं का 'म' ैं ही खरा हूँ।

बुद्धेजागमरणं ंस्वप्न: सुषुन्प्तररनत वृिय: ।
ता येनैवाननुभूयूनते ेसोऽध्यष: पुरुष: पर: ।।

(7 - 7 - 25)

इस प्रकार से प्रह्लाद ने अपनेसहपाहठयों को उपदेश हदया। इस उपदेश को ग्रहण कर सभी सहपाठी प्रह्लाद हो गये। सबकी िारणा आत्मतत्व से ओतप्रोत हो गई। सभी वही राग आलापनेलगे। गुरुजी शण्डामकि बालकों की ऐसी बुद्धि देखकर घबरा गये। अब गुरुजी क्या करें? प्रह्लाद पर बहुत त्रबगड़े ेफक तुमने ेसहपाहठयों को भी त्रबगाड़ हदया, अब तुम्हें नहीं ंपढ़ाया जायेगा। इस तरह पाठशाला से तनकालकर उसे पकड़कर राजा हहरण्यकश्यप के पास ले जाकर कह हदया फक यह बालक स्वयंतो त्रबगड़ा हुआ है, ऊपर से पाठशाला के अन्द्य बालकों को भी इसनेभड़का हदया है। अब आप ही जानेफक इसे क्या फकया जाय। इस पर हहरण्यकश्यप क्रोधित हो, लाल-लाल आखेँ करके प्रह्लाद को फटकारता है।

श्रुत्वा तदवप्रयं ंदैत्यो दु:सहं तनयानयर् ्।
कोपाविेचलद्गात्र: पुत्रं ंहनतुं र्नो दधे ।।

(7-8-3)

हे दुवुवनमीत र्नदात्र्नकुलभेदकराधर् ।
स्तब्धं्छासनोद्धूतं नेष्ये त्वाद्य यर्षयर् ्।।

(7-8-6)

कुरुद्धस्य यस्य कम्पनते ेत्रयो लोका: सहेश्वरा: ।
तस्य र्ेऽभीतवनरूद्ध िासनं ककंबलोऽत्यगा: ।।

(7-8-7)

अरे मूख िप्रह्लाद ! क्या तू जानता नहीं ंफक जब म ैंततनक-सा क्रोि करता हूँ तो तीनों लोकों के सब लोकपाल कापूँ उठते हैं। फफर मूख ितू फकसके बलबूते पर तनडर होकर मेरी आज्ञा का उल्लंघन कर रहा है। मेरी आज्ञा के वर्रुद् किाम कर रहा है। क्या तू जानता नहींफक मेरे क्रोि से तीनों लोक कंपायमान हो जाते है। लोक लोकान्द्तर का तेज जाता रहता है और तू इतना तनभयि है। तस्य मेऽभीतवन्द्मूढ शासनं फकंबलोऽत्यगाः ।। (7 - 8 - 7) तू फकसके बल से इतना तनभयि है? तू तो कहता है फक तेरा जगदीश व्यापक है, चारों तरफ है, संसार में ओतप्रोत है। तो म ैंपूछता हूँ फक वह अब कहा ूँहै? देख, तू अभी शीघ्र ही मेरे हाथ से यमलोक जायेगा, तू ूयमराज का पाहुना होने ेजा रहा है। तेरा जगदीश व्यापक है तो-

यस्त्वया र्नदभावयोक्तो र्दनयो जगदीश्वरः ।
क्वासौ यदद स सवत्रम कस्मात्स्तम्भे न दृश्यते।।

(7 - 8 - 13)

मन्द्भाधगन ! तू जो मेरे अततररक्त फकसी और को जगत का स्वामी कहता है तो देख ूँूतो तेरा जगदीश्वर कहा ूँहै? यहद तेरा जगदीश सवि है, यहद वह सव िहै, सव िओर है तो फफर है कहाूँ? इस खंभे में म ैंउसको क्यों नहीं ं देख रहा हूँ देखता हूँ वह तुझेकैसे शरण देता है? वह सब है तो हदखाई क्यों नहीं ंदेता। क्या म ैंतुझे ेनहीं ंदेख रहा हूँ? अचछा, अब तू मेरे हाथ से मारा जायेगा या फफर तेरा रिक आकर मुझेमारेगा। समझो हहरण्यकश्यप आस्स्तक था। यहद आस्स्तक न होता तो वह ब्रह्माजी का तप करने ेकैसे जाता? यह भगवान र्वष्णु का र्वरोिी था। तेरा जगदीश सवि है तो इस खंभे में क्यों नहीं हदखता? अचछा तुझे ेइस खंभे में भी हदखाई देता है? वह दैत्य क्रोि के कारण आपे से बाहर हो गया और जोर से एक मुक्का खंभे को मारा। खम्भा टूट गया और महाभयंकर शधद हुआ। भगवान का श्री नृमृसंहावतार हुआ। भगवान र्वधचि रूप में प्रकट हुए। ऊपर का भाग तो मसंह का था और नीचेका भाग नर (मनुष्य) का। दूसूरे दैत्य, भगवान के इस र्वकराल रूप को देखकर भाग खड़े ेहुए। मसफि हहरण्यकश्यप, नृमसंह और प्रह्लाद रह गये। उस समय हहरण्यकश्यप भगवान नृमसंह र्वग्रह को देखकर हाथ में खड्ग लेकर दौड़ा तो प्रभुनेदौड़कर उसे दबोच मलया। भगवान नृमसंह ने हहरण्यकश्यप से कहा फक देख तूने ेकभी ऐसा रूप ब्रह्माजी की सृपृष्ट में देखा है? कभी ब्रह्मा ने ऐसी सृपृष्ट की है? बुढ़उ (ब्रह्मा) का वचन भी तो भगवान को सत्य करना था। न मेरे पास कोई अस्त्र- शस्त्र है। यहाूँ नख ही शस्त्र है। देख ले, मेरे पास कोई आयुि नहींहै। उसे गोद में मलटाकर ड्योढ़ी के बीच में उसका विस्थल र्वदीण िकर हदया। 'म' ैं से 'म' ैं का मेल हो गया। हहरण्यकश्यप का कलेवर तेज प्रभु में लीन हो गया। इस र्वकराल र्वधचि रूप को देखकर देवता लोग भी घबरा गये। भयानक स्वांग को देखकर पास में जाने की हहम्मत देवताओं की भी नहीं ंहुई। भगवान का क्रोि शांत नहीं ंहो रहा था। जब ब्रह्माजी भी पास न जा सके तो सभी देवताओं ने महारानी लक्ष्मीजी को आग्रह फकया फक माता ! तुम्हीं ंजाकर प्रभु का क्रोि शांत करो। लक्ष्मीजी प्रभु के पास तक तो गई, परन्द्तु उनका र्वकराल रूप देखकर वह भी डर गई और वापस लौट पड़ीं। बुढ़ठ (ब्रह्मा) महाराज कहते हैं- माता ! जाओ, प्रभु का क्रोि शांत करो। लक्ष्मी जी कहती हैं फक प्जस रूप की म ैं सेवा करती हूँ वह तो भुवन सुंदर है। यहाूँ पर तो भगवान भयावह रूप िारण फकये हैं। लक्ष्मी जी भी पास न जा

 सकीं। प्रभुका क्रोध शांत न हुआ, तो ब्रह्माजी ने प्रह्लाद से कहा बेटा । भक्तवत्सल भगवान तेरे मलए ही आये हैं तू
ही जाकर शांत कर। प्रह्लाद जाकर श्री-चरणों में मलपट गये। भगवान प्रसन्द्न होकर भक्त प्रह्लाद को गले से लगा मलये और कहे फक बेटा। वरं वृणीष्व-तुम प्रसन्द्नधचि से वर मांगो-

प्रह्लाद भद्र भद्रं ते प्रीतोऽहं तेऽसुरोत्तम ।
वरं वृणीष्वाभभमतं ाकामपूरोऽस्म्यहं नृणाम् ।।

(श्रीमद् भागवत 7-9-52)

तो महात्मा प्रह्लाद कहते हैं- भगवन्! मेरे र्पता का भी कल्याण हो जाये क्योंफक वह आपका तथा आपके

भक्तों का तनंदक, द्वेषी एवं उन्द्हें कष्ट पहुँचाने ेवाला था। तो भगवान नृमसंहं कहतेहैं फक बेटा !

त्रत्रःसप्तभभः वपता पूतः वपतृभभः सह तेऽनघ
यत्साधोऽस्य गृहे जातो भवानवै ैकुलपावनः ।।

(7-10-18)

क्या अभी तक तुझे ेअपनेर्पता के उद्धार में शंका बनी हुई है? जबफक मेरे करकमलों द्वारा उसका वध हुआ है और फफर प्जस कुल में तेरे समान एक आत्मदशी भक्त जन्द्म ले लेता है उसके इक्कीस पीढ़ी आगे और पीछे के र्पतर तर जाते हैं। वह कुल पवित्र हो जाता है। जननी जो माता है उसका कोख शुद्ध हो जाता है। वसुन्द्धरा जो पृथ्वी है वह ऐसे आत्मनैष्ठक को पाकर पुण्य रूप हो जाती है। इसमलए तेरे र्वमल कुल में अब कोई पापिष्ट न होगा। म ैंप्रततज्ञा करता हूँ फक तेरे कुल में अब फकसी का भी वध न करूँगा। क्योंफक, तेरा कुल अब नारायण कुल, भगवद् भक्तों का कुल हो गया। महात्मा प्रह्लाद की कुल परम्परा महर्षि कश्यप से शुरु होती है। महर्षि कश्यप के पुत्र हहरण्यकश्यप और हहरण्याक्ष । हहरण्यकश्यप के प्रह्लाद-उनके पुत्र हुए र्वरोचन-राजा र्वरोचन के पुत्र हुए राजा बमल और उसके पुत्र हुए राजा वाणासुर। तब से महात्मा प्रह्लाद के कुल में प्रभु द्वारा कोई वध नहीं हुआ, क्योंफक नृमसंहावतार में भगवान प्रततज्ञा कर चुके थे ेफक इस कुल में अब म ैंफकसी का भी वध नहीं ंकरूँगा। यद्यपि कृष्णावतार में उषा-अतनरुद्ध के संबंध में भगवान और वाणासुर का युद्ध हुआ था, परन्द्तुभगवान ने उसका वध न कर उसके मान का मदिन फकया था। इसके बाद प्रभु ुनेफफर प्रह्लाद को आज्ञा दी फक तुम अपनेदैत्य कुल की परम्परा के अनुसार अपनेर्पता का मृतक कर्म सम्पादन करो और फफर राज्यामभषेक कराकर पृथ्वी का पालन करो। भगवान की ऐसी आज्ञा पाकर भक्त प्रह्लाद कृतकृत्य हो गया। इतना कहकर भगवान प्रह्लाद को आशीर्वाद देकर अन्द्तर्धान हो गये।

चतुथ िदवस

गजेन्द्रोपाख्यान के माध्यम से अप्स्तत्व तनरुपण श्री कृष्ण जन्मकथा

21-2-1969, प्रातः 10.00 से 12.00 बजे तक

अनन्द्त नाम रूपों में अमभव्यक्त, अहमत्वेन प्रस्तुररत, महामहहम, स्वात्मस्वरूप सकल चराचर एवं समुपप्स्थत आत्मप्जज्ञासुगण !

उविष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्ननबोधत ।।

अनाहदकाल से अज्ञान की घोर तनरा में सोनेवालों भव्य जीवों ! उरि्ठत- उठो, स्वस्वरूप भगवान आत्मा में जागो, फकसी श्रेष्ठ महापुरुष के उपसन्द्न होकर अपना आत्म कल्याण करो। यहा ूँपर अध्यात्म तनरूपण

श्रीमद्भागवत रहस्य 135 श्रीमद्भागवत परमहंस संहहता के आिार पर हो रहा है। कल का प्रसंग प्रह्लादोपाख्यान था। आज गजेन्द्र मोि

(गजेन्द्रोपाख्यान) श्रीमद् भागवत का अष्टम स्कन्द् के माध्यम से अध्यात्म तनरूपण होगा।

आसीद्गगररवरो राजंनंस्त्रकूट इनत ववश्रुतः ।
षीरोदेनावृतः श्रीमानयोजनायुतरुनुरतः ।।

(8 - 2 - 1)

ीरिसागर से तघरा हुआ धचिकूट नाम का एक महार्वशाल पवति था। पवति नाना प्रकार के वृि, लताओं एवं बेमलयों से ढूँका हुआ था। कूट अथात् ्ि ातु। वह त्रिकूट पवति माला स्वण,ि चांदी एवं ंतांबा, इन ि ातुओंसे पररपूण ि थी। उस पर भगवान वरुणदेव का एक वर्शाल उद्यान था। उसमें सुंदर-सुंदर रमणीक स्थान, खेलकूद, आमोद-प्रमोद एवं आखेट के अनेक स्थल थे। यह प्रसंग गजेन्द्र मोि का आख्यान, ् अध्यात्म तत्व से भरपूर है। ध्यान से इसका मनन करना। उद्यान में एक सुंदर सरोवर था। उस सरोवर में नाना प्रकार के मनोरम कमल खले थे। उस सरोवर में गजेन्द्र अपनी हधथतनयों को साथ लेकर स्नान एवंजलक्रीडा के मलए प्रवेश फकया वह सरोवर में खूब आनंद से स्नान कर, जल पी, शांत होकर अपने हधथतनयों एवं बचचों के साथ जल क्रीडा करने लगा। उस सरोवर में एक बहुत बड़ा मगर भी था। वह महादुष्ट ग्राह पूवजिन्म में हू-हू नाम का गंवि ि था और देवल ऋर्ष के शापवश ग्राह हो गया था। उसनेजल के भीतर ही गजेन्द्र का चरण पकड़ मलया और जल की ओर खींचकर ले जाने लगा। गजेन्द्र को संकट में देखकर पहहले तो हधथतनयों ने बल लगाकर गजेन्द्र को बाहर तनकालने की कोमशश की, परन्द्तु ग्राह बड़ा बलवान था, देव गजेचया सारी शप्क्त लगानेपर भी गजेन्द्र को ग्राह के चंगुल से न छुड़ा सकी तो धचंघांड़ मार-मारकर भाग गईं। अब गजेन्द्र अकेला पड़ गया। गजेन्द्र भी शार्पत था। वह पूवजिन्म में राजा इन्द्रद्युम्न था प्जसने महर्ष िअगस्त के शाप से गज (पशु) ु योतन में जन्म मलया था। वह गजेन्द्र भी काफी बलशाली था। गज और ग्राह एक हजार वष ितक घोर संग्राम करते रहे। कभी गजेन्द्र ग्राह को असीटकर बाहर लाता औरकभी ग्राह गजेन्द्र को घसीटकर पानी में ले जाता। इस तरह एक हजार वष ितक दोनों लड़ते रहे। अन्द्ततोगत्वा गजेन्द्र थक गया। जब उसका सारा बल नष्ट हो गया तो उसनेअपने पूवजिन्म के संस्कार के कारण एक कमल पुष्प को सूँड़ से उठाकर अनन्द्त भगवान के शरण गया। आत्मप्जज्ञासुओं ! जीव का स्वभाव ही ऐसा है फक जब तक उसके पास फकसी प्रकार बल रहता है, बुद्धिबल, नीतत बल, र्वद्या बल, जन बल, ि न बल कुछ भी रहता है तब तक वह भगवान की शरण नहींहोता। भगवान की शरण में तभी जाता है जब वह तनरािार, तनराश्रय हो जाता है। अन्द्ततोगत्वा जब गजेन्द्र अपनेको तनबलि तनराश्रय पाया तो भगवान नारायण की शरण में गया और भगवान की स्तुतत करने लगा। यह गजेन्द्र मोि की कथा श्रीमद् भागवत का आठवाँ स्कन्द् है। इस स्कन्द् में अनन्द्त 'अप्स्तत्व' का तनरूपण है। आत्मतत्व का 'अप्स्तत्व' का प्रततपादन हो रहा है। जो जहाँ बैठे हो, आनंद लो। गजेन्द्र सूँड़ में पुष्प लेकर भगवान की स्तुतत करता है।

ॐ नरो भगवतेतस्मै ैयत एतन्चदात्कर् ् ।
पुरुषायाददबीजाय परेशायाभभधीर्दह ।।

(श्रीमद् भागवत 8-3-2) देखो, इस श्लोक में प्रणव और पल्लव दोनों हैं। जहा ँप्जस श्लोक में प्रणव और पल्लव दोनों लगा हो वह फफर श्लोक नहीं ंवरन् ्मन्द्र किहलाता है। यहा ँॐ प्रणव एवं नमः पल्लव है। इस गजेन्द्र स्तुतत में प्जतने ेभी श्लोक हैं वे ेसब मंि हैं। महान संकट से संकट क्यों न हो इन मंिों के पाठ, स्मरण में संकट तत्काल ममट जाता है। आपरि्यों में इसका जप करने से दु:ख का नाश होता है। ये मंि आपरि् नाशक हैं।

ॐ नर्ो भगवतेतस्र्ै ैयत एतन्चदात्कर् ्।

पुरुषायाददबीजाय परीयाभभधीर्दह ।।

(8-3-2)

इस मंि में 'िीमहह' फक्रया का प्रयोग हुआ है। इसी तरह गायिी मंि में भी 'िीमहह' का प्रयोग हुआ है।

ॐ भूभुवमः स्वः तत्सववतुवररण्यंभगोदेवस्य धीर्दह धधयोयोनः प्रचोदयात् ्।।

'िीमहह' यह फक्रया है-हम इनका ध्यान करते हैं।

यन्स्न्ननदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयर् ्।

योऽस्र्ात्परस्र्ाच् परस्तंप्रपद्येस्वयंभुंवुर्।। ्

(श्रीमद् भागवत 8-3-3)

एतद् धचदात्मकम् ्यत् ्तस्मै भगवते नमः यह जो चैतन्द्य िनभूत आत्मा अव्यक्त भगवान हैं, उसको हम नमस्कार करते हैं। प्जज्ञासुओं! एतद् फकसके मलए आता है? एतद् धचदात्मकम्–यह जो चैतन्द्य तत्व भगवान हैं उसको मेरा नमस्कार है। देखो यह जो भास है-र्वकल्प का एकदम अभाव कर दो। 'यह क्या है' ऐसा र्वकल्प मत करो। भगवान को यहद प्रातत करना है तो र्वकल्प का तनमूलि अभाव कर दो। पहहले सूि नोट कर लो फफर व्याख्या करेंगे- 'र्वकल्पाभाव भगवान। र्वकल्पाभाव भगवान। र्वकल्पाभाव भगवान।'

जगत भाव (र्वकल्प) के अभाव में आधिभौततक भगवान।

नर र्वकल्प के अभाव में-आधिदैर्वक भगवान।

जीव र्वकल्प के अभाव में आध्याप्त्मक भगवान।

(पू. श्री स्वामी ताली बजाकर समझा रहे हैं।)

देखों - यह शधद र्वकल्प है। पहहले हदन के प्रवचन में तुम्हें र्वकल्प क्या है? इसका अनुभव कराये थे।

िशधदका तो ज्ञान हो, परन्दतु वस्तु का अभाव हो उसे र्वकल्प

'शधद ज्ञानानुपाती वस्तुशून्द्यो र्वकल्पः ।' अथात्

कहते ेहैं। भास पर जगत का जो र्वकल्प, इस र्वकल्प को हटा दो, तो फफर यह भगवान का आधिभौततक स्वरूप है।

भगवान राम कृष्णाहद का जो लीला र्वग्रह रूप, यह भागवान का आधिदैर्वक स्वरूप है और जो 'म'ँ नाम से प्रस्फुररत प्रस्फुहटत एवं अमभव्यक्त हो रहा है वह भगवान का आध्याप्त्मक स्वरूप है। भगवान के आधिदैर्वक

स्वरूप को नर मानना महामोह है और स्वस्वरूप भगवान आत्या 'म' ै आध्याप्त्मक स्वरूप को जीव मानना सम्मोह है। रामायण में गरुड़ को महामोह हुआ था।

र्हार्ोह उपजा उर तोरे। वेधग न भर्टइ कहे खग र्ोरे ।।

महारानी सती को भगवान राम में नर का भ्रम हुआ था। महात्मा भुशुपुण्ड को भगवान राम में नर का भ्रम हुआ था। ब्रह्माजी को भगवान श्रीकृष्ण में ना का भ्रम हुआ था। इन सब र्वकल्पों (भावनाओं) को महामोह जानो। अपनेम ैंआत्मा में जीव की भावना फक म ैंजीव हूँ, इसे कहतेहैं संमोह।

भैया ! यह जो भास है वह भगवान ही है। अब इस पर जगत का र्वकल्प करते हो फक यह संसार है तो यही मोह है, माया है। लकड़ी में डंडां, मेज, कुसी, पलंग, चौखट आहद की कल्पना करना यही र्वकल्प है। अरे, लकड़ी तो लकड़ी ही है। डंडें ेका र्वकल्प हटा लो तो लकड़ी ही लकड़ी है। आभूषण का र्वकल्प सोनेसे हटा दो। वस्िका र्वकल्प िागे से हटा दो। घटाहद का र्वकल्प ममट्टी से हटा दो। इसी प्रकार भगवान भास पर जो जगत का र्वकल्प कर रहे हो फक यह संसार है इस र्वकल्प को हटा दो। भगवान आत्मा 'म' ै पर से जीव का र्वकल्प हटा दो, तो फफर सब भगवान ही हैं।

ॐनर्ो भगवतेतस्र्ै ैयत एतन्चदात्कर् ्।
पुरुषायाददबीजाय परीयाभभधीर्दह ।।

यह जो चैतन्द्य स्वरूप नारायण है उसको म ैंनमस्कार करता हूँ। जी हा–ँ अब इस भास में ही ग्राह और गजेन्द्र दोनों हैं। एक र्वकल्प ग्राह है और दूसूरा र्वकल्प गजेन्द्र है। जब यह (भास) भगवान है तो इन दोनों र्वकल्पों का भी अभाव हो गया और भगवान ही भगवान शेषे रह गया। ये बात है-देखो, समझो र्वषय,
र्वकल्पाभाव अथात्ि्र्वकल्प के अभाव में, र्वकल्प चाहे आधिभौततक पर हो, आधिदैर्वक पर हो या आध्याप्त्मक पर हो, इन र्वकल्पों का अप्स्तत्व न रहा फक यह संसार है, नर है या जीव है।

भगवान शंकर और महारानी सती आ रहे थे ेतो माग िमें ही भगवान राम को तपस्वी रूप में देखकर भगवान शंकर कहते ेहैं-

जय सन्चदानंद जग पावन। अस कदह चले र्नोज नसावन ।।

बाबा और बबाइन - बाबा कहते हैं- जय सप्च्चदानंद और बबाइन पड़ गई चक्कर में। भगवान आधिदैर्वक भी हो नहींरहा। भगवान शंकर ने भगवान राम को जैसा देखा वैसा ही नमस्कार फकया। गरज यह फक आधिभौततक, आधिदैर्वक और आध्याप्त्मक यह भी र्वकल्प ही है। जब इन तीनों र्वकल्पों का अभाव हो गया तो रह गया 'म' ै। अवाङ्गमनसगोचर धचन्द्मय भगवान आत्मा ही आत्मा रह गया। यही तूष्णी पद है। भास पर से जगत का र्वकल्प हटा दो तो र्वकल्प के अभाव में सिू मलखो-जगत के र्वकल्प भाव में तीनों र्वकल्प तनहहत हैं।

जब तक र्वषय को पूणरूिपेण नहीं ंसमझाया जाएगा तब तक समझ में न आएगा। हा ूँतो, जगत के र्वकल्प भाव में तीनों र्वकल्प तनहहत हैं। जगत के र्वकल्प भाव में स्रष्टा, भतिा, हतिा, ये तीनों र्वकल्प तनहहत हैं। जगत र्वकल्पाभाव में ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्ति सारे चराचर के र्वकल्प का अभाव हो गया और श्रोता एवं ंवक्ता र्वकल्प का भी अभाव हो गया। तो समझो-क्या कोई कह रहा है और कोई सुन रहा है? यही धचन्द्मय पद है। माया का अप्स्तत्व ही नहींरह जाता। मार दो छलांग इस दररया में बह जाओ, इस दररया का कोई ओर छोर नहीं-न इसका इप्धतदा है, न इप्न्द्तहा है, न दरम्यान है अथाति न आहद है, न अन्द्त है न मध्य है। अब बोलो-फकससे आखेँ बंद करोगे? प्जससे आखेँ बंद करते हो क्या वह वस्तुतः है? प्जससे कान बंद करते हो रूई ठूँस-ठूँस कर फक शधद न सुनाई पड़े,े बस ! क्या वह है? प्जस मन को रोकना चाहते हो, क्या वह मन है? बस, हो गया बस गये सारे र्वकल्प, रह गया 'अप्स्तत्व'। अब कहाूँबाहर और कहा ूँभीतर, बाहर भीतर भी तो शरीर की ही अपेिा से है। जब शरीर र्वकल्प का ही अभाव हो गया तो कहा ूँबाहर और कहा ूँभीतर। ' एतप्च्चदात्मकं यत तस्मै भगवते नमः ।' मशव भैया ! भगवान भास पर जगत का र्वकल्प हुआ। जब जगत का र्वकल्प हुआ फक यह संसार है तब चार र्वकल्प पैदा हो गये-देश, काल, वस्तु और कताि। अचछा ! यह संसार है, तो इसको फकसी न फकसी ने बनाया भी होगा। सबसे पहले सृप्ष्टकताि(ब्रह्मा) का र्वकल्प हुआ। फफर इसका पालन कौन करता है? तो पालक र्वष्णु का र्वकल्प हुआ। फफर संहार कौन करता है? संहार के र्वकल्प से शंकर का र्वकल्प हुआ और फफर इसी र्वकल्प पर ही छहों दशनि बन गये। कम से कम दशनिाचायों को यह सोचना था फक प्जसकी हम प्रततष्ठा कर रहे हैं, वास्तव में क्या वह है?

र्वद्वजनों ! ध्यान से सुनो, भगवान को संसार मानकर, इस संसार र्वकल्प भिि पर ही छहों दशनिों की प्रततष्ठा है। न्द्याय कहता है फक इस संसार का कोई न कोई बनानेवाला (कताि) है। न्द्याय मानता है फक इस संसार का तनमिि कारण भगवान, उपादान कारण प्रकृतत और सािारण कारण जीव है। जैसे घट का तनमिि कारण कुम्हार, उपादन कारण ममट्टी और सािारण कारण प्जसके मलए बना। इसी को न्द्याय का कतािवाद कहते ेहैं। तनमिि कारण ईश्वर ने, उपदान कारण प्रकृतत को लेकर सािारण कारण जीवों के शुभाशुभु कमों के फल को भोगने के मलए जगत का तनमािण फकया। यह न्द्याय का मसद्धांत है। तो िन्द्यहै इस र्वकल्प को फक इसने बड़े–बड़े े दशनिाचायों को भी नहीं छोड़ा, नहीं ंबख्शा।

सांख्य कहता है फक न्द्याय का कहना गलत है। संसार प्रकृतत का पररणाम है। जैसे दिू त्रबगड़कर दही बन जाता है, इस तरह प्रकृतत र्वकृत होकर संसार के रूप में हदखाई दे रही है। यह पररणामवाद है। प्रकृतत और पुरुष के योग का पररणाम जगत है। दो मभन्द्न पदाथ िममलकर तीसरे का तनमािण करते हैं। मीमांसा का कमिवाद है। वैशेर्षक का कालवाद है, वेदाप्न्द्तयों का र्ववतिवाद है। प्जस प्रकार रज्जु का र्ववत िसप िहै, इसी प्रकार ब्रह्म का र्ववत िजगत है। 'अब तो फुरफुरी आ गई है।' सविसािारण के मलए वेदांत र्वषय सरल करके बता रहे हैं। मालपुआ गरम-गरम खाना हो तो खाओ, नहीं तो गन्द्ना, गेहूँ प्जंदगी भर बोतेरहो, तुम जानो। भाई ! इसमलए प्जसका दशनि है उस वस्तु का प्रततपादन करते हैं फक र्वकल्प का? पोल खुल गई। अरे! जगत ही नहीं ंतो कताि, भताि, हतािका र्वकल्प ही कहा? ूँरह गया भगवान का भगवान। वाह-

ॐनरो् भगवतेतस्ै् ैयत एतन्चदात्कर् ्।
पुरुषायाददबीजाय परीयाभभधीर्दह ।।

अब प्रश्न करो- यह (भास) जो देख रहे हो, क्या यही भगवान है? पहहले देखना मसद् किरो तब बताय।ें
पहहले तुम देखना मसद् किरो। डंडें ेका र्वकल्प हटा दो। र्वकल्प दृष्टगम्य है या र्वकल्पक दृष्टगम्य है?
र्वकल्प दृष्टगम्य है। र्वकल्पक अथाति जो र्वकल्प करता है। र्वकल्प जो फकया जाता है।

अचछा, समझना र्वषय- प्रपंच कहो या संसार, एक ही मतलब है। अनुभव करो (ताली पीटकर बतलाते हैं)
शधद- यह शधद र्वषय है, तो कण िइन्न्द्रय कब बनी? जब र्वकल्प करते हो फक यह शधद र्वषय है, ऐसा मानोगे तब
शधद र्वषय है, नहीं तो भास ही भास रहेगा। जब र्वकल्प करोगे तब र्वषय पैदा होगा और तभी उसी वक्त उसे
ग्रहण करने के मलए कण िइन्न्द्रय पैदा होगी। इन्न्द्रय पैदा होगी। ग्राह्य और ग्राहक एक ही काल में पैदा होतेहैं।
छोटा बालक दो-चार महीनेका वह भी सुनता है, परन्द्तु क्या उसके हृदय में र्वकल्प मिा ही रह जाएगा, उसका
कोई अन्स्तत्व नहीं ंरहेगा। वह शधद र्वषयको ग्रहण न करेगा। बालक के सामनेकाला नाग भी रख दो तो उसे वह
र्खलौना जान मूँह में ले जाएगा, क्योंफक उसमें सप िका र्वकल्प (भाव) ही नहीं ंहै तो बचचे की दृन्ष्ट में वह भास है।
वाह ! तुम्हारे अंदर र्वकल्प है फक यह सप िहै-काट खायेगा, वह काट न ले, डस न ले। इसमलये तुम्हें भय लगता है।
न्जतनी उपाधि है, र्वकल्प भाव में है। र्वकल्पाभाव में तो न्जतनेर्वकल्प हैं वे ेभास ही हैं।

जीव कहो या माया-जीव, प्रपंच इत्याहद र्वकल्पों का आिार र्वषय 'म'ैं भगवान आत्मा सन्चचदानंद
घनभूत के कौन होगा? तो र्वकल्पाभाव शुद्िु तत्व रह गया। र्वकल्प एवंर्वकल्पक (जो र्वकल्प करे) सब लुतत
हो गये। अब प्रश्न होता है फक जो र्वकल्पक है वह चैतन्द्य है-अन्स्तत्वान है अथवा अन्स्तत्वहीन? यहद कहो फक
र्वकल्पक अन्स्तत्वहीन नहीं वरन् ्अन्स्तत्ववान है-चेतन है-तो फफर उसे क्या मुसीबत पड़ी है फक अपनेआपको
कुछ माने ? जीव, प्रपंच, तीनों अध्यास, सत, रज, तम, तीनों गुण, पंच प्राण, पंच ज्ञानेन्न्द्रय, मन, बुद्धि, धचि,
अहंकार चतुष्ट अन्द्तःकरण, पंच र्वषय आहद क्योंफक यह आततकाम है। क्यों माने? फकसको माने? श्रीमान जी ! जो
र्वकल्प है वह तनर्वकिल्प है या सर्वकल्प ? यहद कहो फक र्वकल्प तनर्वकिल्प है तो तनर्वकिल्प से र्वकल्प कैसे
होगा और यहद कहो फक र्वकल्प सर्वकल्प है, तो र्वकल्प हमेशा अन्स्तत्वहीन होता है, इसमलये जो है ही नहींवह
र्वकल्प क्या करेगा? अथात्ि्र्वकल्प न तो तनर्वकिल्प से हुआ और न सर्वकल्प से, र्वकल्प तीन काल में हुआ ही
नहीं। यह बात है भैया! यही अध्यात्म है। केवल अन्स्तत्व आत्म तत्व 'म'ैं का 'म'ैं रह गया। र्वकल्प हुआ ही नहीं।
इसमलए एतन्चचदात्मककि यत तस्मैभगवते नमः। यह जो चैतन्द्य भगवान है, उसको नमस्कार है।

ॐनरो् भगवतेतस्ै् ैयत एतन्चदात्कर् ्।
पुरुषायाददबीजाय परीयाभभधीर्दह ।।

अचछा, इसका भाव लग गया न। अब आगे चलो। अब यह सवाल है फक गजेन्द्र ने इसको चैतन्द्य क्यों कहा? अचछा, सुनो-

यन्स्न्निनदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयर् ्।
योऽस्मात्परस्माच् परस्तं प्रपद्ये स्वयंभुंवुर् ्।।

यप्स्मप्न्द्नदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयम् ्जो यह है, प्जसमें यह है, प्जससे यह है, प्जस करके यह है, और जो स्वयं ही यह है, जो इससे और इससे परे है वह स्वयंभू भगवान सप्च्चदानंद की म ैशरण हूाँ। यह फकतना सुंदर मं है। कैसा र्वलिण भाव है इसका। कभी कोई हहंसात्मक जानवर सामने आ जाये- हहंसात्मक जीव-अरे भाई। चाहे मनुष्य ही क्यों न हो-जब मारनेआया है तो वह हहंसात्मक जीव ही माना जायेगा। हााँ, यह भाव र्वकल्प भाव है, र्वकल्प भाव में वह शिु ुहै और र्वकल्पाभाव में 'म ै' ही हूाँ। तनकाल दो र्वकल्प को। फफर म ैशिु ुहूाँ-यह शिु ुहै यह भाव न रहेगा। तम् ्स्वयंभुवम् ्आत्मानं अहं प्रपद्ये (शरण्ये) उस स्वयंभू भगवान की म ैशरण हूाँ। स्वयंभू का मतलब होता है जो पैदा न हुआ हो। जो पैदा हो उसका नाम स्वयंभू नहींहोगा। अरे ! व्यापक सप्च्चदानंद समझो। जो स्वयं हो-उसको स्वयंभू । सिापद का प्रततपादन है। यह सिापद है। देखो - व्याकरण शास्त्र में मसद्धांत कौमुदी के अंदर सबसे पहहली िातु-भू-सिायाम् ्है। यहा ूँभू–िातू का सिा ही अथ िक्यों फकया गया? पाठशाला में, बचपन में, जब गुरुजी से पढ़ते थे ेतो यह िातु पढ़ी थी। सिा परब्रह्म का वाचक है।' सिाथ ितनदेशोपेयम् ्सत्याख्यस्य परब्रह्म स्मरणात् ्इतत महाभाष्यम्।्' सिा शधद से परब्रह्म का स्मरण होता है इसमलए परम मांगमलक समझकर भू–िातू ूका अथ िसिा ही फकया गया है। तम् ्स्वयंभुवम् ्(अप्स्तत्वं) अहं प्रपद्ये-अथात्ि्उस स्वयंभू ूभगवान आत्मा की म ैशरण हूाँ।

प्जस लकड़ी में डंडा, प्जस लकडी से डंडा, प्जस लकड़ी करके डंडा और जो लकड़ी स्वयंही डंडा है। इसी प्रकार प्जसमें यह, प्जससे यह, प्जस करके यह और जो स्वयं ही यह। अब आ गया समझ में तुमको ? 'डंडा है'- देखो, बुद्धि से न समझो यह बुद्धि का र्वषय नहीं ंहै। यहााँ भगवान आत्मा का प्रततपादन हो रहा है। इसमलए इसे 'म ै' आत्मा ही समझेगे, बुद्धि बेचाया का समझेगी, जबफक वह बुद्धि का र्वषय ही नहीं ंहै। वहााँ तक बुद्धि की गम नहीं ंहै।' उंडा है'- यह लकड़ी करके मसद्ि हो रहा है फक डंडा करके? लकड़ी करके मसद्ि हो रहा है। इसमें से लकड़ी तनकाल लो और यहद डंडा रहे, तभी डंडे ेका अप्स्तत्व मसद्ि होगा। परन्दतु ऐसा नहीं ंहोता। अचछा, तो डंडा चला गया, रही लकड़ी। अब 'लकड़ी है' तो लकड़ी का जो 'है' है वह 'है' है फक लकड़ी है? प्जस पर उसका अप्स्तत्व है अिाथ्पृथ्वी, क्योंफक लकड़ी पाधथवि भाग है। पृथ्वी करके ही लकड़ी मसद्ि होती है, तो लकड़ी गई। अचछा ' पृथ्वी है' तो पृथ्वी का कारण जल है इसमलए पृथ्वी भी गई। चलो 'जल है' तो जल में जो 'है' पना है वह जल का है फक उसके कारण अप्न का है? अप्न का है। तो जल भी गया। अचछा 'अप्न है' तो अप्न में जो 'है' है वह अप्न का कारण वायु है। तो अप्न भी गई। अचछा, फफर देखो 'वायु है'-वायु में जो 'है' है वह वायु का कारण आकाश है। जो 'है' आकाश का है, वही है सारे चराचर का है और जो 'है' सारे चराचर का है, वही आकाश का भी है। यहााँहै' अप्स्तत्व का बिोक है। यहा ूँकतापिद भी है और फक्रया पद भी है। जो 'है' आकाश का है उसी का नाम तो आकाश है।

अब आ जाओ फफर र्वषय पर प्जसमें यह है, प्जस करके यह है और जो स्वयं ही यह है, उस अप्स्तत्व, धचन्द्मय पररपूण,ि व्यापक भगवान की म ैशरण में हूाँ। (पू. श्री स्वामी जी 'मुक्तोद्गार पुस्तक' से आकाश समिाी

लेख तनकालकर एक सेवक से पढ़ने को कहते हैं। तनकालो आकाश समिीा लेख पढ़ा जा रहा है और पू. श्री स्वामीजी भाव बता रहे हैं-

-आकिा सर्ीषा -

काश! आकाश आकाश होता, तब तो आकाश आकाश ही होता। काश ! आकाश आकाश ही होता, तब आकाश को ततरोहहत कौन करता?

आकाश तीखे स्वर में बोला- 'म ैंआकाश महान न होता तो समस्त चराचर को अवकाश कौन देता।'

आकाश झाडी में मुस्कराकर बोला- 'ऐ हमनाम ! तू काश चराचर का अवकाश है तो मुझ आकाश का कौन अवकाश है? काश! तू स्वतः, स्वतः मसद्‌ है तब आकाश ही है। काश! तू परतः मसद्‌ है तब तू है ही नहीं।'

आकाश दबे स्वर में बोला- काश! म ैंआकाश न होता तो मुझ आकाश को छुपाने ेका अवकाश कौन देता? मुझ आकाश के अवकाश मंहदर में ही तो तुझेआूँख ममचौली खेलने की जगह ममली है। म ैंकैसा अनोखा मंहदर हूूँ। वायु, अप्न, जल, पृथ्वी फकतनेसुंदर चारों स्तम्भ हैं। पंच महाभूत फकतना उचच वैकप्ल्पक मशखर है। ऐसे अभाव रूप मंहदर में तू आकाश का आकाश, यानी म ैंका म ैंही, जैसा का तैसा, ज्यों का त्यों ही प्रसररत है। अमुक रूप कैसा बेममसाल घूंघट है। ऐ परदानशी, परदा उठा ! तेरे मलए दुतुनया ूँपरेशान है, हैरान है, बेजान है। तू सबका मसरताज है, आफताब है, बेहहसाब है। तेरा दीदार हो जानेपर सारा आलम गफलत का ख्याले ख्वाब है। परदा फाश हो गया।

कहकहाकर बोला- अरे यार! परेशानी ही तो दुतुनया ूँकी तनशानी है और जो तनशानी है वह लगबेफानी है।

बस तमाशा खतम। रहा सनम का सनम । जल गया दहरोहरम। फकिर गया मक्का, फकिर गया बुतखाना? खुद की नजर से देखा तो मस्तों का मयखाना।

अहा हा, वाह वाह, मशव-

यन्स्न्ननदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयर् ्।
योऽस्र्ात्परस्र्ाच्   परस्तं प्रपद्ये स्वयंभुंवुर् ्।।

अब आओ, चलो तुम्हें घुमायें। कठोपतनषद् की श्रुतत कहती है-

नैव वाचा न र्नसा प्राप्तुंक्यो न चषुषा ।
अस्तीनत ब्रुवतोऽनयत्र कथंतदुपुलभ्यते ।।

(कठ.2-6-12)

अस्तीत्येवोपलब्धव्यस्तत्त्वभावेन चोभयोः ।

अस्तीत्येवोपलब्धस्य तत्त्वभावः प्रसीदनत ।।

(कठ. 3-6-13)

क्या भाव है? नैव वाचा न मनसा-श्रुतत कहती है वाणी प्जसका कथन नहींकर सकती, मन जहा ॉँनहीं ंजा सकता, दृष्ट प्जसको नहीं ंदेख सकती परन्द्तुअस्तीतत तनत्यं ंब्रुवतः - है, है, है इस प्रकार रात-हदन कहता रहता है। वाणी प्जसका कथन नहीं ंकर सकती, मन प्जसका मनन नहीं ंकर सकता, दृष्ट प्जसको नहीं ंदेख सकती, जो इप्न्द्रयों का र्वषय नहीं है, वही कहता रहता है- है, है, है। अस्तीतत ब्रुवतोऽन्यि कथं तदुपुलभ्यते–ेतो फफर और कहाँ उस परमात्मा को प्रातत करोगे? अब दृष्ट पसारकर देखो अनुभव करो। ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्ति सारा चराचर कोई भी देश काल, वस्तु 'है' के त्रबना है? ब्रह्माहदक प्जसे नहीं ंजान सकते। फकतना ठोस भरा है, घनभूत है। ओहो! आत्म प्जज्ञासुओं ! भैया ! इसको पोल न समझो, इसे पोल न मानना, इस पोल के अंदर एक ऐसी चीज है जो ठोस (घन) है, प्जसमें एक र्पन भी नहीं ंजा सकता, लबालब है, भरपूर है, कहाँ से कहा ॉँतक है, जो 'है' है। यही ब्रह्म सि है। यही अप्स्तत्व है। यही नारायण सि है। ओहो, कोई ऐसा काल है जो 'है' के त्रबना है? कोई ऐसी वस्तु ुहै जो 'है' के त्रबना है। फकतनी ठोस चीज है। ओहो, अब समझ लो प्जस 'है' में यह है, प्जस 'है' से यह है, प्जस 'है' करके यह है और 'है' स्वयं ही यह है। इसी पर अनन्द्त र्वकल्पों का र्वकल्प है। इस सिापद से र्वकल्पों को हटा लो-बस, फफर कुछ नहीं ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्ति सारा चराचर प्जस 'अप्स्तत्व' पर अवलंत्रबत है, आिाररत है, जो सविाार है, जो सब पर शासन करता है, जो शासकों का शासक है, प्जस पर अनन्द्त र्वकल्पों का र्वकल्प है, वही सिापद है। इस पर से र्वकल्प हटा लो- बस, फफर कुछ नहीं। अप्स्तत्व मि ही है। प्जस फकसी से पूछो-कहीं ंपूछो- सभी यही कहते ेहैं फक हम गवनमेंट के शासन में हैं, सरकार की हुकूमत है। हम सब गवनमेंट के नौकर हैं। चपरासी से लेकर राष्ट्रपतत तक सभी इसी शासक के शासन में हैं। भाई! जरा हमें कोई मूततवित् ्प्रत्यि रूप से हदखाना भला फक वह शासन कौन है? प्जस बंगले या कोठी में वह रहता है? जब सभी कमचािरी हैं तो फफर गवनमेंट कहा ॉँहै? सभी बताते े हैं फक सरकार (शासक) बड़ी सतकिता से सीमाओंकी रिा कर रही है। छोटे से बड़े ेसभी यही बतातेहैं, तो फफर हमें गवनमेंट का दशनि भी करा दो। सारी दुतुनया ॉँका शासन जो गवनमेंट कर रही है, चाहे वह कोई भी देश हो-चीन में चीनी शासन, अमेररका में अमेररकी शासन, पाफकस्तान में पाफकस्तानी शासन, भारत वष िमें भारतीय शासन, सभी गवनमेंट, गवनमेंट धचल्लाते हैं, परन्द्तु गवनमेंट का पता ही नहीं है। ये तो सब उस शासक के कमचािरी हैं तो शासक कहाँ है? शासक को तो कभी फकसी ने देखा ही नहीं। यहद कहीं भी कोई पाप करेगा तो हथकड़ी पड़ जायेगी, सभी शासक से भयभीत हैं। वह शासक रूप से कहीं ंहदखता नहीं ंपरन्द्तुशासक का डर इतना है फक नाड़ी सबकी कापूँ रही है। भैया ! शासक 'अप्स्तत्व' होता है-ठोस रग-रग में 'अप्स्तत्व' व्यापक है और दुतुनया ॉँके हा एक भाग टुकड़े–टुकड़े ेभारत, पाफकस्तान, अमेररका ये सभी राष्ट्र उसके हो शासन में सब काम कर रहे हैं। क्या मंत्री, क्या कममशनर, क्या कलेक्टर, क्या चपरासी प्जतनेभी हैं सब पर गवनमेंट का शासन है। सभी पर शासन कर रहा है। उसी का प्रततपादन श्रुतत कर रही है। अरे बाप रे ! उसका साम्राज्य फकतना है-जो मन का र्वषय नहीं, मन की जहाँ

गम नहीं, बुद्धि प्जसको तनश्चय नहीं ंकर सकती, दृष्ट प्जसे देख नहींसकती, परन्द्तु है, है रात-हदन अपने आपको कहता रहता है, तो इस अप्स्तत्व की 'कथंउपलभ्यते' अथात्ि्और फकस प्रकार प्रातत करोगे? जबफक हर एक में जाहहर जहूर है।

नैव वाचा न र्नसा प्राप्तुंक्यो न चषुषा ।
अस्तीनत ब्रुवतोऽनयत्र कथं ंतदुपुलभ्यते।।

(कठ.3 - 6 - 12)

अस्तीत्येवोपलब्धव्यस्तत्त्वभावेन चोभयोः ।
अस्तीत्येवोपलब्धस्य तत्त्वभावः प्रसीदनत ।।

(कठ. 3 - 6 - 13)

बाहर भीतर लबालब पररपूण िहै। श्रुतत कहती है-उभयोः तत्वभावेन उपलधिव्यः 'है' और 'म'ै इन दोनों को अपना आप अपना स्वरूप जानकर प्रातत करना चाहहये। अस्तीत्येवोपलधिस्य तत्वभावः प्रसीदतत। 'है' 'म'ै दोनों को जो अपना स्वरूप जानता है उसके सामने तत्वभावः प्रसीदतत भगवान आत्मा प्रत्यि हो जाता है। जो 'है' है 'अप्स्तत्व' (भगवान) वही शरीर के अंदर से अपनेआपको अमभव्यक्त करता है, कहता है फक 'म'ै हूँ, 'म'ै हूँ। र्वद्वानों। बड़ी मजेदार चीज है-शास्र्ों के पढ़नेका यही फल है।

ववद्या त्रबनु वववेक उपजाये। श्रर्फल पढे ककये अरु पाये ।।

अब मजा आ रहा है। अब समझ में आया भाव, इसका भाव लगा? श्रुततयों के भाव को लगा लेना कोई खालाजी का घर नहीं ंहै। श्रुतत, वेद, पुराण, गीता, रामायण, भागवत, उपतनषद इन सबका भाव, बिो होने ेपर ही लगता है। यह बात दूसूरी है फक इसके साहहत्य को भले ही समझ लें, साहहत्य की दृष्ट से अथ िकरके भाषण भले दे सकतेहो, परन्द्तु भाव लगाने में तो बिोवान की ही पहुूँच (गम) होती है। आजकल कॉलेजों में उपतनषत् ्भी पढ़ाते हैं। कई र्वद्वान स्वयंभी पढ़ते हैं और बड़े-बड़े ेआचाय िइसकी व्याख्या भी करते हैं, परन्द्तु भाव ग्रहण नहीं ंकर पाते। यहद भाव समझतेहैं तो इन र्ंत्रों पर उनका ध्यान क्यों नहींजाता? जबफक श्रुतत इतनी स्पष्ट कह रही है? श्रुतत क्या कह रही है। आत्मदेश का तनवासी ही इसका अथ िलगा सकता है, अन्द्य देश का तनवासी नहीं। इसको शीघ्र समझ लेना चाहहये। अपने'म'ै से मभन्द्न कुछ नहीं,ं यही अनन्द्य दृढ़ता है। अभी प्रत्यि हो जाता है, अभी अनुभव होता है। हृदय में अपनेआपसे मभन्द्न अनुभव थोड़े ेहोता है। तो फफर प्रश्न उठता है फक स्वामीजी आपके समझानेसे तो यही र्वहदत होता है फक इस डंडें ेमें भी 'म'ै हूँ। (पू.ू श्री स्वामी जी कहते हैं) क्या इसमें भी शक है?

एतनेहु पर कररहदहं ंजेसंका। र्ोदहं ंते अधधक ते जड़र्नत रंका ।।

'म ' ैं डंडें ेमें भी हूँ। हाँ जी, हा ूँहै। तो फफर इसमें 'म ' ैं हूँ ऐसी आवाज क्यों नहींतनकलती ? बतलाते हैं? ध्यान से सुनो संसार त्रिगुणात्मक है, सत, रज और तम। तमोगुण से शरीर का तनमाणि होता है, रजोगुण से इप्न्द्रयाँऔर सतोगुण से बुद्धि। इस डंडें ेमें तमोगुण का काय िशरीर है-जड़ पदाथ िहै, इसमें सतोगुण का अभाव है। रजोगुण नहीं इसमलए इस डंडें ेमें इप्न्द्रयाँनहीं ंऔर सतोगुण नहीं ंइसमलए बुद्धि नहीं है, परन्द्तु व्यापक तत्व चेतन इसके अंदर भी है। चेतन के दो भेद होते हैं- सामान्द्य चेतन और र्वशेष चेतन। सामान्द्य चेतन का प्रतीक 'है' है और र्वशेष चेतन का प्रतीक 'म ' ैं हूँ। जहाँ इस (सामान्द्य चेतन) को बोलने का साधन रजोगुण का काय िइप्न्द्रयाँऔर सतोगुण का काय िबुद्धि ममलती है, वहींयह अपने आपको 'म ' ैं इस नाम से अमभव्यक्त करता है। जहाँपंच प्राण, पंच ज्ञानेप्न्द्रय, पंच कमेप्न्द्रय, पंच कोश, यह सब सामग्री एकि हों वहींपर 'अप्स्तत्व' सामान्द्य चेतन परमात्मा अपनेआपको र्वशेष रूप से 'म ' ैं हूँ ऐसा अमभव्यक्त करता है। इसीमलए यह चैतन्द्य अंदर से 'म ' ैं है, 'म ' ैं हूँ सदैव कहता रहता है। गूंगे में क्या 'म ' ैं नहीं हूँ? नहीं, गूंगे में भी 'म ' ैं हूँ, परन्द्तु वाणी नहीं होने से वह 'म ' ैं हूँ कैसे कहे? पशु, ु पिी के अंदर क्या चेतन नहीं है? क्या 'म ' ैं हूँ नहींकहते? जरूर करते हैं, मगर बैखरी वाणी न होने से 'म ' ैं हूँ ऐसा अमभव्यक्त नहींकर सकते। ठोस चीज है। इसी का नाम सेल्फ ररयलाइजेशन (आत्म सािात्कार) है। फकसमें 'म ' ैं नहीं ंहूँ? फकसका 'म ' ैं नहीं हूँ? क्या 'म ' ैं नहींहूँ? सवि पररपूण िहूँ। अब क्या कुछ बाकी है। कौन ऐसी चीज है जो मुझसे मभन्द्न है।

नैव वाचा न र्नसा प्राप्तुंक्यो न चषुषा ।
अस्तीनत ब्रुवतोऽनयत्र कथं ंतदुपुलभ्यते।।

(कठ.3 - 6 - 12)

अस्तीत्येवोपलब्धव्यस्तत्त्वभावेन चोभयोः ।
अस्तीत्येवोपलब्धस्य तत्त्वभावः प्रसीदनत ।।

(कठ. 3-6-13)

आओ, दूसूरी कोहट समझायें देखो इस गद्दी के पीछे पदि लगा है, कपड़े ेपर धचि खींचा है। धचिपट तो एक है। शीशे ेपर हो या पत्थर पर, कागज पर हो या कपड़े ेपर, चाहे दीवाल हो, इस धचिपट पर अनेक धचि धचत्रित हैं। धचिपट तो एक ही है, परन्द्तु अनेक प्रकार के धचि इस धचिपट पर खींचे हुए हैं, परन्द्तु इन अनेक धचिों को धचिपट से अलग नहींकर सकते। 'अप्स्तत्व' आत्मा धचिपट पर तृणृ से आहद ब्रह्मा पयन्द्ति सारा चराचर धचत्रित है। अब यह फूल है-तो 'है' हुआ धचिपट और फूल है धचि। इस 'है' पर हो सबका अप्स्तत्व है फकसमें ताकत है जो 'है' को अलग करदे? शरीर है, मन है, प्राण है, इप्न्द्रयाँहैं, संसार है इत्याहद र्वकल्प रूप सारा र्वश्व इस 'अप्स्तत्व' आत्मा धचिपट पर ही धचत्रित है। जी हा–ूँ

तीसरी कोहट- 'अप्स्तत्व' एक सम्राट मसंहांसन है। जब इस मसंहांसन पर 'म'ै बैठता है तो हो जाता है 'म'ै हूूं। वह और तू ये दोनों भी इस सम्राट मसंहांसन पर बैठनेके मलए आते हैं। वह जब इस मसंहांसन के पास आता है तो वह ममटकर 'म'ै हो जाता है। तू–ूजब इस मसंहांसन के पास आता है तो तू ममटकर 'म'ै हो जाता है। देखो-न वह रहा, न तू रहा-अरे भाई। मसंहांसन पर बैठकर वह और तू ूअपने को 'म'ै हूूं यही कहेंगे। इसमलए वस्तुतः वह भी 'म'ै और तू भी 'म'ै हूूं। इसी का नाम गणतन्द्र् है। जो प्जस पोस्ट पर हो अपनी ड्यूटी करो, गणतंि राज्य का तनवासी होकर रहना होगा। खबरदार, यह जो कुछ भी है सब गवनमेंट का है-प्जस बंगला (कोठी, मकान) में तुम रहतेहो वह तुम्हारा नहीं ंहै, सब राष्ट्र का है, गवनमेंट का है। जब राष्ट्र को जरूरत पड़ेगी वह बंगला, कोठी ले ली जाएगी, फकसी की भी स्वतंिसिा नहींहै। तो फफर कौन राजा, कौन महाराजा, कौन चोपदार, कौन फौजदार, सूबेदार, पोकदार सब ममट गये। एक शासन रह गया गणतंि अब आ जाओ र्वषयपर भगवान आत्मा से फकसी की भी मभन्द्न सिा नहीं है। सारे र्वश्व का सम्राट 'म'ै (सिा) इससे फकसी भी चीज को अलग करो तो उसका अप्स्तत्व ही न रहेगा। तुम अधिक काम करते हो तो तुम्हें अधिक आमदनी होगी, परन्द्तु तुम्हारी या फकसी की भी स्वतंिसिा नहीं ंहै। 'म'ै (आत्मा) राष्ट्र में इप्न्द्रयाूँ प्रजा हैं। मन प्रिानमंिी है। 'म'ै आत्मा गवनमेंट का शासन सबके मलए है। ये आूँखें देखती हैं, परन्द्तु यहद इनसे पूछो फक कौन है, तो आूँख क्या बतायेगी? 'म'ै आूँख हूूं। म ैके त्रबना आूँख का अप्स्तत्व मसद्ि नहीं ंहोता। यही गणतंि है। 'म'ै कान हूूं, म ैशरीर हूूं। त्रबना 'म'ै के फकसी की भी मसद्धि नहीं ंहोती। सब पर समान अधिकार है। फकतना सुंदर शासन है। यह ठोस चीज है। त्रबना मुझ आत्मा के फकसी की भी मसद्धि नहीं होती क्योंफक 'म'ै सविाार हूूं, सव िका सव िहूूं, सव िवस्तुकरके पूण िहूूं, 'म'ै फकसमें नहीं ंहूूं, 'म'ै फकसका नहींहूूं और 'म'ै नहीं ंहूूँ? लकड़ी फकसमें नहीं ंहै? चौकी में, खंभा में, तख्त में, लकड़ी फकसकी नहीं ंहै? लकड़ी सबकी है। और लकड़ी क्या नहीं है? सभी कुछ है। तो 'म'ै फकसमें नहींहूूँ? फकसका नहींहूूँ? क्या नहींहूूँ? कहीं भी मन का पता है? जरा मन को ढंढो न, फफर ढूूँढ़ो। भैया! मन के ठेकेदार बने हो, मन की मशकायत करते हो-तो वह मन है कहा?ूँ जरा खोज करो-ढूूँढ़ो, अरे मुबारक

हो-

है छाई ददल पे खार्मोशी, ये बीर्ारी रुबारक हो ।
ये कैसी ददल की बेहोशी, ये बीर्ारी रुबारक हो ।।1।।
खुिी गर् बह गये दोनों, इश्क सैलाब दररया र्ें ।
हवाय ेंआ रही ठंडी, ये बीर्ारी रुबारक हो ।।2।।
कहा ूँआना, कहाूँजाना, देखना और क्या सुनना ।
सरे बाजार सननाटा, ये बीर्ारी रुबारक हो ।।3।।

ध्यान दो-जब श्री भगवान कुरुक्षेत्र के मैदान मे अजुनि को आत्म तत्व का उपदेश हदये तो दोनों तरफ असंख्य सेनायें युद्ि के मलए तत्पर खड़ी थीं, लाखों सैतनक फकतना शोर हो रहा होगा, और अजुनि रथ के र्पछले भाग में बैठा है, भगवान एक हाथ घोड़े ेकी पीठ पर रखे हैं, दूसूरे हाथ में लगाम है और अजुनि की तरफ मुंडी टेढ़ी

 करके पीछे देखते हुए उपदेश कर रहे हैं। तो फफर भगवान के गहन आत्म तत्व का उपदेश अजुनि इतने ेहो हल्ला के
बीच कैसे सुना? इससे जाहहर है फक हल्ला अपनेदेश में था, न फक भगवान देश में? यहा ूँबडैं भी बजे ेतो बडैं की आवाज अपने देश में बजा करे। अपने देश में तो चारों तरफ सन्द्नाटा है। कुरुिेि का हल्ला यहद अजुनि के देश में रहता तो इस सूक्ष्म तत्व का तयाला वह कैसे पीता? प्जज्ञासुओंप्जस तत्व का तुमको बोि करा रहे हैं, तो तुम्हारे आत्मदेश में सन्द्नाटा है, तभी उसे समझ रहे हो। हल्ला अपनेदेश में होता रहे। यह बालक रो रहा है तो अपनेदेश में रोना है आत्मदेश में? रोना देश में रोना है। तो फफर क्या रोता रहे। सरे बाजार सन्द्नाटा है। लहर, लहर देश में है फक जल देश में। तो लहर उठा करे। जल का क्या नुकसान है-

खुिककस्मत से फकीरी का, खजाना भर्ल गया मुिको ।
जो होना है सो होने ेदो, ये बीमारी मुबारक हो ।।4।।

फकीरी का खजाना-क्या है? अरे भगवान की भी चाह नहीं, प्जसकी ऐसी िारणा है-सचमुच में वही फकीर है। सुन लो कान खोलकर, भगवान की भी चाह प्जसको न हो-वही अचाह है और यही है फकीरी का खजाना। भगवान को सब कुछ कुछ दे देनेके बाद भगवान उसको क्या देता है? 'अचाह'। आत्म समपणि कर तुमने ेअपने वजूद को ममटा हदया तो भगवान तुम्हें क्या देंगे? तुम्हें अफकंञ्चन बना देंगे, 'अचाह' देंगे। फफर भगवान की भी चाह नहीं ंरहेगी, गोर्वंदाय नमो नमः

दरर्वेिों की बातों को, समिना बूिना मुप्श्कल ।
कोई समिे तो क्या समिे, ये बीमारी मुबारक हो ।।5।।

दरवेश कहतेहैं मसप्जद को, िीवान को, फकीर को और दरवेश-कुिे को भी कहते ेहैं। कुिे में एक बड़ा गुण है-कुिे को तयार करके जब बुलातेहो तो वह पूँछ हहलाकर आपके पास आ जाता है। और एक डंडा मारो तो भागता है परन्द्तु फफर उसे पुचकार कर बुलाओ तो वह फफर प्रेम से तुम्हारे पास आ जायेगा। दस बार मारो और दस बार बुलाओ-दस बार भागने पर भी कुिे के हृदय में मानापमान की लकीर नहीं ंपड़ती। इस तरह दरवेश (संत) का स्वभाव होता है-

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो ममिाररपषयोः ।
सवारम्भ पररत्यागी गुणातीतः स उच्यते ।।

प्जसके हृदय में मानापमान की लकीर न पड़े ेवही दरवेश है। ऐसों की बातों को समझना मुप्श्कल है।

जहा ूँमें लाइलाजे र्जमकी, दहकर्त न है कोई ।
मौज में चल रहे िोंके, ये बीमारी मुबारक हो ।।6।।
मुनादी मुल्क दुननया ूँमें, हरर्ि हो रही हरदम ।

रुबारक हो, रुबारक हो, ये बीर्ारी रुबारक हो ।।7।।

(मुक्तोद्गार)

चतुथ मददवस : दूसूरी बेला

दोपहर 2.00 से 4.00 बजे तक

श्रीकृष्ण जनर् कथा

सम्राट परीक्षित का प्रश्न श्री स्वामी शुकुदेवजी के प्रतत हो रहा है, राजोवाच-

कधथतो वंविवस्तारो भवता सोर्सूयूयमोः ।
राज्ञां ंचोभयवंश्यानांचररतं ंपरर्ाद्भुतुर् ्।
यदोश्च धर्ि्मीलस्य ननतरांर्ुनुनसिर् ्।
तत्राोंनिावतीणस्मय ववष्णोवीयाणमण िंस नः ।
अवतीय मयदोर्वां भिगवान् ्भूतूभावनः ।
कृतवान् ्यानन ववश्वात्र्ा तानन नो वद ववस्तरात् ्।।

(श्रीमद्भा. 10/1/1-3)

सोम सूययिोः उभयवंश्यानां राज्ञांपरमाद्भुतम् ्चररत एवं ंवंश के वर्स्तारः भर्वता कधथतः। सूयवंशि और चंरवंश दोनों वंश के राजाओंके सुंदर अद्भुत चररि और वंश वर्स्तार श्रीमद् भागवत के नवम् ्स्कन्द्ि तिक आप सुना चुके हैं। िमशिीलस्य यदोः िमशिील िमनैष्ठक महाराजा यदु ुके वंश में भूतभावन भगवान वर्श्वात्मा अवतार लेकर जो भी चररि फकए हैं वह कृपा करके कहहये-

ननवृितवषैरुपगीयर्ानाद् भवौषधार्ोत्रर्नोऽभभरार्ात् ्।
क उिश्लोकगुणुानुवादात् ्पुर्ान् ्ववरझयेत ववना पिुघ्नात् ्।।

(4 - 1 - 10)

उिमश्लोकगुणानुवादात, कृष्णचररतात अप्स्मन् ्संसारे इततभावः कः पुमान वर्रज्येत, को अथःि कोऽप्प न वर्रक्तंकुयाति उिम श्लोक जो भगवान कृष्ण हैं का जो चररि है गुणानुवाद उससे संसार में कौन ऐसा व्यप्क्त है प्जसे वैराग्य हो, प्रायः सभी श्रवण करते हैं, क्योंफक 'संसारे ियः श्रोतारः संप्न्द्त'- संसार में तीन प्रकार के श्रोता होते हैं-' भक्ताः मुमुिवः एवं ंर्वषयेनः'-' भक्त मुमुि ुएवंर्वषयी' जेभक्ताः तेषांकथंकृष्ण चररत? उपगीयमानं। जेमुमुिवः तेषा कथं? भवौषिं और जे र्वषयेनंतेषा कथं? मनोमभराम। जो भक्तगण हैं उनके मलए भगवान का चररि कैसा है?' श्रृणूवप्न्द्त गायप्न्द्त सिवः' पे्रेम पूवकि श्रवण करते हैं? और भक्तजनों के बीच बैठकर इसका उपगायन करते हैं और जो मुमुि है, मुमुिओंके मलए कैसा है फक भव औषि है। 'भवप्न्द्त जनः अप्स्मन संसारः तस्य औषिाम भवऔषिम।' संसार जो आवागमन का रोग है उसके नाश के मलए यह भवऔषि है, दवा है। और जो श्रृंगारी है........ उनके मलए मनोमभराम है, मनोरंजन है, परंतु ऐसे भी प्जनको भगवान का चररि अचछा नहीं ंलगता है, वो कैसे है? अपशुधुनात त्रबना अपगतः शुकः शोको जस्मात् ्स आत्मा तं हप्न्द्त इतत पशुधुनात र्वनः। शास्ि में भगवान आत्मा का र्वश्लेषण अपशुकु हदया है, अपशुक का मतलब ये होता है 'तरतत शोक आत्मर्वत' र्वद्वान शोक मोहौ जहातत। जो आत्मा को जानता है, अपने स्वरूप जो चराचर का अप्स्तत्व है-उसे जो जान लेता है, अनुभव कर लेता है वो शोक मोह से तर जाता है। तो प्जसको जान करके शोक मोह नष्ट हो जाय इसमलए भगवान आत्मा को अपशुकु कहा है। जो अपशुपुघ्न है, आत्मघ्न है, आत्म वंधचत है उन्द्हीं को भले ही भगवान का गुणानुवाद र्प्रय न लगे और बाकी तो सभी श्रवण करते हैं। अब प्रश्न होता है फक आत्मा तो अजर-अमर, अर्वनाशी है तो आत्मा का हनन तो कोई कर नहीं सकता तो व्यप्क्त का नाम आत्मघ्न कैसे हुआ? इस पर कहते ेहैं।

नृदेह राद्यं सुलुभं,ं सुदुलुभंम ंप्लवं सुकुल्पंगुरुकणधमारर् ।
र्यानुकूलेन नभस्वतेररत पुरान् ्भवान्धर् ्न तरेत्स आत्हा ।।

प्जस प्रकार नदी पार करने ेके मलए इतनी सामग्री की जरूरत पड़ती है- नाव, पतवार, केंवट और अनुकूल वायु। इसी तरह संसार रूपी नदी पार करने के मलए ये शरीर है, यही नाव है और श्रद्िा ये पतवार है। गुरु जो है, कणिार केंवट है और भगवान की जो कृपा है यही अनुकूल वायु है। ऐसा सुंदर सुलभ साज पाकर जो न तरा स आत्मघ्न वही आत्मघाती है।

नर तन भव बाररध कहुँ बेरो ।
सनरुख र्रुत अनुग्रह रे्रो ।
करनधार सद्गुरु दृढ नावा ।
दुलुभम साज सुलभ करर पावा ।
जो न तरै भव सागर नर सराज अस पाय ।

सो कृत ननदंक रं्दंगनत आत्हन गनत जाय ।।

रोदहण्यास्तनयः प्रोक्तो रार्: सङ्कषणमस्वतया ।

देवक्या गभसमम्बनधः कुतो देहानतरं त्रबना । (10.1.8)

कस्र्ानरुकुनदो भगवान् ्वपतुगेहाद व्रजं ंगतः ।

क्व वासं ंज्ञानतभभः साधं ंकृतवान् ्सात्वतांपनतः ।।

(10.1.9)

भगवान प्जस हदन अवतार मलये हैं उसी हदन गोकुल को चले गये अथवा कुछ हदन रहकर के गये हैं और वहाँूफकतने हदन रहे और वहाँ क्या-क्या चररि फकये, वहाँूसे मथुरा कब आये, मथुरा से द्वाररकापुरी कब गये इत्याहद ।

एतदनयश्च सवं ंरे् रुनु कृष्णववचेन्ष्टतर् ।

वक्तुर्हमभस सवज्ञश्रद्दधानाय ववस्तृतृर् ्।।

हो। शुकदेव [illegible] पूछा बाकी भगवान तुम तो सवज्ञि बताओ भगवान के और बहुत से अवतार हुए हैं और अवतारों के संबंि में तुम्हारा प्रश्न नहीं ंहोता, चररि सुनने की इचछा तुम्हें नहींहोती, भगवान श्रीकृष्ण के ही चररि सुनने की इचछा क्यों करते हो? क्या बात है? परीक्षित कहते हैं- भगवन् ्! बात ये है फक भगवान कृष्ण हमारे परम पूज्य हैं, हमेशा से हमारे और हमारे पररवार की रिा करते आ रहे हैं। (शुकदेव जी पूछते हैं फक) कब और कैसे रिा फकये? तो कहते ंहैं-

वपतार्हा रे् सर्रेऽर्छजयै देवव्रताद्यानतरथैन्स्तभर्ङ्धगलैः ।

दुरुत्ययं ंकौरवसैनैयसागरं, कृत्वातरन् ्वत्सण्दं स्र् यत्प्लवाः ।

दौण्यस्त्र ववप्लुषुटभर्दं दङ्गं ंसनतानबीजं ंकुरुपाण्डवानार् ्।

जुगोप कुक्षषं ंगत आिचक्रो र्ातुश्च रे् यः िरणं ंगतायाः ।।

(10-1-5)

परीक्षित कहता है 'मे र्पतामह पाण्डवाः समरे संग्रामे अमरञ्जयैः' परंतु'कौरव सैन्द्य सागर दुरुत्ययः ।'

महाभारत में मेरे र्पतामह जो थे ेपाण्डव वो देवताओं को भी जीतने वाले थे–े'अमरजैः' थे परन्द्तु कौरवों की जो सेना थी वो सागर रूप थी। वो कहते ेहैं फक समुर में तो बड़े–ेबड़े ेमत्स्य होते हैं।

नतभर्र नार् ित जोजन ववस्तरः नतभर्धगलोसनत... ।।

समुर में एक ततममर नाम का मत्स्य होता है जो सौ योजन वाले मत्स्य को तनगल जाता है। जब कौरवों की सेना समुर के समान थी तो बड़े–बड़े ेमत्स्य कौन थे? देवव्रताद्याततरथैप्स्तममङ्धगलैः ।

देवव्रत ग्ानेभीष्र् वपतार्ह द्रोणाचाय मये सब त्स्र्य के सर्ान थे।

यद्यवप रे् वपतार्यः अर्रंजै ैपरंतु कौरव सागरं न पार कतुं ंसर्थःम ।।

यद्यर्प हमारे र्पतामह 'अमरजैः' थे ेपरंतु कौरव सैन्द्य सागर को पार करने में यातन जीतनेमें समथ िनहीं ं थे। भगवान् ्श्रीकृष्ण के असीम कृपा से गोवत्स पद के समान अट्ठारह हदन में ही पार कर गये अथात् िर्वजय प्रातत फकये। भगवान ने तुम्हारी रिा कब की तो कहता है-

द्रौणयस्त्रववप्लुषुटभर्द दंङ्गं ंसनतानबीजं ंकुरुपाण्डवानार् ्।
जुगोप कुक्षषं ंगत आिचक्रो र्ातुश्च रे् यः िरणं ंगतायाः ।।

(6 - 1 - 10)

द्रोणस्योत्पनतं ंद्रोणी अश्वथार्ा ते ब्रह्मास्त्रेण गभिामये संतानबीजं ं
कुरुपाण्डकांनार् । ववप्लुषुटं तं ंकाले िरणंगतायाः उिरा कुर्ारयाः ।।
आिचक्रः को अथ मगृहीता चक्रेण योनः श्रीकृष्णः भगवतः
कुषेण गतः र्ां ंपरीक्षषतं जुगोप कुक्षषं ंको अथ मरष ।।

रोणाचाय िका पिु रोणी अश्वथामा जो था कौरवों का पिपाती और दुयोिन का घतनष्ट ममि था। महाभारत समातत हो जाने पर कौरव-पाण्डव दोनों का संतान बीज म ैंपरीक्षित उिरा के गभ िमें अवशेषे रह गया था। मेरे र्पता अमभमन्द्यु भी चक्रव्यूह भेदन में मारे गये थे। उस समय उसने (अश्वत्थामा) सोचा फक म ैं ब्रह्मास्ि का प्रयोग करूँू और गभ िमें प्स्थत जो गभस्िथ बालक है ये भी नष्ट हो जाये। उस समय उसनेब्रह्मास्ि का प्रयोग फकया। मेरा शरीर गभाशिय में जलनेलगा। मेरी माँिउिरा भगवान के शरण में गई। उस समय भगवान श्रीकृष्ण सुदशनि चक्रिारी माता के गभ िमें जाकर के सुदशनि चक्र से भगवान ने ब्रह्मास्ि का नाश फकया और जब तक म ैं पैदा नहीं ंहुआ तब तक तनरंतर मेरी रिा के तनममि भगवान को भी उतने हदन गभ िमें रहना पड़ा। इसमलए भगवन् ् ! भगवान श्रीकृष्ण का चररि हमें बड़ा ही र्प्रय है। आप सुनाइये कृपा करके। जब सब प्रश्न परीक्षित के हो गये-

एवं ननिम्य भृगुनुनदन साधुवादं, वैयासककः स भगवानथ ववष्णुरातर् ्।
प्रत्यय् मकृष्णचररतंकभल कल्षघ्नं,ं व्याहतुर्मारभत भागवत प्रधानः ।।

(10 - 1 - 14)

वैयासकी: भगवान शुकुदेवः एवं ंतनशम्य को अथ िश्रुत्वा सिुवाद प्रकृन, प्रत्यचय िको अथःिप्रसंस्य कले: कलसंतापं हप्न्द्त इतत कमलकल्मशघनंकृष्णण चररत व्याहुत िकधथतं भागवत प्रिानंभगवानः शुकुदेवः आरभत ।।

राजा परीक्षित के प्रश्न को सुनकर स्वामी शुकुदेव बड़े ेप्रसन्द्न हो गये और भगवान कृष्ण के जो चररि हैं, कमलमघ्न कमल के पापों का नाशक कहने ेके मलए आरंभ कर हदये। िन्द्य हो परीक्षित ! भगवान वासुदेुव की कथा में तुम्हारी ऐसी अनन्द्य प्रीतत क्या कहना।

वासुदेुव कथा प्रश्नः पुरुषांस्त्रीन् ्पुनानत दह ।
वक्तारं पूछकं श्रोतृसूतत्पादसभललं ंयथा ।।

(10 - 1 - 16)

अचछा तो फफर अब सुनो भगवान का चररि हम सुनाते ेहैं।

भूभूर्दृप्मत नृपृव्याजदैत्यानीक ितायुतैः,
आक्रानता भूरूरभारेण ब्रह्माणं ंिरणं ंययौ ।
गौभूत्मवाश्रुरुखी णखनना क्रनदन्नत करुणंववभोः,
उपन्स्थतान्नतके तस्ै ैव्यसनं स्ववोचत ।।

(17-1-10)

जब अत्याचारी राजाओंके अत्याचार से पृथूवी भारायमान हो गई-न सह सकी, उस समय गौ का रूप िारण कर त्रबलखती हुई ब्रह्मा के शरण में गई। ब्रह्मलोक में ब्रह्मा ने पूछा बंसुन्द्रि । कैसे आई तू? तो पृथूवी कहती है- धगरी सरर मसंु भार नहीं ंमोही । जस मोहह गरुअ एक पररोही ।।

महाराज मुझ पृथूवी पर अनेक सागर, अनेक पवति, अनेक नहदयाूँहैं। इनसे मुझेकोई भार नहीं,ं परंतु यहद कोई व्यप्क्त पररोही है, ईप्ष्यालु, परतनंदंक है तो एक ही व्यप्क्त का भार सहन करने ेमें म ैंसमथ िनहीं ंहूूँ।

ब्रह्माजी ने तनणयि फकया फक अब देवताओं को बुलाना चाहहए, तो भगवान ब्रह्मा सब देवताओं को इकट्ठा फकये। सभा लगी उस सभा के सभापतत भगवान ब्रह्मा हुए। र्वषय रखा गया सभा में फक भाई प्जतने भी देवता हों अपनी-अपनी राय दो, हमको, भगवान की स्तुतत करने ेके मलए कहाूँ चले। इस कथानक की भगवान शंकर माता पावतिी से कैलास में कह रहे हैं-

बैठे सुर सब करही ववचारा कहुँ पाइअ प्रभुकरदह पुकारा ।
पुर बैकुंठ जान कह कोई काऊ कह पयननधध बस प्रभु ुसोई ।।

फकसी देवता ने ब्रह्माजी को राय हदया फक बैकुंठ चले। वहाँ भगवान र्वष्णु रहतेहैं, फकसी देवता ने कहा ीरि सागर चलना चाहहए वहाँभगवान शेषेनारायण रहते हैं। माता जी सुन रही थीं। माताजी ने पूछा भगवन ये तो बताओ क्या उस जमाने में भी इलेक्शन की बीमारी थी? कोई बैकुंठ की पेटी में वोट डाल रहा, कोई ीर सागर की पेटी में वोट डाल रहा है। बात क्या है? क्या उस जमाने में भी मतभेद था? भगवान शंकर ने कहा- नहींमतभेद का तो कोई काम नहीं। फफर-

जाके हृदय भगनत जस प्रीनत, प्रभु ुतहं प्रगट सदा यह नीनत ।।

माताजी ने कहा- महाराज आप भी तो थे न उस सभा में तो आपने फफर अपनी राय क्या हदया। भगवान कहते ेहैं, सुनो-

तेदह सर्ाज धगररजा र् ैंरहेउँ, अवसर पाई वचन एक कहेउँ ।

मुझे ेभी मौका ममला बोलनेका। सभापतत ब्रह्मा का दृष्टपात एकाएक मुझ शंकर पर हुआ। तब उन्होंने कहा- देवताओं, सबनेतो अपनी-अपनी राय दी परंतु भगवान शंकर भी तो यहा ँबैठे हैं, उनकी भी तो राय ले लेनी चाहहए, वो कहाँ जानेको कहते हैं? शंकर जी कहते ेहैं- मुझे ेमौका ममला बोलनेका तब मनैं ेक्या कहा-

सभी उपप्स्थत सभा सदस्यगण देववृन्द एवं सभापतत महोदय भगवान ब्रह्मा! यहद मुझ शंकर की राय ली जाती है तो म ैंयही कहूँगा फक ीरसागर और बैकुंठ जानेकी कोई आश्यकता नहीं। क्योंफक -

हरर व्यापक सवत्रम सर्ाना, पे्रेर् ते प्रगट होदह हर् जाना ।।

कहीं ंजानेकी जरूरत नहींपरमात्मा भरपूर है। सव िदेश करके पूण,ि सव िकाल करके पूण,ि सव िवस्तु करके पूण िततलभर जगह प्जससे खाली नहीं ंहै और फफर 'समाना' ऐसी बात तो है नहीं ंफक भगवान यहा ँपर एक फकलो हों और वहाँपर एक छटाक समान यातन बराबर एक-सा, जी हाँ! अरे भाई। भगवान पर बैठे हो, बैठकर कथा सुन रहे हो। अरे कहो जमीन में बैठे हो। जहाँजमीन में बैठे हो, भगवान नहीं है क्या? कह दो फकसी के हृदय में साहस हो तो जहा ँहम बैठे हैं, भगवान नहीं ंहै। ऐसे में तो भगवान का व्यापकपना अमसद्हो जायेगा। वो जगह भगवान से खाली हो जायेगी। भगवान पर ही बैठे हो, सोते हो, खाते ेहो, पीतेहो, चलते हो सब भगवान। सवि भगवान सब कुछ भगवान-

हरर व्यापक सवत्रम सर्ाना, पे्रेर् से प्रगट होई हर् जाना ।
दि काल ददभि ववददिहू र्ांही कहहू सो कहाँ जहा ँप्रभु ुनाहीं।
अग जगर्य सब रदहत ववरागी, पे्रेर् ते प्रभु प्रगटई ज्भर् आगी ।।

सव िदेश करके पूण,ि सव िवस्तु करके पूण,ि मगर कालान्द्तर में, देश काल वस्तु का नाश हो जाता है। देश, काल, वस्तुमें व्यापक परमात्मा का देश काल वस्तु के नाश होनेमें यातन प्जसमें परमात्मा व्यापक है, उस व्यापक के नाश होने में क्या परमात्मा का भी नाश हो जाता है? तो भगवान शंकर कहते हैं, नहीं ं'वर्रागी।" अग, जगमय सब रहहत वर्रागी', वर्रागी मानेअसंग सब में रहते हुए भी 'तनलेप' हैं।

माताजी ने पूछा- जब आपनेऐसा कहा तो आपके कथन का फकसी ने वर्रोि फकया? भगवान शंकर कहते हैं-नहीं,ं वर्रोि कौन करेगा? फकसकी ताकत है, वर्रोि करने की। तो फफर क्या हुआ? अरे हुआ क्या-

र्ोर वचन सबके र्न र्ाना, साधु-साधु कदह ब्रह्र् बरवाना ।।

सव िसम्मत से प्रस्ताव पास हो गया। भगवान शंकर ने जो कुछ कहा है, सब ठीक है, कहीं ंचलने की जरूरत नहीं। चारों तरफ से िन्द्यवाद, िन्द्यवाद की आवाज, थर्क्ंयू-थर्क्ंयू, चारों तरफ से प्जिर देखो-उिर पास हो गया प्रस्ताव ।

हा,ँू पुराणों में, रामायण में, जहा ँूकहीं ंभी ज्ञान का प्रसंग आता है, वहाँूभगवान शंकर और माता पावतिी जी के संवाद में आता है। भगवान मशव जो हैं कल्याण स्वरूप कहे जाते हैं, सािात् ्आत्मा हैं। मशव मानेसािात् ् आत्मा के कल्याणे ि ातु से 'मशव' शधद बनता है। है प्जसे सभी मानस प्ेरेमी पढ़ते हैं-

औरउ एक गुपुत र्त सबदह कहउुँ **कर जोरर ।**
संकर भजन त्रबना नर भगनत न पावई र्ोरर ।।

(रा.उ.कां. 451)

भगवान राम कहते ेहैं क्या गुतत मत है, प्रगट मत नहीं-

औरउ एक गुपुत र्त सबदह कहउुँ **कर जोरर ।**
किर भजन त्रबना नर भगनत न पावई र्ोरर ।।

'शं ंकल्याणं करोतत इतत शंकर:', 'शं' ं मानेकल्याण और 'कर' माने करनेवाला तो त्रबना अपनेस्वरूप भगवान आत्मा को जानेकल्याण तो होता ही नहीं। तो शंकर नाम आत्मा का है। त्रबना अपनेस्वरूप को जाने, भगवान राम कहते ेहैं, मेरी भप्क्त नहीं ंपा सकता। यही गुतत मत है और एक गुतत- सबहहं ंकहउँू कर जोरर शंकर भजन त्रबना नर भगतत न पावई मोरर ।।

हा ँूजी, तो सभी देवता ममल करके 'पुरुषसूक्त' मंि से भगवान की स्तुतत फकए, उस समय आकाशवाणी हुई-

धगरं सर्ाधौ गगने सर्ीररतां, ननिम्य वेधान्स्त्र दिानुवाच ह ।
गां पौरुषीं ़ेर् श्रृणुतुार्राः पुनववधमीयतारिुतथैव र्ा धचरर् ्।।

(10.1 21)

पुरैव पुंसावधृतो धराझवरो, भवद्भभर्रंयिदुमषूपजनयतार् ्।
स यावदुवुया मभररीश्वरेश्वरः स्वकालिक्त्या षपयंश्चरेद् भुवुव ।।

(10.1.22)

पौरुषी वाणी हो रही है। ब्रह्माजी ने फकस समय सुना? समाधि काल में-

धगरं सर्ाधौ गगनेसर्ीररतां, ननिम्य वेधान्स्त्रदिानुवाच ह ।।

भगवान ब्रह्मा पौरुषी वाणी सुनकर, देवान प्रतत उवाच- देखो भाई, आकाशवाणी हो रही है, इसको म ैं समझेंगा और जो तुम लोगों से कहूँगा उसे भूलना नहीं–

पुरैव पुंसावधृतो धरा झवरो भवद्भभर्रंयिदुमपूप जनयतार् ्।
स यावदुवुया मभररीश्वरेश्वरः स्वकाल िक्त्या षपयश्मचरेद् भुवुव ।।

'िरा' जो पृथ्वी है उसको जो कष्ट है, उसके तनवारण के मलए अवतार अवश्यमेव होगा।

वसुदेव गृहे साषाद् भगवान् ्पुरुषः परः ।
जननष्यते तत्प्रयाथं ंसम्भवनतु सुरु न्स्त्रयः ।।

(10.1.23)

वसुदेव की पत्नी देवकी के गभ िसे अवतार अवश्यमेव होगा। योगमाया के द्वारा संसार को तनश्चय होगा फक कहीं ंन कहीं अवतार अवश्य हो गया। आकाशवाणी सुनकर देवताओं को बड़ा आश्वासन ममला। देवता अपने-अपनेस्थान पर आ गये। कालान्द्तर में उग्रसेनी कंस ने देवकी का र्वाह वसुदेव से फकया और बहुत कुछ दहेज देकर र्वदा करनेजा रहा था। उस समय अब कंस के मलए आकाशवाणी होती है। कंस !

अस्यास्त्वार्ष्टर्ो गभा महनतायां वहसेऽबुध ।

(10.1.34)

अरे अबिो मूख िकंस !

'अस्याः देवक्याः अष्टमो गभाःत्वांहन्द्ताः' प्जस प्रसन्द्नता के साथ तू आज अपनी बहन देवकी को र्वदा करने ेजा रहा है, अरे! इसी का जो आठवूाँ गभ िहोगा वो तेरा काल होगा, उसी के हाथ तेरी मृतूयुतनप्श्चत है। कंस सुना और सुन करके रथ से उतर पड़ा और देवकी का केश पकड़कर पटक हदया पृथूवी पर और तनकाला खड्ग और इस दुषुटा को मार डालूंगा कहा। उस समय महात्मा वसुदेवजी र्वचार करनेलगे, अभी तो ये मूख िबड़ा प्रसन्द्न था, अब क्या हो गया इसको? तो वसुदेव जी कहते हैं-

श्लाघनीयगुणुः िुरैभवमान् ्भोजयिस्करः,
स कथं ंभधगनी हनयात् ्न्स्त्रयरुदुवाहपवणमण ।।

(10.1.37)

भोजराज ! अभी तो तुम बड़े ेप्रसन्द्न थे, ऐसे र्ववाह के मंगलमय पव िपर अपनी बहन देवकी को भैया क्यों मारते हो? क्या बात है? कंस ने कहा-चुप रहो ! अभी आकाशवाणी हुई है देवकी का आठवूाँ गभ िमेरा काल होगा इसमलए दुषुटा को नहीं छोडूंगां मार डालूंगा पार्पनी को। वसुदेवजी ने कहा ठीक है, परंतुसोचो तो सही -

रृतूयुजनमर्वतां वीर देहेन सहजायते,
अद्य वाब्दितानते ेवा रृतूयुवै प्राणणनां ध्रुवः ।।

(10-1-38)

ि्देह में मृत्यु भी पैदा होती है।सह जायते मृतूयु।' जन्म लेने वालों के साथ में अथात्
ये न समझना चाहहए फक मरनेके समय मृतूयु कहींबाहर से आती है। गभ िसे लेकर मृतूयु पयन्द्ति चौबीस घंटा देह और मृतूयु का र्वयोग कभी होता ही नहीं।

अरे! प्जस हदन से बचचा पैदा होता है उसी हदन से उसकी आयु घटने लगती है। अज्ञानता के कारण माता-र्पता प्रसन्द्न होते हैं फक अब मेरा बचचा घुटने ेके बल चलनेलगा, बड़ा हो गया। अब दौड़ने ेलगा, अब बोलनेलगा, अब ये र्वचार करो फकतने ेहदन की उमर घट गई उसकी। अरे भाई। प्जस हदन से बचचा बाहर आता है उसी हदन से तो उसके आयु का हहसाब होगा न? अरे उसी हदन से हहसाब लगेगा भाई। पाचूँ सालका बालक हो गया तो पाचूँ साल की उसकी उमर घट गई। दस साल का हुआ तो दस साल की उमर घट गई। उमर तो उसकी घट रही है न। तो अफसोस के बदले दुतुनया ूँहूँसती है। कैसी उल्टी खोपड़ी है। अरे उसी हदन से रोना शुरु करे। मगर ये बात कोई फक्कड़ ही कहेगा। हा!ूँ और सबकी हहम्मत नहीं ंकहनेकी। प्जस हदन पैदा हुआ, उस हदन से रोना शुरू कर दे। रोना तो एक हदन है ही, मरनेके बाद, उसी हदन से शुरू कर दे रोना, क्योंफक उमर घट रही है िीरे-िीरे। अरे मृतूयुसाथ में नहीं ंहै तो जैसे बालक पैदा होता है वैसे ही रहना चाहहए। मृतूयु जो है जैसे दीमक कौड़ा लकड़ी को खाता है वैसे ही चुन रही है।

रृतूयुजनमर्वतां वीर देहे न सह जायते ।।

अचछा! और जो कोई पैदा होता है न वो जीनेके मलये पैदा नहींहोता मरने के मलए पैदा होता है। जो जन्म लेता है वो मरनेके मलए। जी हा!ूँ अरे जब मरनेके मलए ही पैदा होना है तो वो आज मरे या शतान्द्तेसौ बरस बाद माना तो है ही, तो अफसोस करनेकी क्या जरूरत है।

रृतूयुजनर्ता वीर देहेन सह जायते ।।

देखो न ! जब छोटे-छोटे बचचे जब बड़ों को प्रणाम करते हैं, चरण छूते हैं तो बड़े ेलोग आशीवादि देते हैं-जीते रहो बेटा! अगर मरनेकी शंका नहीं ंतो आशीवादि की क्या जरूरत। जीते रहो बेटा। या अरे यार व्यवहाररक शधदों में ये रहस्य भरा हुआ है। कोई समझे ेतो समझे।े जीते रहो बेटा ! तुम्हारे आशीवादि से जीता रहेगा? उसे तो मरना ही है एक हदन। कोई भी आशीवादि दो मरना ही है, पैदा जो हुआ है। इन बातों को अगर समझ मलया जाय, अचछी तरह से ये बातें हदमाग में बैठ जाये तो दुतुनया ूँमर जाये कभी आंसू न बहे। दुतुनयाूँपागल हो जाती है।

रृतूयुजनमर्ता वीर देहेन सह जायते ।
अद्य वाब्दितानते ेवा रृतूयुवै प्राणणनां ध्रुवः ।।
देहे पछचत्वर्ापनने देही कर्ानुमगोऽविः ।
दहानतरर्नुप्राप्य प्राक्तनं त्यजते वपुः ।।

(38.1.10)

वसुदेव जी समझा रहे हैं कंस को फक 'देहे पञ्चत्वमापन्द्नेदेही कममनुगोऽवशः' - देही जीव-देही जो जीव है, जो देह िारण करे उसका नाम देही। देही जो जीव है अरे कमानिुगुः इसका नाम है कमानिुग। जीव को कहते ेहैं कमानिुग। 'कमाणि ाम अनुपश्चात् ्गप्चछतत इतत कमानिुगः' - कमों के जो पीछे-पीछे चले घसीटता फफरे, घसीटा जाय, इसीमलए इसका नाम कमानिुग। देखो कतापिने, भोक्तापने के अंहकार को लेकर जो भी कम िफकया जाता है वह सभी कम िजीव के ही फकये हुए, जीव को अनेक योतनयों में घसीटकर ले जाता है। हालांफक जीव जानेकी इचछा नहीं ंकरता मगर करे क्या? 'अवशः' र्ववश होकर के मजबूरी से जाना ही पड़ता है, रोकर जाये या हूँसकर। कमाई जो फकया है, भोगेगा कौन? जी हाूँ ! बड़ा मुप्श्कल है। इसीमलए जीव कम िकरने ेमें स्वतंिहै, परंतु फल भोगने में परतंिहै। स्वतंिनहीं ंहै।

कोई भी व्यप्क्त चोरी करता है। चोरी करने में तो स्वतंिहै। एक पैसा चोराये या लाख रुपया स्वतंिहै वो पर कोई चाहता है हमें सजा ममले हमारे हाथ-पैर में हथकड़ी बेड़ी पड़े?े कोई नहीं चाहता पर फल भोगने में, सजा भोगने में परतंिहै। चाहे रोकर सजा भोगे या हूँसकर। इसी तरह से जीव के ही फकये हुए अहंकारवश, जो कम िहै वे कम िजीव को घसीटकर ले जाते हैं। और इसको भोगना पड़ता है और जो अपनेआपको जानता है फक म ैंचराचर का

 अप्स्तत्व हूँ, व्यापक तत्व 'म ै' आत्मा हूँ। इस समझ में इस ज्ञान में, इस अनुभूतत में जो कम

किरता है वो कम िको
घसीटकर, समेट कर ले जाता है। अब जो तुम्हें पसंद हो चुन लो भैया।

अगर घसीटू बनना है तो अपनेआप को जीव मानो, जीव मानकर कम िकरो और कम िको घसीटना है तो फफर अपने आप को भगवान आत्मा जानो, उसमें कहना ही क्या है। त्रबल्कुल। आत्मवेिा पुरुष भी कम िकरता है, जो अपने आपको आत्मा जानता है। वह भी कम िकरता है और जो अपने आपको जीव मानता है अरे ! जो अपने आप 'म ै' को आत्मा जानता है वह भी कम िकरता है और अपने'म ै' को जो जीव मानता है वह भी कम िकरता है। मगर माननेमें घसीटू है, जो अपनेआप को 'म ै' को व्यापक तत्व आत्मा जनता है वह कम िवो भी करता है मगर कमों में ताकत नहीं ंफक उसे घसीट सके, क्योंफक उसके फकये हुए कम िभुने ेहुये चने के समान हैं। जी हा! ूँ फुटाने ेहैं! जली हुई रस्सी के समान हैं। रस्सी जब जल जाती है वो राख भी टेढ़ी-मेढ़ी हदखाई देती है, मगर वो बंनि का कारण नहीं ंहोती। इसी तरह से आत्मवेिा पुरुष के जो कम िहोतेहैं, आत्मनैष्ठक के जो कम िहोते हैं, बिेवान के जो कम ि होतेहैं, वो जली हुई रस्सी के समान होते हैं, वो कम िउसे बंनि में नहींडालते। जीव के कम िकचचे दानेहैं और आत्मनैष्ठक के कम िभुने ेहुए दानेहैं। फुटाने हैं!

देहे पछचत्वर्ापनने देही कर्ानुमगोऽविः ।

दहोनतरर्नुप्राप्य प्राक्तनं त्यजते वपुः ।।

व्रजंन्स्तष्ठन् ्पदैकेन यथैवैकैन ग्छनत, (10-1-39)

यथातृणजलूकैूवंदेही कर्गमनतंगतः।।

(10 - 1 - 40)

एक देह से दूसूरे देह में जाना ! परंतु फकस तरह से? 'प्राततनं वयुः त्यजते ।' पहले इसका संकल्प पहुँच जाता है, जहाँ जाना होता है, जीव को। तब 'प्राक्त' याने पूव िका जो शरीर है, प्जसमें है, उसको त्याग करके जाता है। 'देहे पञ्चत्वमापन्द्ने देही कमानुिगोऽवशः' 'देहान्द्तर मनु प्राक्तनं त्यजतेवपुः। व्रजंप्स्तष्ठन् ्पदैकेन यथैवेकेन गचछतत ।'

प्जस तरीके से एक ततलजऊ का होता है। कीड़ा घास के ऊपर का ऐसा (स्वामी जी ऊंगली हदखाकर बता रहे हैं) चलता है वो आगे का सहारा जब उसको ममल जाता है, तब र्पछड़ा िड़ उठाता है। इसी तरह से जीव को कमानुिसार जहाँ भी जाना है। देखो ये जो बताई जा रही है कम िफफलॉसफी है, यहा ूँर्वचार की गुंजाइश त्रबल्कुल नहीं है। र्वचार करोगे तो सारी पोल खुल जायेगी। शास्ि जैसा बतातेहैं उसी के अनुसार आँख मूंदकर चलना है।

क्योंफक, अनुभव करने पर, र्वचार करने पर मसवाय स्वस्वरूप भगवान आत्मा के कोई ऐसा पदाथ िनहीं है जो जैसा सुना जाय वैसा ही देखा जाये। जी हा! ूँ ये जो स्वस्वरूप है इसे जैसा सुनो, वैसा देखो। जब चाहो तब देखो, जहा ूँचाहो वहाँदेखो, जैसा चाहो वैसा देखो। जब चाहो तब देखो-एक ! सबके भाव अलग-अलग हैं। जहा ूँचाहो, वहाँ देखो और जैसा चाहो वैसा देखो। देह देखो ! जीव देखो! है देखो! नहीं देखो ! ये तुम्हारी मजी है। जब चाहो, तब

देखो। हा!ँू भगवान नगद िम िहै, उिार िम िथोड़े ेही है। जब चाहो तब देखो और जहाँू चाहो वहाँू देखो। घर में देखो, वन में देखो। जब चाहो, तब देखो। सुबह देखो, शाम को, आिी रात को। तो जब चाहो, तब देखो और जहाँूचाहो वहाँू देखो। वन में देखो, पहाड़ में देखो, जंगल में देखो। घर में देखो, पंडाल में देखो, सड़क में देखो। अरे, म ैंकहा ूँनहीं ंहूँ और जैसे चाहो वैसे देखो। चाहे साढ़े तीन हाथ का देखो, चाहे जीव रूप में देखो। चाहे है देखो, चाहे नहीं देखो। जैसे चाहो वैसे देखो।

भैया ! ऐसा पदाथ िमसवाय भगवान आत्मा के दूसूरा है ही नहीं। हा ूँये बात है। परन्द्तु, बाकी तो सब तथ्यहीन है। हाँू, आप्स्तक देश में, आप्स्तक पररवार में और आप्स्तक समाज में पैदा होने ेके नाते वेद, शास्् जैसा बतातेहैं, उन पर वर्श्वास करते हैं। (िीरे से) इस टोन में कहो ललकार के न कहो। अब भाव प्रदमशति हो गया। हा,ूँ वर्श्वास करते हैं। परन्द्तु, अगर इसके अंदर घुसो तो सब पोलमपोल है। कहना ही कहना है। अंदर घुसोगे तो सब कहानी है। कुछ न ममलेगा तुम्हें। सब कहानी है, शंखं ढपोरी है। सुनावें का? हा,ूँ एक दृष्टांत है, शंखं ढपोरी का, एक कोई गरीब ब्राह्मण था। क्योंफक बेचारा दररर था, उसने गंगा मैया की तपस्या की। गंगाजी प्रसन्द्न हुई तो छोटा-सा एक शंखं हदया और गंगा जी से ये वाणी सुनाई पड़ी। अरे, ब्राह्मण ये शंखं तुझे ेम ैंवरदान के रूप में दे रही हूँ। इसे ले जा और संध्या वंदन के समय जब इसकी पूजा करेगा। इससे पाचूँ रुपया तनकलेगा, चांदी का मसक्का। इससे तेरा तनवाहि हो जायेगा, जा म ैंप्रसन्द्न हूँ। अब ब्राह्मण समझ गया डेढ़े सौ रुपये तो लग ही गया। उस वक्त इतनी महंगाई थी नहीं। अब ब्राह्मण शंखं लेकर पैदल चला अपने घर को। पहली मंप्जल आई तो एक सेठ की दुकान थी वहाँूपर उतरा सामने मंहदर था, बाग-बगीचा बड़ा सुंदर स्थान था। ब्राह्मण सोचा अभी तक नहायें–ोये नहीं हैं। चलो, यहींपर स्नान पूजा करके चले जायेंगे। जब ब्राह्मण अपना थैला उतारनेलगा, सेठ गद्दी पर बैठे देख रहा है, मुटुर-मुटुर। ये महाराज, क्या है भाई! यहाँूजगह नहीं ंहे, चलो गावूँ के बाहर बगीचा है वहाँूठहरो, चलो आगे। ब्राह्मण ने कहा फक सेठ जी हम तुमसे खाने-पीने की थोड़ी मांगेगे, टाइम हो गया है, स्नान का। स्नान, संध्या पूजन करके चले जायगें। चलो यहाँू जगह नहीं,ं सेठ ने कहा। बहुत कुछ प्राथनिा फकया ब्राह्मण ने, बेचारा भूखा-तयासा था, कुछ खाया-र्पया नहीं ंथा। अचछा, देखो जल्दी पूजा-पाठ करके चले जाना यहा ूँसे रहना नहीं। ब्राह्मण-पूजा पाठ फकया और वो प्राथनिा फकया। जय हो महाराज! कृपा करो। पाँूच रुपया खन्द्न से तनकला। जब पाचूँ रुपया खड़का तनकला तो देख मलया बतनया दूरू से- 'ये चीज है मारनेलायक।' अब ब्राह्मण तो प्रसन्द्न हो गया फक गंगा जी का वरदान तो सत्य है। चलो पाचूँ रुपया तो हमें रोज ममला करेगा। अब पाचूँ रुपया तो रखा अंटी में और जल्दी झोला तैयार करके चलनेलगा, तब बतनया दौड़कर दण्डवत् ्प्रणाम फकया। जय हो महाराज ! ऐसे त्रबना खाये-पीये चले जाओगे तो हमारा नाश हो जायेगा। िमा करना हमें क्या पता था आप ऐसे मसद्् पुरुष हैं। ठहरररये, त्रबना भोजन कराये नहीं ंजाने देंगे, आपको और आज ठहरररये यहा।ूँ ब्राह्मण सीिा-सादा तो था ही, बेचारा ठहर गया। अचछा, महाराज क्या बनाओगे? पूड़ी-साग, फक खीर, फक दाल-भात, रोटी-सधजी जो मजी आये आपकी कृपा से सब कुछ है। अरे पुसौवा, ला रे महाराज के मलए पूड़ी-सधजी का इंतजाम कर जल्दी। अब महाराज, पूड़ी-सधजी वगैरह सब खूब घोटे। ईमानदारी छोड़कर खूब खाये और खाकर आसन त्रबछाकर सो गये। बतनया देखता रहा पाचूँ रुपया देनेवाला शंखं इसी झोले में है। सो गया महाराज ! तब रात बारह- एक बजे सेठ उठा, उसके यहाँूठाकुर द्वार था। ठाकुर द्वार में शंखं था, त्रबल्कुल वैसे नमूने ेका, अपनेघर वाला शंखं तो रख हदया। ब्राह्मण के झोले में और पाचूँ

रुपया देने वाला शंखं था उसे उठा ले गया। ब्राह्मण बेचारे को क्या पता खूब खाया और सोया। जब चार बजा ब्राह्मण झोला रखा और अपनेघर का रास्ता पकड़ा।

जब घर पहुँचा फफर दूसूरे हदन मानेवही जैसे पूजा करके शंखं से मांगा था। जय हो महाराज ! जय हो देवता! देव महाराज ! कृपा करो। वो तो देने वाला शंखं तो था नहीं, ं नकली शंखं था। अब घंटों र्वनती करता रहा। रोता रहा, कौन दे। ब्राह्मण तो जिमिरा सांप हुआ, ये तो बड़ा मुष्श्कल है, क्या हो गया। एक ही हदन पाँूच रुपया हदया, अब देता ही नहीं। तो फफर बेचारा गया गंगाजी के पास। रोया महारानी गंगा माता एक ही हदन हदया पाचूँ रुपया, तुम्हारा शंखं अब देता ही नहीं। तब गंगा जी से आकाशवाणी हुई। ऐ ब्राह्मण तू ठगा गया है रे ! वो शंखं अब तुम्हारे पास नहींरहा उसे फकसी ने ले मलया। वो नकली शंख है, ये थोड़े ेही देगा पाचूँ रुपया। गंगाजी ने कहा देख ये म ैंदे रही हूँ, एक दूसूरा बड़ा शंखं, इसका नाम है ढपोरशंख। इसे ले जा और जहाँूपर पहले ठहरा था रात वहीं ठहरना। ये प्जतना मांगेगा उसका दस गुना देने को कहेगा, मगर देगा एक पैसा नहीं। लेके चला ब्राह्मण शंखं इतना भारी था फक उसे लेकर चलते-चलते ब्राह्मण हाफूँ गया, जी। अब ब्राह्मण उसी मुकाम पर जा ठहरा। सेठ फफर दण्डवत् ्प्रणाम फकया। जय हो महाराज ! बड़ी जल्दी कृपा फकये देवता। ब्राह्मण अपना नहाया िोया। नहा िोकर फफर शंखढपोर की पूजा करके फफर मांगा शंखंठपोर से। जय हो महाराज ! दे एक हजार रुपया। क्योंफक, गरीब बेचारा ब्राह्मण फकतना मांगे। एक हजार ही काफी है। तो शंखं ढपोर जोर से आवाज देकर कहता है-ले रे ब्राह्मण दस हजार। अब तो बतनया सोचा। ये है काम की चीज।

उसनेक्या फकया ले महाराज देवता आज क्या बनाओगे? ब्राह्मण बेचारा क्या करें, जब तक काम न हो जाये ठहना ही है, उसको। फफर माल घोटा। अब सोकर के शंखं ढपोर को अपनेमसराहने फकनारे में रख हदया। और रात भर नींद न आयी ब्राह्मण को ऐसे टटोलता है फक मानेवो शंखं हमारा आया फक नहीं ंनींद न आयी बेचारे को। रात बारह-एक बजेबतनया पाँूच रुपया देने वाला जो बरदानी शंखं था, उसे रख हदया मसराहने ेपर झोले में और जो शंखं ढपोर था उसे ले गया उठा करके। ब्राह्मण देख मलया जब शंखं आ गया तो अपना झोला उठाया और चले। अपना तो काम बना। अब चार जब बजा, रात भर नींद न आई जी सेठ को अब उठाता है, सेठानी को। अरे, उठो न जी। क्या है? अरे, सो गई क्या बात है। अरे, उठो तो बतावें। उठा के त्रबठा हदया सेठानी को जाओ नहाओ, गाय के गोबर से चौका लगाओ और नई साड़ी पहन लो। अब सेठ और सेठानी नहा िो के नया कपड़ा पहनकरके दोनों गाठूँ जोड़कर, शंखं ढपोर को रख हदया आसन के ऊपर। पूजा-पाठ, िूप-दीप, नैवेद्य सब कुछ फकया। अब सेठ कहता है, जय हो महाराज ! देव महाराज एक लाख रुपया। वो बेचारा गरीब था एक हजार मांगा। सेठ एक लाख से क्या कम मांगे। शंखंढपोर कहता है- ले रे बतनया! दस लाख। ममला न एक पैसा। एक हदन, दो हदन, चार हदन, दस हदन इस तरह होता रहा तो आठ-दस हदन बाद सेठ कहता है रोकर के। महाराज कहते ेतो तुम बहुत हो देनेको। प्जतना मागूँता हूँ, उसका दस गुना देनेको कहतेहो, बोलते हो, मगर देते-लेते एक पैसा नहीं। तो शंखंढपोर कहता है- बेवकूफ कहीं के ये देना-लेना जो है वो शरं्खया का काम था। हम तो शंखंढपोर हैं, कहते भर हैं, देना-लेना एक पैसा नहीं।

तो भैया ! भगवान आत्मा को छोड़कर और बाकी प्जतनी बातें सब शंखंढपोरी है. सुनते ेबस रहो, तथ्य फकसी में नहींहै। हा,ूँ ये बात और है फक हम खंडन फकसी का नहींकरते। वंरिो फकसी का नहींकरते। आलोचना फकसी की नहींकरते। ये सब चीज प्जतनी हैं, जो अपनेआपको संसारी मानते हैं। इन अज्ञानी बालकों के मलए ये सब उनको समझानेके मलए कही गई है, क्योंफक सभी को वंचार जगत में अधिकार नहींहै न। तो उनके मलए ये सब बातें ठीक हैं। परन्द्तु वास्तवंकता अगर देखो भैया। तो जीव जगत में वंचार की गुंजाइश नहीं ंहै। आत्म जगत में वंचार करो। फकसी प्रकार से करो मसवाय मुझ आत्मा के अप्स्तत्ववान के, आत्मा के चराचर का अप्स्तत्व जो है, इसके मसवाय फकसी में तथ्य नहीं। सब अफसाना है, कहानी है।

व्रजंनं्स्तष्ठन् ्पदैकेन यथैवेकेन ग्छनत ।

यथातृणजलूकैवं ंदेही कर्गमनतं ंगतः ।।

(10-1-40)

स्वप्ने यथा पश्यनत देहरी्दृं र्नोरथे नाभभ ननववष्टचेतनः ।

दृष्टश्रुताभ्यां र्नसानुधचनतयन् ्प्रपद्यते ेतत् ्ककर्वप ह्यपस्र्नृतः ।।

(10-1-40)

देखो, हदन में जो कुछ भी देखा जाता है और सुना जाता है, क्योंफक संसार का प्रवेश हृदय में दो ही इप्न्द्रयो के द्वारा होता है-देख करके और सुन करके। क्योंफक, नाम, रूप ही संसार है। तो चिुऔर कण िदोनों इप्न्द्रयों के द्वारा हृदय में संसार प्रवेश करता है। तो हदन में जो कुछ भी देखा सुना जाता है। मन उन देखे-सुने ेका धचंतंन करता है और धचंतंन करते-करते जब सो जाता है। तो प्जसके धचंतंन में सोता है, उसी का स्वतन देखता है।

स्वप्ने यथा पश्यनत देहरी्दृं र्नोरथे नाभभ ननववष्टचेतनः ।

दृष्टश्रुताभ्यां र्नसानुधचनतयन् ्प्रपद्यते ेतत् ्ककर्वप ह्यपस्र्नृतः ।।

(10-1-41)

ये दृष्टांत है जो हदया हुआ है श्लोक में। अब इसका खास मतलब क्या है? अनाहद काल से अज्ञान जगत में जीव जगत् ्में मान्द्यता जगत् ्में, कल्पना जगत् ्में सुन-सुन और देख-देखकर। क्या देखकर ! फक पुण्य कम ि करने ेसे स्वग िममलेगा और पाप कम िके करने से नकि। ये कम िकरो तो इस लोक को जाओ और वो करो तो उस लोक को जाओ। देखो तो नहीं फकसी ने अदृष्ट है न। अचछा, सुन रहे हो ये संस्कार आज का नहींहै। अनाहदकाल का है। ये पाप कम िहै, म ैंकर रहा हूँ और मरनेके बाद हमें नकि जाना पड़ेगा। पुण्य और पाप हमें मरकर स्वग–िनरक जाना है-ये आज का संस्कार है, नहींहै। अनाहदकाल का है। मेरा आना है, जाना है। दुःख है, सुख है। ज्ञान है, अज्ञान है। नकी हूँ, स्वगी हूँ। िमी हूँ, अिमी हूँ इत्याहद ।

भैया, ये सुनते ेचले आ रहे हैं। इसका संस्कार हृदय में दृढ़ हो गया है। अब जब मरते हैं, माने शरीर जब छूटता है, तब मरनेके बाद उसी का बादशा त्रबंचं जाता है। अचछा, उसी प्रकार से जैसे, अरे, जो नरक गया है, वहाँ से फकसी ने आज तक टेलीग्राम नहीं ंफकया और जो स्वग िगया है, वहाँसे फकसी ने पि नहीं डाला। अपने बचचों को फक बड़ी अचछी सीट ममली है, धचंतां- फफकर मत करना। तो अदृष्ट ही तो है न।

हम शास्ि वाक्य पर वर्श्वास करते हैं, वर्द्वानों के कथन पर वर्श्वास करते हैं, आप्स्तक होने ेके नाते, परन्द्तु यहाँ वर्चार की गुंजाइश नहीं ंहै। जैसा सुनते ेहो, वैसा मानते हो और हृदय में इनके संस्कार पड़े ेहुए हैं। जब देह छूटती है, तब हमको वही अनाहदकाल के जो संस्कार हैं, वही सब मरनेके बाद हदखाई देता है। नरक हदखाई देता है, स्वग िहदखाई देता है और इतने हदन तक स्वग िमें रहना पड़ता है। इतने हदन तक नरक में रहना पड़ता है, उसी तरह से भोग भी होता है। क्योंफक, जब मनुष्य सपना देखता है तो क्या उसको इस बात का ज्ञान रहता है फक जो म ैंदेख रहा हूँ, वो स्वतन है? जागृत् अवस्था की स्मृतृत उसे नहीं रहती और जागकर के म ैंस्वतन में आया हूँ, इसकी भी स्मृतृत नहीं रहती, उस स्वतन दृष्टा को। उसी तरह से सुख भोगता है, दुःख भोगता है। उसी तरह से उसका पररवार बन जाता है। सब सारा संसार, दूसूरा तैयार हो जाता है, स्वतनावस्था में और जाग जब गया तो कुछ नहीं।

इसी तरह भैया, जीव का जो गमनागमन है, जीव का जो नाना योतन में जाना है, भटकना है। ये पुराने ेजो संस्कार हृदय में पड़े ेहैं। शरीर छूटने के बाद त्रबल्कुल वहींका वही। इसमलए जीव का गमनागमन नरक स्वगाहिद का भोग स्वतन है। मोह की नींद का स्वतन है। गफलत की नींद का ख्वाब है।

अचछा, ज्ञान होने ेपर मोि हो जाता है। मोि का मतलब ये फक ज्ञान होनेअचछा, अब चलो मोि पर वर्चार करते हैं। ज्ञान होने ेपर मोि हो जाता पर गमनागमन से छुटकारा पा जाता है।

'ऋते ेज्ञानंन मुप्क्त' श्रुतत भी कहती है फक ज्ञान के त्रबना मुप्क्त नहीं ंतो प्जतने ेजीव मुक्त होतेहैं, तो मुक्त होकर जाते कहाँ हैं? अरे, उनका कोई वेहटंगं रूम बना है, जहाँ मुक्त जीव जाकर भड़भड़ा के भरे हुए हैं? कहा ँ जाते हैं? फकस लोक में जाते हैं। उनकी क्या प्स्थतत होती है? इसको भी सुनो। जीव का गमनागमन स्वतन है, और जीव का मोि सुषुप्ततवत्– जीव का गमनागमन स्वतनवत् ्है-स्वतनवत् ्। वत् ्प्रत्यय लगा देनेसे स्वतन के समान। जीव का गमनागमन स्वतनवत् ्(के समान) है और जीव का मोि सुषुप्ततवत् ्है। जैसे- गाढ़ी तनरा में प्रपंच का अभाव हो जाता है। संसार नहीं रहता, प्रपंच नहीं रहता मगर चेतन जो है, आत्मा। ज्यों का त्यों रह जाता है। मगर सुषुप्तत अवस्था में म ैंकौन हूँ? म ैंकहाँथा? म ैंक्या होऊँगा। तीनों काल की स्मृतृत सुषुप्तत अवस्था में नहीं रहती। इसी प्रकार, इसी तरह मोि हो जाने पर सुषुप्तत के समान उस मुक्त जीव की प्स्थतत हो जाती है। जी हा!ँ सुषुप्ततवत् ्! यही वास्तर्वक है। जी हाँ ! तो 'स्वतनेयथा पश्यतत देहमीदृशं'। ये जीव जगत की बातें बताई जा रही हैं। अध्यात्म जगत में तो कुछ है ही नहीं।

यतो यतो धावनत दैवचोददतं ंर्नो ववकारात्करूप पछचसु ु।

गुणेषुरा्यारधचतेषु देह्यसौ प्रपद्यरा्नः सह तेन जायते ।।

(10 - 1 - 42)

झयोनतयथैमवोदक पाधथवेमष्वदः सरी्रवेगानुगतंववभाव्यते।
एवं स्वरा्या रधचतेष्वसौ पुरु्न् ्गुणेषुरागानुगतो ववरुह्ुयनत ।।

(10 - 1 - 43)

जैसे फकसी पिा में पानी भरकर रख दो, जैसे-टब आहद तो उसमें सूय ि हदखाई देगा। अब हवा चलनेसे जब उस टब का पानी हहलेगा तो पानी हहलनेसे सूय ि भी हहलता हदखाई देगा। मगर ऐसा है नहीं। सूय ि तो ज्यों का त्यों अपनेस्थान पर है। इसी तरह वासना रूपी हवा के झकोरे से जब अन्द्तःकरण चंचल होता है या मन चंचल होता है या बुद्धि चंचल होती है तब उस चंचलता को अज्ञानी अपनेस्वरूप में मानता है फक म ैं आता-जाता हूूँ। देखो, अन्द्तःकरण है त्रिगुणात्मक। हरेक के अन्द्तःकरण में तीन गुण रहते हैं। मन कह लो या अंतःकरण। तो मन में कभी सतोगुणी, कभी रजोगुणी और कभी तमोगुणी। तो मन के साप्त्वक, राजस, तामस ये तीनों र्वकार हैं। समय-समय पर अज्ञानी को ये र्वकार हदखाई देते हैं, तो मानता है, ये र्वकार मेरे हैं। मगर ऐसा नहींहै।
मानसकार कहते हैं-

बालक भ्रर्दहं ंन भ्रर्दह गृह्यदद। कहदहं ंपरस्पर भथ्र्यावादी ।।

चार-छह बचचे ेआठ-दस साल के आपस में इकट्ठे होकर हाथ में हाथ ममलाकर चक्कर घूमते ेहैं। यहा ूँइस प्रान्द्त में इसको 'घानीमुनी' कहतेहैं और उरिप्रदेश की भाषा में 'घुमरी परैया' कहतेहैं-अचछा, अब वो 'घानीमूनी' के खेल में घूमते-घूमते चक्कर आ जाता है बचचेको और धगर जाता है। तो उसको दुतुनया ूँक्या हदखाई देती है? फक मेरे समेत सारा संसार घूम रहा है। मगर मानसकार कहते ेहैं फक न तो वो बचचा घूम रहा है और न ही घर-द्वार, संसार। उस चक्कर के कारण उसको ऐसी प्रतीतत होती है, ऐसा मालूम होता है। इसी तरह अज्ञान का ऐसा चक्कर है। तो इस चक्कर की वजह से अज्ञानी जीव क्या मानता है? प्जस तरह मेरा आवागमन है। प्जस तरह नाना योतनयों में म ैं आता- जाता हूूँ, इसी प्रकार मेरे समान सारे संसार का आवागमन है। जी हा, ूँ चक्कर जब शांत हो जाता है, अज्ञान जब तनकल जाता है, र्वनाश हो जाता है। तब प्जस तरह मुझ आत्मा का आवागमन नहीं, ं म ैं आत्मा अजर-अमर-अर्वनाशी व्यापक तत्व। अरे, इसी तरह फकसी का आवागमन, त्रबल्कुल नहीं। मेरा आवागमन है तो दुतुनयाूँ का है और मेरा आवागमन नहींतो फकसी का नहीं। ये अपनेही तनश्चय से, सबका तनश्चय होता है। अपनेही अनुभव से सबका अनुभव होता है। अपनेही ज्ञान से सबका ज्ञान होता है। तो-

झयोनतयथैमवोदक पाधथवेमष्वदः सरी्रवेगानुगतंववभाव्यते।
एवं स्वरा्या रधचतेष्वसौ पुरु्न् ्गुणेषुरागानुगतो ववरुह्ुयनत ।।

(10-1-43)

तो महात्मा वसुदेव कंस को समझाते हैं- भैया ! इसीमलए फकसी से रोह मत करो, देवकी को मत मारो। बहुतेरा समझाया तो सही, मगर कंस कहता है-म ैंतो मार ही डालूंगा।

वसुदेव जी ने सोचा इस दुष्ुट के हाथों से देवकी का प्राण बचाना अचछा है । तो तुम ऐसा करो यहद मेरी बातों पर तुम्हें वर्श्वास है तो म ैंतुम्हें वर्श्वास हदलाता हूूँ फक तुम्हारे मलए तो आकाशवाणी आठवें गभ िके मलए हुई है परन्द्तु म ैंप्रततज्ञा करता है फक पहला ही बालक जो होगा, उसे नाल सहहत म ैंतुम्हारे है। पास ले आऊंगा। मार डालना या रि करना ये सब तुम्हारे ऊपर है। अब इसे छोड़ दो तो कंस ने कहा-अचछी बात है, म ैंप्रसन्द्न हूूँ, ले जाओ। अब दम्पतर् अपने स्थान को आये। जैसे ही पहले बालक का जन्द्म हुआ महात्मा वसुदेव उसे ले जाकर रख हदये कंस के सामने, क्योंफक सत्य प्रततज्ञ थे, े सत्यतनष्ठ थे। तो कहतेहैं-

ककं दु:सहं नु साधूनांववदुषुां ककर्पेक्षषतर् ्।
ककर् कायं ंकदयाणमां दुसुत्यजं ंकक धृतृात्र्नार् ्।।

(10 - 1 - 58)

'सिूनां ंफकं दु:सहं ।' अरे जो सिु लोग होतेहैं, महापुरुष होतेहैं, संसार में ऐसा कौन सा दु:ख है प्जसे सहन न कर सके, सब सहन कर लेते हैं। और जो वर्द्वान हैं वो फकसकी उपो नहीं ंकरते और जो कदय िनीच हैं, महान दुष्ुट हृदय हैं, कौन-सा बुरा से बुरा काम है, संसार में उसे न कर डालें और जो िैयािरी हैं, वे कौन-सा ऐसा पदाथ िहै प्जसका त्याग न कर सके। जब कीततमिान नाम के पिु को वसुदेव जी रख हदये, कंस के सामने तो देखते ही कंस प्रसन्द्न हो गया और कहता है-

प्रनतयातु कुर्ारोऽयंन ह्यस्र्ादन्स्त रे् भयर् ्।
अष्टर्ाद् युवयोगभमानमर्ृतयुरे् ववदहतः ककल ।।

(10 - 1 - 60)

वसुदेव जी ! भैया ले जाओ इसे तुम तो बड़े ेमहात्मा तनकले। हमें क्या पता था, तुम बड़े ेमहात्मा हो, सत्यवादी हो, ले जाओ इसे। मेरे मलए जो आकाशवाणी हुई है, वह आठवें गभ िके मलए है। ये तो पहला ही बचचा है, उससे मुझे ेकोई भय नहीं। अब वसुदेव जी वापस ले आये।

जब वसुदेव जी वापस ले आये, वि न फकया कंस ने उसका तो देवताओं के पेट में मरोड़ शुरू हो गया। अपना-अपना पेट पकड़े ेबैठे हैं सब।

नारायाण ! नारायण ! नारदजी आईये गुरुदेव ! आया देवराज ! - देवलोक में आनंद मंगल है न? आज तुम देवता फकस गोष्ठी में बैठे हो, क्या र्वचार कर रहे हो? गुरुदेव ! आपकी ही प्रतीिा कर रहे थे। आपको तो पता ही है फक देवकी के गभ िसे पहला बचचा हुआ है। नारायण। नारायण। हुआ है तो तुम्हें क्या इससे-बात ये है फक आपने ये भी सुना है न फक जब तक देवकी के आठों पुिों का वि कंस न कर देगा तब तक सरकारी टूर होगा ही नहीं ंयातन अवतार ही नहींहोगा। बस ! अब बाबा वहाँू से वीणा त्रबनत्रबनाते पहुँचे मथुरा। दरबार लगा है-नारायण ! नारायण ! दौड़ा कंस दण्डवत् ्प्रणाम फकया-भोजराज ! महाराज । प्रजा मंडल सुखी है न?-कृपा है महाराज। गुरु महाराज आज कैसे आना हुआ। अरे भाई-कुछ खास बात बतानेही आये हैं और पूछने भी आये हैं। तुम तो जानते ही हो फक पृथ्वी मंडल पर महापुरुषों का पररभ्रमण जीवों के कल्याण के तनममि ही हुआ करता है।

मनैं ेसुना है फक देवकी के गभ िसे कोई पुि हुआ है। हा ूँमहाराज, हुआ तो है। गुरुदेव ! क्या फकया फफर तुमने,े कुछ नहींवसुदेवजी लाये तो थे। मनैं ेवि नहीं फकया, क्योंफक देवकी का आठवाँू गभ िमेरा काल है। आकाशवाणी तो ऐसी ही हुई है। तेरे जैसे-उद्-बुद्, राजे-महाराजे आकाशवाणी का मतलब लगानेलगे तो हम सिु को कौन पूछे ? अब इतना कहने की देरी थी फक कंस सुकुड़दुमु हो गया। बताओ महाराज आकाशवाणी का क्या अथ िहै? अचछा बोल क्या हुई आकाशवाणी-

अष्टराद् युवयोगभमानमरृतुयुरे् ववदहतः ककल ।।

(10-1-60)

देवकी का आठवाँू गभ िजो होगा वो तुम्हारा काल पैदा होगा। बस ! यही अथ िलगाया तूने। कौन-सा आठवाँू शुरू का, फक आर्खरी का, फक बीच का? कौन-सा आठवाँू ? एक गोल सकिल बनाया आकार में आठ रेखाएं खींचं हदया। ले तू धगनती कर अब एक, दो, तीन... ले यहाँूसे धगन..... गोल में जहा ूँसे धगन आठ ही आता है। अगर यही आठवाँू हो तो? जय हो महाराज, बड़ी कृपा करी महाराज-देवताओं का काम बना बाबा तो चले। अब उस पुि (कीततमिान) को बुलवाकर वि फकया और उसी प्रकार देवकी के छह पुिों का नाश फकया कंस ने। अब सातवींबार भगवान वल्देव आये गभ िमें तब भगवान ने योगमाया को बुलाया अकेले में, और कहा-देर्व !

ग्छदेवव ब्रजं ंभदे्रे गोपगोभभरलंकृंतर् ्।
रोदहणी वसुदुेवस्य भायाऽमऽस्तेननदगोकुले ।
अनयाश्च कंस संवंववना ववबरेषु वसन्नत दह ।।

(10 - 2 - 7)

देखो, सरकारी काम आ गया है- 'महाराज, आज्ञा।' आज्ञा यही है देवकी के गभ िको खींचकर रोहहणी के गभ िमें ठहराओ। देवकी के गभ िसे म ैंजन्म लूंगा और बाबा नन्दजी की पत्नी यशोदा के गभ िसे तुम्हारा जन्म होना चाहहए। अब जाओ, तुम डरो मत। कामलकाल में तुम्हारी बड़ी पूजा होगी।

नार्धेयानन कुवन्मनत स्थानानन च नरा भुवुव ।
दुर्गेनत, भद्रकालीनत ववजया वैष्णवीनत च ।।
कुरुदुा चान्ण्डका कृष्णा र्ाधवी कनयकेनत च । (10-2-11)
र्ाया नारायणीानी ि◌ारदेत्यन्म्बकेनत च ।।

(10-2 - 12)

तमाम तुम्हारे नाम रखे जायेंगे। ि◌ूप, दीप, नैवेद्य से बड़ी भारी पूजा होगी तुम्हारी कमलयुग में। इतने ◌ेपर भी योगमाया ने स्वीकार न की तब। अरे, म ◌ँतुम्हें वरदान दे रहा हूँ। तुम घबराती काहे को हो। कमलयुग में जाओ, मेरा वरदान है, भारत की प्रिानमंत्री बनोगी। तो प्रिानमंत्री के लालच में योगमाया ने भगवान की बात मान ली। अरे, मामूली वरदान है, इतने ◌ेबड़े ◌ेदेश का प्रिानमंत्री होना कोई मजाक है। मखौल समझे ◌ेहो। बस ! महारानी आयी योगमाया। ये कोई मजाक की बात नहीं,◌ं प्जतनी बैठी हैं, सब योगमाया हैं। अरे, मानो तो भगवान नहीं ◌ंतो पत्थर।

देवव प्रपननानतहमरे प्रसीद प्रसीद र्ातजगमतो तोऽणखलस्य
प्रसीद ववश्वेश्वरर पादह ववश्वं ◌ंत्वर्ीश्वरी देवव चराचरस्य ।।

(श्री दु.◌ुसतत. अ.11/3)

ववद्याः सर्स्ताास्तव देवव भेदाः न्स्त्रयः सर्स्ताः सकला जगत्सुं।
त्वयैकया पूररतर्म्बयै तत् ◌्का ते स्तुनतः स्तव्यपरा परोन्क्तः ।।

(श्री दु.◌ुसतत.अ.11/6)

या देवी सव मभूतेषु स्त्री रूपेण संन्स्थता ।

नर्स्तस्यै नर्स्तस्यैनर्ो नर्ः ।।

तो सिाात् ◌्देवी तो हैं। जी हा।◌ँ इनके एक हाथ में स्याही और एक हाथ में सफेदी। जी हा।◌ँ ये फकसी को चाहे आसमान में चढ़ा दें, चाहे पाताल में ि◌सूँा दें सब कुछ इनके हाथ में। इसमलए- 'इन्द्हहहं ◌ंर्वरी नहहं ◌ंकल्याना।' हा ◌ँ प्रसन्द्न, रखा करो भैया, प्जनके प्जनके यहाँ योगमाया हैं। देख लेना कल से हमारा नेवता शुरू हो जायेगा।

हा,◌ँ एक दफे बड़ोदा गये बारह तेरह बरस की बात है। काहठयावाड़ गुजरात में, बड़ोदा में, हमारी कथा हुई। गीता पर हो रहा था प्रवचन दो माह रहे, चातुमामस फकये थे। शाम को कथा होती थी। दो घंटा प्रवचन हुआ करता था। कई दफा ऐसा मौका आ जाता है, कहने को तो वहाँपर, यहाँपर जो शहरों में द्रवजटा होती है-दो गुप्थया ◌ँबांिती

हैं, लड़फकया।ूँ वहाूँपर त्रिजटा देखा। वहाूँपर कॉलेज की लड़फकयों की तीन-तीन जटायें देखी तो त्रिजटा नाम रखा है मनैं। अब आ गया भाई ऐसा कोई प्रसंग कथा में तो हमने फैशन के ऊपर कुछ बोल हदया, भैया।

'त्रिजटा नाम रिसी एका' - और कोई फैशन के ऊपर। सडेंडल के ऊपर वहाूँसब लड़फकयाूँ बेल्ट बांिती हैं। कमर पतली करनेके मलए वहाूँ का फैशन अलग फकस्म का है।

लो भैया ! दूसूरे हदन से हमरा नेवता बंद हो गया। चार-पाचूँ हदन अपने पास से खाना पड़ा हमको। अब ये पता न लगे। श्रोता तो सब आते हैं। ये क्या कारण है फक नेवता बंद हो गया? इतना लम्बा-चौड़ा खरिा कॉलेज की लड़फकयों ने मलखकर भेजा हमको। उसमें लड़फकयों ने एक बात मलखी - 'स्वामी जी आपनेजो आलोचना की है, फैशन के ऊपर, जो चीज व्यापक होती है, दोष नहीं मानी जाती ।' - बात तो सही है, वाप्जब है। दोष उसको कहते हैं, जो कुछ में हो और कुछ में न हो। मगर जहा ूँकहीं ंआप जायेंगे, बाम्बे जायेंगे, कलकिा जायगें, लाहौर चाहे कहींभी- संसार भर में आप देखो। क्या देश- वर्देश तो इसी तरह का फैशन देखेंगे। ये दोष नहींहै। हा,ूँ मलहाजा आपनेजो कहा है, आप तो महात्मा हैं, वर्द्वान हो क्या कहें। अरे! हम समझ गये। मनैं ेकहा अब पतैंरा बदलना चाहहये।

पाचूँ-सात सिुा ुऔर थे ेसाथ में, रोज अपनेपास से भैया, खच िकरके छाया करें। दूसूरे हदन, फफर हमने ऐसा प्रसंग लाया कथा में, ऐसी लम्बी-चौड़ी महहमा गाई हमने, देर्वयों, िन्द्य हो, िन्द्य हो, सनातन िम िकी नींव तुम्हारे हाथ में है। हा,ूँ ये देर्वयाूँ अगर दान-पुण्य न करें, ये कुछ न करें तो सिुा भूखे मर जायगें। जो महहमा गायी हमनेदो घंटे, फफर तो िड़िाड़ नेवता। इसमलए भैया महामाया हैं।

हा ूँजी ! अब योगमाया आयींऔर आ करके उस गभ िको खींचकर के रोहहणी के गभ िमें ठहरायी इसीमलए भगवान बलरामजी का नाम 'संकषणि' पड़ा। क्योंफक, आकषणि फकये गये हैं न।

गभे प्रणीते ेदेवक्या रोदहणीं ंयोगननद्रया ।
अहो त्रबस्रंभंसतो गभ मइनत पौरा ववचुक्रुिः ।।

(10-2-15)

मथुरापुर वामसयों एवं ंकंस को ये तनश्चय हो गया फक छह पुिों का वि तो हो ही गया है। सातवााँपुि जो है देवकी का धगर गया, नष्ट हो गया। इस लीला का पता फकसी को न लगा अब आठवीं बार भगवान कृष्ण आये गभ ि में-

ततो जगनङ्गलर्मच्युतांसिर्मादहतं ूरसुतुेन देवी ।
दधार सवात्मर्कर्मात्मभूतं काष्ठा यथाऽऽननदकरं र्नस्तः ।।

(10 - 2 - 18)

अरे भाई, पता है कंस को फक छह पुिों का वि हमनेकर हदया और सातवाँधगर गया। जैसा फक अनुमान है आठवाँ यही है, प्जसके मलए आकाशवाणी हुई है। परंतुकंस का जानना न जानने ेके समान है। भैया, ये 'खल ज्ञान' है इसको खल ज्ञान कहते ेहैं।

आसीनः संविंस्तष्ठन् ्भुञ्जानः पयटमन हीर् ्।
धचनतयानोहृषीकेिर् पश्यत् ्तनर्यं जगत् ्।।

(24-2-10)

चलते-फफरते, खाते–पीते, सोते जागते सारा संसार कंस को भगवान हृर्षकेश हदखने लगा। भय के कारण भोजन करते थाल में वही नजर आता है। थाल उठाकर फेंक देता है। त्रबस्तर पर से उठकर के भागता है। कंस की ये हालत हो गई। अब भगवान के अवतार लेने का समय आया तो ब्रह्माहदक देवता अद्ििरात्रि के समय कारावास में आते हैं और आ करके भगवान की गभस्तुितत करते हैं।

सुनो अब, यहाँसत्य का प्रततपादन होगा जो जहा ूँपर बैठे हो आनन्द लो- 'देवः उचुः' -

सत्यव्रतं सत्यपरं त्रत्रसत्यं सत्यस्य योननं ंननदहतंच सत्ये ।
सत्यस्य सत्यर्ृत सत्यनेत्रं ंसत्यात्मकं त्वां िरणं ंप्रपनना: ।।

(10-2-27)

'वयंदेवाः त्वांस्त्यात्मकं शरणं प्रपद्ये'- भगवन् ्हम सब देवता जो हैं आपकी शरण में आये हैं। हे सत्यव्रत, हे सत्यमूते आहद।

देखो, ये आत्मप्जज्ञासुओं! भैया, अब पहले सत्य पर र्वचार करें, सत्य क्या होता है। 'त्रिकालाबाध्यत्वं सत्यं' ं- क्योंफक श्रुततयाँ भी कहती हैं-सत्यं ज्ञान....... सत्यंमशवम् ्सुंदरम्। ् ज्ञान सत्य है, सत्यं आनन्दम्, ् ब्रह्म इत्याहद। तो परमात्मा सत्य कहा जाता है। देखो, त्रिकाला बाध्यत्वं सत्यं। जो पदाथ ित्रिकाला बाध्य होता है। माने जो पदाथ ितीनों अवस्था, तीनों काल में रहे, प्जसका नाश तीनों काल में न हो जो भूत, भर्वष्य, वतमिान तीनों काल में रहे, तीनों काल में प्जसका कभी नाश नहींहोता। जो एक रस रहता है, उसको सत्य कहतेहैं। अचछा जो सत्य होता है, तो यह तनयम है फक वो पररप्च्छन्द्न मानेमलममटेड नहीं ंहोता, व्यापक होता है, असीममत होता है। जो सत्य होता है, वो व्यापक होता है और जो व्यापक होता है, वो तनरअवयव मानेआकार-प्रकार उसका कुछ नहींहोता। जो तनरअवयव होता है, वो तनरंश होता है, जो तनरंश होता है, वो अखंड होता है, वो अनन्द्त होता है। जो अनन्द्त होता है वो अद्वैत होता है, जो अद्वैत होता है, वो अजन्द्मा होता है, वो अमर होता है। जो अमर होता है वो अर्वनाशी होता है और सव िका आिार होता है।

अचछा, एक र्वशेषेण समझ लेनेपर भगवान के सब र्वशेषेण सत्य के अपनेआप आ जाते हैं। परन्दतु ये तनयम जरूर है, मानेये र्विन, ये अटल मसर्द्ाति जरूर समझ लेना चाहहए फक सत्य पदाथ िका तनयम है फक वो व्यापक ही होता है, वो सीममत नहीं ंहोता, एक देशीय नहींहोता, व्यापक होता है। जी हा ूँऔर जो पदाथ िव्यापक होता है, वह अफक्रय होता है, तनरअवयव होता है, तनरंश होता है। वो तनरंजन होता है, तनरअवयव होता है और तनर्वकिार होता है। ये तनयम है और सत्य का यही अथ िहोगा। यहाूँ सुनो या र्वश्व में कहीं ंचले बानो। जी हा,ूँ सत्य की पररभाणा यही होगी।

अचछा सुनो! 'त्रिकाला बाध्यत्वंसत्यम्।्' दूसूरा तनयम यह है फक जो पदाथ िसत्य होता है, वो स्वतः प्रमाण होता है, परतः प्रमाण नहीं ंहोता भैया! स्वतः प्रमाण फकसको कहते ेहैं? परतः प्रमाण फकसको कहते हैं?

अभी हम इसको अचछी तरह समझायगें। प्जसका प्रमाण स्वयं हो वह स्वतः प्रमाण है और प्जसका प्रमाता दूसूरा हो परतः प्रमाण है। प्रमाता फकसको कहतेहैं? प्रमाता उसको कहते हैं, जो प्रमार्णत करता है। जैसे- अब हमारे हाथ में डंडा है और तुम्हारा बचचा तुमसे पूछता है, र्पताजी, स्वामीजी के हाथ में क्या है ये? तो तुम बताओगे फक भैया, स्वामीजी के हाथ में डण्डा है। तो तुम इस डण्डे ेके हुए प्रमाता। जो प्रमार्णत करे उसको कहते हैं प्रमाता और डण्डा हुआ प्रमेय अथात्ि्जो प्रमार्णत फकया जाये। तो प्रमाता, प्रमेय और प्रमाण। अब ये त्रिपुटी बन गई तीन प्रमाता, प्रमाण और प्रमेय अचछा, अब समझो जो सत्य होता है। अचछा, ये भी तनयम है फक प्रमाता, प्रमाण और प्रमेय ये एक- दूसूरे से अलग होतेहैं। तो सत्य का प्रमाता जब सत्य को प्रमार्णत करनेआयेगा तो भाई सत्य से मभन्दन होकर ही तो सत्य को प्रमार्णत करेगा। जबफक प्रमाता प्रमेय से अलग है। और सत्य से जो मभन्दन होगा, वह सत्य न होगा, असत्य होगा। तो असत्य में क्या ताकत है फक सत्य को प्रमार्णत कर सके।

जो पदाथ िसत्य होता है, उसका अन्दय प्रमाता नहीं ंहोता और जो अन्दय प्रमाण से मसद्ध होता है वो सत्य नहीं ंहै। ये तनर्वववाद मसर्द्ाति है। जी हा!ूँ इसमलए सत्य स्वतः प्रमाण होता है, परतः प्रमाण नहीं होता। प्जसका प्रमाता कोई और होता है वो पदाथ िकालान्दतर में नाश हो जाता है। तो देखो जो सत्य है, परमात्मा है, सबका अप्स्तत्व है, इसके अततररक्त प्जतने ेहैं वो परतः प्रमाण हैं। सत्य ही ऐसा है जो स्वतः प्रमाण है। सत्य का प्रमाता सत्य ही होगा और बाकी जो है, परतः प्रमाण है, अन्दय करके प्रमार्णत होतेहैं। इसमलए कालान्दतर में नाशवान मानेजाते हैं। सत्य स्वसंवेद्य होता है, पर संवेद्य नहीं। स्वसंवेद्य का मतलब होता है फक सत्य का ज्ञाता सत्य ही होता है, सत्य को सत्य ही जानता है, अगर सत्य का जाननेवाला सत्य से मभन्दन है तो फफर वही आपर्ि आयेगी। असत्य, सत्य से मभन्दन असत्य तो असत्य सत्य को क्या जानेगा? इसीमलए सत्य का पररज्ञाता सत्य ही होता है। इसमलए सत्य को स्वयंवेद्य कहते ेहैं, परसंवेद्य वहीं। सत्य स्वसंवेद्य होता है. परसंवेद्य नहीं। सत्य स्वतः प्रमाण होता है. परतः प्रमाण नहीं।

सत्य अहंगम्य होता है. इदंगम्य नहीं। देखो दो प्रकार के पदाथ िहोते हैं। एक अहंगम्य और दूसूरा इदंगम्य । चीजों का अनुभव यह लगाकर फकया जाय, वह इदं गम्य है और प्जसका अनुभव अहं भाव में हो वो अहंगम्य है। तो भैया, सत्य परमात्मा अहंगम्य है. हदगम्य नहीं। क्योंफक, इदंगम्य जो पदाथ िहै, उसका नाश कालांतर में हो

 जाता है। तो परमात्मा का अनुभव यहद इदं भाव से मानोगे। परमात्मा को भी आता इदं वाचय मानोगे तो कालांतर

में उसका भी नाश हो जायेगा। केनोपतनषद की । इदम् ्मानेयह और अहं मानेम।ें प्जन-प्जन कुछ श्रुततया ूँआयी हैं, इनको सुन लो, फफर इनकी अनुभूतत करायगें

यद्वाचानभ्युदुदतं येन वागभ्युद्यते ।

तदेव ब्रह्म् त्वंववव्द्धि नेदं यदददरुपुासते।।

(के.उ. 1-4)

वाणी प्जसको व्यक्त नहीं ंकर सकती, वाणी को जो व्यक्त करता है तो श्रुतत यहा ूँप्रेरेस करती है, जोर देती है 'तदैव ब्रह्म त्वं ंर्विद्धि।' अरे, उसको ही तू सनातन ब्रह्म जान। 'इदं रूपं यद उपासते तन्द्न।' इदं रूप से प्जसकी उपासना की जाती है, वह परमात्मा नहीं ंहै।

यनर्नसा न र्नुते येनाहुर्नमो र्तर् ्।

तदेव ब्रह्म् त्वंववव्द्धि नेदं यदददरुपुासते।। 5 ।।

मन जहाूँनहीं जाता, मन प्जसको नहींजान सकता। मन को जो जानता है- 'तदेव ब्रह्म त्वं वँद्धि नेदं इतत उपासते।' उसी को तुम सनातन ब्रह्म जानो। इदं रूप से प्जसकी उपासना होती वह परमात्मा नहीं ंहै।

य्रोत्रेण न श्रृणोनत येन श्रोत्रभर्दं श्रुतर् ्।

तदेव ब्रह्म् त्वंववव्द्धि नेदं यददद रुपुासते े।।

(के.उ. 1-7)

कण िइप्न्द्रय द्वारा जो गोचर नहीं। कण िइप्न्द्रय द्वारा जो नहीं ंसुना जाता। करे. कान के सुनने न सुनने े

को जो सुनता है, वही सनातन ब्रह्म है, वही पामात्मा है, वही सत्य है। वही स्वस्वरूप भगवान आत्मा है।

यत्प्राणेन न प्राणणनत येन प्राणः प्रणीयते ।

तदेव ब्रह्म् त्वंववव्द्धि नेदं यददद रुपुासते े।।

(के.उ. 1-8)

प्राण प्जसको संचाररत नहीं कर सकता, प्राण को जो संचाररत करता है 'तदेव ब्रह्म त्वं ंर्विद्धि नेदं इतत उपासते।' उसी को तुम सनातन ब्रह्म जानो। भैया, श्रुततया ूँइस प्रकार ललकार रही हैं। इस तरह से प्रमार्णत कर रही हैं। जी हा!ूँ जो सत्य है, जो परमात्मा है, वो इदं वाचय नहीं है, क्योंफक इदं गम्य यहद मानोगे तो नाशवान है।

और यहद अहं गम्य जानोगे तो प्रततपादन तो इसका रात-हदन हो ही रहा है। इसमें क्या बड़ी भारी बात है। तो अहं रूप से म ैंरूप से परमात्मा की अनुभूतत होती है। परमात्मा जाना जाता है, उसका दशनि होता है, इदं रूप से नहीं।

ईश्वर का अनुभव अगर तुम इदं रूप से मानते हो तो कालांतर में इसका नाश हो जायेगा, नष्ट हो जायेगा ईश्वर। और अहं भाव से अगर जानते हो, अहंगम्य अगर जानते हो तो फफर अहमेव इसका तो प्रततपादन हो ही रहा है। समझो इस चीज को तो सत्य स्वतः प्रमाण होता है, परतः प्रमाण नहीं, ं स्वसंवेद्य होता है। परसंवेद्य नहीं। अहंगम्य होता है, इदंगम्य नहीं। जी हा! ँ देखो, वेद, शास्ि, श्रुततयाँ, स्मृतया, ँ रामायण, भागवत, संत-महात्मा तथा हम स्वयंहमारा अनुभव। जी हा! ँ यही है फक सारे चराचर में जो व्यातत है, सव िका जो अप्स्तत्व है और हरेक के अंदर म ैंहूँ, म ैंहूँ, रात-हदन जो कह रहा है, रट रहा है, पुकार रहा है। हाप्रि-नाप्रि है। जाहहर-जहूर अमभव्यप्क्त हो रही है। सबके अंदर से जो प्रस्फुहटत हो रहा है। सब में जो प्रस्फुररत हो रहा है, वो भगवान ही है। वही भगवान आत्मा है, वही सत्य है, वही सनातन है, वही व्यापक है।

प्रकृनत ववकृनत भभननः िुद्धबोधस्वभावः
सदसददददरिषें भासयन्ननवविेमषः ।
ववलसनत परर्त्रा जाग्रदाददष्व वस्था-
स्वह ईभर्नत साषात् ्साक्षषरूपेण बुद्धेः ।।

(र्व.चू.म. 137)

'प्रकृतत र्वकृतत मभन्द्नः' जो परमात्मा प्रकृतत-र्वकृतत से मभन्द्न है। प्रकृतत मानेकारण और र्वकृतत माने े काय। ि परमात्मा न फकसी का कारण है और न फकसी का काय िहै। न उससे कुछ पैदा हुआ और न वह फकसी से पैदा हुआ। शुदि् बोिस्वभावः, शुद् बोिस्वभाव है। म ैंअमुक हूँ, यह अशुदि् बोि है और म ैंहूँ, यह शुदि् बोि है और सत असत से परे है।

जाग्रत अवस्था, स्वतन अवस्था और सुषुप्तत अवस्था तीनों अवस्थाओंके प्रपंच में जो र्वलास करता है। जाग्रत अवस्था के प्रपंच को कौन जान रहा है फक ये पुरुष समाज है, ये प्रकृतत समाज है। ये प्रकाश है, ये अंकिार है। उसको कौन देख रहा है? कौन जान रहा है? कौन अनुभव कर रहा है। तो 'र्वलसतत परमात्मा जाग्रदा हदष्ववस्था स्वह महममतत सािात् ्साक्षिरूपेण बुर्द्ेः।' और हर एक के अंदर स्वह महममतत-अहम इतत, अहम इतत म ैंहूँ, म ैंहूँ ऐसा जो परमात्मा अपनेआपको जाहहर कर रहा है, बयान कर रहा है। अपनेआपको व्यक्त कर रहा है। तो फकसी प्रकार से समझ लो युप्क्तयों के द्वारा, प्रमाणों के द्वारा दृष्टांतों के द्वारा, स्वानुभव के द्वारा। जी हा। ँ परन्द्तु आश्चय िफक ये सब होने के बावजूद दो अकल की कमी के कारण बात हदमाग में नहीं बैठती। अब दो दो अकल का दृष्टांत आ गया है, सामने वह कह रहा है हमें सुनाकर फफर चलो।

देखो भैया ! एक दृष्टांत है दो अकल की कमी का। एक राजा था। उस राजा की एक राजकुमारी थी, एक कन्द्या थी। जब वो सयानी हो गई, शादी के कात्रबल, तो राजा ने कमचािररयों को बुलाकर कहा भैया, राजकुमारी के मलए कोई योग्य वर ढूँढ़ो। अचछा हृष्ट-पुष्ट हो, सुंदर हो, राजकुमारी के योग्य हो, ररयासत, इस्टेट अचछी हो। जब कमचािरी वर ढूँढ़ने ेजानेलगे और राजकुमारी को पता चला फक हमारे र्पता राजा-महाराज हमारे मलए वर ढूँढ़ने कमचािररयों को भेज रहे हैं, तो राजकुमारी अपनेर्पता से कहती है फक र्पताजी-हमनेऐसी-ऐसी बात सुनी है। राजा कहते ेहैं-हाँबेटी! क्या र्वचार है, शादी नहीं करेगी क्या? नहीं, शादी तो म ैंकरूँगी। मगर एक शत िहै। शत िये है फक प्जस राजकुमार में पूरी सौ अकल होगी, उस राजकुमार से धयाह करूँगी। राजा ने कमचािररयों से कहा देखो, भाई ररयासत तो देखोगे ही, राजकुमार भी देखोगे मगर ये पूछ लेना पहले फक तुममें फकतनी अकल है।

कमचािररयों ने कहा-जो आज्ञा ! अब जायें तो राजकुमार देखे, सुंदर ररयासत, स्टेट सब कुछ और पूछें भाई तुममें फकतनी अकल है? तो कोई राजकुमार कहे हममें पचास है, कोई कहे पसैंठ है। यानेवषों ढूँढ़े पर साठ-पसैंठ से ज्यादा अकल वाला कोई ममला ही नहीं। परेशान हो गया राजा भी। बेटी! पचास- साठ अकल से ज्यादा कोई ममलता ही नहीं। अब तू कहे तो राजकुमार न ढूँढ़ कर कोई जातत का वर ढूँढ़ लें, क्योंफक अन्द्तजाततिय र्ववाह तो चालू ही है। र्पताजी कोई हज िनहीं ंहै कर लूंगी म ैंधयाह, बशते की सौ अकल हो।

अब कमचािरी चले ढूँढ़ने और तो कोई न ममला। एक भसैं चरानेवाला, अचछा तेंदू ूका डंडा, काला-काला रखे कंर्ेपर, पगड़ी बाँर्े बैठा है, भसैं चर रही है। पचचीस साल का जवान पट्ठा, भसैं का दिू पी के कररया भुसुंड।

कमचािररयों ने सोचा फक चलो सगुन तो अचछा है। इसी से पूछें-क्यों भैया, तेरा क्या नाम है। मेरा नाम पुसऊ ! कहाँ रहता है, बोले-रायपुर। क्या करता है? देखते नहीं, सब भसैं चर रही हैं। तेरे माँ-बाप हैं? सब हैं। शादी करेगा? उसने कहा तैयार ही बैठे हैं। तेरे पास फकतनी अकल है? उसने ललकार के कहा अन्द्ठानबे। नधबे, आठ अन्द्ठानबे अकल है। तब ठंडी सांस मलया कमचािररयों ने फक चलो मुद्दतों के बाद अन्द्ठानबे अकल वाला कोई ममला। जात-पातँ का तो परहेज कोई रहा नहीं। पक्का करके आ गया। राजकुमारी को राजा ने बुलाया- बेटी और तो कोई ममला नहीं। एक भसैं चराने वाला ममला है पहाहटया अहीर है, अन्द्ठानबे अकल वाला है। करेगी शादी? तैयार हूँ, दो ही कमी है न? म ैंमसखा लूंगी। अब शादी पक्की हो गई। बाजा-बजा। पुसऊ महाराज का धयाह हो गया। अब, जब रतनवास पुसऊ पहुंचे। कहा ूँरानी राजकुमारी और कहाँपुसऊ। बेतुका हहसाब । राजकुमारी जाकर अमभवादन करती है। तो पुसऊ कहते हैं-राम-राम। राजकुमारी कहती है फक आप तो हमारे पतत हो न? इसमें भी अभी शक है क्या? क्या आप बतानेका कष्ट करेंगे फक आपके अंदर फकतनी अकल है? पुसऊ ने कहा फक अन्द्ठानबे। क्या आप बता सकते हैं वो दो अकल कौन-सी नहींहै, आपके अंदर। अन्द्ठानबे तो हैं ही, मगर वो दो अकल नहींहै, वो कौन-सी नहीं ंहै, दो अकल। पुसऊ कहते ेहैं फक-एक अकल तो ये नहीं ंहै फक म ैंकुछ जानूँ नहीं, ये पहली अकल है। और दूसूरी अकल ये नहीं ंहै फक फकसी की कुछ मानूँ नहीं।

परेशानी है दादा मत्था फोड़ रहे हैं रोज। आज पूरे चार हदन हो गये। िड़िाड़ प्रततपादन, ब्रह्म तनरूपण हो रहा है। सबको अनुभूततया ूँरोज करा रहे हैं। रामायण, गीता, भागवत, श्रुततया,ूँ स्मृतृतया,ूँ वैहदक मं, सबका प्रमाण दे रहे हैं, दृष्टांत दे रहे हैं, युप्क्तया ूँदे रहे हैं। स्वानुभव बता रहे हैं। मगर।

अरे भाई सद् शास्र्ि को देखा नहीं, ं र्वद्वान संत, महात्माओं का सत्संग फकया नहीं। कभी र्वद्वानों, महापुरुषों की गोष्ठी में गये नहीं। संत समाज देखा ही नहीं। न तो म ैंकुछ जानता हूँ और कोई भूले-भटके अगर बतानेवाले आ भी जाते हैं तो फफर मानूँ नहीं। भला ये नाव दररया कैसे पार होगी। फकनारे लगेगी कैसे अरे, र्वद्वान हो तो शास्र्ि का प्रमाण लो ललकार के। अगर र्वद्वान हो तो वेद से लेकर हनुमान चालीसा तक शास्र्ि का प्रमाण लो और नहीं पढ़े हो तो युप्क्तयों का प्रमाण लो। यहद श्रद्िालु ुहो तो संत वाक्य का प्रमाण लो। फकस बात का? शरीर से परे, शरीर से मभन्द्न शरीर के अंदर जो व्यापक सप्च्चदानंद घनभूत I शरीर के अंदर व्यापक, शरीर से परे जो 'म' ैं चेतन तत्व आत्मा इससे जो मभन्द्न है वो परमात्मा नहीं। बस ! इसको चाहे अभी समझ लो या लाखों जन्द्म के बाद। मगर याद रखो, यारों इसके त्रबना समझे ेतुम्हें सुख और शांतत नहींहै। जी हा!ूँ अगर हम प्रततज्ञा करते हों तो प्रततज्ञा वाक्य पर र्वश्वास न करो। मगर वेदों पर, रामायण, गीता भागवत पर अगर तुम्हारी श्रद्िा है तो इसका प्रमाण हदया जा रहा है। ये मसद्िांत कोई मजहबी मसद्िांत नहींहै। कोई पंथ-पंथाई या सोसायटी का नहीं ं है। ये अध्यात्म तत्व है। ये सव िका अपना आप है। व्यापक मसद्िांत है।

भगवान आत्मा ही एक ऐसा पदाथ िहै जो प्रेप्क्टकल है। अनुभव करने ेमें आ सकता है। बाकी सब कहानी है। अरे, बाप दादों के जमाने से सुनते ेचले आ रहे हो फक ईश्वर है। परमात्मा है। मगर, अब तो देखने का जमाना है। कब तक अंिेरे में रहोगे। उजाले में रहना भी तो सीखो। अर्वद्या की घोर तनरा में सोने वाले भव्य जीवों उठो ! जागो, अपने स्वरूप में और देखो तो म ैंकौन हूँ? परमात्मा फकसे कहतेहैं। र्वचार करो। ये कोई फकताबी चीज नहीं है, अनुभव की चीज है न। आज कोई नाप्स्तक आता है तुम्हारे सामने और कहता है फक क्या ईश्वर है? तो ईश्वर के अप्स्तत्व में क्या प्रमाण है। सारे र्वश्व के र्वद्वानों से ये प्रश्न है फक ईश्वर के अप्स्तत्व में क्या प्रमाण है? शास् हदखाओगे?

ईश्वर के अप्स्तत्व में 'म' ैं आत्मा ही प्रमाण हूँ। जब तुमसे कोई पूछे ईश्वर है? तो अकड़कर कहना - हा!ूँ क्या प्रमाण है पूछे तो कहना फक म ैंहूँ इसमलए ईश्वर भी है और म ैंआत्मा नहीं ंतो ईश्वर भी नहीं। 'अहं' करके ईश्वर की मसद्धि होती है। 'म' ैं करके, आत्मा करके न फक शास्और वेद करके। जबफक वो मन, वाणी का र्वषय नहीं। भगवान कहाँ है, जहाँ म ैंहूँ। म ैंकहाँहूँ? जहाँ भगवान है। भगवान कौन है, जो म ैंहूँ। म ैंकौन हूँ? जो भगवान है। ये तनर्वववाद मसद्िांत है त्रबल्कुल।

सत्यव्रतं सत्य परं त्रत्रसत्यं ंसत्यस्य योननं ंननदहतंच सत्ये ।

सत्यस्य सत्यरृतृ सत्यनेत्रं ंसत्यात्रकं त्वां िरणं ंप्रपनना: ।।

(10 - 2 - 27)

'जैसे बहे बयार पीठ पुतन तैसे दीजै।' यार! रोटी चुपड़ी अचछी लगती है, मगर बात चुपड़ी नहींकरनी चाहहए। स्पष्ट कहना चाहहए। जी हा!ं वही बात कही जायेगी जो तुम्हारे कल्याण की होगी। जो तुमको अचछी लगेगी, वो न कहूँगा म।ैं

सधचव वैद गुर तीनन जौं वप्रय बोलदहं ंभय आस ।
राज धर् मतन तीनन कर होदहं ंबेधगहीं नास ।।

(राम.मा.सु.कां.दो. क्र. 37)

कुदरत ने हमें गुरु पद पर बैठाया है तो म ैंवही कहूँगा जो तुम्हारे मलए हो, प्जससे तुम्हारे धचि को शांतत ममले। क्योंफक मरीज जो है, रोगी जो है, कुपथ मांगता है।

कुपथ र्ाग रुज व्याकुल रोगी। बैद न देइ सुनहु र्ुनन जोगी ।।

ये तुम्हारे कल्याण की बातें कही जा रही हैं। कथा भाग म ैंत्रबल्कुल कम कहता हूँ। जब टाइम रहा। याद रहा तब कुछ कह देता हूँ। क्योंफक ये कथाएँ तो संसारी र्वद्वानों, कथा वाचकों से भी भैया तुम लोग सुनते ेरहतेहो। मगर, इसके अंदर जो अध्यात्म तत्व है, इसको तो हर एक संसार के र्वद्वान नहीं ंकह सकते। वो चीजें हम तुम्हें मसखाने आये हैं। हम भागवत की कथा करने नहीं ंआये हैं, भागवत समझानेआये हैं तुम्हें। इसमलए प्जज्ञासुओं! भगवान के प्र्ेममयों इसको भैया तनष्पि हृदय से और र्ववेफकनी बुद्धि से इसे समझो और तनष्पि हृदय से इसे जानो। इस मसद्ांत में यहा ंँपर फकसी का खंडन-मंडन नहीं। फकसी की आलोचना नहीं। फकसी का र्वरोध नहीं। जी हा!ं जो मसद्ांत है, उसका प्रततपादन फकया जा रहा है। इसमलए सबके सब इसको ग्रहण करो और मानव जीवन का जो परम लक्ष्यहै-तनजानन्द की प्राप्तत उसे प्रातत करके अपने जीवन को सुखी बनाओ। इस प्रकार से देवतागण स्तुतत करके जानेलगे-

ददष्याम्ब ते कुक्षषगतः परः पुर्ानंन साषाद् भगवान् ्भवाय नः ।
र्ा भूद् भयं भोजपतेर्ुमूर्षोगोप्ता यदूनां भववता तवात्र्जः ।।

(10-2-41)

हे माता देवकी 'तवात्मजः यदूनां' ं तुम्हारा जो पुि है, वही आठवाँ है। ये कंस का काल होगा। कंस इसे नहीं मार सकेगा। तुम भय मत करो। जी हाँ। देवतागण कहकर चले गये भगवान के अवतार होने ेका समय आया। भादो का महीना, कृष्ण पि, अष्टमी ततधथ, रोहहणी नि, अमभजीत मुहूत िऔर अद् रात्रि का समय ऐसे समय में -

यदा यदा दह धर्मस्य ग्लाननभवमनत भारत ।

अभ्युत्थानर्धर्स्मय तदात्र्ानंसृजाम्यहर् ्।।
पररत्राणाय साधूनांववनािाय च दुषुकृतार् ्।
धर्संमस्ंथापनाथायम संभंवाभर् युगे युगे ।।

(गीता अ. 4, श्लोक 7-8)

इस प्रततज्ञा को सत्य करने ेके मलए देवकी के गभ िसे भगवान का अवतार कारावास के अंदर हो गया। कृष्णावतार ! प्जस समय अवतार हुआ कारावास का अंिकार दूरू हो गया। हथकड़ी-बेड़ी कट गई। पहरेदार सो गये और शंखं, चक्र, गदा, पद्म िारण फकये हुए भगवान ने दशनि हदया। सालोक्य, सामीतय, सायुज्य और सारूतय उपासना कांड की चारों मुप्क्तया ूँभगवान की चार भुजायें हैं। देवकी वसुदेव ने स्तुतत फकया तो भगवान ने कहा- यहद तुम को कंस से भय है तो मुझे ेअभी ले चलो गोकुल बाबा नन्द की पत्नी यशोदा जी के गभ िसे मेरी योग माया का जन्म हो चुका है। उसे ले आओ और मुझे ेवहाूँपहुूँचाओ कह करके भगवान प्राकृत मशशु ुबन गये। पहरेदार सो गये। कारावास के कपाट खुल गये। महात्मा वसुदेव भगवान को लेकर चले। जब यमुना तट पर पहुूँचते ेहैं तो कामलन्दी जो हैं यमुना उमड़ पड़ती है। भगवान का चरण स्पश िकरके रास्ता दे देती है। वसुदेव जी उस पार जाते हैं। नंद के भवन में जाकर भगवान को सुला देते हैं और योगमाया को लेकर वसुदेव जी कारावास में फफर आ जाते हैं। हथकड़ी, बेड़ी वैसे ही पड़ जाती है। अंिकार छा जाता है और योगमाया धचल्लाना शुरू करती है। पहरेदार जग जाते हैं और बताते हैं कंस को फक कोई पैदा तो हुआ, मगर ये पता नहीं ंफक पुि हुआ फक कन्या। कंस दौड़कर आता है। देखता क्या है फक कन्या। ओह ! आश्चय ि! देवता भी झूठ बोलनेलगे। अरे, आकाशवाणी हुई थी जो है सो आठवें गभ िसे पुि होगा। उठाया महारानी जी का चरण पकड़कर पटकना चाहा मशला पर उस समय योगमाया हाथ से तनकलकर आकाश में चली गई।

भूभूर् रापोऽनलो वायुः खं र्नो बुद्धध रेव च ।
अहंकार इतीयंरे् भभनना प्रकृनतरष्टधा ।।

(गीता अ. 7 श्लोक 4)

ये अष्टिा प्रकृतत महारानी की आठों भुजायें योगमाया की हदखाई दी। ललकार के कहती है फक- अरे मूख ि कंस ! ये तू समझ ले फक आकाशवाणी असत्य नहींभई, देवकी के गभ िसे पुि ही पैदा हुआ है, कन्या नहीं,ं कहकर अन्द्तद्िान हो जाती है। कंस डर जाता है। देवकी वसुदेव की हथकड़ी-बेड़ी काट देता है। दम्पतर् अपनेस्थान को आ जाते हैं। रात भर कंस धचंतां मग्न रहता है। प्रातःकाल होते ही दैत्यों की जब सभा बुलायी जाती है। तब दैत्यों की सभा में अब जो प्रस्ताव पाररत फकया गया। अब वो प्रस्ताव कल सुबह 10 बजेसुनाया जायेगा।

हैं तो कामलन्दी जो हैं यमुना उमड़ पड़ती है। भगवान का चरण स्पश िकरके रास्ता दे देती है। वसुदेव जी उस पार जाते हैं। नंद के भवन में जाकर भगवान को सुला देते हैं और योगमाया को लेकर वसुदेव जी कारावास में फफर आ जाते हैं। हथकड़ी, बेड़ी वैसे ही पड़ जाती है। अंिकार छा जाता है और योगमाया धचल्लाना शुरू करती है। पहरेदार

जग जाते हैं और बतातेहैं कंस को फक कोई पैदा तो हुआ, मगर ये पता नहीं ंफक पिु हुआ फक कन्द्या। कंस दौड़कर आता है। देखता क्या है फक कन्द्या। ओह ! आश्चय ि! देवता भी झूठ बोलनेलगे। अरे, आकाशवाणी हुई थी जो है सो आठवें गभ िसे पिु होगा। उठाया महारानी जी का चरण पकड़कर पटकना चाहा मशला पर उस समय योगमाया हाथ से तनकलकर आकाश में चली गई।

भूभूर् रापोऽनलो वायुः खं नों बुद्धध रेव च ।

अहंकारइतीयंरे्भभनना प्रकृनतरष्टधा ।।

(गीता अ. 7 श्लोक 4)

ये अष्टिा प्रकृतत महारानी की आठों भुजायें योगमाया की हदखाई दी। ललकार के कहती है फक- अरे मूख ि कंस ! ये तू समझ ले फक आकाशवाणी असत्य नहींभई, देवकी के गभ िसे पिु ही पैदा हुआ है, कन्द्या नहीं, ं कहकर अन्द्तद्िनि हो जाती है। कंस डर जाता है। देवकी वसुदेव की हथकड़ी-बेड़ी काट देता है। दम्पति् अपनेस्थान को आ जाते हैं। रात भर कंस धचंतां मग्न रहता है। प्रातःकाल होते ही दैत्यों की जब सभा बुलायी जाती है। तब दैत्यों की सभा में अब जो प्रस्ताव पाररत फकया गया। अब वो प्रस्ताव कल सुबह 10 बजेसुनाया जायेगा।

पंचम हदवस

भगवानकृष्णकी बाललीला, ब्रह्मस्तुतत, चीरहरण, उद्धव गोपी संवार, भ्रमर गीत

22-2-1969, प्रातः 10.00 से 12.00 बजे तक

श्री ऱंगलाचरण - भगवान श्रीकृष्ण जनर् कथा के बाद से

यहा ूँपर श्रीमद् भागवत के आिार पर आत्मतत्व का र्ववेचन हो रहा है। कल के प्रसंग में भगवान योगेश्वर श्री परम र्वश्विार के जन्म की कथा कही गाई थी। आज की कथा में उनकी बाललीला का प्रततपादन फकया जाएगा। प्जस समय कंस को योगमाया द्वारा यह तनश्चय हो गया फक वसुदेव की पुिी नहीं ंवरन् ्पुि ही हुआ है, तो वह हताश हो वसुदेव और देवकी के कारागृह में छोड़ हदया। कंस को रात्रि भर नींद नहीं आई। प्रातःकाल दैत्यों की सभा बुलाई गई। दैत्यों ने इस महती सभा में अपना प्रस्ताव रखा फक महाराज हम लोगों ने रात्रि में ही यह तनश्चय फकया है फक इस राज्य में जहा ूँभी बालक पैदा हुआ है, वह छोटा ही होगा-तो हम लोग दानवी माया करके राज्य की प्रजाओंके यहाँ जाकर अभी के उत्पन्द्न बालकों का वि करेंगे और इस तरह सुगमता से ही आपका शिु मारा जाएगा। बस, आपकी आज्ञा मिा ही चाहते हैं। दैत्यराज कंस को यह प्रस्ताव पसंद आ गया और उसनेआज्ञा दे दी।

अब यहा ूँगोकुल में बाबा नंद के प्रांगण में पुि जन्म महोत्सव बड़े िूमिाम से मनाया जानेलगा। गोप-गोर्पयों की अपार भीड़ हो गई। सुि-बुि भूलकर वे जन्म महोत्सव मनाये। इस उत्सव को देखने के मलए, देवलोक से सभी देवी, देवता, गोप-गोर्पयों का रूप ले सप्म्ममलत हुए। कंस द्वारा भेजेहुए पूतना, बकासूर, अघासुर, केशी भगवान का वि करने ेआये और बालकृष्ण के हाथ से उन सबका संहार हो गया और प्रभु के करकमलों द्वारा वि होने ेसे सभी सारुतय मुप्क्त के अधिकारी हुए। प्रभु बाल-लीला करते और गोप गोर्पयाँएवं माता-र्पता सभी को आनंहदत करते। फकसी हदन कोई गोपी अपनी एक सखी से कहती है-

श्रृणु ुसणख कौतुऱेकं नंददकेताङ्गणे र्या दृष्टर् ्।
गोधूभल धूसररताङ्गो नृत्ृयनत वेदानतभसद्धानतः ।।

अरर सखी ! आज बाबा नंद के प्रांगण में मनैं ेएक कौतुक देखा क्या देखा? गोिूमल िूसररत गौवों के चरणों की िूमल से वेप्ष्टत वेदांत मसद्ाांत को मनैं नाचतेदेखा। भगवान श्रीकृष्ण का नाम गोर्पयों ने वेदांत मसद्ाांत रखा है। वेदांत मसद्ाांत का क्या भाव है? वेद कहते ेहैं जानने ेको र्वद् ज्ञानोतु से वेद शधद बनता है। प्जसको

श्रीमद्भागवत रहस्य 177 जानकर जानना कुछ बाकी न रहे-जाननेका अंत हो जाये उसे कहते हैं वेदांत। वेदांत, भगवान आत्मा (र्वश्व की

आत्मा) ही है। अब वेदांत का मसद्धांत क्या है? वासुदेवः सवमिमतत वासुदेव भगवान श्रीकृष्ण से मभन्द्न एक तृणृ भी नहीं, ं यही वेदांत का मसद्धांत है। ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्त सारे चराचर का अप्स्तत्व 'म' ैं भगवान आत्मा हूँ और मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ भी नहीं। यही वेदांत का मसद्धांत है। उस वेदांत मसद्धांत को आज मनैं ेबाबा नंद के प्रांगण में नाचतेहुए देखा है। भगवान के मलए फकतना सुंदर र्वशेषेण गोर्पयों ने हदया है।

फकसी हदन ब्रज के एक माग िपर कोई मस्ताना खड़ा है और माग िपर जानेवाले मुसाफफरों को पुकारकर कहता है-

मा यात पान्द्थाः पधथभीमस्थ्याः हदगम्बरः कोऽर्प तमालनीलः ।

र्वन्द्यस्त हस्तोऽर्प तनतम्बत्रबम्बे िूतः समाकषतित धचिर्विम् ्।।

पान्द्थाः- हे पधथको ! तुम लोग इस समय इस माग िसे न जाना, उिर मत जाओ ऐ मुसाफफरों ! वापस चले जाओ। इस गली में न जाना-यह गली बड़ी भयावह है। मुसाफफर पूछता है-भाई! आर्खर इस गली में क्या भय है? उिर क्या है? क्यों रोकतेहो? मस्ताना कहता है-देखो, इस गली में एक अवूित बालक, त्रबल्कुल नंग–िड़ंग, कुहटल केशिारी श्याम रूप, बड़े ेअचछे ढंग से टेढ़ी नजर फकये खड़ा है- उसने अपनेएक हाथ को तो ओंठ पर रखा है और दूसूरा हाथ कमर पर। टेढ़ा खड़ा होकर मंद-मंद मुस्कुरा रहा है। सः फकम् ्करोतत-वह क्या करता है? हाँ सम्हलना। जो उसके सामनेसे तनकल जाता है उसके धचि रूपी िन को वह चुरा लेता है। बस, यही उसका काम है? भैया ! आत्मप्जज्ञासुओं ! भगवान का नाम संतों ने रखा है चौराग्रगण्य। भक्तों ने प्रभु ुका नाम चोरों का सरदार (सरगना, अगुवा, मुर्खया चोर) रखा है। उसे दुतुनया ूँकी और चीजों से मतलब नहीं ंहै, वह तो केवल धचि ही चुराता है। भाई! जब वह अग्रणी चोर है तो कोई महत्व की चीज ही चुरायेगा। जान लो-वह तुम्हारी स्त्री का चोर नहीं, ं उसे िन नहीं चाहहए वह तुम्हारा िन न चुरायेगा, पुि का चोर नहीं ंहै, इनकी वह चोरी नहीं ंकरता। भगवान का नाम तो र्विचोर है। देखो-समझना र्वषय-चौराग्रगण्य 'धचि', इस धचि से अब आि 'त' तनकाल लो, तो फफर क्या बचा? 'धचत' तो जो चैतन्द्य घनभूत हैवह चोरी भी तो मसफि आौ 'त' की ही करता है। और यही तो चंचलता है। हैवा ततनकाल लो. तो धचत शुद्ि चेतन तत्व भगवान का भगवान रह जाता है। तो बोरी का माल हुआ आि 'त' और चोर हुए भगवान। बस, अब लगाओ हाजीरात हहन्द्द की दफा 379। हा ूँभाई, चोर और चोरी के माल दोनों का पता लग गया।

यिु ुचंचलताहीनंतनर्नोऽरृतूरुयते ।

तदेव च तपः िास्त्रभसद्धानतेर्ोष उ्यते ।।

(महोपतनषत् ्अ. 4.101)

जब तक जल में कंपन है तभी तक उसका नाम लहर है। कंपन न रहा तो लहर कहाँ, फफर तो जल ही जल है। जब तक कंपन है तभी तक लहर का अप्स्तत्व है। इसी तरह धचि जब चंचलता से हीन होगा तो अमृत (आत्मा)

 ही होगा। शास्रमें इसका ही नाम तप है और मसद्तिि में इसको मिो कहतेहैं। जी हा,ूँ तो समझना र्वषय-देखो,

लहर देश में लहर है फक जल देश में? लहर देश में लहर है। जल देशमें जल ही जल है-इसी तरह धचि देश में धचि है न फक धचत देश में। धचत देश में तो चेतन आत्मा के अततररक्त धचि नाम की कोई चीज ही नहींहै। (पू. श्री स्वामीजी ताली पीटकर शधद र्वषय का अनुभव करा रहे हैं।) अनुभवकतिाके देश में शधद है फक शधद अपने(शधद) देश में है? शधद देश में शधद है, न फक आत्मदेश में। देखो, कोई भी र्विप हो, शधद, स्पश,ि रूप, रस, गंधिये पाचूँ र्वषय हैं। इनके अनुभव का ही नाम र्विप है। गरज यह है फक धचि प्जससे र्वक्षितत हो उसका नाम र्विप है। त्रबल्कुल ठीक। अब यहद 'म'ैं (आत्मा) देश में र्विप हो तो र्विप का अनुभव सदा होता रहे, परन्द्तु आत्मदेश में र्विप का अनुभव नहीं होता और र्विप देश में यहद र्विप है (र्वलिण भाव है, जरा समझना) तो र्विप नहीं। लकड़ी देश में यहद डंडा है तो डंडा नहीं, लकड़ी ही है और डंडा देश में डंडा है तो डंडा नहीं लकड़ी ही है। क्योंफक उसका अप्स्तत्व लकड़ी करके ही है। त्रबना लकड़ी के डंडा कहा,ूँ तो फफर डंडा भी न रहा। इसी तरह र्विप देश में र्विप है तो 'म'ैं ही हूूँ, र्विप नहीं और 'म'ैं देश में र्विप है तो र्विप नहीं है 'म'ैं ही हूूँ। धचि देश में धचि है तो धचि नहीं, धचत ही है। यही धचि की चोरी है। क्या जल के अनुभव में भी लहर है? प्जस तरह जल देश में लहर नहींइसी तरह धचत देश में धचि नहीं। धचत देश में धचि नाम की कोई चीज ही नहीं इसीमलए भगवान का नाम चौराग्रगण्य है तो माल का भी पता लग गया और चोर का भी। हाूँ जी-भगवान जब कुछ बड़े हुए तो वही मभंडं मुरैना (चंबल घाट) का धगरोह बनाये। भगवान ने गोप बालकों का एक धगरोह बनाया। बलराम जी, श्रीदामा, वृषृपव िआहद भगवान के सखा फकसी हदन फकसी गोपी के घर की तरफ से तनकले तो पहहले गोपी के घर के सामनेखूंटे से बँधे बछड़े खोल हदये। उन्द्हें छोड़तेही बछड़े खेत की ओर भागे। अरे, हाूँ भाई ! बंनि से खोलना तो भगवान का काम ही है। जब बछड़े खेतों की तरफ भागे तो अंदर से गोपी भागतेहुए बछड़ों को पकड़ने दौड़ी, परन्द्तु जल्दी के कारण दरवाजेका संकल लगाना भूल गई। मौका अचछा लगा। डाकुओं का धगरोह घर में घुस गया। खाली घर देख छीके के ऊपर जो मक्खन की हंडी थी उसे उतारकर यज्ञ पुरुष भगवान श्रीकृष्ण मक्खन तनकालकर दबादब भोग लगानेलगे और सखाओं को भी र्खलाने लगे। इसी समय जब घर की मालफकन गोपी वापस आई तो इन सबको मक्खन खाते देख वह पूछती है-यह क्या हो रहा है? तो भगवान और उनके सभी सखागण एक लाइन लगाकर खड़े हो गये। हा ूँभाई, रेन्द्ड जो थे। तो गोपी देखकर कहती है-

रे रे नंदर्िभोः ककर्त्रभवने? र्ातुभयमादागता,
एते के ? र्ं साक्षषणो, वदसखे ककर् गुहुयतर् जंघंयोः ?
चौयस्र् नात्र कृतर् र्या च सुरुणुख र्ाजामर संरंक्षषतर् ।
लवन ककं नवनीतर्त्रवदने? लवनंयोदाकरात् ।।

अरे, अरे नंदनंदन ! बतला, त्रबना मेरी आज्ञा के, त्रबना पूछे तू मेरे सुने घर में क्यों आया है? कैसे आया है?

कार् क्रोधर्दर्ाननर्ोहा। लोभ न षोभ न राग नद्रोहा ।
न्जनह के कपट दंभ नदहं र्ाया। नतनह के हृदय बसहु रघुराया ।।

(अयो. रामा.)

इन र्वकारों से जो फक ऊपर चौपाई में दशायिा गया है, प्जसका हृदय रूपी मकान सूना है, रहहत है, नंदनंदन भगवान श्रीकृष्ण उसी घर में आते हैं, उसके ही हृदय रूपी घर में प्रकामशत करते हैं। भगवान की अनुभूतत तो सूने ेही घर में होती है। देखने में आता है फकसी मंहदर में कोई भगत आता है तो भगवान के हदव्य र्वग्रह के सामने इस मुरा में खड़ा हो जाता है। (q , hat x स्वामी मुरा बनाकर बताते हैं।) िन्द्य हो धगरिरीरी-आ जाओ, हे श्याम सुंदर। आ जाओ। तो फफर प्रभु कहाूँआ जाएं? तेरे हृदय में तो कूड़ा-कचरा भरा है। तूने हृदय में तो प्रपंच रूपी कूड़ा-कचरा भर रखा है, तो कहाूँ आ जाय,ें तेरे सर पर?

लाज न लागत दास कहावत ।।
हरर ननर्लम, र्लग्रभसत, असरं्जस र्ोदह जनावत ।
जेदह सर काक कंक बक सूकर, क्यों र्राल तहुँ आवत ।।

(र्वनय 185)

लाज नहीं ंलगती तुम्हें दास कहाने ेमें। अरे यार! प्जस खड्डे ेमें कीचड़ भरा है जो काक, बक, सूकर का स्थान है, जो शरीर मलमिू का भांड है तो क्या ऐसे गंदे स्थान में मराल-राजहंस पिी कहींकभी आयेगा?

भटैं जब दाग ददल के हरर का तब, हर जा तसव्वर हो ।
जो है बेदाग कपड़ा उस पे रंग, एकसार आता है ।।

अपने-आपको अधिकारी तो बनाओ, हृदय को साफ तो करो-र्वकार रूपी बगुले जहा ूँहैं वहाूँतो भगवान नहीं ंआयगें।

हा,ूँ तो फफर गोपी कहती है फक मेरे सूने ेमकान में क्यों आये? भगवान कहते ेहैं-बड़ी मकान वाली बनी है, क्यों न आयें? मैया यशोदा दही त्रबलो रही थी, मनैं ेउससे हठ फकया तो वह मुझे ेमारने दौड़ी। तेरे घर सूना पाकर इिर दौड़कर आ गया और अंिरे में छुपा हूूँ। अचछा, तुम्हारी मैया तुम्हें मारनेदौड़ी तो तुम छुपे हो परन्द्तु ये कौन हैं, ये फौज क्यों साथ में लाये हो? मम् ्साक्षिणः ये मेरे सािी हैं। तू नाहक झूठमूठ मुझ पर दोष न लगाये करके ये सब गवाह लाया हूूँ। व्यथ िही हम पर दोषारोपण कर रही हो। तो बाबू जी ! यहद चोरी नहीं ंफकया तो अपनी जांघों के बीच में क्या तछपा रखा है? श्रीकृष्ण भगवान मक्खन की छोटी मटकी फेंकना भूल गये थे ेऔर दोनों जांघों के बीच में मटकी दबाये खड़े ेथे। गोपी पूछती है-यह क्या है? क्या तछपाये हो? भगवान कहते ेहैं - अरी बाबरी ! देख-यहा ूँपर त्रबल्ली तेरे मटकी का मक्खन खानेकी ताक लगाई थी, उससे बचाने के मलए यहा ूँतछपा रखा हूूँ, माजारि संरक्षितम्–् उिर त्रबल्ली मक्खन खानेकी ताक में बैठी, परन्द्तु उल्टा तू ूमुझ पर ही नाराज हो रही है। मनैं ेतो तेरे मक्खन को त्रबल्ली से बचाया है-नाराज न हो-त्रबल्ली से रिा कर रहा हूूँ। गोपी कहती है- बाबूजी! चोरी नहीं की तो मुूँह में क्या लगा है? लग्नं फकं नवनीतमिवदने लग्नंयशोदाकरात्–् भगवान कहतेहैं फक यशोदा मैया दही त्रबलो रही थी और

उसके हाथ में मक्खन लगा था। म ैंवहींथा। तो उसनेमक्खन लगे हाथ में मेरे मुँह में चपेड़ लगा हदया। वही मक्खन मेरे मुँह में लगा है, तेरे घर का नहींहै। गोपी आनंद र्वह्वल हो गई। इसी तरह भगवान व्रज में नाना प्रकार के व्रज वामसयों को आनंद दे रहे हैं।

अब श्रीकृष्ण भगवान पाचूँ साल के हो गये तो उन्द्हें बछड़ों को चरानेकी अनुमतत ममल गई। समवयस्क गोप बालकों को लेकर पास के जंगल (वृंदावन) में बछड़ों को चराने के मलए जाने लगे। फकसी हदन अघासुर दैत्य बड़ा भारी अजगर का रूप िारण कर जंगल में जा बैठा। श्रीकृष्ण पर घात लगाकर जंगल में मुँह बाये (मुँह खोलकर) बैठ गया। श्रीकृष्ण उसका भी उद्ारि फकये। उसे जब मार हदये तो सारे संसार भर में हलचल मच गई फक बाबानंद के पिु श्रीकृष्ण ने बड़े ेभारी बलवान अघासुर दैत्य का वि कर हदया। यह कोलाहल ब्रह्मलोक तक पहुुँचा। माया ठगनी बुढ़उ को भी न छोड़ी। माया बुढ़उके मसर जा बैठी। ब्रह्माजी को मोह हो गया फक वृंदावन में नंद का बालक पाचूँ साल का श्रीकृष्ण इतनेप्रतापी अघासुर दैत्य का वि कैसे फकया-चलो, वहाूँ जाकर उसकी परीिा लें, देखें तो सही फक वह फकतना बलशाली है?

देखो, यह वही ब्रह्माजी हैं, जो भगवान श्रीकृष्ण के अवतार के समय गभस्तुितत करनेआये थे। माया फकसी को नहीं ंछोड़ती, सबको रगड़ मारती है।

र्ाया र्हाठधगनन हर् जानी ।
किव के कर्ला होय बैठी, भव के भवन भवानी ।
पंडा के घर रू्रनत होय बैठी, तीरथ र्ें भई पानी ।।

(री माया…)

ठगनन क्या नैना चर्कावै ।
कद्दू ूकादट र्दृंग बनाई, नींबू ूकादट र्ंजीरा ।।
साग तुरैया र्ंगल गाव,ैं नाचैबालर् खीरा ।।

(री ठगतन क्या..)

भसैं पद्धर्नी चूहा आभिक, र्ेंढक ताल लगावै ।
छप्पर चदढकै गदहा नाचै, ऊुँट ववष्णु पद गावै ।।

(री ठगनी क्या…)

मतलब? ब्रह्मा जी परीिा लेने वृन्द्दावन में आये। दोपहर का समय था। श्रीकृष्ण भगवान बाल गोपाल के साथ दही-भात का भोजन कर रहे थे ेऔर कुछ दूरू पर बछड़े ेहरी-हरी घास आनंद से चर रहे थे। भगवान श्रीकृष्ण ने देखा फक ब्रह्माजी बड़ी दूरू ब्रह्मलोक से आये हैं तो उन्द्होंनेगोप बालकों को आदेश हदया फक देखो, बछड़े ेजो हैं वे चरते-चरते बड़ी दूरू तनकल गये हैं, अतः उन्द्हें हाकूँकर ले आओ। अब ब्रह्माजी को एकांत ममला तो उन्द्होंने बछड़ों

एवं गोप बालकों को हरण कर मलया और ले जाकर ब्राह्मी गुफा में सबको सुला हदया। फफर लग गये अपनेकाम (सृपूष्ट करने) में। इिर भगवान श्रीकृष्ण बछड़ों एवं गोप बालकों को न देखकर समझ गये फक ब्रह्माजी ने उनका हरण कर मलया है। अब क्या होता है-

यावद्वत्सपवत्सकाल्पकवपुयावमत्कराङ्घयाददकं ।
यावद्यन्ष्टववषाणवेणुदुलभिवयावद्ववभूषूाम्बरर् ् ।
याव्छीलगुणुाभभधाकृनतवयो यावद्ववहारादद्कं ।
सवं ंववष्णुरुयंधगरोऽङ्गवदजः सवस्मवरूपो बभौ ।।

(श्रीमद् भागवत 10 - 13 - 19)

प्जतने ेबछड़े ेथे, े जैसा उनका रूप रंग था, जैसे उनके खुर, सींग इत्याहद थे। जैसे उनके चरानेवाले गोप, बालक जैसा उनका रूप, रंग, आकार, अवस्था, वस्ि आभूषण, छड़ी, बांसुरी, सींग का बाजा, खेलकूद, स्वभाव सब भगवान श्रीकृष्ण वैसे और उतने ही हो गये। हो गये, बने नहीं। भैया ! बनना और होना में बड़ा अंतर है। जो वस्तु पहले से हो उसे होना कहते ेहैं। और जो पहले से न हो उसे बनना कहतेहैं। जैसे फक कन्द्या जो है वह माूँके गभ िसे ही स्िी होकर आती है, बनती नहीं। चटकना, मटकना ऐसे देखो, वैसे न देखो क्या कोई इन्द्हें मसखाता है? क्या कहीं इनका रेतनंगं स्कूल है? और हहजड़े ेस्िी बिनतेहैं, होते नहीं। हैं तो वे पुरुष ही, परन्द्तु स्िी बिनते हैं। तो यहाूँ पर भगवान श्रीकृष्ण हो गये, क्योंफक पहले से ही सब कुछ वही थे। रोज बछड़ों को चरानेले जाते और संध्या होते-होते वापस लौट आते, परन्द्तु इस रहस्य का पता गौवों एवं ंगोप बालकों की माताओं को भी नहींलगा।

प्जज्ञासुओं! इस कथा से कौन-सी मशिा लेनी चाहहये? स्थूल, सूक्ष्म, कारण सभी भगवान हैं। भगवान आत्मा के त्रबना एक िण भी नहीं। वासुदेवः सवमिमतत गोर्पयाूँ सभी अपने-अपने बालकों को वापस आने पर तयार करती हैं। ठीक वैसे ही जैसे फक वे उन्द्हीं के बालक हों-प्रेम वही, लीलाएं वही, गौएं अपने बछड़ों को पाकर वैसे ही प्रेममय थीं जैसे उनके ही बछड़े ेहों। कोई संदेह, झझक नहीं, ं नाम का नहीं–सभी काय िपूववित् ्चलता रहा। जैसे कुछ हुआ ही नहींहो। वष िबीत गया-इतने ेहदन बाद ब्रह्माजी को ख्याल आया तो सोच में पड़े ेऔर तुरंत संकल्प हुआ फक चलकर वृंदावन में देखें तो सही। हंसवाहन ब्रह्माजी हंस पर आरुढ़ हो वृंदावन आते हैं। उनके अचरज का कोई पारावार नहीं ंरहा-उन्द्हें सारा वृंदावन कृष्णमय हदखाई हदया। क्या देखतेहैं फक एक-एक श्रीकृष्ण भगवान की सेवा में दस-दस ब्रह्मा लगे हैं। जो ब्रह्मा ब्रह्म लोक से आये थे, े वेतो चतुरानन थे। सब यहा ूँपंचानन, षडानन, दशानन, शतानन, सहस्िनिन, अनन्द्तानन ब्रह्मा उन्द्हें हदखाई देने लगा। सभी भगवान श्रीकृष्ण की सेवा में रत थे। अनेकानेक ब्रह्माण्ड के ब्रह्मा वहाूँ एकि थे। देखकर ब्रह्माजी के होश उड़ गये, चकरा गये, एक ब्रह्मा हो तो, वहाूँतो ब्रह्माओं की धगनती नहीं, ं इतने ब्रह्मा। ब्रह्माजी अभी तक अपनेको ही एकमाि ब्रह्मा जानते थे, े इसमलए ब्रह्माजी काठ की पुतली के समान स्तंमभत रह गये। म ैंब्रह्मा सत्य हूूँ या ये सब ब्रह्मा सत्य है? देखो-ब्रह्माजी को

मोह क्यों हुआ? अरे भाई ! समझना र्वषय-म ैंब्रह्मा हूँ, इस भाव में ब्रह्माजी को मोह हुआ। है चीज वही, उसे कुछ मान लेना ही मोह है। माया कहींबाहर से नहीं आती।

माङ्-माने, िातु से माया बनता है। जो माना जाय, उसका नाम माया और प्जसको माना जाय वह मायापतत। पा-रिणे िातु से पतत शधद बनता है। प्जसके त्रबना जो न रहै, वही उसका पतत है। जो रि करै उसका नाम पतत है। इस डंडें ेसे लकड़ी तनकाल लो तो डंडा नहींरहेगा इसमलए इस डंडें ेका पतत लकड़ी है। डंडें ेका पतत लकड़ी, कपड़े ेका पतत सूत, आभूषण का पतत सोना, घड़े ेका पतत ममट्टी। जो प्जसकी रि करे वही उसका पतत, जो प्जसका कारण हो, जो आिार हो, जो प्जसमें व्यापक हो, जो प्जसका अप्स्तत्व हो, वही उसका वास्तर्वक स्वरूप होता है। यह तनयम है। जो माना जाय उसका नाम माया। ब्रह्मा से लेकर तृण पयन्द्ति सारे चराचर की जो मान्यता है, इस मान्यता का आिार 'म ' ैं आत्मा हूँ। ये सब मुझ पर ही तो आिाररत है। सारा प्रपंच मायापतत पर आिाररत है। उसको माया का पतत कहो या माया का आिार ।

भिव ववरंधच कहुँ र्ोहइ, को है बपुरा आन ।
अस न्जय जानन भजदहं ंर्ुनन, र्ायापनत भगवान ।।

अस प्जय जातन के मातन। मजा आ गया। माया को माना गया और फकसको जान? 'म ' ैं आत्मा (मायापतत भगवान) को। तो ब्रह्मा काठ की पुतली की नाई देख रहे हैं?

थोड़ी ही देर में वृन्द्दावन भूतपूव िहदखाई देने लगा और भगवान श्रीकृष्ण और एक ब्रह्मा रह गये जो फक ब्रह्मलोक से आये थे। तब उन्द्हें होश आया और हंस पर से उतरकर फकरीट मुकुट पृथ्वी पर रखकर दंड प्रमाण कर स्तुतत करते हैं।

(यह ब्रह्मस्तुतत 40 श्लोकों में है। श्रीमद् भागवत दशमस्कन्द्ि चौदहवाँ अध्याय)- ब्रह्मोवाचः

नौर्ीड्य तेऽभ्रवपुषेतडडदम्बराय गुछ्जावतंसपररवप्छलसनर्ुखाय ।
वनयस्रजे कवलवेत्रववषाणवेणुलक्ष्र्भश्रये र्ृदुपुदे पिुपाङ्गजाय ।।

(श्रीमद् भागवत 10-14-1)

इडडतुम् ्योग्यः तत् ्सम्बुद्िौ है इड्य, हे स्तुत्य, ते तौ तुभ्यम् ्अहम् ्नौमम । स्तुतत करने ेयोग्य जो तुम इसमलए तुम्हारा म ैंनमस्कार करता हूँ। तुम कैसे हो? अभ्रवपुषे–अभ्रवत् ्वपुः शरीरं यस्य सः अभ्रवपुषे। अभ्र माने आकाश के सामान तनमलि शरीर है प्जसका, उसे कहते हैं अभ्रवपुया अभ्रवत् ्मेघवत् ्वपुः सः अभ्रवपुः तस्मै अभ्रवपुषे। अभ्र मानेमेघ के समान नीलवण िका शरीर है प्जनका इसमलए अभ्रवपु अथवा अभ्र एवं वपुः अभ्रवपुः तस्मैअभ्रवपुषे- आकाश ही है शरीर प्जसका।

य आकिो ेनतष्ठननाकिाादनतरो यर्ाकिाो न वेद यस्याकिाः िरीरं ।

य आकिार्नतरो यर्यत्येष त आत्र्ानतयाभ्मयर्तृः ।।

(3-7-12 वृहृदा)

जो आकाश के भीतर बाहर प्स्थत है, प्जसको आकाश नहींजानता और जो आकाश को जानता है, आकाश ही प्जसका शरीर है-वही आत्मा अन्द्तयामिी अमृत स्वरूप है। और फफर आप कैसे हैं। तडडदम्बराय अथात्ि् भगवान जो पीताम्बर िारण फकये हैं उसमें र्वद्युत के समान प्रततभा (छटा) है। गुञ्जावतंस पररर्पचछल-सन्द्मुखाय-भगवान् ्! आप कानों में घुंघची (जंगली गोमची के बीज) के समूहों का कुंडल िारण फकये हैं, मसर पर मयूर के पंख का मुकुट है और आप मंद-मंद मुस्करा रहे हैं। वन्द्यस्रजे जंगली पुष्पों की वनमाला िारण फकये हुए हैं, एक हाथ में दही-भात का कौर है, दूसूरे हाथ में छड़ी, मृगृा के सींग का बाजा जो फक ग्वामलये बजातेहैं, रखे हुए हैं, बगल में बंशी दबाये हुए हैं। फफर आप कैसे हैं? लक्ष्मधश्रये मृदुपुदे-सुंदर कोमल-कोमल आपके चरणारर्वन्द्द हैं जो महारानी लक्ष्मी जी द्वारा सेर्वत हैं और आप कैसे हैं। पशुपुाङ्गजाय-पशून्ू ्पातीतत पशुपुोनंदः तस्य अंगः पशुपुाङ्गः तस्मात् ्जातः पशुपुाङ्गजः तस्मै पशुपुाङ्गजाय-पशु यानी गौवों के प यानी पालक बाबा नंद उनके अंग से तुम हुए हो इसमलए पशुपुाङ्गजः। अथवा पशुपु बाबा नंद उनके अंग यानी ममि वसुदेवजी उनसे तुम पैदा हुए हो इसमलए तुम्हारा नाम पशुपुाङ्गज है, क्योंफक अंगश्चय दैत्यः सखा इत्यमरः। अंग कहते हैं दैत्य को और अंग कहते हैं ममि को। पशवः संसाररणो जीवाः तेषाम् ्पपालकाः वयं ब्रह्मेन्द्र रुरादयः ते सवे भगवदङ्गात् ्जातः पशुपुाङ्गजाय तस्मै पशुपुाङ्गजाय। पशु रूप संसारी जीव उनके प मानेपालक हम लोग स्रष्टा भतिा, हतिा, ब्रह्माहदक सभी आपके अंग से पैदा हुए हैं इसमलए आपका नाम पशुपुाङ्गजः है। पशवो वत्साः प पालकाः गोपबालकाश्च ते सवे भगवङ्गात् ्जातः पशुपुाङ्गजः तस्मै पशुपुाङ्गजाय। पशु ुयानी बछड़े,े उनके पालक गोप बालक, ये सभी आपसे हुए हैं। अथात्ि्बछड़े ेएवं बालक सब कुछ आप ही हो गए हो इसमलए आपको म ैंनमस्कार करता हूँ।

नौर्ीड्य तेऽभ्रवपुषेतडडदम्बराय गुछुजावतंसपररवप्छलसनर्ुखुाय ।

वनयस्रजे कवलवेत्रववषाणवेणुलुक्ष्धश्रये र्ृदुपुदे पुिपाङ्गजाय ।।

एकस्त्वर्ात्र्ा पुरुषः पुराणः सत्यः स्वयंझयोनतरननत आद्यः ।

ननत्योऽषरोऽजस्त्रसुखुो ननरछजनः पूणोऽद्वयो र्ुकुत उपाधधतोऽर्तृः ।।

(10-14-23)

भगवन् ्तुम एक हो और एक होतेहुए आत्मा हो, इस श्लोक में एक के आगे आत्मा शधद आया है, क्योंफक आत्मा ही एक है, बाकी सब अनेक है। फफर कहते ेहैं-पुरुष क्यों? यहूाँपर पुरुष का अथ िस्ी-पुरुष मलंगंवाचक शधद नहीं ंहै, ऐसा शधद न समझना। पु–पुयाम् िशेते यः सः पुरुषः। साढ़े तीन हाथ की पुरी में जो र्वश्राम करता है उसे कहते ेहैं पुरुष पुराणः पुरी का तो नाश हो जाता है, परन्द्तु उसमें जो व्यापक तत्व है आत्मा उसका नाश नहीं ंहोता

 इसमलए पुराण है। भगवन् ्आप अजन्मा हो अथात्ि्आपके जन्म का पता ही नहीं ंहै।

अब प्रश्न होता है फक पुराना

तो अज्ञान भी है-अज्ञान कब पैदा हुआ, इसकी भी जन्मकुंडली जन्म संवत नहीं ंहै। तो कहते ेहैं सत्य अथात्ि्आप अनाहद और अनन्द्त हैं, परन्द्तु अज्ञान अनाहद और सान्द्त है। फफर आप कैसे हो? स्वयं ज्योततः अथात्ि्आप स्वयं प्रकाश हो तो कहते ेहैं फक स्वयंप्रकाश तो सूय िभी है, तो आप सूय िहो? नहीं! अनन्द्तः अथात्ि्आप अनन्द्त हो, परन्द्तु

सूय िका प्रकाश तो आहद अन्द्त वाला होता है, सूय िका तो उदय-अस्त होता है। आप आद्य हो। तनत्यः तनत्य हो? अब प्रश्न होता है फक नैयातयक आकाश को तनत्य मानता है, तो क्या आप आकाश हो? तो कहतेहैं-नहीं, अिरः अथात्ि्अर्वनाशी हो। अजस्िहो। सुख स्वरूप हो। तनरञ्जन माने तनर्वकिार हो, पूण िहो, अद्वय मानेएक हो, मुक्त हो, उपाधिरहहत और अमृत हो।

एवंववधंत्वां सकलात्मनार्वप स्वात्मानरात्मात्मतया ववचषते।

गुवुकममलब्धोपननषत्सुचुषुषा ये ते तरनतीव भवानृताम्बुधधर् ्।।

(10-14-24)

एवंर्वित्वांइस प्रकार जो तुम हो, तो तुम्हारा दशनि कैसे हो? कहा ूँपर हो? फकस करके हो? और फकसको हो? गुर्विकिलधिोपतनषत्सु चिुषा-यहा ूँब्रह्मा जी ने गुरु की उपमा सूय िसे दी, क्योंफक ष्जस तरह सूय िकी फकरणों से अंिकार का नाश हो जाता है, उसी प्रकार गुरु के वचन रूपी फकरणों से अनाहदकाल से अज्ञानान्द्िकार का नाश हो जाता है। सूय िरूपी गुरु और उपतनषत्सुचिुषा-यानी उपतनषद् रूपी आूँख से उपतनषद् शधद व्याकरण के षट्लृरूवशरणगत्यवसादनेषु िातु ुसे बनता है। उप और तन उपसग िहैं। जो परमात्मा के समीप पहुूँचा दे उसको कहते ेहैं उपतनषद। संसार र्वनाशयतत संसारस्य मूलकारणं ंअर्वद्यांमशधथलयतत, ब्रह्म च गमयतत इत्युपतनषद्। जो संसार का नाश करे, संसार के मूल कारण अर्वद्या को मशधथल करे और सनातन ब्रह्म आत्मा को प्रातत करा दे उसे उपतनषद कहते ेहैं। सूय िरूपी गुरु और वेदान्द्त रूपी नेि के द्वारा अपनी आत्मा करके आत्मा में आत्मा को जो तुमको परमात्मा देखतेहैं, यानी 'म'ैं करके 'म'ैं में 'म ैं'को जो तुमको परमात्मा देखतेहैं, जानते हैं-ये तरन्द्तीव भवानृताम्बुधिम्–वे इस असत्य संसार सागर से तर जैसे जाते हैं। बुढ़उ (ब्रह्मा) का वचन बड़ा र्वलिण है-तर जैसे जाते हैं, तरतेनहीं। क्योंफक यहद संसार हो तब तो तरा जाय और जब संसार है ही नहीं,ं संसार है इस र्वकल्प का ही नाम संसार है तो फफर तरेगा फकसको ? इसमलए तर जैसे जाते हैं।

रजत सीप हुँ भास न्जभर् यथा भानुकर वारर ।

जदवप र्ृषा नतहुँ काल सोई भ्रर् न सकइ कोउ टारर ।।

(बा.का.)

जब संसार है ही नहीं ंतो इससे तरेंगे क्या? संसार को यहाूँ पर मृषा कहा गया है और आगे की चौपाई-

एदह ववधध जग हरर आधश्रत रहई। यदवप असत्य देत दुःख अहई ।।

में असत्य (अनृत्) कहते हैं। तो संसार ममथ्या भी है और असत्य भी। समझो-असत्य और ममथ्या दोनों के अथ िअलग-अलग होतेहैं। जो उत्पन्द्न होकर नाश हो जाय उसे ममथ्या कहतेहैं और जो तीनों काल में है ही नहीं, ं अर्वद्यमान हो, वन्द्धयापुित्रवत् ्है, उसे असत्य कहते हैं। यहाूँ संसार को असत्य कहा गया है और भागवत के श्लोक में अनूत कहा गया है अथात्िसंसार है ही नहीं। अरे भाई। रस्सी में जो सप िहदखता है वह ममथ्या भी है और असत्य भी है। इसी तरह शरीर ममथ्या भी है और असत्य भी। उत्पन्द्न होकर नाश हो जाता है इसमलये ममथ्या है और शरीर है ही नहींइसमलए असत्य है। त्रबल्कुल स्पष्ट हो गया। अब आगे इसकी अपील नहीं ंहो सकती। शरीर देश में शरीर ममथ्या है और आत्मदेश में शरीर नाम की कोई चीज ही नहीं ंहै इसमलए शरीर असत्य है। संसार, संसार देश में ममथ्या है और आत्मदेश में है ही नहीं ंइसमलए संसार असत्य है। यह अटल मसद्धांित है। टस से मस नहीं ंहोना है। अकाट्य मसद्धांित है।

एवंववधंत्वां सकलात्नार्वप स्वात्रानरात्रात्तया ववचषते।
गुवुकममलब्धोपननषत्सुचुषुषा ये ते तरनतीव भवानृताम्बुधधर् ्।।

सूय िरूपी गुरु से उपतनषद रूपी नेि द्वारा अपने'म'ैं को अपने 'म'ैं में जो तुमको परमात्मा देखतेहैं, जानते हैं, वे इस असत्य संसार सागर से तर जैसे जाते हैं। अचछा भैया ! म ैंआत्मा को परमात्मा देखना क्या है? म ैंआत्मा को मसफि 'म'ैं ही कहना या 'म'ैं के साथ म ैंआत्मा जोड़ना एक ही है। अनाहदकाल से अपनेआपको 'म'ैं का अथ सािढ़े तीन हाथ का शरीर लगाये हो इसमलए गलती से 'म'ैं का मतलब शरीर न मान लो करके म ैंके साथ आत्मा कहा जाता है। नहीं तो 'म'ैं का अथ िआत्मा ही होता है।

समझो र्वषय-'म'ैं आत्मा को परमात्मा कैसे देखें? देखो-म ैंपरमात्मा हूूँ, ऐसा कहना मान्द्यता है भला और जहाूँ तक मान्द्तया है वहाूँतक माया ही है। म ैंब्रह्म हूूँ, म ैंव्यापक हूूँ ऐसी मान्द्यता भी माया के अंदर है। भगवान देश में जानना और माया देश में मानना। जी हा–ूँभगवान देश में 'जानना' ऐसा शधद है और माया देश में मानना ऐसा शधद है। तो फफर म ैंभगवान हूूँ, ऐसा कहना भी मानना हो है। यह जानना नहींहै। यह देखना नहींहै, अनुभव करना नहींहै। तो फफर आत्मा को परमात्मा कैसे देखतेहैं? जानना क्या है? क्या भगवान भी अपनेआपको म ैं भगवान हूूँ, ऐसा कहता है? यहद ऐसा भगवान कहें फक म ैंभगवान हैं, तो उसकी महहमा कहाूँ रहे। म ैंभगवान हूूँ, ऐसा भगवान कहें, तो म ैंभी आपनेआपको म ैंभगवान हूूँ, कहूूँ। परन्द्तु जब भगवान ही म ैंभगवान हूूँ, ऐसा नहीं कहता तो 'म'ैं क्यों कहूूँ फक म ैंभगवान हूूँ। बस, यही भगवान को देखना है। अरे हा!ूँ जीव कैसे भगवान होगा? अभी तक अपने को जीव माना था, अब जीव से कुछ बड़ा अपनेको भगवान मानता है। अतः जब तक अपनेआपको भगवान भी मानता है, तब तक अपने-आपको जानता नहीं, यह भी मानना ही है। माया ही है।

बड़ी र्वधचि बात है। यह सूक्ष्म तत्व है। अपनेम ैंआत्मा को भगवान नहीं जानेगा तो भगवान में अपने 'म'ैं को देखेगा। भगवान में अपने'म'ैं को देखनाक्या है? 'म'ैं को 'म'ैं ही जानना, यही भगवान में अपने'म'ैं को देखना है। भगवान, परमात्मा, ब्रह्म इन नामों को फकसने रखा है? भक्तों नेनामकरणफकया है। पैदा भी तो वे ही करते हैं।

श्रीमद्भागवत रहस्य 186 अरे ! भक्त न हो तो भगवान को पैदा कौन करे? मशव-तो भैया ! भक्तों ने ही नाम रखा है।

परमात्मा, परमतत्व

भगवान। जी हाूँ उसको क्या मुसीबत पड़ी है मुनादी करनेकी फक म ंैभगवान हूूँ। म ंैभगवान हूूँ, तब कहे जब उसको दूसूरा हदखाई दे। हढंढोरा पीटे तब जब उसे अपनी आूँख में दूसूरा हदखाई दे। जहाूँअंकिार का अत्यन्द्ताभाव हो उसे े सूय िकहते हैं। सूय िको अंकिार से कहना न पड़ेगा फक म ंैसूय िहूूँ जबफक सूय िके प्रगट होनेपर अंकिार का अपने

आप अत्यन्द्ताभाव हो जाता है। फफर सूय िफकस अंकिार से कहेगा फक म ंैसूय िहूूँ, जबफक वहाूँ अंकिार का नामोतनशान ही नहीं ंहै। इसी तरह जहाूँप्रपंच का अत्यन्द्ताभाव हो उसे भगवान कहते ेहैं। भगवान में र्वकल्पभाव नहीं ंहै। सूय िका प्रकाश तो अंकिार का प्रततद्वन्द्वी है। अतः सूय िके प्रकाश से अंकिार नहीं ंदेखा जा सकता। तो फफर वह कौन-सा प्रकाश है, प्जससे फक अंकिार और प्रकाश दोनों का ज्ञान होता है। यह मुझ भगवान आत्मा का प्रकाश है। यहद भगवान के स्मरण में तुम्हें मन हदखाई देता है तो तुम मन का ही स्मरण कर रहे हो, भगवान का स्मरण नहीं। प्रकाश के ध्यान में अंकिार कहाूँ-

महाराज अब ध्यान लगाये बैठे हैं-परन्द्तु भगवान के ध्यान करने में मन पता नहीं फकत्थेजाता है। भगवान के ध्यान से और मन से क्या ताल्लुक? भगवान अपनी जगह में और मन अपनी जगह में। इस मसद्िांत को समझनेमें बड़े–बड़े ेवेदान्द्ती चक्कर में पड़ जाते हैं। मन का चक्कर नहीं ंजाता। क्या आत्मदेश में भी मन है। वहाूँपर तो मन का अत्यन्द्ताभाव है। प्रपंच, शरीर, मन, सृप्ष्ट ये सब माया देश की बात है, भगवान देश में ये कहाूँ? स्वामी जी ! तो फफर क्या भगवान का भजन नहीं ंकरना चाहहए और भगवान का भजन क्या है? (स्वामी जी कहते हैं) हाूँ भाई। यह फफर बतायगें, यह बात फफर कहेंगे। जी हा–ूँ भगवान का भजन करना यही है फक बस, कुछ न करो। हा ूँभाई ! हमारी बात मानों तो औरों के भजन में तो करना, िरना है, परन्द्तु भगवान के भजन में कुछ करना िरना नहीं ंहै। क्योंफक, भजन करोगे तब न तरोगे और भजन न करोगे तब न तरोगे, इसमलए भजन करना चाहहए। भैया ! प्जसकी शादी होती है, गीत तो उसी का गाया जाता है। ब्रह्म स्तुतत आध्याप्त्मक र्वषय है। यहद संसार सत्य है तो उसको तरा नहीं ंजा सकता और संसार असत्य है तो है ही नहीं, तरोगे फकसको? अगर आवागमन सत्य है तो उसकी तनवृर्त्त कैसे होगी और असत्य है तो आवागमन है ही नहीं,ं तो फफर तनवृर्त्त का प्रश्न ही नहींउठता। सब तरह से मुसीबत है।

एवंववधंत्वां सकलात्नार्वप स्वात्रानरात्रात्तया ववचषते।

गुवुकममलब्धोपननषत्सुचुषुषा ये ते तरनतीव भवानृताम्बुधधर् ्।।

(10-14-25)

अब प्रश्न होता है फक जब संसार है ही नहींतो प्रपंच आता कहाूँ से है? आत्मानमेवात्मतयार्वजानतां तेनैव जातं तनर्खलं प्रपप्ञ्चतम् ्। ज्ञानेन भूयोऽर्प च तत्प्रलीयते रज्जवामहेभोगभवाभवौ यथा ।।

 भैया ! सुननेमें फक 'कुछ न करना' यह बड़ा सरल लगता है, परन्द्तुयह इतना कहठन सािन है फक लाखों में कोई
एक इसको समझता है। संसार सागर से तरने के मलए कुछ न करना, सुनने ेमें यह बड़ा आसान हदखता है। स्वामी जी! तब क्या कुछ न करना चाहहए? अरे ! अनाहदकाल से टांगे का जुता हुआ घोड़ा क्या कुछ न करेगा? जुता रहा तो फफर अवश्य कुछ न कुछ करेगा ही। और भाई! अभी तक कुछ करके क्या कमाये? नाना प्रकार के सािन फकये परन्द्तु क्या ममला? स्वगा–इसका अनुभव तो फकये ही हो। अब अभी जो पुडड़या दी जा रही है उसका भी सेवन करो, पुडड़या पेट में गई नहीं फक मज िऔर मरीज दोनों खतम हो जाते हैं। जब तक मज िहै तब तक मरीज भी है, परन्द्तु इस पुडड़या से मज िमरीज दोनों खत्म हो जाते हैं। बड़ा कहठन सािन है लाखों करोड़ों में कोई-कोई इसे पकड़ता है। दंड, कमंडल िारण फकये हुए मसद्ि आपको बहुत ममलेंगे, परन्द्तु अनारंभ व्रती होना, कुछ न करो, मत करो, क्या यह मामूली चीज है?

आत्र्ानरेवात्र्तयाववजानतांतेनैव जातं ननणखलं ंप्रपन्छचतर् ्।
ज्ञानेन भूयोऽवप च तत्प्रलीयते रज्झ्वाहेभोगभवाभवौ यथा ।।

यह प्रपंच आया कहा ूँसे? अपनेस्वरूप आत्मा के अज्ञान से, तनर्खलंप्रपञ्चतम् ्सारा संसार पैदा हो जाता है। अपने स्वरूप आत्मा से प्रपंच की उत्पतत हो जाती है और ज्ञान होनेपर, जहा ूँसे पैदा हुआ था वहींजाकर लीन हो जाता है। अब इस पर रज्जु और सप िका दृष्टान्द्त देते हैं।

अननन्श्चता यथा रज्झजुरुनधकारे ववकन्ल्पता ।
सपधमारादददभभभावैमस्तद्वदात्र्ा ववकन्ल्पतः ।।

(माण्डू गौ. का. वैतभ्य.प्र.-17)

अंकिार में रस्सी पड़ी है। रज्जु पर जब सप िका र्वकल्प करोगे, तो सप िही सप िहै। हालांफक सप िहै नहीं, न अंकिार में, न प्रकाश में। वस्तुतः वह रस्सी ही है। परन्द्तु, रज्जु के अज्ञान से प्जस तरह रज्जु में सप िका र्वकल्प होता है, इसी प्रकार अप्स्तत्व भगवान आत्मा के अज्ञान से म ैंआत्मा पर जगत का र्वकल्प होता है।

'शधदज्ञानानुपाती वस्तुशूनूद्यो र्वकल्पः' अथाित् ्सुनाई तो पड़े,े परन्द्तु वस्तु का अभाव हो, ढूँढने ेपर वस्तु न ममले उसे कहतेहैं र्वकल्प। रज्जु का तनश्चय हो जाने पर अंकिार से उत्पन्द्न सप िके र्वकल्प का अत्यन्द्ताभाव हो जाता है और यही तनश्चय होता है फक अरे! यह तो रज्जु ही है। ऐसा नहीं फक पहहले सप िथा और प्रकाश होने ेपर रज्जु हो गया। रज्जु का सप िममथ्या भी है और असत्य भी। सप िदेश में सप िममथ्या है और रज्जु देश में सप िअसत्य है, है ही नहीं। इसी तरह अपनेम ैंआत्मा के अज्ञान से संसार प्रपंच पैदा हो जाता है और स्वरूप ज्ञान (आत्म का बोि) हो जाने पर प्रपंच (संसार) का जो र्वकल्प है उसका अत्यन्द्ताभाव हो जाता है। फफर यही अनुभव होता है फक 'म'ैं आत्मा ही हूँ- मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ नहीं। अरे भाई ! र्वकल्प का कोई आिार भी तो होना चाहहये। मुझ

 आत्मा के अततररक्त इसका आिार कौन होगा, इसमलए इस संसार (जगत, प्रपंच) र्वकल्प का आिार म ैंआत्मा ही

हूूँ। ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्ति सारे र्वश्व का आिार कौन? म ैंआत्मा हूूँ। रामायण में भी कहा गया है फक-

ठूिहु सत्य जादह त्रबनु जाने। न्जभर् भुजुंग त्रबनु रजु ुपदहचाने ।।
जेदह जाने जग जाइ हेराई । जागे जथा सपन भ्रर् जाई ।।

ननन्श्चतायां यथा रझझवां ंववकल्पो वननवततेम ।
रझजुरेुवेनत चाद्वैतंतद्वदात् ववननश्चयः ।।

(18 गौ.का. वैतथ्य प्र.मा.)

जी हा ूँअब यहाूँपर प्रश्न होता है फक रज्जु में जो सप िका भ्रम है यह असत्य है, हम समझ गये, ठीक है। परन्द्तु प्जसने अपनेजीवन में सप िकभी नहींदेखा है तो ऐसे व्यप्क्त को रज्जु में सप िका भ्रम कैसे होगा? ऐसा प्रश्न संसार का अप्स्तत्व स्वीकार करने ेवाले पूव िपक्षियों का है। भौततकवाहदयों का यह प्रश्न है। प्जसने प्जस चीज को अपनेजीवन में कभी नहींदेखा उसे उसका भ्रम नहीं ंहो सकता। इसी प्रकार प्जसने अपनेजीवन में सप िनहीं ंदेखा तो उसको रज्जु में सप िका भ्रम हो रहा है। संसार भास रहा है। तो जनाब ! जो कभी देखा हो, उसी का भ्रम हो ऐसा नहीं, ं सुनेहुए का भी भ्रम होता है। संसार का प्रवेश दो ही इप्न्द्रयों द्वारा होता है, आूँख और कान। नाम, रूप ही तो संसार है। अथिात् ्भ्रम देख करके या सुन करके ही हो सकता है। सप िदेखा था इसमलए न, सप िका भ्रम हुआ अचछा,

भला बताओ, इतने ेबैठे हो, फकसी ने कभी प्रेत देखा है या मसफि बाप-दादों से सुनते ेचले आ रहे हो? उसके बाप ने उसको बतलाया, उसके बाप ने बाप को बतलाया। इस तरह परम्परा से सबके हृदय में प्रेत बैठा हुआ है-देखा फकसी ने भी नहीं है। ओ पाण्डेये जी ! कल आप रात्रि में कहाूँगये थे?े भैया ! म ैंस्वामीजी का भागवत सुनने झंडापुर चला गया था और फकसी कारणवश वहाूँसे लौटनेमें मुझे ेदेर हो गई। क्या, ज्यादा रात्रि में वापस आये? हा ूँअरे ! 11-12 बजेके लगभग रहा होगा। क्या आप अकेले रहे हो? भैया तुम उसी सड़क से आये होगे जहाूँबड़ा भारी पीपल का पेड़ है। हा ूँभाई-अकेला ही रहा और वही तो रास्ता है। उिर से ही आया हूूँ। न जाने तुम्हारी बुद्धि क्या हो गई जो फक उिर से अकेले आये हो? बस, इतना ही काफी है-अब ज्यादा धयौरा बतलाने की तुम्हें जरूरत नहीं ंहै। अब पाण्डेयेजी की क्या हहम्मत है फक उस रास्तेमें रात्रि में तनकलें। पाण्डेये महाराज के तो रोंगटे खड़े ेहो गये। भैया हम तो मरते-मरते बचे ेथे। एक समय हम भी त्रबहार का बाजार गये थे। हमें भी देर हो गई थी, दादा, मरते-मरते बचे–पीपल के पेड़ के पास हर-हर-हर बाप रे बाप-हम तो अब पाण्डेयेजी की क्या हहम्मत है जो फक उिर से तनकलें। लो, र्पशाच की भ्रांतत हो गई। हालांफक उसने प्जंदगी में कभी र्पशाच देखा नहींहै। परन्द्तु सुनने में ही भ्राप्न्द्त दृढ़तापूवकि हृदय में बैठ गई। यह श्रवण भ्राप्न्द्त है। बाप-दादे से सुनतेआये हैं फक र्पशाच है, देखा नहीं ंतो क्या हुआ? यह कोई जरूरी नहींहै फक भ्राप्न्द्त देखी हुई चीज की ही होती है। अनाहदकाल से संसार का र्वकल्प हो रहा है फक यह संसार है और संसार की सृपृष्ट, पालन, संहार ऐसा होता है। इस प्रकार सुनते ेचले आये हैं। अनाहदकाल से संसार र्वकल्प हृदय में बैठा हुआ है, दूूँठ में र्पशाच का हदखना। फकसी ने कहीं ंरास्ता चलते दूरू में अंिेरे में एक बबूल का दूूँठ देख मलया तो उसके मन में र्पशाच का भ्रम हो गया। अब लगा ब्रह्म गायिी का पाठ करने र्पशाच को

भगानेके मलए ब्रह्म गायिी का पाठ कर रहे हैं। परन्द्तु सब पूजा-पाठ फेल हो गये। ब्रह्म गायिी पर्शाच को भगाने के मलए है न फक दूँठ को भगाने के मलए। बबूल के दूँठ को भगाने का काम ब्रह्म गायिी से तो न होगा। प्जस अंकिार के कारण दूँठ में पर्शाच का भ्रम हो रहा है, जब तक वह दूरू न होगा, तब तक पर्शाच न भागेगा। जब प्रकाश में ठूंठ को देख लेगा, जान लेगा फक यह दूँठ है तभी उसकी भ्राप्न्द्त ममटेगी, अन्द्यता नहीं। इसी प्रकार 'म' ैं आत्मा में, अनाहदकाल से अज्ञानान्द्किार के कारण संसार हदख रहा है, उसका नाश प्रकाश (स्वरूप ज्ञान) से ही होगा अथात्ि् जब अपनेमें आत्मा को जान लोगे तो संसार का भ्रम दूरू हो जायेगा। देखो-यहद संसार प्रतीत हो तो संसार को सत्य मानना पड़ेगो। फफर दो सत्य हो जाएगा-एक संसार और दूसूरा भगवान। परन्द्तु ऐसा नहीं, ं सत्य एक ही होता है इसमलए संसार है ही नहीं। तो फफर बंकिहाूँऔर जब बंनिहींतो मिो कहाूँ-

अज्ञानसंजं्ञौ भवबनधरो्षौ द्वौ नार् नानयौ स्त ऋतज्ञभावात् ्।
अजस्त्रधचत्यात्नन केवले परे ववचायमार्णे तरणाववववाहनी ।।

(10 - 14 - 26)

भव बंमिािौ अज्ञान संज्ञौस्तः - अज्ञान के कारण संसार प्रतीत होता है। अज्ञातनयों ने संसार मान करके ही तो बंि मिो का र्वकल्प फकया है अथात्ि् संसार और उसका बंि मिो अज्ञातनयों की दृष्ट में है। परन्द्तु ऋतज्ञः कोऽथःि आत्मज्ञः जो बिोवान आत्मनैष्ठक महान पुरुष है उनकी दृष्ट इस संसार र्वकल्प का अभाव है और जब अधचन्द्त्य स्वस्वरूप भगवान आत्मा पर संसार नाम का र्वकल्प तीन काल में है ही नहीं तो फफर संसार का न बंि है और न मिो है। कहते हैं फक आत्मदेश में संसार का बंि-मिो फकस प्रकार नहीं है? जैसे फक तरणी (सूय)ि में न अंकिार है-न प्रकाश, न हदन है- न रात। अब प्रश्न होता है फक सूय िमें अंकिार भले ही नहीं ंहै, परन्द्तु प्रकाश तो है। तो कहते ेहैं फक जब अंकिार नहींतो प्रकाश फकसकी अपेिा से कहोगे? इसमलए सूय िमें न अंकिार है, न प्रकाश, न हदन है, न रात। इसी प्रकार जब र्वचार करो तो स्वस्वरूप भगवान आत्मा में न बंिहै, न मिो, न ज्ञान है, न अज्ञान। जब संसार ही नहीं ंहै तो संसार का बंकिहा ूँऔर अज्ञान कहाूँ? जब बंनिहीं, ं तो मिो कहा ूँऔर अज्ञान नहीं, ं तो ज्ञान कहा? ूँ

अज्ञानसंजं्ञौ भवबनधरो्षौ द्वौ नार् नानयौ स्त ऋतज्ञभावात् ्।
अजस्त्रधचत्यात्नन केवल परे ववचायमार्णे तरणाववववाहनी ।।
त्वारा्त्रा्नंपरं त्र्वा परर्ा्त्रा्रे्व च ।
आत्रा् पुनबदमहरू्वमय अहोऽज्ञजनताज्ञता ।।

(10 - 14 - 27)

ब्रह्माजी कहते हैं- अहो महत् ्दुःखे, अहो इतत खेदे। बड़े ेदुःख की बात है, तुझ सव िके सव िभगवान आत्मा को परं यानी दूसूरा मानता है, अपनेआपको साढ़े तीन हाथ का शरीर मानता है। अपने स्वरूप आत्मा से मभन्द्न मानता है फक परमात्मा मभन्द्न है, म ैंमभन्द्न हूँ। अनेक जन्द्मों से अनाहदकाल से अज्ञानीजन तुम्हें पानेको बाहर-बाहर ढूँढ़ रहे हैं। अज्ञातनयों की इस अज्ञानता को क्या कहें।

इसे सुनकर भगवान श्रीकृष्ण प्रसन्द्न होकर कहते हैं-ब्रह्माजी तुम्हें बुढ़ापे में यह बीमारी कहाँसे पैदा हो गई फक नंद का बालक श्रीकृष्ण पाचूँ वष िकी अवस्था में अघासुर दैत्य का वि कैसे फकया? जाओ, तुम अपना सरकारी काम करो-अचछा, अब जो बाल गोपाल और बछड़े ेब्राह्मी गुफा में छुपाये हो, उन्द्हें प्रगट करो, ले आओ। मेरी इस लीला के चक्कर में मत पड़ो। इसके बाद भगवान ने काली नाग का अमभमान (दप)ि नष्ट फकया और कंस द्वारा भेजे हुए अन्द्य दैत्यों का वि फकया।

अब फकसी समय हेमन्द्त ऋतु ुमें ब्रजबालाय ेंमाता कात्यायनी का व्रत कर रही थीं।

हेर्नतेप्रथरे् र्ाभस ननदव्रजकुर्ाररकाः ।
चेरुहमववष्यं भुञ्जानाः कात्यायनयचनमव्रतर् ्।।

(10 - 22 - 1)

हेमन्द्त ऋतु में (अगरह मास में) ब्रजमंडल की गोपकन्द्याएँ यमुनाजी के जल में सूयोदय के पूव िही स्नान करके इस मंि का पाठ करते हुए माता कात्यायनी देवी का षोडशोपचार पूजन करती थी-

कात्यायनन हार्ाये हायोधगनयधीश्वरर ।
ननदगोपसुतं ्देवव पनतं ्रे् कुरु ते ेनर्ः ।।
इनत र्ंत्र्ं जपनत्यस्ताः पूजां चकुरुः कुर्ाररकाः ।।

(10-22-4)

हे महामाये ! नंद बाबा के जो पुि श्रीकृष्ण हैं, वे हमको पतत रूप में ममलें। नाम जपो, ध्यान करो, जो भी व्रत, दान करो, बात तो एक ही है। कोई व्रत करो, सिान करो, फल के मलए ही फकया जाता है। तो इस मंि का पाठ करके ब्रज बालाय ेंमाता कात्यायनी देवी की पूजा करती रही। हदन में एक बार खीर का भोजन कर सारा हदन भगवान का गुणानुवाद करतीं। इस प्रकार एक मास का व्रत करती रहीं। अब आ गया परीिा का समय। यह चीरहरण का प्रसंग है। गोप बालायेंकंठ भर जल में खड़ी होकर भगवान का गुणानुवाद गा रही थीं। इसी समय भगवान श्रीकृष्ण पुमलन पर पहुँचे ेऔर गोप बालाओं के वस्ि को उठाकर कदम्ब के वृि में टांग हदये और मन्द्द मन्द्द मुस्कुरातेहुए गोप बालाओंको संबोधित करते हैं-

अत्रागत्याबलाः कारं् ्स्वंस्वंवासः प्रगृह्यतार् ्।
सत्यं ब्रवाणण नो नर् मययूयं व्रततभितमाः ।।

(10 - 22 - 10)

हे ब्रजबालाओं ! एक-एक करके सब आ जाओ और अपने-अपनेपहन लो, वस्रों को ग्रहण कर लो। तुम इसे हूँसी मजाक न मानो, म ैंसत्य कह रहा हूूँ। तुम लोगों का शरीर व्रत करते-करते कृश यानी दुबुलि हो गया है, जल्दी से शीघ्रतापूवकि यमुना जल से तनकलकर अपना-अपना वस्ि िारण करो।

र्ानयंभोः कृथास्त्वां तु ुननदगोपसुतुंवप्रयर् ्।
जानीर्ोऽङ्ग ब्रजश्लाध्यं देदह वासांभस वेवपताः ।।
श्यासुंदर ते ेदास्यः करवार् तवोददतर् ्।
देदह वासांभस धर्ज्ञमोचेद्राज्ञेब्रुवार्हे ।।

(10-22-14-15)

! िम िके भ्रमनेवाले गोवपयाूँकहती हैं फक हे श्यामसुंदर! हम सब गोर्पयाूँतुम्हारी दासी हैं। हे िमज्ञि वासांमस देहह हमें हमारे वस्रों को दीप्जये और यहद तुम नहीं दोगे तो वयंराज्ञे कंसाय ब्रुवामहे हम लोग राजा कंस के पास जाकर तुम्हारे खिलाफ नामलश करेंगी। भगवान कहते ेहैं फक जब तुम कहती हो फक तुम सब मेरी दासी हो तो जो म ैंकहूूँ वह तुम्हें करना चाहहये। भैया ! दशमस्कन्द् पूवाद्धि के 22 vec q अध्याय का 26वाूँश्लोक है। भगवान श्रीकृष्ण कहते ेहैं-

न र्य्यावेभितधधयांकार्ः कार्ाय कल्पते।
भन्जतमा क्वधथता धाना प्रायो बीजाय नेष्यते ।।

(10-22-26)

ब्रजबालाओं ! प्जसने अपने मन को मुझ आत्मा में प्रवेश कर हदया है, लीन कर हदया है, उसके मन में भी फकसी प्रकार की कामना पैदा नहीं ंहो सकती। अरे ! जो दाना (िान का, मटर का या अन्द्य फकसी अन्द्न का हो) एक बार जब आग में भुन जाता है तो उस दानेमें फफर से अंकुर नहीं ंतनकलते। इसी प्रकार प्जसका मन रूपी दाना मुझ श्रीकृष्ण आत्मा रूपी प्रज्जवमलत अप्न में भुन गया है उसमें फफर काम की कामना कभी उत्पन्द्न नहीं ंहोती। वासना रूपी अंकुर नहीं ंतनकल सकता। देखो न मय्यावेमशतधियां कामः कामाय कल्पते- भगवान आत्मा में मन का भुनना क्या है? इसको समझो मानना फकसका िम िहै, मन का फक आत्मा का ? अरे । जब कुछ न माना तो क्या रहा? मन का माना रहा या मन का मन रहा? देखो, भैया ! मशव बार-बार बतलाया जा चुका है फक मन का माना

 हुआ संसार है और सारी मान्यताओं का आिार 'म'ै आत्मा हूँ। ठीक ! यहद अपने म ैको कुछ मानो तो जैसा है वैसा

ही है। तो 'म'ै का 'म'ै ही रहने ेदो। जो, जो है सोई रहने दो। 'म'ै को तुमनेकुछ माना नहीं ंफक मन पैदा हो गया।

र्न ने र्ाना जगत को, र्न को र्ानयो आप ।

र्न भर्टतेजग भर्ट गया, र्ुकुता गुरु परताप ।।

(मुक्त दोहावली)

जी हा,ूँ तो समझो - 'म'ै को अछूता रखो। इस पर मान्यता न थोपो, 'म'ै को कुछ न मानो। 'म'ै को कुछ न मानना ही भगवान आत्मा के मन रूपी दाने का भुनना है। जब तक 'म'ै को कुछ मानते हो तभी तक सिन करने की इचछा होती है। यह करूँ, वह करूँ, यह भाव रहता है। इस समय प्जतनेभी बैठे हो, जो भी हो सब सद्गृहस्थ हो, साङ्गोपाङ्ग हो, परीिा करके देख सकते हो। जब तुम अपनेको पुरुष मानते हो तभी तुम्हारे हृदय में स्त्री को देखकर कामवासना पैदा होती है। जहाँ तुमने ेअपनेआपको पुरुष माना नहींफक काम, क्रोि, लोभ, अहंकार सब पैदा हो गये। इसमलए अपने'म'ै पर से पुरुष भाव हटा लो, तो तुम्हारे सामने कोई भी स्त्री चाहे स्वग िकी अपसरा भी क्यों न आ जाये फकसी की ताकत नहीं ंजो फक तुम्हें वचमलत कर सके। इसी तरह प्रकृतत समाज को कहना है फक अपनेआपको जब स्त्री मानोगे तभी काम वासना पैदा होगी। अपने आपको स्त्री न मानो तो वर्श्व की ताकत नहीं ं जो तुम्हें वचमलत कर सके। यह भगवद् वाक्य है, भगवान का वचन है। जब तक तुम्हारे मन में अमुक भाव नहीं रहेगा तो कभी कोई वकार मन में नहींआयेगा। फकसी की ताकत नहींफक तुम्हारी तरफ नजर उठाकर देख सके।

चलत र्ार अस हृदय ववचारा। भिव ववरोध ध्रुव र्रनु हर्ारा ।।

तब भिव तीसर नयन उघारा। धचतवत कार् भयउ जरर छारा ।।

कामदेव जब आया तो समझ गया फक बचना तो मुप्श्कल है। उसनेपुष्प बाण ताना, बसन्द्त ऋतु तनममति फकया और काम वमशख बाण मशव को मारा। तो क्या हुआ? धचतवत काम भयउ जरर छारा।। जब भगवान मशव ने तीसरा ने खोला तो कामदेव भस्म हो गया। भगवान मशव का तीसरा ने क्या है? 'म'ै सािात् ्मशव हूँ-कल्याण स्वरूप जो भगवान आत्मा है वही सािात् ्मशव है।' म'ै हूँ मान्यता रहहत, ऐसा जो वमल ज्ञान है, यही भगवान मशव का तीसरा ने है। जब भगवान मशव ने 'म'ै कल्याणस्वरूप आत्मा हूँ, ऐसा देखा तो काम भस्म हो गया। कहते ेहैं फक भगवान मशव हदगम्बर है-लंगोटी भी नहीं ंलगाते- नंगे हैं, क्या मतलब? यही फक शुद्धि तत्व 'म'ै आत्मा अमुक भाव से रहहत हूँ, वकल्प से रहहत हूँ। यही भगवान मशव हदगम्बर हैं, इसका भाव है। अनन्द्त मान्यता रूपी मुंडों की मुंडमाला िारण फकये हैं। सत, रज, तम तीनों गुण भगवान मशव का त्रिशूल है। 'म'ै आत्मा हूँ, यही भगवान मशव का तीसरा ने है। भगवान मशव के जटा से ब्रह्म वद्या रूपी वमल गंगा बह रही है। और अरे! प्जस आत्मदेश में न प्रपंच है, न वकल्प है, परमशांततमय स्थल है-यही श्मशान भूमम है। जहाँपर मुदे ही जाते हैं, प्जंदे नहीं। यहाँ अध्यात्म है। यहा ूँश्रृंगार नहीं ंहै। इसमें यहद श्रृंगार होता तो श्री शुकुदेव स्वामी वैराग्य की सािात् ्मूतत ि

वीतराग महात्मा राजा परीक्षित को यह कथा कैसे सुनाते ेऔर न उसका आत्म कल्याण ही होता। जो इस प्रसंग को श्रृंगार मानते हैं, उन्द्हें क्या कहें? यहा ूँतो शुदि् आत्मतत्व का र्ववेचन है। जी हा ूँउनकी दोष दृष्ट कहें या क्या कहें-

न य्यार्वेभितधधयांकार्ः कार्ाय कल्पते।

भन्जतमा क्वधथता धाना प्रायो बीजाय नेष्यते ।।

हृदयाकाश ब्रजमंडल में धचि की वृर्ि रूपी गोप कन्द्यायेंमिो की आशा रूपी कामलंदी में स्नान कर, तनवृर्ि रूपी कात्यायनी देवी का व्रत करती थींइसमलए फक श्रीकृष्ण भगवान आत्मा हमें पतत ममलें अथात्ि्हमें आत्मदशनि, आत्मानुभव हो। भगवान श्रीकृष्ण आत्मा उन धचि की वृर्ि रूपी स्र्ाी गोप कन्द्याओंको दशनि देने के मलए मिो के सिान रूपी सखाओं को लेकर यमुना तट पर पहुूँचे और उनके वासना रूपी वस्र्ाों को वैराग्य रूपी कदम्ब की शाखा पर टांग हदये। यही वस्र्ाहिरण आख्यान है। यह पूणतिया आध्याप्त्मक र्वषय है-

दासोऽहभर्नत या बुद्धधः श्रीकृष्णे र्धुसूदूने ।

दाकारोपहृतस्तेन गोवपकावस्त्रहाररणः ।।

धचि की वृर्िरूपी गोपबालाओंके हृदय में भगवान आत्मा श्रीकृष्ण के प्रतत जो दासोऽहम भाव था उसमें 'दा' रूपी वस्र् को भगवान ने हरण कर मलया। अब रह गया शुदि् तत्व भगवान आत्मा 'म'ैं का 'म'ैं सोऽहम्,् जो तू सोऽहम् ्(बोलो मुक्तेश्वर भगवान की जय-जय ध्वतन श्रोताओं द्वारा तुमुल जय-जयकार हुआ।)

यही चीरहरण अध्यात्म तत्व श्री परमहंस संहहता में वर्णति है? यह परमहंस संहहता है। पाठ के अन्द्त में यही आता है फक-इतत श्रीमद्भाद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहहतायां ।

पंचर् ददवस :

दूसूरी बेला

दोपहर 2.00 से 4.00 बजे तक

भगवान श्रीकृष्ण परमानंद र्वश्वात्मा की बाल लीला, दैत्यों का वि गोविनिोद्रिण, ब्रह्मस्तुतत एवं चीरहरण के प्रसंग का उस समय वणनि हो चुका है। यह सब चररि जब हो चुका तो महात्मा अक्रूर (कंस के

प्रिानमंत्रिी) ब्रज आकर भगवान श्रीकृष्ण बलदेव को मथुरापुरी ले गये और वहाँ पहुँचने ेपर यदुवुंमशयों के निों के कण्टक कंस का वि इत्याहद हुआ। जब यह सब चररि हो चुका तो भगवान श्रीकृष्ण गुरु सन्दीपन के आश्रम में पढ़नेलगे और 64 हदन में 64 कलाओं-र्वद्याओंको पढ़कर गुरु के मरे हुए पुि को लाकर गुरु दक्षिणा में देकर अब वापस मथुरापुरी लौट आते हैं।

वृष्णीनां प्रवरो रं्तंरी कृष्णस्य दनयतः सखा ।
भिष्यो बृहस्पतेः साषादुदु्धवो बुद्धधसिर्ः ।।

(10 - 46 - 1)

भगवान, एक हदन उद्वि जो फक सािात् ्वृहस्पततजी के मशष्य बड़े ेबुद्धिमान्, ् भगवान श्रीकृष्ण के अंतरंग र्प्रय सखा को एकान्द्त में बुलाकर कहते हैं-

ग्छोद्धव व्रजं ंसौम्य वपत्रौ प्रीनतर्ावह ।
गोपीनां ंद्विवयोगाधधं ंत्संदेवैविर्मोचय ।।

(10-46-3)

भैया उद्वि ! तुम शीघ्र गोकुल को जाओ, जब से म ैंयहाँ मथुरा आया हूँ तब से आज हदन तक गोकुल का कोई समाचार नहीं ंममला है, इसमलए वहाँजाओ, गोर्पयों को यह ज्ञान संदेश सुना देना। पता नहीं, ं मेरे र्वयोग में वे कैसे प्राणों की रिा कर रही होंगी। मेरे पूज्य र्पता बाबा नंद, मैया यशोदा का कुशलिेम लाना, मेरा उन्द्हें प्रणाम कहना, क्योंफक उनका ध्यान, पूजन सब कुछ म ैंही हूँ। भगवान श्रीकृष्ण के आदेशानुसार उद्वि गोकुल को रवाना हो गए। गोकुल पहुँचते-पहुँचते ेसंध्या हो गई। उस समय गौएं जंगल से वापस आ रही hat pi गौओं के चरणों की िूमिल से आकाश मंडल आचछाहदत हो रहा था। प्जसके कारण महाराज उद्वि को भ्रम हो गया फक बाबा नंद का घर कौन-सा हैं? देखते हैं फक वहाँ पर कहींअप्नहिो हो रहा है, जगह-जगह भगवान श्रीकृष्ण की आरती, पूजन, यशोगान हो रहा है। भगवान की बाल लीला को राग, राधगनी में बद्किर उनके प्जतने सखागण हैं वे गा-गाकर नाच रहे हैं। ब्रज की ऐसी शोभा को देखते हुए महाराज उद्वि बाबा नंद के स्थान में पहुँचे। बाबा नंद अत्यन्द्त प्रेम भप्क्त से उद्वि का स्वागत फकये, मानो भगवान श्रीकृष्ण ही आये हैं। उनका स्वागत कर सत्कारपूवकि अपने े स्थान में ले आये।

तर्ागतं सर्ागम्य कृष्णस्यानुचरं वप्रयर् ्।
ननदः प्रीतः पररष्वज्ञय वासुदेवधधयाचयमत् ्।।

(46 - 14)

वसुदेवजी के ममि बाबा नंद ने महाभाग्यवान उद्वि का स्वागत, स्नान, भोजन आहद कराकर उन्द्हें स्वस्थ फकया और फफर उद्विजी को ऊँचेआसन पर त्रबठाकर बाबा नंद और मैया यशोदा उन्द्हें घेरकर बैठ गये और भगवान का कुशल िेम पूछने लगे। अभी ब्रजवामसयों को महाराज उद्वि के आने ेका पता नहीं ंलगा था। बाबा नंद महाराज उद्वि से पूछतेहैं-

कन्चदङ्ग र्हाभाग सखा नः िूरननदनः ।
आस्ते कुिल्यपत्याद्यैयुक्मतो र्ुकुतः सहृद्धृतः ।।

(10 - 46 - 16)

हे महाभाग उद्वि ! हमारे ममि शूरूसेन के पुि वसुदेव अपने पुिों भगवान श्रीकृष्ण एवंबलदेव सहहत मथुरापुरी में आनंद से तो हैं?

अवप स्ररनत नः कृष्णो र्ातरं सुहृदः सखीन् ्।
गोपानव्रजंचात्र्नाथंगावो वृन्दावनं धगररर् ्।।

(10-46-18)

हे उद्वि ! क्या श्रीकृष्ण हम लोगों का, मेरा, अपनी माता यशोदा का कभी स्मरण करते हैं? माता यशोदा का ध्यान उन्द्हें आता है? अपने सखा गोप बालकों का ब्रजबालाओं का, कामलन्द्दी तट का, लीला भूमम का उन्द्हें कभी स्मरण होता है?

स्ररतांकृष्णवीयाणमण लीलापाङ्गननरीक्षषतर् ्।
हभसतंभावषतं ंचाङ्ग सवा मनः भिधथलाः कक्रयाः ।।

(10-46-21)

हे अंग! हमसतंभार्षतंलीलापाङ्ग तनरीक्षितम् ्च पुनः कृष्णवीयारि्ण पराक्रमार्ण यदा स्मरतां मया तदा सन् ्काले नः अस्माकम् ्सवाःफिक्रयाः मशधथला जाता। हे उद्वि ! भगवान श्रीकृष्ण के हूँसने ेको, बोलनेको, लीला भूमम को एवं उनके पराक्रम को जब म ैंस्मरण करता हूँ, उस समय मेरी सारी फक्रयाएूँ मशधथल हो जाती हैं। भैया उद्वि ! श्रीकृष्ण जब मथुरापुरी गये तो कुलांगर दुष्ुट कंस का वि हो गया। अब तो वहाूँ पर बड़े ेही आनंद में होंगे। कहते–कहते उन्द्हें लीला स्मरण हो आई और उनका कण्ठ अवरुद् हो गया। श्रीकृष्ण भगवान के ध्यान में तनमग्न हो गये। वाणी अवरुद् हो गई। आखूँों से पेर्माश्रु बहने ेलगे-समाधिस्थ हो गये। बाद में मैया यशोदा भी प्रभु ुकी लीला का स्मरण कर पेर्म र्वह्वल हो गई, स्तन से दिू टपकनेलगा और समाधिस्थ हो गई। रह गये उद्वि जी-
अब महाराज उद्वि कहतेहैं-

युवां श्लाध्यतर्ौ नूनंदेदहनाभई र्ानद ।
नायायणेऽणखलगुरुौ यत्कृता र्नतरीदृी ।।

(10 - 46 - 30)

न्दि्य हो, बाबा नंद और माता यशोदे िन्द्य हो, अप्स्मन् ्संसारे देहिाररणाम् ्नून् ्तनश्चयेन युवां ं श्लाध्यतमौ, अखिल-गुरौ नारायणे इदृशी मततः - संसार के अंदर देहिाररयों में तुम दोनों िन्द्य हो। समस्त चराचर के गुरु नारायण में तुम दोनों की इस प्रकार की बुद्धि, ऐसी तनष्ठा।

एतौ दह ववश्वस्य च बीजयोनी रार्ो रुकुनदः पुरुषः प्रधानर् ्।
अनवीय भूतेषु ववलषणस्य ज्ञानस्य चेित इर्ौ पुराणौ ।।

(10-46-31)

प्जन भगवान, श्रीकृष्ण एवं ंबलरामजी को तुम अपना पिु मानतेहो, तुम्हारे भाग्य का क्या वणनि करे- ये पुराण पुरुष हैं, र्वश्व के आिार हैं।

यन्स्र्छजनः प्राणववयोगकाले षणं ंसर्ावेश्य र्नो ववशुिद्धर् ्।
ननहमत्य कर्िमयरिु यानत परां गनतं ंब्रहूर्योऽकमवणःम ।।

(10-46-32)

यप्स्मनं श्रीकृष्णचन्द्रे आत्मतन प्राणर्वयोगकाले मृतूयुकाले र्वशुद्धं मनः िणं समावेश्य कमाश्रियं कमजिालं तनहित्य तछत्वा आशु ुशीघ्रं ंअकिवणःस्वियंप्रकाशः परांगततं ंयातत प्रातनोतत-प्जन भगवान को आप अपना पिु मानते हो, वे ेकौन हैं? मृतूयुकाल में जब प्राण का शरीर से र्वयोग होता है, उस र्वयोगकाल में जो िणभर के मलए भी भगवान आत्मा में र्वशुद्ध मन को प्रवेश करके प्राण त्यागता है, वह शीघ्र ही अनन्द्त जन्द्मों के कमजिाल को काटकर परम गतत, ब्रह्म पद, कैवल्य, तनवाणि पद को प्रातत हो जाता है, उनको तुम अपना पिु मानतेहो, आपके भाग्य की क्या सराहना करें-देहिाररयों में सबसे अधिक भाग्यशाली हो, प्रशंसनीय हो। अब यहा ूँप्रश्न होता है फक र्वशुद्मिन फकसको कहते ेहैं? और र्वशुद्ध मन का आत्मा में प्रवेश क्या है? यहद ऐसा कहो फक वासनाओं से रहहत मन को र्वशुद्किहतेहैं, तो वासनाओं से मन कदार्प रहहत नहीं ंहो सकता। कारण? मन वासनाओंका ही तो समूह है, पुञ्ज है, मन का अप्स्तत्व ही वासना है, तो फफर वह उससे रहहत कैसे होगा। तो फफर र्वशुद्ध मन का क्या स्वरूप है? देखो, भैया ! मन कोई स्थूल पदाथ ितो है नहींफक भगवान में उसको प्रवेश कर हदया जाय। अचछा-र्वशुद्ध तो एक ही पदाथ िहै, भगवान आत्मा। अब यहद मन को भी र्वशुद्किहो तो यहाूँपर वेदांत का द्वैतापर्ि दोष आता है। तो इसका भाव लगाओ। मान्द्यता ही वासना है। अचछा-हा ूँजी, समझो र्वषय- 'म' ें आत्मा पर जो मान्द्यता है (र्वकल्प है, अमुक भाव है) इसका ही नाम वासना है। जब मान्द्यतायें नहींरहींतो मन का अभाव

 हो गया केवल अिार 'अप्स्तत्व' मिा रह गया। यही मन का आत्मा में प्रवेश होने ेका भाव है। सारी

मान्यताओंके

अिार भगवान आत्मा श्रीकृष्ण हैं। 'म'ं सारे र्वकल्पों का अिार हूँ, अमुक भाव भगवान आत्मा पर ही कप्ल्पत हैं।
तो मान्यताओं के अभाव का भाव ही र्वशुद्ि मन है। सूि मलखो- 'मान्यताओं के अभाव का भाव ही र्वशुद्ि मन
है।'

यानी मान्यताओं का अभाव हो गया तो मन भी न रहा, क्योंफक वासनाओं के पुञ्ज का ही नाम तो मन है।
कभी अपने आपको कुछ मानना, कभी कुछ मानना, यही वासनाओं का पुञ्ज है। मान्यता के अभाव के भाव का ही
नाम र्वशुद्ि मन है। यही भगवान आत्मा में र्वशुद्ि मन का प्रवेश होना है। जब मान्यताओं का अभाव हो गया
तो उस भाव में भगवान आत्मा ही आत्मा शेषे रह जाता है, यही भगवान आत्मा में र्वशुद्ि मन का प्रवेश करना है
तो-

यान्रूछजनः प्राणववयोगकाले षणं ंसर्ावेश्य नों वविुद्धर् ्।
ननहमत्य कर्ािमयरिु यानत परां गनतं ंब्रह्र्योऽकमवणःम ।।

मान्यताओंका जब अभाव हो गया तो कमों की पररसमाप्तत हो गई। मान्यता जगत में जो शुभ्ाशुभ कम ि
हैं। कमजिाल मान्यता जगत में ही है। आत्मजगत में नहीं। जब मान्यताओं का अभाव हो गया तो उसे र्वशुद्ि
मन कहो या भगवान आत्मा कहो एक ही बात है। प्राण के र्वयोगकाल में यहद िण भर भी आत्मा में (आत्मा
भावना में) प्स्थत होकर शरीर छोड़ता है तो अनेकानेक जन्मों के कमजिाल को काटकर कैवल्य तनवाण पद को
प्राप्तत हो जाता है। उन्हें तुम अपना पिु मानते हो, क्या कहें आपके भाग्य को, देखो, अनुभव करो-अब कुछ मन के
ऊपर भी सुन लो-

फकस देश में मन अथवा मान्यता है? आत्मदेश में मन है फक मान्यता देश में मन है? मान्यता देश में मन
है, आत्मदेश में नहीं। जब तुम अपनेआपको कुछ मानते हो तभी मन हदखाई देता है। आत्मप्जज्ञासुओं? लोग
कहते ेहैं-मेरा मन मेरे वश में नहीं ंहै। मन की बीमारी संक्रामक है। इससे कोई अछूता नहीं। संसार के जीवमाि
सन्तप्तत हैं। सभी रो रहे हैं। वही इससे बचता है-कौन? अरे ! जो हमेशा बचा हुआ है। जो इस मन से बचता है उसका
क्या नाम है? भगवान आत्मा ! मसफि वही इस मन की बीमारी से बचा है। जीवभाव में कोई नहींबच सकता। भैया!
यह मन की बीमारी फकस देश में फैली है? यह आत्मदेश की बीमारी है फक जीवदेश की? जीवदेश की बीमारी है। फफर
लोग कहते हैं-स्वामी जी ! मन वश में नहीं होता-फकतनी झूठ बात है-बोलो-त्रबना मन के वश में हुए कोई काम
संसार में हो सकता है? शधद, स्पश,ि रूप, रस, गंि इन पांचों र्वषयों का अनुभव क्या कभी भी त्रबना मन को वश में
फकये संभव है? नहीं,ं मन जब तक वश में न होगा र्वषयों का अनुभव नहीं ंहो सकता। मन की बेबसी में कथा सुन
रहे हो फक मन के वश की हालत में कथा सुन रहे हो? झूठ न बोलो- मेरे कहनेसे न मानो-यहद मेरे कथन को उसी के
अनुसार मान लेते हो तो यहाँ पर पंथ आ जाएगा। देखो-पंथ के गुरु चाहे फकसी भी पंथ के हों, बैठे हैं और सेवकगण
उनके चारों तरफ बैठे हैं-अब गुरुजी जो भी शधद कहते हैं उसे सेवकगण सद्वचन महाराज-कहते ेचले जाते हैं।
यहा ँूपर हम ऐसे नहीं ंमानते हैं, हर एक बात को सूक्ष्मता से समझो स्वयंअनुभव करो, जब तक न कर लो, न

 मानो। हम तुम्हें पचासों युक्तियों द्वारा समझायगें। यही हमारी ड्युटी है। जब समझ में आ जाये तब स्वीकार
करो। अभी जो कथा सुन रहे हो, मन वश में है तब सुन रहे हो या मन की बेबसी में। संसार के प्जतनेभी काम करते हो गद्दी में बैठे हो, लाखों रुपयों का हहसाब करते हो, रोकड़ लगाते हो, मजाल है फक एक पाई का भी फकि हो जाये ये सब काय िमन के वश में ही संभव है या बेबसी में? मन वश में है तब ये काय िहो रहे हैं। जब ये काय िमन के वश में
तुम करते हो तो उस समय मन को वश में करने के मलए कौन-सा सिान करके बैठते हो? कौन-सी समाधि मसद् करके बैठते हो हहसाब लगानेया अन्द्य काय िकरने? आफफस में हदन भर काम करते हो तो कौन-सी समाधि मसद् करके बैठते हो? संसार में सारा काम मन के वश में करते हो, न फक बेबसी में। यह तुम्हारा झूठा दावा है फक मन तुम्हारे वश में नहीं है। जो भी काय िकरते हो मन हमेशा तुम्हारे वश में रहता है और तभी कोई भी काय िकर सकते हो इसमलए यह झूठा मामला है। मन वश में नहीं होता-यह तुम्हारा मामला संतों की अदालत में खाररज फकया गया। अचछा-अब अनुभव करायगें-भैया ! वह कौन-सा टाइम है जब मन तुम्हारे वश में नहीं रहता-काबूके बाहर हो जाता है? जब पूजा में, पाठ में ध्यान–िारण में, आूँख बंद करके बैठते हो तो उसी वक्त मन पैदा हो जाता है। दरअसल मन की पैदाइश इन्द्हींसमयों में होती है। अभी तो तुम सब अमनस्क पद में प्स्थत हो, कथा सुनते– सुनते झूम रहे हो-तुम जो भी काय िकरते हो सब स्वरूप प्स्थतत में करते हो। लोग कहते हैं फक स्वामीजी ! हमारी स्वरूप प्स्थतत नहीं हो रही है। भैया ! कैसे नहीं हो रही है? तुम सदैव स्वरूपस्थ हो। अभी जो कथा सुन रहे हो वह स्वरूपप्स्थतत में ही सुन रहे हो। अमनस्क पद में ही सुन रहे हो। मन के भाव में नहीं, मन के अभाव में सरा चराचर स्वरूपप्स्थतत में है।

सशान्द्त सवसंकिंल्पाः या मशलावदवप्स्थततः ।
जाग्रप्न्द्नरा र्वतनमुक्ति सा स्वरूपप्स्थतत परा ।।
यदा न लीयते धचिं न र्वक्षितयते पुनः ।
अतनङ्गनमनाभासंतन्नष्पन्द्नंब्रह्म तिदा ।।

(गौ.का.)

भाव दोनों का एक ही है। प्जस समय धचत का लय न हो और न धचि र्वक्षितत हो (न लय, न र्विप) धचि की चंचलता (र्विप) का नाम है जाग्रत अवस्था और धचि के लय अवस्था का नाम है सुषुप्तत (गाढ़ी नींद)। र्वि न चंचल रहे और न ही र्वक्षितत रहे अथात्‍ लय र्विप से रहहत अवस्था ही आत्मपद कैवल्य पद तनवाणि पद है। 'जाग्रप्न्द्नरा तनतनमुक्तिा सा स्वरूपप्स्थततः परा'-जाग्रत और सुषुप्तत अवस्था से जो रहहत अवस्था है वही स्वरूपप्स्थतत है। अब इसका अनुभव करो-समझ गये तो कल्याण हो गया। ब्रह्म पद की प्राप्तत हो जाएगी। सुनो-स्वरूपप्स्थतत, जाग्रत और सुषुप्तत इन दोनों से परे की अवस्था है। देखो-अभी जो कथा सुन रहे हो, इसे धचि के लय. की अवस्था में सुन रहे हो या धचि की चंचलता में सुन रहे हो, इसे धचि के लय की अवस्था में सुन रहे हो या धचि की चंचलता में सुन रहे हो? यार मीहटंगं न करो, सोच-समझकर कहो कोई पहेली नहीं बुझा रहे हैं जो फक मीहटंगं करो, समझकर बोलो-धचि यहद लय हो जाये तो सुन नहींसकते, नींद आ जायेगी और धचि जब चंचल हो जाये तब भी नहींसुन सकते-तो भी कुछ पल्ले नहीं पड़ेगो, इसमलए लय र्विप से रहहत अवस्था में ही तो सुन रहे

हो, यही स्वरूपप्स्थतत है। अब यह मसद् हुआ फक स्वरूपस्थ होकर ही समस्त र्वषयों का अनुभव करते हो। यहद स्वरूप से र्वलग हो तो सुन नहीं ंसकते और स्वरूप देश में मन नाम की कोई चीज ही नहीं, ं स्वरूप से मभन्द्न होने पर ही मन है। यही कारण है फक तुम्हारे पास अभी मन नहींहै। चाहे कोई बचचा रोता हो, कोई जगह हल्ला होता हो तो मन नहींजाता। अभी कथा सुन रहे हो-तो इस समय तुम्हारा मन र्विप की तरफ नहीं ंजाता। फज ि करो फक यहद कथा के श्रवणकाल में मन कहीं ंचला जाता है तो तुम्हें ग्लातन नहींहोती और आ जाता है तो हष ि नहीं ंहोता। इसमलए यही स्वरूपप्स्थतत है। त्रबना स्वरूपप्स्थतत के फकसी भी र्वषय शधद, स्पश,ि रूप, रस, गंकिी अनुभूतत नहीं ंहो सकती- इसमलए सारा चराचर स्वरूपस्थ है। तो अब हमारी बात सुनो-अभी तक मन को रोकने का प्रयत्न करते थे,े अब मन को न रोकनेका प्रयत्न करो। अरे। अभी कहा ूँमन को रोके हो, परन्द्तु मन रुका है तभी तो कथा सुन रहे हो? तुम अपनी महहमा को क्यों नहींअनुभव करते, जैसे हो वैसे ही रहो-जहा ूँहो वहींरहो। 'म'ैं जैसा हूँ वैसा ही हूँ, इस अवस्था में मन नाम की कोई चीज नहीं ंहै। यहा ूँपर दुःख अथवा सुख का अनुभव नहीं ंहोगा। स्वामीजी ! कथा सुननेके समय तो मन रुका है, परन्द्तु यहा ूँसे जाने के बाद चंचल हो जाता है, इसे कैसे रोंके ? मन के रोकने का क्या सािन है? 'म'ैं जैसा हूँ, वैसा ही हूँ, 'म'ैं जो हूँ वही हूँ, 'म'ैं जहाँहूँ वहींहूँ, इस अवस्था में मन है ही नहीं–यह तनजानंद की मस्ती है। यही तनवाणिपद है। 'म'ैं आत्मा फकतना महान हूँ, यहद मुझे ेमन से भय लगे तो म ैंआत्मा नहीं। अब समझ गये होगे। अब अपने मन के र्वषय में कोई मशकायत नहींरही। मन का भाव फकसमें माना, फकसको माना, कहा ूँमाना? प्जस वक्त पूजा-पाठ में बैठते हो उसी वक्त मन अपने आप पैदा हो जाता है। देखो, अनुभव करो-अभी कथा सुन रहे हो तो कथा के श्रवणकाल में अपने को कुछ मानकर कथा में बैठे हो या म ैंअमुक हूँ, म ैंपुरुष हूँ, म ैंस्त्री हूँ, मेरा नाम अमुक है? कोई र्वकल्प (भाव) नहीं-जैसा हूँ, वैसा ही बैठा हूँ। 'म'ैं जो हूँ वही होकर बैठा हूँ, जहाँ हूँ वही हूँ। इसी भाव में संसार के सारे व्यवहार होते रहते हैं। अब मन की चंचलता की मशकायत कहाँ? मान्द्यता ही मन है। दरअसल मन नाम की चीज पूजन-पाठ में ही हदखती है। माला लेकर बैठे हैं। हाथ गोमुखी में है, माला के दानेसड़सड़ चल रहे हैं, उसी समय मन पैदा हो जाता है। मजाल है फक मनीराम अन्द्य र्वषयों के अनुभवकाल में पैदा हो। स्वभावतः प्रत्येक र्वषय के अनुभवकाल में मन रुका रहता है, परन्द्तु ध्यान, िारणा में बैठे नहीं ंफक मन पैदा हो जाता है। पता नहींइसका क्या कारण है। ध्यान, िारणा मान्द्यता जगत में प्रवेश करके ही करते हो। म ैंजापक हूँ- इसमलए जप करूँ, म ैंपुजारी हूँ-पूजा करूँ, म ैंध्यानी हूँ-ध्यान करूँ। पूजा- पाठ करनेवाला ऐसा मानकर इन कायों में प्रर्वष्ट होता है और मानना ही मन का पैदा होना है। मानना ही मन है। जहाँ माना फक म ैं जीव हूँ तो मन पैदा हो गया। भैया ! जब तक जीव भाव है तभी तक मन है। जहा ूँमाना फक म ैंजीव हूँ तो मन पैदा हो गया। भैया ! जब तक जीव भाव है तभी तक मन है। अपनेआपको संसारी जीव मानकर मन को वश में कर ले तो वन्द्ध्या का पुि मसंहं का मशकार कर सकता है, तनरािार आकाश में बगीचा लगाया जा सकता है. खरगोश के सींग हो सकतेहैं, कछुवे ेकी पीठ पर बाल जम सकतेहैं, हथेली पर बाल उग सकतेहैं, यब सब असंभव है। जीव भाव में मन को सािन से रोका जा सकता है, परन्द्तु मन को प्स्थर नहीं ंफकया जा सकता और आत्मभाव में मन को रोकने की जरूरत ही नहीं। महर्ष िपतञ्जमल, यम, तनयम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, िारणा, ध्यान और समाधि से धचि का तनरोि बतलाते हैं। योगप्श्चवृर्ि तनरोिः । (योगदशनि 1/2) धचि के तनरोि का नाम योग है। धचि के तनरोि के मलए सािन है, परन्द्तु धचि के प्स्थर करने ेके मलए नहीं। नदी स्वभावतः समुर में जाकर प्स्थर हो जाती

 है, उसे कोई सािन नहीं ंकरना पड़ता। हा–ँनदी को रोकनेका बांि सािन अवश्य है। बांि से हदखता तो है फक नदी
का प्रवाह रुका है, परन्द्तु वस्तुतः वह सदैव बांि को तोड़ने का काय िकरती रहती है और एक न एक हदन तोड़ भी देती है, परन्द्तु प्स्थर तो समुर में जाकर ही होती है। इसी प्रकार मन है नदी, संकल्प र्वकल्प उसके दो फकनारे हैं, सािन बांि है, कल्पना उसकी िार है। मन रूपी नदी सािन रूपी बांि से रूकी तो जान पड़ती है, परन्द्तु इस तरह सािन से प्स्थर नहीं ंहोती जहाँूकी वह है वहींपहुँूचकर प्स्थर होती है। आत्मदेश में पहुँूचकर ही मन शांत होता है। जीवदेश में मन रोका जा सकता है, परन्द्तु आत्मदेश में प्स्थर होता है। जीव को ही तो कुछ करने िरनेका र्वकल्प होता है फक चलो भाई कुछ करें। जीव भाव में ही यह भावना होती है फक मेरा मन चंचल है, क्योंफक अनाहदकाल से अपनेको जीव ही तो मान रहा है फक म ंैजीव हूँ, कति-भोक्ता हूँ, िमी- अिमी हूँ, पुण्यी-पापी हूँ, ज्ञानी-अज्ञानी हूँ, जीता-मरता हूँ आहद। जीव अपनेको संसारी मान कर इन िमों को अपनेआप में आरोर्पत करता है। तो फफर इस भाव में मन चंचल रहेगा ही। सुषुप्तत अवस्था में अपने कारण अज्ञान में मन के लीन हो जाने पर फफर कोई भाव नहीं ंरहता। जब मन ही नहीं ंरहा तो भाव अभाव कहा।ँू जब मन नहींतो जीव भाव भी नहीं। जाग्रत, स्वतन अवस्था तक ही मन है और तभी तक जीव भाव भी है। भैया ! बोि जगत में मन नाम की कोई चीज नहीं ंहै-वहाँूमन कहा ँू है। मन के भाव में जीवभाव है तो मन के अभाव में क्या यह जीवभाव रहेगा? मन कहो या जीव दोनों का भाव अथवा अथ िएक ही है। जब म ंैगाढ़ी नींद में सो जाता हूँ तो सबेरे उठकर कहता हूँ फक आज बड़ा आनंद आया, खूब सोया। सबेरे उठकर कौन बतलाता है फक मुझे ंबड़ा आनंद आया। इस अनुभव को कौन व्यक्त करता है। 'म'ंै आत्मा ही इस आनंद का अनुभव करता हूँ। 'म'ंै ही इसका सािी हूँ। 'म'ंै जाग्रत के प्रपंच को जानता हूँ। 'म'ंै ही स्वतन के प्रपंच को जानता हूँ और 'म'ंै ही सुषुप्तत के आनंद का भी अनुभव करता हूँ क्योंफक 'म'ंै ही सवािार हूँ सव िका सव हूँ
मुझसे र्वलग कोई नहीं। यह बात है !!!

एतावानात्र्मसम्रोहो यत् ्र्वकल्पस्तुकेवले ।
आत्र्मनृते स्वरात्र्ानर्वलम्बो न सयस्य दह ।।

(श्रीमद् भागवत 11)

त्रबना 'म'ंै के और कौन आिार होगा? यह चीज ही ऐसी है। र्वकल्प अपनेस्वरूप 'म'ंै पर प्स्थत है।

जग र्ें दुणुखया कोई नहींसबकी गठरी लाल ।
गाठुँ खोल जानैनहीं ंताते ंभयो कंगाल ।।
लाली र्ेरे लाल की न्जत देख ुँूनतत लाल ।
लाली देखन र् ंैगई र् ंैभी हो गई लाल ।।

तो भैया ! अपनी महहमा को जानो। यहाँूकुछ लेना नहीं,ं लाना नहीं,ं न कुछ करना, िरना है। जहा ँूजाना, वहींखड़ा हूँ। प्जसको देखना है, उस को देख रहा हूँ। प्जसको पाना है, उसको पहहले से ही पाया हूँ। बस-प्जस समय पूजा पाठ में म ंैबैठता हूँ तो अपनेआपको कुछ मान लेता हूँ और मानना ही मन है। तो पूजा करो या पाठ करो-टंट-

घंट चाहे तो कुछ करना हो करो। हा–ूँयाद रखो फक यहाँू पर फकसी बात का न खंडन होता है, न मंडन। इनका जो आिार है वह अध्यात्म है और उसी का तनरूपण फकया जा रहा है। सव िव्यापक, सव िके सव िका तनरूपण हो रहा है। वस्तुतः यही श्रेय है, आिार है, यहाँू द्वैत-अद्वैत फकसी का तनरूपण नहींहै और यहाँूपर न द्वैत का वींरोि है न अद्वैत का, यहद अद्वैत का वींरोि करें तो ब्रह्मवादी वींरोि करेंगे और यहद द्वैत का वींरोि करें तो जीववाहदयों का वींरोि होगा। ऐसे वींरोि को दूरू से ही नमस्कार है। न यहा ूँकोई राग है, न द्वेष। प्जसमें राग-द्वेष है, उसे दूरू से ही सलाम है। क्या उसे अध्यात्म तनरूपण कहेंगे जहाँूफक राग-द्वेष है इसमलए इन सबको नमस्कार है। अब कौन इसमें वींरोि करेगा-चाहे वह ईसाई हो या मुसलमान, चाहे कोई भी हो, इस मसद्िांत से फकसी का भी वींरोि नहीं ंहै। वींश्व में अपनेआपको 'म'ैं कौन नहींकहता। चाहे वह फकसी भी िम िका हो-अपनेआपको सभी 'म'ैं म ैंही संबोधित करते हैं? यहाँूपर फकसी की भी परवाह नहीं। चाहे कोई सगुण को भजे, चाहे तनगुिण को, परन्द्तु यहाँू तो फकसी का भेद नहीं। यहाँू पर न सगुण का तनरूपण है, न तनगुिण का। एकमाि वींशुद्ि तत्व का ही तनरूपण हो रहा है। इसके मलए रामायण, श्रीमद् भागवत, गीता, उपतनषद् सभी सािी हैं। इनकी ही अध्यिता में इनके ही माध्यम से इन्द्ही के आिार पर इन्द्हींके साक्षित्व में अध्यात्म का तनरूपण हो रहा है। जान लो फक आत्मा क्या है? तो स्वामी जी ! पूजा, पाठ न करें? नहींखूब करो, डटकर करो, अभी प्जतना करते हो उससे दुगुना-ततगुना करो-हम फकसी का पूजा-पाठ क्यों छुड़ाय–ेंहम तो यही कहेंगे फक भैया! इस तत्व को जान लो और फफर पूजा, पाठ डटकर करो। तुम अभी से अधिक शांतत और आनंद का अनुभव करोगे। पूजा, पाठ तुम डटकर करो परन्द्तु समझ बूझकर। बात यह है फक देखा-देखी न करना, गुरुजी आँूख मूंदते हैं तो हम भी आँूख मूंदें, हम भी वैसा ही करें, ऐसा नहीं। देखा-देखी का एक दृष्टान्द्त सुना दें-

एक कथावाचक पंडडत जी फकसी हदन अपनेयजमान के यहाँूकथा कहने गए। रास्ते में गंगाजी पार करना पड़ता था। कारण फक यजमान का स्थान गंगाजी के उस पार था, पंडडतजी जब घर से तनकले तो लोटा साथ में ले मलये। एक लोटा तनस्तार के मलए और एक लोटा दाल बनाने के मलए। जब गंगाजी के फकनारे पहुंचे ेतो सोचा फक चलो यहाँू से तनवृि होकर स्नान आहद करके ही चलें। गंगाजी में स्नान, ध्यान, पूजा, पाठ करके जब तनवृि हुए तो सोचने लगे यजमान के यहाँूदो लोटा लेकर जाने की क्या आवश्यकता है, यजमान के यहाँूखाना पकानेके मलए बतनि तो ममल ही जाएंगे, तो नाहक लाये, लोटा भी लाये और कमरतोड़। यहाँूकौन देखता है, सब सूना है तो ऐसा करें एक लोटा यहीं ंरेत में गाड़ दें, वापस लौटने ेपर ले जाएंगे। तो गंगाजी के फकनारे एक लोटा रेत हटाकर गाड़ हदया और तनशानी के मलए एक रेत की वींण्डी उसके ऊपर बना हदया। कुछ दूरू पर कुछ आदमी स्नान कर रहे थे, वे े पंडडत जी को लोटा दबातेतो नहीं देखे, परन्द्तु उन्द्होंने वींण्डी बनाते जरुर देखा। पंडडत जी यजमान के घर चल हदये। जो लोग पंडडत जी को वींण्डी बनातेदेखे थे ेवे लोग गावूँ में जाकर हल्ला कर हदये फक हम लोग अभी तक गंगा स्नान की वास्तवींक फक्रया नहीं जानते। स्नान के बाद वींण्डी बनाना चाहहये तभी गंगा स्नान का फल ममलत ।है। वींण्डी बनाये त्रबना गंगा स्नान का पुण्य नहीं ंहै। तो बाबूजी ! बालू तो मुफ्त का ही रहा-प्जतना चाहे वींण्डी बनाओ। वे 20-25 वींण्डी बनाते चले, जो स्नान करें, 10-15 वींण्डी बना दें, क्योंफक गावूँ में मुनादी जो हो गई थी। तो यह बीमारी वींण्डी बनानेकी गांव भर में फैल गई। सभी कोई वींण्डी बनावें। मीलों इदि-धगदि में हजारों की तादाद में वींण्डी वहाँूबन गई। जब पंडडत जी एक महीनेबाद यजमान के यहाँूसे लौटे तो क्या देखतेहैं फक वहाँूतो हजारों

र्पण्डी बने हैं। अब लोटे का पता कैसे लगावें फक उनका लोटा कहाँ दबा पड़ा है। दो-चार जगह खोजे, परन्द्तु जब लोटे का पता न लगा तो वहींपर पंडडत जी ने एक श्लोक बनाया।

गतानुगनतको लोका न लोकाः पारर्ाधथकमाः ।
बालुका वपण्डदानेन गतं ेर् तिाभाजनर् ्।।

संसार वास्तर्वकता को नहीं ंदेखता, देखा देखी करता है। मनैं र्पण्डी क्या बनाया, मेरा लोटा ही गायब हो गया।

हातन-लाभ कुछ न समझकर चलेंगे भेडडया िसान। जप करना चाहहये, लगाये ध्यान और आँख मूंदकर बैठ गये। इसमलए हम कहते हैं फक हमारे कहने से ही न मान लो, पहहले समझ लो नहीं तो यही देखा-देखी की दशा होगी और त्रबना जानेकुछ करनेकरानेसे ही मन पैदा होता है इसमलए ऐसा करो जैसा अभी कर रहे हो, नहीं ंतो फफर जैसे ही दोनों आखेँ मूंदे वैसे ही मन तंग करेगा और स्वभाव में मन तंग न करेगा। इसी तरह से पूजन-पाठ करो, कुछ बनो मत, जैसे हो वैसे ही रहो। यहाँपर हम आपके मन पर मुरादाबादी धगल्ट करने ेनहींआये हैं। अपने आप मुसीबतों को झेलेकर अनुभव करके फफर बता रहे हैं। मन पैदा करना है तो मन काबू करने के मलए सिान रूपी बांि बिनाओ। यह हठकानेकी बात है और यही हम तुमको बता रहे हैं जो रूपी रहे हैं शास्त्रों द्वारा अनुमोहदत है। यही चीज यहाँ पर बता रहे हैं जो फक बता स्वयंअनुभव फकया है। कष्ट करके, हहमालय की गुफा में रहकर, जंगलों में भटककर, नाना प्रकार के कष्टों को सहकर, गंगाजी के फकनारे तपस्या करके, हमारे पास एक झोपड़ी भी नहीं ंहै, जो ममला पा मलये, जैसा पहना हदये पहन मलये और नाना प्रकार के आश्रमों में भटककर जो देखा, समझा, अनुभव फकया वही आपको बता रहे हैं। हम अपनी पूंजी से देने आये हैं। दान दो प्रकार के होतेहैं-जब वृद्धावस्था आ जाती है तो कुछ लोग वानप्रस्थ ले लेते हैं और हृषीकेश में गंगा के फकनारे कमंडल लेकर, एक झोपड़ी बनाकर रहतेहैं। उनके मन में जो पूव िकमों की छाप पड़ी है, वहाँ भी वही करते रहतेहैं। ऐसे जो मारवाड़ी, गुजराती, पंजाबी वानप्रस्थी हैं दो-चार महीने में पंजाबी पंजाब को, मारवाड़ी मारवाड़ को, गुजराती गुजरात को चले जाते हैं और 10-15 हजार चंदा जुटा लेते हैं। उसमें से कुछ वहाँके िे में दे देते हैं, कम्बल बांट देते हैं और बाकी से अपना खच ि चलाते हैं और कुछ दानी कलकिा, मुम्बई से जो िनी-मानी बड़े ेआदमी आते हैं वे फकसी से कुछ पैसा नहीं ंलेते े वरन् ्स्वयं की कमाई का िन लगाकर िों में दान कर देते हैं। इसी प्रकार जो उपदेशक शास्त्री से चंदा लेकर उपदेश करते हैं वे दूसूरे की कमाई में से दान देने वाले हैं और हम अपनी कमाई (अपनी पूंजी) से देते हैं। स्वयं अनुभव करके फफर बतलाते हैं। स्वयं अनुभव फकये फक कब मन पैदा होता है, क्यों होता है आहद, क्योंफक हमें आपसे कोई तनहोरा (एहसान) नहीं है। हमें एक ततनका भी नहीं चाहहये। हमारे पास तो एक घास की झोपड़ी भी नहीं,ं न बैठने को स्थान-जो कुछ कमण्डल, कपड़े ेरहे भी तो उसे सािुलोग ले जाते हैं। अब जो पहना दो वह पहन लेते हैं, जो र्खला हदया पा मलये और यही रात-हदन का पररश्रम, बड़ी-बड़ी मुसीबतों का सामना फकया है। यह सब हम स्वभाव से कह रहे हैं। यह हमनेस्वयं अनुभव फकया है फक फकस वक्त मन रहता है और कब नहीं रहता-ये सब

 प्रमाणयुक्त बाते हैं। पुराणों की अध्यिता में बतला रहे हैं। रामायण, गीता, श्रीमद् भागवत, उपतनषदों की
अध्यिता में-इनका प्रमाण ले लेकर, अनुभव लेकर तुम्हें इसका अनुभव करा रहे हैं। हा,ँ जी-

यन्स्र्छजनः प्राणववयोगकाले षणं ंसर्वेश्य नों वविुद्धर् ्।
ननहमत्य करि्मियरिु यानत परां गनतं ंब्रह्र्योऽकमवणःम ।।

(10-46-32)

जो महाभाग उद्विजी मैया यशोदा और बाबा नंद की सराहना कर रहे है फक िन्द्य है आप लोगों के भाग्य फक ऐसे भगवान श्रीकृष्ण को तुम अपना पिु मानतेहो। प्जसमें, र्वशुद्मिन को प्राण के प्रयाण काल में प्रवेश करने ेसे संसारी जीव कमजिाल से छूट जाता है, उन्द्हें तुम अपना पिु मानतेहो, िन्द्य हो तुम्हें-

तन्स्र्नभवनतावणखलात्र्हेतौ नारायणे कारणर्त्यर्रूमतूी ।
भ्ाावंववविधंाननतरांर्हात्र्नकंवावभिष्टं युवयोःसुकृत्यर्।। ्

(श्रीमद् भागवत 10-46-33)

भगवान आप लोगों को अवश्य दशनि देंगे। वे कहींनहीं गये हैं, ब्रजमंडल सूना नहीं हुआ है-वे तो र्वश्वात्मा हैं, चराचर के अप्स्तत्व हैं, उनसे न फकसी का संयोग होता है, न र्वयोग। न उनके कोई माता हैं न र्पता, न स्िी, न पिु। प्जस प्रकार लकड़ी से डंडें ेका कभी संयोग-र्वयोग नहींहोता, इसी प्रकार भगवान आत्मा एक ऐसा पदाथ िहै प्जससे फकसी का न संयोग होता है, न र्वयोग होता है। क्योंफक आत्मा सव िका सव िहै समस्त चराचर का अप्स्तत्व है, र्वश्विार, सबका प्रकाशक भगवान आत्मा ही है और बाकी सब में 420 है, बाकी सब में िोखा है-समझ लो कान खोलकर-

नानतः प्रज्ञं ंन बदहष्प्रज्ञं नोभयतः प्रज्ञं ंन प्रज्ञानघनं न प्रज्ञं ंनाप्रज्ञर् ्।
अदृष्टर्व्यवहायर्मग्राह्यर्वलषणर्धचनत्यर्व्यपदेश्र्ेकात्रप्रत्ययसारं
प्रपंचोपिरं् ंिानतं ंभिवर्द्वैतं चतुथं ंर्नयनतेस आत्र्ा स ववज्ञेयः ।।

(माण्डू. गौ.का. आगम प्र. 7)

यहा ूँपर भगवान आत्मा के र्वशेषेण दशािये गये हैं। इनमें एक र्वशेषेण भगवान के मलए आता है प्रत्ययसार-अब इसका हम र्ववेचन करेंगे। प्रत्ययसार का उपतनषदों में अथ िहोता है र्वश्वसनीय पदाथ–प्जसका र्वश्वास फकया जा सके। देखो, कभी फकसी को आवेदन पि मलखना है यानी एतलीकेशन देना है, तो आवेदक अपना आवेदन पि मलखता या टाइप कराता है। जब वह आवेदन पि पूरा मलख लेता है तो नीचे मलखता है, यहद अंग्रेजी में मलखा है तो युवस िकैथफूली और यहद हहन्द्दी में मलखा है तो तुम्हारा र्वश्वासपाि समझो र्वषय- भैया ! र्वश्वासपाि क्या है? क्या यह शरीर र्वश्वासपाि है, प्जसका हठकाना ही नहीं ंफक कब साथ छोड़ दे? क्या ये इप्न्द्रयाँ र्वश्वसनीय

 हैं? पता नहीं, आँूख खुली है वह खुली ही रह जाये, बन्द न हो-कान कब बहरे हो जायें, क्या हाथ,

पैर वर्श्वसनीय हैं?

कब टूट जायें, अपंग हो जाय,ें तो फफर वर्श्वसनीय क्या है? क्या प्रमाण है फक जो सांस बाहर गई है वह अंदर आयेगी फक नहीं? अंदर न आये तो प्राण भी वर्श्वसनीय नहीं है-क्या मन वर्श्वसनीय है? यहद कहो फक मन के ऊपर वर्श्वास करना चाहहए तो यह कभी अचछे में और कभी बुरे में जाता है, कभी स्स्थर तो कभी चंचल हो जाता है, तो मन भी वर्श्वसनीय नहींहै। वर्श्वास करने ेलायक न तो शरीर, न इन्न्द्रयाँू, न प्राण, न मन, बुद्धि, धचि, अहंकार कोई भी नहीं ंहै। तुम जो मलखतेहो फक तुम्हारा वर्श्वसनीय (युवस िफैथफुली) तो फफर वह वर्श्वसनीय कौन है? फकसके मलए मलखते हो 'तुम्हारा वर्श्वासपिा'? नीचेमलखते हो 'म'ैं और फफर पूँछ लगा देते हो फक शरद कुमार, प्रतापचन्द्र, मनोहरलाल या टेटकू खचेडू आहद। अरे ! हा–ँू मजाल है फक 'म'ैं में पूँछ न लगे तो चाहे जो लगा दो, परन्द्तु असली वर्श्वासपिा तो 'म'ैं आत्मा ही हूँ, बाकी सब में िोखा है। सब चीज की तो टाइप होती है, परन्द्तु क्या 'म'ैं की भी टाइप होती है? भैया ! यह एक व्यवहाररक वेदांत है। म ैंआत्मा की कभी टाइप नहींहोती। म ैंआत्मा तो सबकी टाइप करता हूँ, मुझ आत्मा की टाइप कौन कर सकता है? मुझ आत्मा का टाइप करना क्या है? यह पुरुष है, यह स्त्री है, यह बालक-युवा, वृद्ि है, मकान, वृि, जड़, चेतन सब खड़े ेहैं, सब जानना ही मुझ आत्मा का टाइप करना है। क्या भगवान स्वयंअपनी टाइप करता है? प्रपंच की टाइप होती है। सुषुप्तत के आनंद का म ैं आत्मा टाइप करता हूँ। मूछािा एवं समाधि का टाइप म ैंआत्मा करता हूँ। अस्पताल में फकसी का आपरेशन होता है, तीन घंटे तक वह बेहोश रहता है, बाद में होश आने परवह कहता है-म ैंतीन घंटे बेहोश रहा। अब प्रश्न होता है फक जब उसको होश ही नहींथा तो उस बेहोशी का अनुभव फकसने फकया? उस बेहोशी को फकसने ेजाना? होशी और बेहोशी का अनुभव क्या मन करता है? अरे! मन ही तो तीन घंटे तक बेहोश रहा। इस बेहोशी का अनुभव 'म'ैं आत्मा करता हूँ। जाग्रत, स्वतन, सुषुप्तत तीनों अवस्था में, भूत, भर्वष्यत, वतामान तीनों काल में 'म'ैं आत्मा एक रस रहता हूँ। मुझ आत्मा के मसवाय और क्या वर्शेषे (जाननेलायक) है? इसमलए 'म'ैं आत्मा ही वर्श्वासपिा हूँ। टाइप जब पूरा हो जाता है तो म ैंका दस्तखत (सही) म ैंही करता हूँ या कोई दूसूरा कर देता है? 'म'ैं का लेखक 'म'ैं खुद

ही

हूँ, दूसूरा नहीं मलख सकता। यहा ूँपर सब पढ़े-मलखे लोग बैठे हैं, यहद दूसूरा मलखे तो क्या होगा? जुम ािलगेगा। 'म'ैं

का लेखक दूसूरा नहीं। 'म'ैं ही हूँ। 'म'ैं का टाइप 'म'ैं ही करता हूँ। फज िकरो जो पढ़ा-मलखा नहीं है तो अंगूठे की तनशानी भी उसी की लगेगी। यह 'बात' संसार में यह वर्लिण व्यवहाररक वेदांत है। 'म'ैं के मसवाय सबमें 420 है, िोखा है, इनसे बचो। भगवान आत्मा जो सव िका सव िहै उसी का तनरूपण हो रहा है। मजा आ गया-हा ूँजी, बेछनी छन रही है।भैयाँूतो महाराज उद्वि बाबा नंद और मैया यशोदा को समझा रहे हैं। क्या आप लोग यह समझतेहैं फक भगवान यहाँूसे चले गए और ब्रजमंडल सूना हो गया-

न ह्याता न वपता तस्य न भायामन सुतादयः ।
नात्मीयो न परश्चावप न देहो जनर् एव च ।।

(10 - 46 - 38)

उनके न कोई माता हैं, न र्पता, न पत्नी, न पुिाहदक, न अपना है, न पराया, न देह है, न जन्म, न लीला, न स्तुतत, न चररि, परन्द्तु भगवान आत्मा में इन सबकी मान्द्यता है।

तरेव िरणंगच्छ सवभमावेन भारत ।।

(गीता)

सवभिाव से उसकी ही शरण में जाओ, भगवान आत्मा ही एक ऐसा तत्व है फक प्जसमें सवभिाव घहटत होते हैं, अन्द्य में नहीं।

दृष्टं श्रुतं भूतू भवद् भववष्यद् स्थानस्नुश्चररष्णुरुहमदल्पकं च ।
ववनायुताद् वस्तु ुतरांन वाच्यंस एव सवं ंपरराथ मभूतूः ।।

(10 - 46 - 43)

आज के पहहले जो कुछ देखा था, सुना था और जो कुछ था, आगे जो कुछ देखोगे, सुनोगे और रहेगा, अभी जो कुछ देख रहे हो, सुन रहे हो और है, स्थावर जंगम सब कुछ भगवान है अचयुत भगवान आत्मा श्रीकृष्ण से मभन्द्न एक तृणृ भी नहीं है। यही परमाथ िका स्वरूप है।

न ननरोधो न चोत्पविन मबद्धो न च साधकः ।
न रुरुषुन मवै ैरुकुत इत्येषा परराथतमा ।।

(माण्डू गो.का.वै.प्र .32)

दृष्टं श्रुतं भूतू भवद्भववष्यत्स्थास्नुश्चररष्णुरुहमदल्पकं च ।
ववनायुताद्वस्तुतरांन वाच्यंस एव सवं ंपरराथभूमतूः ।।

(10-46-43)

एवंननिा सा ब्रुवतोव्यतमीता ननदस्य कृष्णानुचरस्य राजन् ्।
गोप्यः सरुतुथाय ननरूप्य दीपानवास्तूनसभर्च्य् मदधीनयर्नथन् ्।।

(श्रीमद् भा .10-46-44)

हे राजन परीक्षित् ्! इस प्रकार भगवान श्रीकृष्ण का गुणानुवाद गाते, बोलते बाबा नंद, मैया यशोदा और उद्धव जी की रात्रि व्यतीत हो गई। प्रातः बेला में उद्धव कमण्डल लेकर कामलंदी स्नान के मलए चल पड़े।े तो रास्ते में क्या देखते हैं फक-

एवंननिा सा ब्रुवतोव्यतमीता ननदस्य कृष्णानुचरस्य राजन् ्।
गोप्यः सरुतुथाय ननरूप्य दीपानवास्तूनसभ्यर्य् मदधीनयर्नथन् ्।।

गोर्पयांउठ बैठी हैं और दीपक जला-जलाकर दही मन्द्थन करने ेलगी है। साथ ही भगवान श्रीकृष्ण की लीला का गायन कर रही है, यशोगान कर रही हैं।

ता दीपदीप्तैर्णमणभभववरेजू ूरझजूवूवकमषद्मभुजुकङ्कणस्रजः ।
चलन्ननतम्बस्तनहारकुण्डलन्त्वषत्कपोलारुणकुङ्कर्ाननाः ।।

(10 - 46 - 45)

दीप जलाकर दही मन्द्थन कर रही थींतो उनकी चूडड़यों में दीप की लौ पड़ने ेसे एक र्वलिण शोभा (प्रततभा) हदखलायी दे रही थी।

उद्गायतीनार्रववनदलोचनं ब्रजाङ्गनानां ददवर्स्पृिद्ध्वननः ।
दघ्नश्च ननर्नमथनिब्दभर्धश्रतो ननरस्यतेयेन ददिार्ङ्गलर् ्।।

(10-46-46)

तो कहते हैं फक खाली दही मन्द्नि हो रहा है वहाँ पर या और कुछ हो रहा है? गोर्पयाँ दही मन्द्थन करती हुई भगवान के गुणानुवाद का गायन कर रही हैं, प्जससे दशों हदशायें मंगलमय हो रही हैं। ऐसी प्रातःकालीन शोभा को देखते हुए महाराज उद्धव कामलन्द्दी स्नान को चले गये और इिर भगवान भुवन भास्कर उदय हो गये। गोर्पयाँनन्द्बाबा के भवन के सामने क्या देखती हैं फक उनके द्वार पर एक सुंदर रथ खड़ा है। रथ को देखकर वे आपस में तकि करती हैं-ऐ सखी! देखो तो यह रथ कहा ँसे आया है?

अकूरूर आगतः ककं वा यः कंसस्याथसमाधकः ।
येन नीतो रुधुपुरीं कृष्णः कर्ललोचनः ।।

(10-46-48)

यह फकसका रथ है? कहाँसे आया है। दुष्ुट कंस के अथ िको मसद्‌ किरने अकूरूर तो फफर से नहीं ंआया है जो फक हमारे परम र्प्रय कमलनयन भगवान श्रीकृष्ण को मिुरापुरी ले गया है।

ुधिचन्स्ुताः कोऽयर्पीय्दिनमः कुतश्च कस्याुयुतवेषभूषूणः ।
इनत स्र् सवाःम पररववुरुत्सुकुास्तरिुश्लोकपदाम्बुजाश्रयर् ्।।

(10-47-2)

प्जस समय गोर्पयांइस प्रकार तकि कर रही हैं, उसी समय महाराज उद्वि स्नान संध्या से तनवृत् होकर बाबा नंद भवन की ओर सिी चले आ रहे हैं। गोर्पयाूँकह रही हैं-मालूम होता है फक मथुरापुरी से आया है। भगवान श्रीकृष्ण के ही समान वेश है। वैसे ही पीताम्बर फकरीट, मुकुट िारण फकया है। उनका ही सेवक जान पड़ता है। उन्द्होंने ेही भेजा होगा। गोर्पयाूँ ऐसा कह रही थींफक महाराज उद्वि वहाूँपर पहुूँच गये। गोर्पयों ने उन्द्हें रोक मलया, बाबा नंद के सदन तक न जाने हदया। एक चौकी लाकर उसमें महाराज उद्वि को सत्कारपूवकि त्रबठाकर ब्रजबालाएं चारों तरफ से उन्द्हें घेर कर बैठ गई। आइये, पिाररये आपका स्वागत है। आप भगवान श्रीकृष्ण के सखा हैं, मथुरापुरी से आए हैं। एक सखी दूसूरी सखी से कहती है-हा,ूँ श्रीकृष्ण भगवान भेजेहोंगे, अपनेमाता-र्पता की सुधि आ गई होगी तो उनके मलए संदेश भेजेहोंगे-

अनयथा गोव्रजे तस्य स्ुरणीयं न चक्ष्हे ।
स्नेहानुबनधो बनधूनांुनुेरदह सुदुसुत्यजः ।।

(10 - 47 - 5)

अनयेष्वथकृमता रैुुरी यावदथवमवडम्बनर् ्।
पुन्म्भः स्त्रीषु कृता यद्वत् ्सुरुनन्स्स्वव षप्दैः ।।

(10 - 47 - 6)

अपनेमाता-र्पता, बन्द्ुओंका कुशलिेम पूछने ेभेजेहोंगे-नहीं ंतो हम ब्रज की गोर्पयों को भगवान श्रीकृष्ण क्यों पूछने ेचलेंगे। श्रीकृष्ण भगवान तो हम लोगों को ऐसे छोड़कर चले गये फक-

ननस्वं त्यजन्न्त गणणका अकल्पंनृपृनतं ंप्रजाः ।
अधीतववद्या आचायरूमनृत्वजो दिदक्षषणर् ्।।

(10-47-7)

प्रजा अपनेतनिनि राजा को छोड़ देती है, वेश्या िनहीन र्प्रयतम को छोड़ देती है। भैया ! संसार में इस प्रकार भगवान को भक्त ही कह सकते हैं। भक्त ईश्वर को भी कहने में नहींचूकते। एकता प्जसमें हो वही ऐसा कह सकता है। इतनी िृषूटता, प्जसके मलए कोई र्वकल्प नहींऐसे भगवान की तुलना यहाूँ पर गोर्पयाूँ वेश्या से कर

रही हैं और फफर कैसे छोड़कर चले गये? जैसे फक र्वद्याथी अपनेगुरु की सेवा तब तक करता है जब तक फक उसे र्वद्या प्रातत नहीं ंहुई। जब पढ़कर तनकलता है तो फफर बाद में गुरुजी के प्रणाम भी करने ेनहींजाता। र्वद्याथी आचाय िका पररत्याग कर देता है। पुरोहहत यजमान के यहाँ पूजा-पाठ कराता है और जब दान दक्षिणा ममल गई तो फफर यजमान की तरफ मुड़कर भी नहींदेखता। फफर चाहे यजमान जाय जहन्द्नुम में। वैसे ही हमारे श्रीकृष्ण भगवान हैं-अब पता नहीं, ं वे ेआते हैं फक नहीं। ये सब बातें महाराज उद्धव को घेरकर गोर्पयाँ आपस में कह रही थीं और उद्धव चुपचाप सुन रहे थे ेफक इसी समय कहीं ंसे एक भौंरा उड़ते हुए आया और फकसी गोपी के चरण पर बैठ गया। नाम तो यहा ँूपर नहींहदया गया है, परन्द्तु ुर्वद्वानों का अनुमान है फक वह महारानी राधिका जी ही थीं। भाव यहा ँूपर यही है। गोपी के नाम से राधिका जी का ही संबोिन है। भौरा गोपी के चरण में आकर बैठ गया। अब उद्धव जी की शामत आ गई। गोर्पयाँ भौर के माध्यम से श्रीकृष्ण के प्रतत कहती हुई उद्धव जी को फटकारने लगीं उन्द्हें इसका बहाना ममल गया। भौरे की तरफ मुखाततब (सन्द्मुख) होकर कहती हैं-

र्धुप ककतवबनधो र्ा स्पृिानन सपत्याः ।
कुचववलुभुलतर्ालाकुंकुश्र्श्रुभभनःम ।।

(10-47-12)

वहत् ुर्धुपनतस्तनर्ाननीनां प्रसादं ।
यदुसुदभस ववडम्ब्यंयस्य दूतूस्त्वर्ीदृक् ।।

(10-47-12)

हे मिुप, हे भ्रमर, अरे कपटी के दूतू। तू मथुरापुरी से आया है? श्रीकृष्ण का समाचार लेकर ये संबोिन गोर्पयाँभ्रमर की तरफ इशारा करके कह रही हैं। तू मेरे चरणों को स्पश िन कर-संसार में भोली-भाली लक्ष्मी ही एक ऐसी स्र्ी है जो फक भगवान श्रीकृष्ण की सदैव चरण सेवा करती रहती हैं। पता नहीं, ं लक्ष्मी को ऐसे िोखेबाज से क्या मोह है, जो फक सदैव उनके चरणों की सेवा में रत् ्रहती है। अरे भ्रमर, जैसे श्रीकृष्ण कपटी हैं, ऐसे ही तू ूभी कपटी है-

र्ृगयुररव कपीनदं्रं ववव्यधे लुबु्धधर्ाम ।
न्स्त्रयर्कृत ववरूपां ंस्त्रीन्जतः कार्यानार् ्।।

(10-47-17)

बभलर्वप बभलत्त्वाऽवेष्टयद् ध्वांक्षवद् यस्तदलर् ।
भसततसख्यैदुमस्त्य जस्त त्कथाथःम ।।

भगवान के जन्म की क्या कहें, हमारे पास तो उनके तीन-तीन जन्मों का ररकाड ि है। उनके ऐसे कपट कर्मों का तीन युग का इततहास हमारे पास है। सतयुग में जब तेरे स्वामी श्रीकृष्ण ने वामनावतार मलया तो पहुँच गए राजा बमल के पास। राजा बमल यज्ञ कर रहा था। भगवान वामन पहुँचेऔर बमल से दान में तीन पग पृथ्वी मांगे। मांगतेसमय तो थे ेबावन अंगुल के और नापते समय हो गये आकाश, पाताल। दो ही पग में समस्त लोकों को नापकर तीसरे पग के मलए उसे ऋणी बना हदया और उसे पाताल लोक में भेज हदया। यह सरासर ि ोखा नहीं ंतो और क्या है? ि ेतायुग में भी देख मलया-एक भाई सुग्रीव से ममिता की और दूसूरे भाई बाली को पेड़ की आड़ में तछपकर मारा। हा–ूँ सामने होते तो मालूम पड़ जाता और पंचवटी में बेचारी सूपणिखा भगवान राम के पास आई। भैया। इनमें बड़ी एकता है। हा।ूँ वैसे आपस में भले ही झगड़ें, परन्दतुबाहरी आक्रमण यहद इन पर हो तो फफर ये चण्डी ही हैं, न छोड़ेंगी। सब एक हो जायगी। मान लो फक तुमने ेअपनी स्त्री को एक तमाचा मार हदया, हम यह नहीं कहते ेफक तुम जाकर अब अपनेयहाूँ तमाचा ही लगा देना, परन्दतुऐसा मौका आ गया, कभी न कभी आ ही जाता है, तो भैया। ये सब पास-पड़ोस की प्जतनी प्स्त्रयाूँ हैं सब एक हो जाएंगी, सब की सब औरतें तुम्हारे पीछे पड़ जाएंगी-बेचारी को नाहक मार हदया, तनदियी है, अपनी औरत को क्यों मारा- इनमें बड़ी एकता है-तो बेचारी सूपणिखा श्रीराम के पास मोहहत होकर आई और क्या कहती है-

तुर् सर् पुरुष न र्ो सर् नारी। यह संयोग ववधध रचा ववचारी ।।

तुम्हारे समान सुंदर पुरुष नहींऔर मेरे समान स्त्री नहीं,ं इस पद के दो अथ ि हैं-ऊपर के चरण में सुंदरता का वणनि है और दूसूरे चरण में संयोग का वणनि है। तो भगवान राम क्या कहते ेहैं-

सीतदह धचतई कही प्रभु बाता। अहइ कुर्ार र्ोर लघु भ्राता ।।

यहद तू सुंदरता के मलए कहती है तो सीतहह देख, उसके चरणों की ि ूमल के समान भी तू सुंदर नहीं ंहै और यहद संयोग यानी धयाह के मलए कहती है तो भी सीतहह देख, मेरे पास सीताजी हैं और म ैंएक नारीव्रती हूँ-हाूँ लक्ष्मण अकेला है, उसके पास कोई नहीं ंहै, तू वहाूँजा। बेचारी सूपणिखा झांसेंपट्टी में आ गई। सरकार के कहने ेसे लक्ष्मण के पास गई और सरकार इिर लक्ष्मण को इशारा कर हदये, नाक-कान त्रबनु कीन्दह त्रबना नाक, कान के कर हदये, नक्टी-बूची कर हदये। इसमलए, अरे भ्रमर ! तू ूकपटी का सखा है और तू ूभी कपटी है। ऐ भ्रमर ! क्या तू चरण छूकर मनाने आया है? जा, जा, चला जा-तेरे द्वारा हम लोग भुलावेमें आने ेवाले नहींहैं। अरे भ्रमर ! यहद तू ऐसा कह फक गोर्पयों ! जब तुम लोग श्रीकृष्ण को ऐसे ि ोखेबाज हैं करके जानती हो तो फफर उनका नाम छोड़ दो, उनकी चचािछोड़ दो, तुम इतनी मूख ि क्यों हो जो फक उस ि ोखेबाज के र्वरह में, उनकी र्वरह व्यथा से क्यों संततत हो, जल रही हो, यहद तू ऐसा कह तो हम क्या करें हम सब र्ववश हैं, मजबूर हैं-

यदनुचररतलीला कणपमीयूषववप्रुसकृददनववधूतद्वनद्वधर्ामववनष्टाः ।
सपदद गृहकुटुम्बं दीनरुतुसृज्य दीनाबहव इह ववहङ्गा भभषुचयां चरन्नत ।।

(श्रीमद् भागवत 10-47-18)

(पू. श्री स्वामी जी इस श्लोक के पाठ में गला रूँ गिया, आँखें प्रेमाश्रु ुसे भर आई, ध्यानमग्न हो गये, भाव समाधि में समाधिस्थ हो गये) 'मशव' एक बार भी जो अपनेमानव जीवन में, अपनेदोनों कानों द्वारा भगवान श्रीकृष्ण के लीलामृत् का पान कर लेता है और वह चररतामृत् जब उसके हृदय देश में पहुँचता है तो उसके द्वन्द्वाहदक र्वकार (िम)ि नष्ट हो जाते हैं। फफर वह सपहद मानेशीघ्र ही घर-बार, स्त्री-पुि, कुटुम्ब, अपना पराया, जातत, आश्रम सब प्रकार के व्यप्क्तत्व का पररत्याग कर नाम, रूप की मान्यता को छोड़कर संसार से उदासीन होकर कफन की लंगोटी लगाये उन्मि की भांतत भ्रमता रहता है। वासुदेवः सवमिमतत-यानी समस्त चराचर को अपना स्वस्वरूप आत्मा देखता हुआ, आत्मदशी होकर घर-घर का टुकड़ा मांगकर खाता है और तनरािार आकाश मंडल में प्जस प्रकार पिी उड़ता है, उसी प्रकार तनराश्रय होकर इस पृथ्वी मंडल पर र्वचरण करता है। एक बार भी, जो उनके लीलामृत् को पी लेता है (पू. ू श्री स्वामी जी का गला रुं जाता है)

उसकी यह हालत हो जाती है, तो फफर हम लोग जो 11-11 वष िउनके साथ रही हैं। श्रीमद् भागवत में तो नहीं ंपरन्द्तुगग िसंहहता में इसका प्रमाण आता है फक श्रीकृष्ण भगवान ग्यारह वष िगोकुल में रहे सौ वष िमथुरा में और पचचीस वष िद्वाररकापुरी में। इस तरह कुल एक सौ छिीस वष िइस पृथ्वी मंडल पर रहकर लीलाएं की हैं। गोर्पयांप्रेम से र्वह्वल हो गई और कहती हैं फक जानते हैं श्रीकृष्ण भगवान 420 हैं, ऐसे ोखेबाज हैं, परन्द्तु क्या करें, जी भरकर उनका चररतामृत् पान फकया है, उनके र्वयोग में हम सब मर रही हैं और मरेंगी जीवन भर। इसी समय भौंरा अन्धि उड़ गया, तो प्रसंग ही खतम हो गया। अब महाराज उद्वि को बोलने का समय ममला। तो कहते ेहैं-

अहो यूयं स्र् पूणाधमा मभवत्यो लोकपून्जताः ।
वासुदेवे भगवनत यासाभर्त्यवपतंम र्नः ।।

(10-47-23)

अहो ब्रजबालाओं । तुम लोग िन्द्य हो, लोक में पूज्य हो, तुम्हें क्या कहें, िन्द्य हो, भगवान वासुदेव में तुम लोगों का ऐसा अनन्द्य प्रेम हो, इतनी अगिा भप्क्त है। यह प्रेमलिणा तो मुनीनामर्प दुलुभिा मुतनयों को भी दुलुभि है। बज बालाओं ! म ैंतुम लोगों के मलए भगवान श्रीकृष्ण द्वारा भेजा हुआ कर कमलोफकत संदेश लाया हूँ। प्रभु ुका यह र्प्रय संदेश तुम सब ध्यान से सुनो-

श्रूयतां वप्रयसंदेर्शो भवतीनां सुखावहः ।
यरादायागतो भगा अहे भूत्ू मरहस्करः ।।

(10-47-28)

र्प्रय संदेशः - र्प्रयस्य संदेशः र्प्रय संदेशः। र्प्रय का जो संदेश उसे कहते हैं र्प्रय संदेश। अरे! जो सारे वर्श्व की आत्मा है-गोर्पयों का जो र्प्रय है, जो सारे चराचर का र्प्रय है, जो सव ि का सव ि है, सव ि का आनंद देनेवाला है। चाहे कोई भी हो एक ि ण भी फकसी को दुःख र्प्रय नहीं ं है, दुःख से सारे चराचर को वैराग्य है-दुःख कोई नहीं ं चाहता आनंद को सभी ग्रहण करना चाहते हैं, उसका वैरागी कोई नहींहै-आनंद ब्रह्म-जो आनंद स्वरूप है, सव ि का र्प्रय है भगवान, उनका जो ज्ञान उसे कहते ेहैं र्प्रय संदेश।

र्प्रयः संदेशो यस्य सः र्प्रयसंदेशः र्प्रय संदेश प्जसका यानी भगवान आत्मा का अथात्ि् भगवान आत्मा को सुनो। र्प्रयश्चासौ संदेशः र्प्रयसंदेशः - आत्मा वा अरे रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्द्तव्यो तनहदध्यामसतव्यः (इतत श्रुततः - भगवान आत्मा देखने योग्य है, सुनने, े मनन करने एवं ंतनहदध्यामसतव्यः (इतत श्रुततः-भगवान आत्मा देखने योग्य है, सुनने, े मनन करनेएवं ंतनहदध्यासन करने योग्य है। इसमलए हे गोर्पयों। तुम सब सुनो-र्प्रयश्चासौ संदेशः र्प्रयसंदेशः र्प्रय ही जो संदेश और संदेश ही जो र्प्रय ! अब यहूँ से सरकारी कलम शुरु होती है।

भवतीनांववयोगो रे् न दह सवात्मर्ना क्वधचत् ्।
यथा भूतूानन भूतूेषु खं वाखन्वनजलंम ंर्ही ।।

(10-47-29)

तथाहं च र्नः प्राणभूतूेन्नद्रयगुणाश्रयः ।।

(10-47-29)

मया सवात्मिना भवतीनां र्वयोगः क्वधचत् ्न मुझ सवात्मिना भगवान से कभी फकसी का र्वयोग नहीं ंहै। अरे! मुझ परमात्मा से तुम गोर्पयों का कभी भी र्वयोग हुआ ही नहींहै। सुनो, यह तुम्हारा भ्रम है, म ैंतो सव ि का सव, ि सव ि की आत्मा हूँ, सव ि का अधिष्ठान हूँ, सव ि का सव ि होने के नाते न मुझसे फकसी का संयोग होता है और न र्वयोग। तुम लोग अपना कभी भी मुझसे र्वयोग न जानो-शरीर का संयोग, र्वयोग होता है, परन्द्तु सारे चराचर का जो अधिष्ठान है, जो चराचर का अप्स्तत्व है, उस आत्मा का न फकसी से संयोग होता है न र्वयोग। ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्ति आकाश, वायु, अप्न, जल, पृथ्वी इन पंच महाभूतों का फकसी भी भूत से न संयोग होता है न र्वयोग। सारा चराचर पंच महाभूतों का ही तो काय ि है। डंडा भी पाचूँ भौततक पदाथ ि है, इससे पाचूँों तत्व तनकाल लो तो यह डंडा नहीं ंरहेगा। अथित्् इस डंडें ेसे पंच महाभूतों का कभी संयोग, र्वयोग नहीं ंहै, क्योंफक यह डंडा पंच महाभूतों से मभन्द्न नहीं है। इसी तरह मुझ आत्मा का फकसी से संयोग, र्वयोग नहींहोता। अरे ! पूण ि का संयोग, र्वयोग कैसा? हा, ूँ शरीर का संयोग, र्वयोग होता रहता है।

भवतीनांववयोगो रे् न दह सवात्मर्ना क्वधचत् ्।
यथा भूतूानन भूतूेषु खं वारववववनजलंम ंर्ही ।।
आत्रनयेवात्रनाऽऽत्रानं सृजेृ हनम्यनुपालये ।

आत्र्ायानुभुावेन भूतेून्नद्रयगुणात्र्ना ।।

(10-47-30)

आत्मना आत्मतन आत्मनं अहं सृजे्, आत्मना आत्मतन आत्मानं अहं पालये, आत्मना आत्मतन आत्मानं अहं हप्न्द्म । आत्मा करके आत्मा में आत्मा की म ैंसृपूष्ट करता हूँ, आत्मा करके आत्मा में आत्मा का म ैं पालन करता हूँ, आत्मा करके आत्मा में आत्मा का म ैंसंहार करता हूँ। तो फफर संयोग, वर्योग कहाँ। यह अध्यात्म तत्व महाराज उद्वि गोर्पयों को सुना रहे हैं। 'म' ैं करके 'म' ैं में 'म' ैं की सृपूष्ट, 'म' ैं करके म ैंमें 'म' ैं का पालन और 'म' ैं करके 'म' ैं में 'म' ैं का संहार, तो फफर 'म' ैं आत्मा में कहाँसंयोग और कहा ूँर्वयोग-फकसका संयोग कहें और फकसका र्वयोग कहें। भगवान श्रीकृष्ण मलख तो मारे, अब समझो- आत्मन्द्येवात्मनात्मानं सृजे् हन्द्म्यनुपालये- 'म' ैं आत्मा करके 'म' ैं आत्मा में 'म' ैं आत्मा का सृजन, 'म' ैं आत्मा करके 'म' ैं आत्मा में 'म' ैं आत्मा का पालन, 'म' ैं आत्मा करके 'म' ैं आत्मा का संहार क्या है? अरे! म ैंजीव हूँ, यह सृपूष्ट फकसने फकया? 'म' ैं आत्मा ने।

जीवं ंकल्पयतेपूव मततो भावानपृथृन्ववधान् ् ।
बाह्यानाध्यान्त्रकां ंश्चैव यथावव्द्यस्तथास्र्ृनृतः ।।

(माण्डू.गौ.का.वैत.प्र. 16)

सवप्रिथम अपनी आत्मा को आप ही जीव माना। फकसने माना? म ैंआत्मा ने। फकस करके माना? म ैं आत्मा करके। फकसको माना? म ैंआत्मा को माना। यही आत्मा करके आत्मा में आत्मा का सृजन होता है। जब तक यह मान्द्यता कायम है, बोि नहीं ंहुआ है, तब तक इस जीव सृपूष्ट का पालन हो रहा है। जब आत्मदेव का बोि हो गया तो जीव सृपूष्ट का संहार हो गया, ये बात। अरे भैया ! सुनो-सबसे प्रथम परमात्मा ने अपनेआपको जीव माना। जीवं कल्पयते पूवि–जीव की कल्पना की फक म ैंसंसारी जीव हूँ। यह गौड़पादीय काररका है। इसके बाद अन्द्य भाव पैदा हुए। जीव र्वकल्प के बाद ही समस्त प्रपंच, पंच महाभूत, पंच तन्द्मात्राएँ, पंच ज्ञानेप्न्द्रय, पंच कमेप्न्द्रय सब पैदा हो गये। यही 'म' ैं करके 'म' ैं में 'म' ैं का पालन है और जब बोि हो गया, जब ज्ञान हो गया तो 'म' ैं करके 'म' ैं में 'म' ैं का संहार हो गया।

आत्र्नयेवात्र्नाऽऽत्र्ानं सृजे् हनम्यनुपालये ।
आत्र्ायानुभुावेन भूतेून्नद्रयगुणात्र्ना ।।

(श्रीमद् भा. 10-47-30)

अब प्रश्न हो रहा है फक परमात्मा ने अपनेआपको जीव क्यों माना? जी हा–ूँतो तुम्हारा इसमें क्या मसर ददि है फक परमात्मा को क्या पड़ी थी, अपनेआपको जीव मानने ेकी, यही न? भैया! यह जो तुम्हारा प्रश्न है वह जीव देश का है फक आत्मदेश का? यह प्रश्न जीव देश का है। तो आत्मदेश में खड़े ेहो जाओ और फफर देखो, क्या ऐसा

प्रश्न बनता है? उसने कभी भी अपने आपको क्या जीव माना है? आत्मदेश में तो ऐसा प्रश्न ही नहींउठता-तो फफर खतम- अरे! इसी का नाम तो संसार है। जब तक मान्यता कायम है तभी तक इसका पालन है और जब मान्यता गई तो संहार हो गया। गोर्पयों ! सुनो-प्जस प्रकार महासागर में छोटी बड़ी लहरें उठा करती हैं और बड़े-बड़े ेज्वार भाटे भी उठा करते हैं, और प्जसमें ये छोटी-बड़ी लहरें उठा करती हैं ज्वार-भाटे उठा करते हैं सबके सब कालान्द्तर में उसी महासागर में समा जाते हैं। इसी प्रकार चैतन्द्याकाश महासागर में श्रीकृष्ण नाम की बड़ी भारी र्वभूतत यानी ज्वार भाटा उठा है और श्रीकृष्ण के साथ ही राधिका, र्वशाखा, लमलता, फकशोरी इत्याहद अनेक छोटी-बड़ी लहरें भी उठी हैं। समय पाकर ये सब के सब उसी चैतन्द्याकाश महासागर में समा जायगें। जो शेषे रह जाएगा वही 'म'ैं हूूँ- भगवान आत्मा। तो फफर मुझ आत्मा में तुम्हारा संयोग र्वयोग कहाूँ-म ैंआत्मा श्रीकृष्ण में और म ैंही आत्मा तुम गोर्पयों में। इसमलए अब यह न मानो फक तुम्हारा और श्रीकृष्ण का संयोग, र्वयोग हुआ है। तुम लोगों की जो संयोग, र्वयोग की भावना है, यह सब तुम्हारे मन की बीमारी है। इसमलए मन का तनरिो करो-मन को रोको, मन की लय कर दो। जब तक महाराज उद्वि ज्ञान की बातें बतला रहे थे, गोर्पयाूँ चुपचाप शांतत से सुन रही थीं, परन्द्तु ु जैसे ही मन का प्रसंग आया तो श्रीकृष्ण के प्रतत जो उन सबकी आंतररक भावना थी वह जाग उठी। कारण? ज्ञान देश में मन नाम की चीज नहींहै। वह योग का र्वषय है। जब महाराज उद्वि योग की बातें सुनाने ेलगे फक मन का तनरिो करो तो फफर गोर्पयाूँमन देश में आ गई। गोर्पयाूँकहती हैं- हे महाभाग उद्वि ! अब बस ! बंद करो ! कृपा करो ! श्रीकृष्ण का संदेश सुनने ेके मलए अब हम लोगों के पास कान नहीं हैं। मन के तनरिो की बातें अब बंद करो। श्रीकृष्ण कब से योगी हो गए? कब से वे ज्ञान की और योग की बातें करनेलगे? क्या मथुरा जाते ही वे ज्ञानी और योगी बन गये। शायद कुधजा ने मसखा हदया होगा। तो सुन लो यहाूँ पर अब उनका योग न चलेगा। अपनेश्रीमान् ् सखा से कृपापूवकि कहहयेगा फक इस योग को कुबरी के प्रतत सुनाय,ें कुबरी मन का तनरिो करे। अरे, भैया ! उद्वि, मन न भयो दस बीस -

उधौ र्न भयो दस बीस ।।
एक रह्यौ सो गयो श्यार् संग, को आराधै ईि ।
भई अनत भिधथल सबैर्ाधव त्रबनु, जथा देह त्रबनुसीस ।।
स्वासूँा अटकक रही आिा लधग, जीवदहं ंकोदट बरीस ।
तुर् तो सखा श्यार्सुंदर के, सकल योग के ईि ।।
सूरदास रभसकन की बनतयाूँ, पुरखौ र्न जगदीि ।।

पाती में क्या मलखे हैं फक मन का तनरिो करो-हे उद्वि ! फकस मन का तनरिो करें-एक मन रहा सो भगवान के साथ चला गया और एक ही मन सबके पास होता है, अब दूसूरा मन कहाूँसे लाय ेंप्जसका फक तनरिो करें? अरे ! मन न भयो दस बीस-इसमलए हे उद्वि ! हमारे श्यामसुंदर उसी कुबरी को योग वैराग्य मसखाय।ें सारा दारोमदार तो कुबरी पर ही है। भैया! यहाूँ से भी हम लोगों का संदेश मलख के ले जाओ-जाकर वहाूँपर, कुबरी को सुना देना-

वदन र्ें बालकृष्ण, बेसर र्ें पारब्रह्म,
चोटी र्ें चक्रधर, अरु र्ोती र्ें र्ुरारी है ।।
कणफूमल र्ें कर्लापनत, दाभर्नन र्ें दीनानाथ,
हरवा र्ें हररजू, बाजूबंदन र्ें धगररधारी हैं ।।
सारी र्ें सावुँरो, ककनारी र्ें कनहैया बसै,
अंधगया र्ें अर्ंपनत, अंग बसै बनवारी है ।
भौंहन र्ें भगवान, कपोलन र्ें कृपाननधान,

अंजन में मुरलीर, और नैनन में त्रबहारी है ।।

और भलख के ले जाओ-

श्यार् तन, श्यार् र्न, श्यार् ही हर्ारो धन,
उधौ आठों यार् हर्ें श्यार् ही सों कार् है।
श्यार् दहये, श्यार् वप्रये, श्यार् त्रबनु नाहींन्जये,
अंधे की सी लाकड़ी अधार नार् श्यार् है ।।
श्यार् गनत, श्यार् र्नत, श्यार् ही प्राण पनत,
श्यार् सुखदाई सो भलाई िोभाधार् है ।
उधो ! तुर् भयो बौरे, पाती लै के आयौ दौरे,

योग कहाुँसीख ुँूयहा ुँरोर्-रोर् श्यार् है ।।

गोर्पयों के मन का गुधबार जब तनकल गया तो कुछ शांत हुई और प्रेेम से भगवान श्रीकृष्ण का स्मरण कर महाराज उद्वि से पूछती है-हे उद्वि कहो, हमारे श्यामसुंदर आनंद से तो हैं न? मामा को मारकर अब तो वे राजा हो गये। क्या हम गावूँ की ग्वामलनों की भी कभी सुधि लेते हैं? इस तरह प्रेेम भरी धचतवन से श्रीकृष्ण की लीला का स्मरण करती हैं। ब्रजबालाएूँ महाराज उद्वि को उस सुखमय जीवन की, प्रभु की बाल लीला की झाूँकी हदखाती हैं। जहाूँ- जहाूँप्रभु ने लीलाय ेंकी थीं उन सभी जगह उद्वि को ले जाकर गोर्पयाूँ दशनि करतींऔर प्रभु के प्रेेमगान में र्वह्वल हो उठती हैं। उद्वि जी जब गोकुल आये तो सरकारी आज्ञा थी फक गोकुल में मेरा संदेश देकर जल्दी ही वापस आ जाना परन्द्तु उद्वि जी पूरे छः महीनेतक नहीं लौट सके। जहा–ूँजहाूँ भगवान के क्रीड़ास्थल थे, सभी स्थानों में उद्वि गये और सब उद्विजी का प्रेेम से स्वागत करते रहे। महाराज उद्वि उनके प्रेेम से सरोबार होकर ब्रजमंडल को िन्द्य जानकर प्रणाम करके रथ में बैठकर मथुरापुरी लौट आये।

- बोलो श्रीकृष्णचंद्र भगवान की जय -

श्रीकृष्ण गोववंदं हरे र्ुरारे, हे नाथ नारायण वासुदेव ।।

षष्ठम हदवस

यदुवुंमशयोंकोऋृर्षयों का शाप, भगवान कृष्ण का उद्धव को उपदेश हंसोपाख्यान

23-2-1969, प्रातः 10.00 से 12.00 बजे तक

र्ंगलाचरण - नारयणोननषत् ़्

उर्ष्ठित जाग्रत प्रातयवराप्न्द्नबीत । अनाहदकालप से अर्वद्या के घोर अंकिार में सोनेवालों भव्य जीवों! 'उर्ष्ठित'- उठो, स्वस्वरूप भगवान आत्मा में जागो और फकसी श्रेष्ठ महापुरुष के उपसन्द्न होकर अपना आत्म कल्याण करो-यहा ूँपर श्रीमद् भागवत महापुराण परमहंस संहहता के माध्यम से आत्मतत्व का तनरूपण हो रहा है। कल के प्रसंग में आनंद-कन्द्द परमानंद भगवान श्रीकृष्ण की लीला पर प्रकाश डाला गया। बाल लीला से

लेकर उद्वि-गोपी संवाद तक का प्रसंग बताया गया। प्जस समय भगवान श्रीकृष्ण अपनी बाल लीला समातत कर, बकासुर, अघासुर आहद अनेक रिसों एवं कंस का वि कर चुके और महाभारत इत्याहद लीलाएं समातत हो गई तो फकसी उसमय सततर्षियों का मंडल भगवान के दशनि तनममि द्वाररकापुरी को आया। माग िमें यदुवुंशी बालक, श्रीकृष्ण की पटरानी जाम्बवती के पिु साम्ब के पेट में एक लोहे की कड़ाही बांकिर उसे गभविती स्ीि का रूप बनाकर खेल रहे थे। जब सततर्षियों का मंडल उिर से तनकला तो यदुवुंशी बालक उन्दहें घेर मलए और साम्ब को आगे करके पूछतेहैं फक भगवन् ्! इस स्ीि के गभ िसे पिु उत्पन्दन होगा या पिुी? ऋर्षयों ने इसे बालकों का पररहास मानकर कहा फक तुम लोग अपना खेल खेलो, हमारा माग िमत रोको, हमें जाने दो। परन्दतु यदुवुंशी बालक बड़े दुरुाग्रही थे, वे न माने। फलस्वरुप ऋर्षयों ने शॉप दे हदया फक इसके गभ िसे न पिु होगा और न पिुी बप्ल्क मूसल उत्पन्दन होगा प्जससे यदुवुंमशयों का संहार हो जायेगा। जब लोहे की कड़ाही को तनकाला गया तो वह तत्काल मूसल हो गई। इससे बालक परम भयभीत हुए और द्वाररकापुरी आकर अपने से बड़ों को बताये, उन्दहें भी दुुःख हुआ और उस मूसल को यदुवुंशी बालकों ने रगड़-रगड़कर लोहे का चूण िबना समुर में प्रवाहहत कर हदया। जो छोटा-सा लोहे का अवमशष्ट भाग था उसे भी समुर में फेंक हदये। कालांतर में वह लोहे का चूण िबहकर प्रभास ि‍ि में आ गया और चूण िका एक-एक कण सपति वृि हो गया। जो छोटा-सा लोहे का टुकड़ा था उसको मछली तनगल गई और जब मछुवेउस मछली को पकड़े ेतो लोहे का टुकड़ा तनकला जो बाण का नोक बना। अमभशाप के कारण कुछ ही हदनों में द्वाररकापुरी में बड़े-ेबड़े ेअसगुन होने लगे। तारे टूट-टूटकर धगरने लगे, पृथ्वी पर भूकंप आने ेलगा। श्रृंगाल असगुन बोलनेलगे, हदन में उल्लू हदखाई देने लगे, नाना प्रकार का उत्पात होनेलगा। इन अतनष्टों को देखकर भगवान सभी यदुवुंमशयों को लेकर द्वाररकापुरी छोड़कर प्रभास ि‍ि आ गये। द्वाररकापुरी में ब्राह्मण अमभशाप से उल्कापात हो रहा है तो प्रभास ि‍ि चलकर यज्ञाहदक कम िकरें ताफक शांतत हो। यदुवुंशीगण प्रभास ि‍ि जाने के मलए तैयारी करनेलगे तो उद्वि को भी इसका पता लगा। उद्वि जी शीघ्र ही आकर भगवान श्रीकृष्ण के श्रीचरणों में नतमस्तक हो प्राथनिा करते हैं-

देव देवेि पुण्यश्रवणकीतनम ।
संहृंत्यैतत्कुलं ंनूनंलोकं संतं्यक्ष्यते भवान् ्।।
ववप्रिापं सर्थोऽवप प्रत्यहनन यदीश्वरः ।।

(श्रीमद् भागवत 11-6-42)

नाहं तवाङ्नघकर्लं ंषणाधर्मवप किव ।
त्यक्तुंसरुतुसहे नाथ स्वधार् नय र्ावप ।।

(श्रीमद् भागवत 11 - 6 - 43

भगवन् ्! मनैं ेसुना है फक यदुवुंश के संहार के मलए ब्राह्मणों का अमभशाप हो गया है और आप अपनी योगलीला समातत करने वाले हैं। क्या आप ब्राह्मणों का अमभशाप मेटने में समथ िनहीं हैं? और समथ िहोतेहुए भी

ब्राह्मणों का अमभशाप नहीं मेटना चाहते तो मुझे ेभी अपनेसाथ अपने िाम को ले चमलये, क्योंफक आपके चरण कमलों के आौ िण का भी र्वयोग सहन करनेमें म ैंसमथ िनहीं ंहूाँ।

य्यािसनाटनस्थानक्रीडिानाददषु।

कथं ंत्वां ंवप्रयरात्रानं वयं भक्तास्त्यजेर्दह ।।

(श्रीमद् भागवत 11-6-45)

सोनेमें, बैठनेमें, घूमने–ेफफरनेमें, खेल में एवं ंभोजनाहदक सभी कायों में सदैव आपके साथ रहा। आप

हमारे परम र्प्रय हैं, आत्मा हैं। आपके र्वयोग में हम कैसे रह सकतेहैं?

वातरिना य ऋषयः श्रर्णा ऊध्वर्मन्नथनः ।

ब्रह्माख्यं धार् ते यान्नत िानताः सनयाभसनोऽर्लाः ।।

(श्रीमद् भागवत 11-6-47)

बहुत से ऐसे सिाक हैं, जो वायु को रोककर प्राण और अपान वायु को ब्रह्मरंध्र में स्थार्पत करके ब्रह्म की उपासना करते हैं और अन्द्य, अन्द्य सिानों द्वारा संसार से तरने के मलए प्राण वायु को स्तंमभत करते हैं। ऐसे कहठन काय िकर ब्रह्मपद को प्रातत करते हैं। परन्द्तु मनैं ेअपनेआत्म कल्याण के मलए, संसार से तरने के मलए आज हदन तक कुछ भी सािन न फकया।

वयं न्त्वह र्हायोधगनभ्रर्नतः कर्वमत्र्सुम ु।

त्वद्धातयमा तररष्यास्र्तावकैदुमस्तरं तर्ः ।।

(श्रीमद् भागवत 11-6-48)

हे महायोधगन् ्! म ैंअनन्द्तकाल से कमों के जाल में पड़ा हुआ हूाँ, कम िकीचड़ से सना हुआ हूाँ, म ैंइस कमजाल से कैसे छुटकारा पाऊंगा? अभी तक तो मनैं कुछ नहीं फकया। इतने हदनों से आपके सप्न्द्नकट रहकर भी मुझे ेकभी आत्मप्जज्ञासा जागृत नहीं हुई। अब हे प्रभो! आप इस जगत से मुप्क्त के उपाय का बोि कराय,ें क्योंफक आपकी यह माया बड़ी दुरुत्यया है। इतनी भ्रामक एवं ंकहठन है फक इससे पार पाना अत्यन्द्त दुस्तर है। आपकी ही कृपा से इसे तर सकता हूाँ। इसमलए आप मेरा उद्िार कीप्जए। भगवान श्रीकृष्ण गोकुल से अक्रूर के साथ जब मथुरा आये तभी से उद्िव साथ में रहे। (सौ वष िमथुरा में रहे और पचचीस वष िद्वाररकापुरी में, भगवान श्रीकृष्ण ग्यारह वष िवृन्द्दावन में रहे। इस प्रकार भगवान श्री कृष्ण एक सौ पचचीस वष िरहे) फफर भी उद्िव को आज हदन तक आत्म प्जज्ञासा जागृत नहीं ंहुई। जब उद्िव को ही आत्मप्जज्ञासा न जगी तो श्रीकृष्ण भगवान को क्या गरज

पड़ी थी फक उद्धव को बोि कराते। जीव तो अपने संकल्प से ही बंिा है और अपने ही संकल्प से छूटेगा। गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते ◌ेहैं-

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ◌्।
आत्मैवै ह्यत्मनो बन्द्िरात्मैवै ररपुरात्मनः ।।

(गीता 6-5)

आत्म उद्धार अपनेआप करता है, दूसूरा कौन करेगा? जब वह स्वयंअपने आप अपने ही संकल्प से बंिा है तो दूसूरा कौन छुड़ायेगा? हाँ गुरु, महात्मा संसारी जीवों को उपदेश करते हैं फक तू शरीर नहीं,◌ं आत्मा है। स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीर से परे है। जाग्रत, स्वतन, सुषुप्तत तीनों अवस्था, भूत- भर्वष्यत्,◌् वतमिान तीनों काल में एकरस रहने के नाते तू ◌ूआत्मा सत्य है। सव ि प्रपंचों का ज्ञाता है, इसमलए तू चेतन है। परम प्रेमास्पद होने के नाते तू आनंदस्वरूप है, तेरा कहींआना-जाना नहीं। न मोि, न बंि, न पाप, न पुण्य तू इन सबसे रहहत परात्पर ब्रह्म आत्मा है। प्जसको बोि हुआ उसका तो बेड़ा पार हो गया, नहीं ◌ंतो आवागमन के चक्कर में लटका हुआ पड़ा है। आत्मस्वरूप को कोई भी जन्म जन्मांतर में न लख पायेगा जब तक फक उसको स्वयं ही आत्म प्जज्ञासा न जागृत हो, अपने आपको जानने की भूख न लगे। वह भले ही र्वद्वान हो, परन्द्तु बोिवान न हो सकेगा। अब इतने ◌ेहदन बाद उद्धव को आत्म प्जज्ञासा जगी है। प्जज्ञासुओं! योगेश्वर भगवान अपना कर-कमलाङ्फकत ज्ञान संदेश उद्धव के हाथ गोर्पयों के मलए भेजेथे और गोर्पयाँभगवान के भेजे हुए ज्ञान संदेश को आदरपूवकि सुनी, परन्द्तु उनको बोि नहींहुआ, इसका कारण क्या है? उनको बोि क्यों नहींहुआ। जबफक ज्ञान संदेश स्वयंप्रभु ◌ुने अपने करकमलों द्वारा मलखकर अपनेर्प्रय सखा उद्धव द्वारा भेजा था?

न नरेणावरेण प्रोक्त एष सुवुवज्ञेजेयो बहुधा धचनत्यर्ानः ।
अननयप्रोक्ते ◌ेगनतरत्र नास्त्यणीयानह्यतव्यर्मणुपुरर्णात् ◌्।।

(कठो. 1-2-8)

वेदों, शास्त्रों का चाहे कोई फकतना भी प्रकाण्ड र्वद्वान क्यों न हो, परन्द्तु यहद उसे स्वस्वरूप भगवान आत्मा का बोि (सािात्कार) नहीं ◌ंहुआ है तो उसके मुख से सुनेहुए आत्म तत्व के उपदेश का र्वचार आत्म प्जज्ञासु चाहे जीवन भर करता रहे, परन्द्तु उसे आत्म लाभ यानी अनुभव नहीं ◌ंहोगा। श्रोत्रिय तो है, परन्द्तु ब्रह्मतनष्ठ नहींहै, तो ऐसे अज्ञानी गुरु के मुख से सुने हुए उपदेश से आत्मपद प्रातत नहींहोता। र्वद्वान श्रुततयों, स्मृततयों के शधदों का र्वश्लेषण करने में समथ ि हो सकता है। परन्द्तु, हा–ँयह तनश्चय है फक उनके उपदेश से आत्म कल्याण न होगा। कारण? यह मसद्ि है फक एक पढ़ा-मलखा अज्ञानी और दूसूरा अपढ़-अज्ञानी । अरे ! अज्ञानी तो दोनों ही हैं। अंिा अंिे को क्या बोि करायेगा। जब उसे स्वयंही बोि नहीं हुआ है तो वह वस्तुतः अज्ञानी ही है, वह क्या दूसूरे को बोि करायेगा। संसार में र्वद्वानों की कमी नहीं ◌ंहै, पहहले तो वेदांत के ग्रंथ संस्कृत में ही उपलधि

थे,े परन्द्तु अब सभी भाषाओं में हहन्दी, उदि, अंग्रेजी, फारसी, बंगाली आहद में ममल रहे हैं। अब बाजार में सुगमता से खरीद लो। इससे वेदों के साहहत्य का तुम्हें ज्ञान हो जाएगा-साहहत्य को पढ़ लोगे परन्द्तु बोि, यह बात दूसरी है-आत्मानुभूतत दूसरी बात है। र्वद्वानों से प्रफक्रया, मसद्गति भले ही पढ़ लो, परन्द्तु तुम्हें बोि न होगा। अब उद्वि गोर्पयों के गुरु हुए क्योंफक उन्द्होंनेही भगवान का कर-कमलाङ्फकत ज्ञान संदेश गोर्पयों को सुनाया था। उद्वि, प्जन्द्हें स्वयं आत्म तत्व का ज्ञान नहीं,ं जो स्वयंबोिवान नहीं तो उनके द्वारा सुनाया गया यह र्वशुद्ि ज्ञान गोर्पयों तक कहाूँपहुूँचे। जब गुरु ही ऐसे हैं तो फफर मशष्य का तो कहना ही क्या है।

तद्वज्ञानाथं ंस गुरुरेवाभभगच्छेत्सभत्पाणणः श्रोत्रत्रयं ंब्रह्मननष्ठर् ्।।

(इतत श्रुततः मुण्ड, 1-2-12)

उस परम तत्व को जानने के मलए हाथ में सपि, पुष्प लेकर श्रोत्रिय ब्रह्मतनष्ठ सद्गुरु की शरण में जाना चाहहए। तो गुरु में दोनों बातें होनी चाहहए-प्रथम तो गुरु श्रोत्रिय यानी वेदों, शास्त्रों का प्रकाण्ड र्वद्वान हो और साथ ही ब्रह्मतनष्ठ हो। ऐसे गुरु से ही मशष्य का कल्याण होता है। इनके ही आशीवादि से आत्मतत्व का बोि होता है। आत्मप्जज्ञासु को ही स्वात्मानुभूतत होती है। हा,ूँ ज्ञान के अधिकारी तीन प्रकार के होते हैं। इनको भी सुन लो-उिम अधिकारी, मध्यम अधिकारी और कतनष्ठ अधिकारी। प्जस तरह भोजन के तीन प्रकार के अधिकारी होतेहैं-उिम, मध्यम और कतनष्ठ। भोजन का उिम अधिकारी वह है प्जसे कस के भूख लगी है, दो हदनों से उसे भोजन नहीं ंममला है और इसमलए इसका मसर चक्कर खा रहा है। उसे बड़ी भूख लगी है, बस, वह शीघ्रातशीघ्र फकसी तरह से िुा तनवृर्ि चाहता है। यहद उसे ऐसा कहा जाए फक भैया ! तुम तो ऐसे समय में आये फक चूल्हा-चौका उठ गया है, आप चाहें तो सेर सीिा ले लीप्जए और स्वयं बना लीप्जये, उसके मलए चूल्हा, कंडे,े ईंिन सब मंगा देता हूूँ, सभी इंतजाम फकये देता हूूँ, बना लो, तो वह उनके मलए राजी न होगा। उसे तो तीव्र भूख लगी है, रुखा-सूखा, ठंडा- बासी, कैसा भी भोजन हो, शीघ्र ही ममलना चाहहए। अब सुतनये, भोजन का मध्यम अधिकारी कौन है? मध्यम अधिकारी वही है प्जसे अभी भूख तो नहींलगी है, परन्द्तुबदहजमी भी नहीं ंहै। ऐसे को यहद सािन बताया जाय तो वह राजी हो जाएगा। कारण फक अभी भी भूख नहींलगी है। दो घंटे में जब तक भोजन बनेगा तब तक भूख भी लग जाएगी। तो वह भोजन के मलए सािन में जुट जाएगा। और भैया ! भोजन का कतनष्ठ अधिकारी कौन है? प्जसके कंठ तक लेटर-बॉक्स भरा है, खट्टी डकारें आ रही हैं, बदहजमी है तो ऐसों को यहद षटरस छतपन प्रकार का स्वाहदष्ट भोजन भी ला दो तो भी उसका उसे क्या प्रयोजन है, वह क्या कहेगा-खीर ठीक नहीं ंहै, इसमें तो चीनी कम है, हूूँ कढ़ी खट्टी है, रोटी कचची ही रह गई है। वह मसफि तकि करेगा, क्योंफक भूख तो उसको है ही नहीं। इसी तरह से ज्ञान के भी तीन अधिकारी होतेहैं-उिम, मध्यम और कतनष्ठ। उिम का आत्मानुभव में अधिकार होता है। मध्यम का सािन में अधिकार होता है। कतनष्ठ का शास्त्र में अधिकार होता है। उिम अधिकारी- प्जसे आत्मप्जज्ञासा और र्वषयों से तीव्र वैराग्य हो वह उिम अधिकारी है। प्जसे प्जज्ञासा तो है, परन्द्तु र्वषयों से वैराग्य नहीं ंवह मध्यम अधिकारी है। और प्जसे न प्जज्ञासा है, न वैराग्य है वह कतनष्ठ अधिकारी है। उिम अधिकारी आत्मानुभव चाहता है। मध्यम अधिकारी सािन चाहता है। कतनष्ठ अधिकारी शास्त्र प्रमाण चाहता है। उिम अधिकारी को कोई न

कोई महापुरुष पहुँचकर आत्मतत्व का अनुभव करा देते हैं और मध्यम अधिकारी को सािन में लगा देते हैं। सािन दो प्रकार के होतेहैं-एक र्पपीमलका माग िऔर दूसूरा र्वहंगम माग।ि क्योंफक, अभी प्जज्ञासु की प्जज्ञासा मंद है, सािन द्वारा वह अपनी प्जज्ञासा को तीव्र करे। अभी तड़प तो है नहीं ंइसमलए महात्मागण उसे सािन बताते हैं। र्पपीमलका कहते ेहैं चींटी को, तो र्पपीमलका माग िस्वामी वामदेव जी का है और र्वहंगम माग िमहात्मा शुकदेव जी का है। जैसा जो अधिकारी होता है उसे उसी में महात्माजन लगा देते हैं। र्पपीमलका मागि–यम, तनयम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, िारणा, ध्यान, समाधि और र्वहंगम मागि–श्रवण, मनन, तनहदध्यासन और समाधि। कतनष्ठ अधिकारी को कुछ भी बताओ वह सोचेगा फक यह कहा ूँमलखा है? इसका प्रमाण क्या है? प्जज्ञासा तो है ही नहीं ंइसमलए वह तकि करता है। उसकी बुद्धि तकि में जाती है। ऐसे कतनष्ठ अधिकारी को महात्माजन शास्रीं िका थतपड़ लगाते हैं। रामायण, गीता, भागवत पुराण, श्रुतत, स्मृतृत आहद द्वारा उसकी बुद्धि को पराप्जत करते हैं इसमलए तीनों प्रकार के अधिकारी के कल्याण के मलए ब्रह्मतनष्ठ के साथ ही साथ श्रोत्रिय एवं सािन सम्पन्द्न होना जरूरी है। इसमलए प्जज्ञासुओंको अपनेआत्म कल्याण (लक्ष्य की प्राप्तत) के मलए फकसी संत, श्रोत्रिय ब्रह्मतनष्ठ सद्गुरु की शरण में जाना चाहहये।

तद्वर्वज्ञानाथं ंस गुरुर्ेवाभभगच्छेत्सभत्पाणणः श्रोत्रत्रयं ंब्रह्मननष्ठर् ्।।

इसमलए -

न नरेणावरेण प्रोक्त एष सुर्वज्ञेयो बहुधा धचन्त्यर्ानः ।
अनन्यप्रोक्ते ेगनतरत्र नास्त्यणीयानह्यतव्यर्मणुपुरर्ाणात् ्।।

वेदों, शास्रीं िका प्रकाण्ड र्वद्वान हो परन्द्तु यहद वह आत्मानुभव से शून्द्य है, यहद उसे आत्म तत्व का अनुभव नहीं है तो ऐसे गुरु के उपदेश द्वारा बोि नहीं होगा। बोि तो श्रोत्रिय ब्रह्मतनष्ठ गुरु द्वारा सुनने ेसे ही होगा। जीव का कल्याण तभी होगा। त्रबना बोि के आत्मतत्व का उपदेश करना ऐसा ही है जैसे फक-

अनुभूनूतं ंत्रबना र्ूढ्ो वृथा ब्रह्मणण र्ोदते ।
प्रनतत्रबन्म्बत िाखाग्र फलस्वादन र्ोदवत् ्।।

(पंचदशी)

त्रबना अनुभूतत के ब्रह्मज्ञान का उपदेश ऐसे ही है जैसे फक प्रततत्रबप्म्बत फल का स्वाद बताना। फकसी तालाब के फकनारे आम का पेड़ है और फलों से लदा हुआ है। उसका प्रततत्रबम्ब जल में पड़ रहा है। अब उस प्रततत्रबप्म्बत फल का स्वाद बताना जैसा है, वैसा ही बोिशून्द्य गुरु का ब्रह्म ज्ञान का उपदेश करना। जब फल ही पकड़ में न आया तो उसका स्वाद वह कैसे बतलायेगा? प्रातत फल का स्वाद तो कोई भी बता सकता है, परन्द्तु प्रततत्रबप्म्बत फल के स्वाद को कोई नहींबता सकता। ऐसे गुरु के उपदेश द्वारा क्या लाभ होगा। हा–ूँ संसार में ऐसे े

 उपदेशकों की कमी नहींहै। आजकल तो वेदांत हहन्दी आहद भाषा में प्ेरेस में छपते जा रहे हैं।

पढ़कर ज्ञानी बन गये
और दूसूरों को उपदेश देनेलगे।

किुला ब्रह्ववातायमांर् वृविृहीनाः सुरुाधगणः ।
तेह्यज्ञाननतर्ानूनंपुनरायान्नत यान्नत च ।।

(अपेरो.-133)

ब्रह्मवाति में तो कुशल हैं, परन्द्तु ब्रह्माकार वृरि्र से हीन हैं तो ऐसे लोगों का आवागमन कभी नहीं ं ममटता। गुरुघण्टाल वह जरूर बन सकता है, परन्द्तु अनुभव शून्द्य उपदेशक से आत्म कल्याण होने वाला नहीं ंहै। कहने का मतलब यह है फक त्रबना बिोवान गुरु के आत्मतत्व का अनुभव नहीं हो सकता। तो महाराज उद्वि और गोर्पयूँदोनों को आत्म तत्व का बिो नहीं था। इसमलए भगवान श्रीकृष्ण द्वारा कर-कमलाङ्फकत होते हुए भी उस ज्ञान संदेश से गोर्पयों का आत्म कल्याण नहींहुआ। वास्तर्वक र्वषय का बिो न उद्वि को था और न गोर्पयों को। दोनों एक ही किा के र्वद्याथी थे। भगवान के आधिदैर्वक रूप की उपामसका गोर्पयूँ भी थीं और उद्वि भी थे।

उधौ तुर् भयो बोरे पाती ल ैकें आयो दौरे ।
योग कहा ुँसीख ुँूयहा ुँरोर् रोर् श्यार् है ।।

गोर्पयांसारा र्वश्व कृष्णमय देखती थीं। परन्द्तु मछली के समान भगवान के र्वयोग में तड़प रही थीं। कारण? भगवान के वास्तर्वक स्वरूप का बिो गोर्पयों को न था। अचछा, अब अनुभव करो-भगवान का वास्तर्वक स्वरूप क्या है? सुनो-देखो-नाम न लो-र्वकल्प मत करो-यह जो भास रहा है, यह भगवान का आधिभौततक रूप है? यह क्या है? ऐसा र्वकल्प न करो-र्वकल्प करते ही यह जगत बन जायेगा और जो लीलाारी रूप है वह भगवान का आधिदैर्वक रूप है-वह रज वीयात्मिक नहींहै, संकल्पजन्द्य है।

इच्छार्य नर र्वि संवारे । होइहुँ प्रगट ननकेत तुम्हारे ।।

(रा.बा.)

ब्राह्मण, संत, गौ, वेद की मयादिा रखनेके मलए, भगवान का यह आधिदैर्वक रूप प्रगट होता है। जो 'म'ैं आत्मा हूँ वही भगवान का आध्याप्त्मक रूप है। जो सव ि का सव ि है, जो सव ि में ओतप्रोत है। उद्वि और गोर्पयूँ दोनों भगवान के आधिदैर्वक स्वरूप के उपासक थे–दोनों का भगवान कृष्ण के प्रतत सखाभाव था। देखो-4था अध्याय गीता का-

अजोऽवप सननव्ययात्र्ा भूतानार्ीश्वरोऽवप सन् ्।
प्रकृनतं ंस्वार्धधष्ठाय सम्भवाम्यात्र्ायया ।।

(गीता 4-6)

म ैआत्मा अजन्म्ा, अर्वनाशी समस्त प्रार्णयों का ईश्वर यानी समस्त चराचर का शासक होते हुए भी (ईश्वर कहते हैं शासक को) अपनी प्रकृतत के आधश्रत होकर यानी अपनी माया करके जन्म् िारण करता हूँ, अवतार लेता हूँ। यहाूँपर कौन कह रहा है? 'म'ै आध्याप्मक स्वरूप भगवान आत्मा कह रहा हूँ। यहाूँपर आधिदैर्वक भगवान नहीं ंकह रहे हैं। कब जन्म् िारण करता हूँ- अवतार लेता हूँ?

यदा यदा दह धर्स्मय वलाननभवमनत भारत ।
अभ्युत्थानर्धर्स्मय तदात्मानंसृजाम्यहर् ्।।

(गीता 4-7)

जब-जब िम िकी ग्लातन होती है अथात्ि्िम िका लोप होता है और अिम िका उत्थान होता है, तब 'म'ै अपनेआप की सृपृष्ट करता हूँ यातन अवतार लेता हूँ। फकस प्रयोजन के मलए अवतार लेता हूँ? अवतार मुख्य तीन कायों के मलए लेता हूँ।

पररत्राणाय साधूनांववनिााय च दुषुकृतार् ्।
धर्समसंस्थापनाथायम सम्भवाभर् युगे युगे ।।

(गीता 4-8)

भगवान का अवतार, सिाुओंकी रिा के मलए, दुषुटों का र्वनाश करने के मलए और िम िकी स्थापना करने के मलए होता है। आधिदैर्वक शरीर िारण करते हैं। यही तीन काय िके मलए भगवान अवतार लेते हैं। भगवान के अवतार के चार प्रकार होते हैं। तनत्य, नैममर्त्क, आतुर और प्रादुभााव। भगवान के तनत्य अवतार संत हैं और उनका काय िम िकी स्थापना है। नैममर्त्क अवतार- जब भी आवश्यकता हो उपरोक्त तीनों कायों के तनमम होता है। राम, कृष्णाहदक का अवतार रावण, कुम्भकण,ि कंस, मशशुपाल, दन्द्तवक्र आहद दुषुटों का नाश, संतों की रिा और िम िकी स्थापना के तनमम हुआ है। प्रादुभााव- भगवान का अवतार उसे कहते ेहैं जैसे भगवान का नृमसंहांवतार हुआ है और आतुर अवतार है-हरर अवतार-गजेन्द्र मोि के मलए। संत संसार में केवल एक ही काम करते हैं, िम िकी स्थापना। स्वरूप का बोि कराना, जन-जन में सावभौम मसद्ांत का प्रचार करना, र्वश्व के कोने-कोनेमें इस भागवत िम िको फैलाना, यही उनका काम है। संत चाहे मार खा ले, परन्द्तु फकसी को मारता नहींहै। संत का अवतार केवल एक ही काम करनेके मलए है, जीव माि का कल्याण करना और संत स्वतंहोता है। अचछा, तो यह जो लीला र्वग्रह स्वरूप, आधिदैर्वक अवतार है, इसे िारण फकसनेफकया ? 'म'ै आत्मा ने। यहद 'म'ै को शरीर मानोगे तो यह पररप्च्छन्द्न हो जाएगा और 'म'ै अपररप्च्छन्द्न हूँ। उस 'म'ै ने ही लीला र्वग्रह रूप िारण फकया है, क्योंफक वस्तुतः ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्त को िारण करने ेवाला 'म'ै ही हूँ। 'म'ै ने ही िारण फकया है। यही

श्रीमद्भागवत रहस्य 223 भगवान का आध्याप्त्मक स्वरूप है, यही उनका वास्तर्वक स्वरूप है। फकसी समय सूयग्रिहण का अवसर आया।

भगवान श्रीकृष्ण द्वाररकापुरी से रुप्क्मणी, सत्यभामा इत्याहद सभी पटरातनयों सहहत कुरिुेि पिारे कारण फक कुरिुेि में सूयग्रिहण के अवसर पर स्नानाहदक कम ि का महत्व है। उिर गोकुल वृन्दावन के ग्वाल बाल, गोर्पयाँ, महारानी राधिका जी, र्वशाखा, लमलता आहद ब्रजबालाय,ें बाबा नंद एवं ंयशोदा इत्याहद भी कुरिुेि आये थे। अब यहा ूँपर जो संदेश उद्वि जी गोकुल में गोर्पयों को सुनाये थे ेऔर प्जससे उन्द्हें बोि नहींहुआ, वही ज्ञान संदेश जब भगवान के श्रीमुख से गोर्पयों को सुनने का अवसर ममला तो उनके हृदय की जो जीवग्रप्न्द्थ थी वह खुल गई और सबके सब उल्लास से कहनेलगीं-कृष्णोऽहमप्स्म-कृष्णोऽहमप्स्म म ैंकृष्ण आत्मा हूँ, म ैंकृष्ण आत्मा हूँ। तब उन सबके धचि को शांतत ममली। श्रीकृष्ण भगवान का संदेश यही है फक 'म'ैं सारे चराचर का अप्स्तत्व आत्मा हूँ और मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ नहीं।

सो अननय जाके अभस र्नत न टरइ हनुरं्त ।
र् ैंसेवक सचराचर रूप स्वाभर् भगवंत ।।

क्योंफक भगवान आत्मा ही मूल है। इसके त्रबना जाने, त्रबना अनुभव फकये, त्रबना सेवन फकये, कभी भी फकसी को धचि में शांतत न ममलेगी। इस चीज को िारण करने ेकी जरूरत है। प्रभास िेि में जब महायोगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण लीला समातत करने वाले थे तो उद्वि श्री चरणों के तनकट बैठकर प्राथनि ा करनेलगे हे प्रभो, मेरा आत्म कल्याण कैसे हो? प्जज्ञासा प्रगट कर रहे हैं। जीव का उद्िार चार कृपा से होता है-ईश्वर कृपा, सत् ्शास्ि कृपा, आत्म कृपा और गुरु कृपा। हा–ूँईश्वर की कृपा यही है फक तुम्हें नर तन ममला-

कबहुंक करर करुणा नर देही। देत ईि त्रबनु हेतु सनेही ।।

ईश्वर कृपा तो हो चुकी। अब शास्ि कृपा का स्वरूप सुनो-प्जतनेसत् ्शास्ि हैं, सत् ्शास्ि उिे कहतेहैं- प्जस शास्ि में फकसी का खंडन न हो, सत्य वस्तु जो भगवान आत्मा है उसका ही प्रततपादन हो। जैसे फक- श्रीमद् भागवत, गीता, रामायण, उपतनषद सत् ्शास्ि हैं। इन शास्िों में प्जसमें भी तुम्हारी तनष्ठा हो, आस्था हो, अटूट र्वश्वास हो उसे अपना इष्ट मानो। तनत्य तनयम से उसका पाठ करो, पढ़ो और चाहे एक ही श्लोक, मंि या चौपाई क्यों न पढ़ो परन्द्तु उस पर र्वचार करो, उसका मनन करो। खाली पाठ ही नहीं ंकरना चाहहए। भाव को समझने ेका प्रयत्न करो। शास्िों को उपास्य कहते हैं। आरािक (उपासक) र्वचार करके उनके भावों को समझने की कोमशश करें। इस तरह से जब शास्िों की आरािना करोगे तो शास्ि भगवान प्रसन्द्न होंगे। शास्िों की प्रसन्द्नता का लिण यही है फक शास्िों का गूढ़ से गूढ़ तत्व यानी छुपे हुए भाव तुम्हें लगने लगेंगे अथात् ि ्तुम्हारे हृदय में उन भावों का प्रकाश हो जायेगा, यही शास्ि कृपा है। तीसरी कृपा आत्मा कृपा है। हृदय में आत्मप्जज्ञासा का जागृत होना यानी 'म'ैं अपने स्वरूप आत्मा को जानूं। इस प्रकार की प्रबल प्जज्ञासा, मछली के समान तड़प जब पैदा होगी तभी आत्म तत्व का ज्ञान प्रातत करनेमें अधिकार होगा और कोई न कोई संत की कृपा द्वारा बोि हो जाएगा। पहहले बता चुके हैं फक प्जसको तीव्र भूख होगी वही भोजन का उिम अधिकारी है, वही भोजन के स्वाद की कदर करेगा। नाना प्रकार की र्वद्याओं का अध्ययन फकया, शास्िों की मशिा प्रातत फकया, शास्िों को पढ़ा, परन्द्तु पढ़कर भी

श्रीमद्भागवत रहस्य 224 यहद आत्म प्जज्ञासा नहीं ंजागृत हुई तो सब पढ़ाई व्यथ ि है। कोई भी र्वद्याथी कॉलेज या स्कूल से आकर यहद
उसका घर में ररह्वीजन नहीं ंकरता तो उसे कुछ भी र्वद्या हामसल नहीं ंहो सकती। पास, फेल में क्या है जब तक आत्म प्जज्ञासा तुममें बलवती नहीं ंहै तो सद्गुरु ममल भी जाय तब भी तुम्हारा कल्याण नहीं ंहोगा।

नायर्ात्रा प्रवचनेन लभ्यो न र्ेधया न बहुना श्रुतेन ।
यर्ेवैष वृणुते ेतेन लभ्यस्तस्यैष आत्रा ववृणुते स्वार् ्।।

(मुण्डको. 3-2-3)

अयंआत्मा प्रवचनेन न लभ्यः यह भगवान आत्मा जीवन पयन्द्ति वेदांत का प्रवचन सुनने ेसे नहीं ममलता। न बुद्धि द्वारा ग्रहण फकया जा सकता है। हृदय में जब तीव्र प्जज्ञासा होती है अथवा आत्म दशनि की तड़प होती है तभी भगवान आत्मा का अनुभव होता है।

नायर्ात्रा बलहीनेन लभ्यो न प्रर्ादिापसो वाप्यभलङ्गात् ्।
एतैरुपायैयतमतेयस्तु ववद्वांस्तस्यैष आत्रा ववितेेब्रह्मधार् ।।

(मुण्ड. 3-2-4)

अयंआत्मा बलहीनेन न लभ्यः आत्मप्जज्ञासा बल से हीन पुरुष को भगवान आत्मा की प्राप्तत नहीं होती। न प्रमाद से, न तप से, न मलंगं-अमलंगं िारण करने से, इन उपायों से दशनि नहींहोता। बप्ल्क आत्मानुभूतत में आत्मप्जज्ञासा ही परम सािन है।

यहद तुम्हारे हृदय में प्रबल आत्मप्जज्ञासा है तो गुरु तुम्हारा नाम, गांव पूछतेहुए तुम्हारे घर में स्वयं आकर तुम्हारा कल्याण कर जायगें। प्जन संतों से आत्म दशनि (तत्व का बोि) होता है उन गुरुओंका कोई खास भेश नहीं ंहै। अवस्था, वण,ि जातत नहींहै। न कोई खास जगह ही है जहाँफक ऐसे गुरु की प्राप्तत हो सके। प्जन्द्हें नारायण तत्व का बोि है वे ही तुम्हारा कल्याण करेंगे। हाँ-तुम्हारे हृदय में श्रद्िा, र्वश्वास होना चाहहये। हमारे हृदय में गुरु के प्रतत नारायण भाव होना जरूरी है। वह नारायण स्वरूप ही होता है। भैया! संसार सागर से तारने वाले नारायण ही होंगे। नर से क्या तरोगे जो फक स्वयंबोिवान नहींहै। कल्याण तो नारायण से ही होगा, नर से नहीं। नारायण ही नारायण को पायेगा जीव क्या नारायण तत्व का बोि प्रातत करेगा। टेटकू-खचेडू जीव को भगवान कहाँममलेगा। परमात्मा स्वयंवेद्य है। यहद जीव को परमात्मा से मभन्द्न मानते हो तो परमात्मा चेतन है और चेतन परमात्मा से मभन्द्न जीव जड़ होगा। यहद जीव परमात्मा से मभन्द्न है तो सत्य परमात्मा से मभन्द्न जीव असत्य होगा, तो असत्य कैसे सत्य को प्रातत कर सकता है। परमात्मा आनंद स्वरूप है। यहद जीव परमात्मा से मभन्द्न है तो आनंद स्वरूप परमात्मा से मभन्द्न जीव दुःख रूप होगा, तो दुःख कैसे आनंद को प्रातत कर सकता है। भगवान को भगवान ही जानेगा। भगवान को भगवान की प्रातत करेगा। यह बड़ा र्वधचि रहस्य है।

वयं न्त्वह र्हायोधगनभ्रर्नतः कर्वमत्रसुम ु।
त्वद्बातयमा तररष्यार्स्तावकैदुमस्तरं तर्: ।।48।।

आत्मदशी महात्मा गुरु का ममलना बड़ा कहठन है। सभी को सब समय नहीं ंममलते। वेदांत का प्रवचन अनुभवी ही कर सकता है। यह साहहत्य का र्वषय नहींहै। फकतने गहरे पानी में पहुँुचना पड़ता है, तब बोि कराया जाता है। हा-ूँर्वद्वान बड़े-े बड़े ेलचछेदार भाषण वेदांत पर दे सकता है और उन प्रकाण्ड र्वद्वानों के भाषण सुनने में अचछे लगतेहैं। कण िर्प्रय होते हैं, तुम्हारे मन में छाप बैठ जाती है फक प्रवचनकतिा बहुत र्वद्वान है, बड़ा पंडडत है, परन्द्तु र्वचारो तो मालूम होगा फक तुम्हें वस्तुतः कुछ नहींममला। गाठूँ में क्या बांि लाये ? अनुभवी, बोिवान, र्वद्वान केन्द्र से बोलता है और केन्द्र तक ही पहुँुचता है। अज्ञानी र्वद्वान कंठसे कहता है और तुम्हें कंठ तक ही पहुँुचाता है। इसमलए त्रबना श्रोत्रिय ब्रह्मतनष्ठ के हर एक की सामथ्य िनहींहै फक जो इस गोपनीय र्वषय को हृदय तक पहुँुचा सके। हाूँ जी! तो महाभाग उद्वि भगवान श्रीकृष्ण से प्जज्ञासा प्रगट करते हैं-

वयं न्त्वह र्हायोधगनभ्रर्नतः कर्वमर्सुम ु।
त्वद्बातयमा तररष्यार्स्तावकैदुमस्तरं तर्: ।।

(11 - 7 - 48)

इसमलए महात्माओंसे यही प्जज्ञासा अमभव्यक्त करनी चाहहए फक भगवन् ्! मेरा कल्याण कैसे हो? यहद तुम्हारी आत्म प्जज्ञासा प्रबल है और मेरे प्रतत श्रद्िा है तो तुम्हें आत्म तत्व का बोि अवश्य होगा और यहद मेरे प्रतत श्रद्िा नहींहै तो उसका आत्म कल्याण नहीं होगा। म ैंतुम्हें साविान फकये देता हूूँ फक तुम कहीं मत भटको। दुतुनया ूँका भैया हमें बड़ा तजुबािहै। भगवान के प्जस नाम में श्रद्िा हो उस नाम का अखण्ड जप करो और भीतर से यह भावना करो फक हमारा आत्म कल्याण हो। भगवान के नाम का अखण्ड स्मरण कल्याणकारी है-मत भटको, हमारा कहना मानो, यही सीख है। हमनेकोई मजहब, जमात, पंथ नहीं ंछोड़ा। सबका हमें अनुभव है, कही मत जाओ और यहद हमारे प्रतत तुम्हारी श्रद्िा है, र्वश्वास है, आये हो यहा,ूँ तो आत्म तत्व लख के जाओ, अनुभव करके जाओ। भैया ! संत नारायण होता है। वही तुम्हारा कल्याण करेगा प्जसने स्वस्वरूप भगवान परम तत्व को प्रातत फकया है। आत्म कल्याण की भावना रख कर कीतिन, ध्यान करो तो तुम्हें स्वयंतत्व का अनुभव हो जायेगा। परन्द्तु यहद आत्म कल्याण की भावना नहीं ंतो वहींरुके रहोगे। जब तुम फकसी स्टेशन पर जाते हो तो जो गाड़ी सामने होती है उसी में िमाके कूद नहीं पड़ते। पहहले पता लगाते हो फक यह गाड़ी कहाूँ जायेगी? कहा-ूँकहाूँ रुकेगी? इसकी मंप्जल कहाूँ तक है और तब अपनेगन्द्तव्य स्थान को जाते हो। यही बात अध्यात्म में भी है। सािक (मुसाफफर) को देखा देखी नहींकरनी चाहहए। संत, महात्मा, र्वद्वान सािन रूपी गाड़ी कहा ूँसे कहा ूँतक पहुँुचायेगी- पता लगा लो-नहीं ंतो मसद्ि बिनेघर में बैठो, कुछ नहीं ममलनेका है। अभी तक कुछ नहीं ममला-अब करें, यह र्वकल्प मत करो। प्रथम आत्म कल्याण की भावना जागृत करो। फफर जो तुम्हें वहाूँ तक पहुँुचा सके उसकी शरण में जाओ।

एवंववज्ञावपतो राजनभगवानदेवकीसुतुः ।
एकान्नतनंवप्रयं ंभृतृयरुदुधवं सभाषत ।।

(श्रीमद् भागवत 11-6-50)

भगवान श्रीकृष्ण उद्वि की इस प्रबल आत्म कल्याण की प्जज्ञासा को देखकर अपनेअनन्द्य पे्रमी सखा

उद्वि से कहते हैं-

यदात्थ रृां ंर्हाभाग तन्चकीवषतमरे्व रे् ।
ब्रह्मा भवो लोकपालाः स्ववासंम ंरे्ऽभभकाङ्क्षषणः ।।

(11-7-1)

भैया उद्वि । तुमको म ैंयही कहता हूूँ फक यद्यर्प म ैंब्राह्मणों का अमभशाप मेटनेमें समथ िहूूँ, परन्द्तु प्जसके मलए यह हदव्य लीला र्वग्रह स्वरूप मनैं िारण फकया है वह सब काय िपूण िहो चुका। देवताओं को अब कोई कष्ट नहीं रहा। उनका अभीष्ट कल्याण हुआ और दुष्ुटों का र्वनाश हो चुका। ब्रह्माहदक देवता अब आकर प्राथनिा कर गये फक प्रभो। सरकारी काय िपूण िहो चुका है और अब लीला समातत हो। अब यदुवुंमशयों का आपस में लड़कर र्वनाश हो जाएगा कोई न बचेगा। हा,ूँ सुनो-यदुवुंशी प्रभाससि को जायगें और वहाूँब्राह्मणों के अमभशाप के कारण उनका संहार हो जाने के बाद म ैंभी अपनी लीला समातत कर दूूँगा। उसी िण से कमलयुग आ जाएगा। लीला समाप्तत के बाद, मेरे संकल्प से तनममति जो द्वाररकापुरी है वह सातवें हदन समुर में डूब जायेगी, जलमग्न हो जायेगी। तुमको यही आदेश है तुम भी द्वाररकापुरी छोड़ देना।

र्या ननष्पाददतं ंह्यत्र देवकायर्मिषतः ।
यदथर्मवतीणोऽहर्ंनि ब्रह्रणाधथतमः ।।

(11-7-2)

त्वंतुसवं ंपररत्यज्ञय स्नेहं स्वजनबनधुषु ।
य्र्यावेश्य र्नः सम्यक् सर्दृन्ववचरस्व गार् ्।।

(11 - 7 - 6)

स्वजन बन्द्िुषु स्नेहं पररत्यज्य, सम्यक् प्रकारणे मनः मतय आत्मतन आवेश्य, समदृग्, ् भूत्वा, गाम् ् पृथ्ूवी र्वचरस्व। स्वजन पररवार के प्रतत सवस्नेह (मोह) का पररत्याग कर, मन को मुझ आत्मा में सम्यक् प्रकार से प्रवेश कर, समदशी होकर इस पृथ्ूवी मंडल पर र्वचरण करो, यही मेरी आज्ञा है। स्वजन का मतलब होता है- अपना बनाया हुआ, अपना माना हुआ, क्योंफक अपनी बनाई हुई चीज में ही स्नेह (मोह) होता है। स्वजन भाव,

कुटुम्ब भाव तुम्हारा बनाया हुआ है। तुम ही बनाकर उसे संसार माने हुए हो। अब इस पर सुनो- अनुभव करो-सृपूष्ट दो प्रकार की होती है-एक जीव सृपूष्ट और दूसूरी ईश्वर सृपूष्ट। इनमें भेद क्या है? हर एक की तनगाह में (दृष्ट में) जो पदाथ िएक ही भाव से देखा जाय उसका नाम है ईश्वर सृपूष्ट । उदाहरण- अब दोनों लिण बतलाते ेहैं- जीव सृपूष्ट में मभन्द्न-मभन्द्न भाव जैसे फक म ैंज्ञानी हूँ, म ैंअज्ञानी हूँ, पापी हूँ, पुण्यी हूँ, स्ीी हूँ, पुरुष हूँ, पररतछन्द्न हूँ, जीने-मरने वाला हूँ, बद्िहैं, मुक्त हूँ, अपनेको कुछ का कुछ मान लेना, म–ैंमेरा, तू-तेरा, यही जीव सृपूष्ट है और ईश्वर सृपूष्ट-इस मान्द्यता का जहा ूँअभाव हो, वही ईश्वर सृपूष्ट है। देखो-अभी कोई शरीर यहद अपररधचत स्थान में चला जाय तो वहाूँके लोग मसफि यही मानेंगे फक यह मनुष्य है। और मनुष्य जातत में पुरुष है, तो यही ईश्वर जगत है। वही शरीर जब घर में आता है तो स्ीी उसे पतत कहती है, पुि उसे र्पता कहता है, माता उसे पुि कहती है, भाई उसे भाई कहता है। तो यह साढ़े तीन हाथ का मौजा मुश्तरकः है। परन्द्तुसभी अलग-अलग देख रहे हैं। यह शरीर कुछ बदला नहींहै, वही है परन्द्तु इस शरीर के फकतने हहस्सेदार हैं, यहद स्ीी, पुि, कुटुम्ब सभी अपना-अपना हहस्सा बूँटवारा करें तो इस शरीर की हड्डी भी न बचेगी। पैर फकसी को, तो मसर फकसी को, कुछ न रहेगा यही जीव सृपूष्ट है। आत्म तत्व का बोि हो जाने पर जीव सृपूष्ट का अभाव हो जाता है। यह संसार नहीं ंहै, जी, हा–ूँसब वासुदेव है, सब नारायण है, इसमें जो र्वकल्प फकया वही जीव सृपूष्ट है और बोि का फल है जीव सृपूष्ट का नाश। ईश्वर सृपूष्ट में फकंधचन्द्माि भी दु:ख नहीं ंहै। इसमलये ज्ञान की जरूरत है। स्ीी का पतत स्ीी के पास है, बहहन का भाई बहहन के पास है-जो प्जसकी सृपूष्ट है वह उसी के पास है-यहा ूँकुछ भी नहीं। कभी-कभी हमें तनमंिण में ले जाते हैं और वहाूँपर अपनेपररवार का फोटो हमें लाकर हदखातेहैं। कहते ेहैं-स्वामी जी ! यह मेरे र्पता का फोटो है यहद वह ही है तो दुतुनयाूँमें सभी को यह र्पता हदखाई देता। तुम जो तनगेहटव लेते यातन फोटो खींचते हो यह र्वकल्प का फोटो है या प्रतीतत का? त्रबना डंडा उठाये नहीं ंबनेगा (पू. श्री स्वामी जी अपना डण्डा उठाकर कहते हैं) डण्डा है-लकड़ी पर डण्डे ेका र्वकल्प है, अचछा-अब इसका फोटो लोगे तो प्रतीतत का फोटो आयेगा फक र्वकल्प का? देखो कैसी पोल खुलती है यही संसार का हाल है। र्वकल्प तो तुम्हारे पास है-तुम उसे डंडा कहते हो- फोटो वस्तु (लकड़ी) का है न डंडा का। तुम्हारी पत्नी के मलए तुम पतत भले हो, परन्द्तु शरीर में पतत नहींहै। वह पतत-पत्नी भाव मानने े वाले के पास है। तो फोटो र्वकल्प का नहीं आता। यह तुम्हें पहले ही बताया जा चुका है फक-

ब्दिज्ञानानुपाती वस्तुिनयो ववकल्पः ।

(योग दशनि)

शधद तो सुनाई पड़े,े परन्द्तु वस्तु का जहा ूँअभाव हो उसे र्वकल्प कहते ेहैं। र्वकल्प का फोटो, तनगेहटव नहीं ंहोता। हा,ूँ उस प्रतीतत का फोटो होता है। मेरी माता, मेरा र्पता, मेरी घरवाली ऐसा कहते हो-बस, इसी का नाम संसार है, यही जीव सृपूष्ट है। प्रतीतत को भगवान कहते ेहैं। यह ईश्वर सृपूष्ट है। इसमलए तुम अपनेबनाये हुए संसार को त्याग दो-उसके मोह का त्याग कर दो-जीव सृपूष्ट दु:ख रूप है। सुख-दु:ख, पुण्य-पाप, िमि–अिमि,ि जीना-मरना, यह सब जीव देश में है, ईश्वर देश में नहीं।

ईिावास्यभर्द् सवं ंयन्त्कछच जगत्यां जगत् ्।

तेन त्यक्तेन भुछुजीथाः र्ा गृधः कस्यन्स्वद्धनर् ्।।

(ईशा-1)

यह यजुवेद के चालीसवें अध्याय का पहला मंहै-जो कुछ भी यह स्थूल, सूक्ष्म है, सब ईश्वर है। जगती में जो कुछ जगत हदखाई दे रहा है-तेन त्येक्तेन उसका त्याग करके क्या करो? भुञ्जीथाः भोग करो। फफर कहते ेहैं- मा गृिः कस्यप्स्वद्निम्–फकसी के िन को ग्रहण मत करो-यहा ूँपर िन का भाव िन नहींहै। अरे! िनम् ्का अथ ि हुआ अथम्ि् फकसी के अथ िको ग्रहण मत करो। जगत भाव को त्याग दो। चलो इसकी व्याख्या करें। यह जो सामने वासफकट पहने बैठा है, वह जगती (भास) है। अचछा- अब इसमें नाम, रूप की कल्पना करो-बाबा बैठे हैं-यह जगत बन गया। अरे यार ! र्वकल्प ही तो जगत है। हा–ूँयही जगती में जगत है। भास रहा है जगती और जहा ूँकुछ माना नहीं ंफक वह जगत बन गया। जगत का व्याख्यान होता है, जगती का नहीं। तो फकसी के अथ िको ग्रहण मत करो। जैसा है वैसा ही रहने ेदो-अथ िलगाना ही जगत है। यह अमुक वस्तुहै, यही जगत है और इसी को जीव सृपूष्ट भी कहते ेहैं। अब तुम मानो या न मानो अमुक का फोटो नहीं ंआता। र्वकल्प ही तो इन्द्रजाल है।

सो नर इनद्रजाल नदहं ंभूला। जा पर होइ सो नट अनुकूला ।।

(रा.उ.का.)

हदल्ली में हमनेफकसी फोटोग्राफर से पूछा- भाई। यह तो बताओ तुम सरकारी प्ेरेस में हो, फोटो लेते रहते हो-जब जादूगूर लड़की का मसर काट देता है और फफर जोड़ देता है तो क्या उसका फोटो तुमने ेकभी मलया है? तो उसनेकहा स्वामीजी। हमनेफोटो लेनेका तो बहुतेरा प्रयत्न फकया है, परन्द्तु फोटो नहींआता। तो क्यों नहीं ंआता? तो उसनेकहा-हम इसे नहींबता सकते। श्री स्वामीजी कहते हैं- भाई ! समझो, जब हो तब न आये। अरे! कुछ हुआ ही नहीं तो फोटो क्या आये। संसार सुन भर के कहते हो, परन्द्तु वस्तुतः इसके अंदर कुछ नहींहै, वस्तु शून्द्य है। तथ्य तो है ही नहीं। अपने स्वरूप के अनुभव (बोि) का यही फल है फक जीव जगत का सवदिा के मलये नाश हो जाय। जगत में मेरा शिु–मिि, भाई-बहन, पतत-पत्नी, माूँ-बाप नाना श्रृंखला लगी हुई है। परन्द्तु है कुछ नहीं। नाना र्वकल्पों का माया जाल त्रबछा हुआ है, नानात्व लगा हुआ है, यही संसार है। इसी का पररत्याग करो-इसी का नाम भव सागर है। त्रबना बोि के जीव जगत का र्वनाश नहींहोता। बोि होने पर ही जगत का भ्रम का नाश होता है।

जगत का भ्रम अकारण ही हो रहा है, है कुछ नहीं। जहाूँपर बोिवान जगती (भास) को नारायण आत्मा 'म' ैं हूूँ, ऐसा जानता है और अज्ञानी उस पर र्वकल्प करके जगत मानता है। इतना ही भेद है। बोि के बाद ही नारायण भाव होता है, वासनाओं का अंत होता है। 'म' ैं आत्मा हूूँ, यही ज्ञान है। हा–ूँछोटे बचचे घर-घरौंदा का खेल खेलते हैं। छिीसगढ़ में इसको घर-घुंहदया का खेल कहते ेहैं और यहा ूँपर घर-घरौंदा कहते ेहैं। बचचेघर के बाहर मैदान में फकसी जगह बालू, ममट्टी आहद से घर बनातेहैं। कभी ममट्टी न ममली तो लकीर खींचकर घर बनातेहैं। त्रबप्ल्डंगं तैयार करते हैं। नहाने,े खाने, रसोई, सोने, बैठनेआहद का कमरा बनाते हैं। मेहमान यहाूँ ठहरेंगे-रसोई यहा ूँबनेगी, यहा ूँपरछी (बराण्डा) आहद। है कुछ नहीं, परन्द्तु काल्पतनक मकान बना डालते हैं। वहाूँपर शादी-धयाह भी करते हैं।

पिे आहद की पूड़ी, कचौड़ी भी बनातेहैं और खाते ेभी हैं। परन्द्तु उससे उनकी भूख नहीं ंममटती। हा ूँभाई! पिों के काल्पतनक भोजन करनेसे क्या पेट भरेगा? बचचेखूब मशगूल होकर खेलते हैं। उन्द्हें खेलते समय घर की याद नहीं ंरहती। यहद कोई उिर उनके काल्पतनक मकान से तनकल जाये तो देखो कैसा हो-हल्ला मचाते हैं। बस, सवनिाश हो गया समझकर रोते हैं। जब खेलते-खेलते ज्यादा समय हो जाता है तो फफर उन्द्हें भूख लगती है और तब उन्द्हें घर की याद आती है। फफर प्जस मकान को इतनी मेहनत से हाथ से बनाये रहतेहैं, उसे ही घर जानेके समय, पैरों से रौंद डालतेहैं-घर को ममटा देते हैं। उसमें उनका ततनक भी मोह नहींहोता। ब्रजवासी बालकों से हमने एक मशिा ली है। जब ब्रजवासी बालक घर को त्रबगाड़तेहैं तो मंकिहते हैं-

र्नुवा र्र गयो, खेल त्रबगड़ गयो। र्नुवा र्र गयो खेल त्रबगड़ गयो ।।

यह बरसाने में हमनेसुना है। तो हमनेउनको गुरु बनाया। अरे ! मनुवा के रहतेतक ही तो संसार रूपी खेल है और मनुवा मर गया तो खेल त्रबगड़ना ही है। स्िी, पिु, शिु, ु ममि, आलीशान मकान इत्याहद र्वकल्प रूप खेल बनाकर खेल रहा है और परमात्मा रूपी घर भूल गया है। बाद में जब याद आती है, प्जज्ञासा पैदा होती है तब वह संत की शरण में जाता है। तब उसे भगवान आत्मा का बोि होता है। अनाहदकाल का वैकप्ल्पक मकान प्जसे वह स्वयं माना है-मन करके जो बना हुआ है, उसका नाश हो जाता है। भगवान उद्िव को उपदेश देते हैं फक इस र्वकल्प का अभाव कर दो।

त्वंतुसवं ंपररत्यज्य स्नेहं स्वजनबन्धुषु ।
भय्यावेश्य र्नः सम्यक् सर्दृन्ववचरस्व गार् ्।।

(11 - 7 - 6)

समदशी बनकर र्वचरण करो-समदशी का क्या मतलब है? सम अथात्िसब में बराबर भाव। आत्म-जगत में ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्ति सब बराबर हैं, सम हैं, कोई ऊूँचा-नीचा नहीं ंहै। जो इस तरह से सभी में समभाव रखता है, कहीं भी भेदभाव नहींहै-

यो र्ां ंपश्यनत सवत्रम सवं ंच र्नय पश्यनत ।
तस्याहं न प्रणश्याभर् स च र्े न प्रणश्यनत ।।

(गीता 6-30)

जो मुझ आत्मा को सब में देखता है और सबको मुझ आत्मा में देखता है, वह न मुझसे मभन्द्न है और न म ैं उससे मभन्द्न हूूँ। परन्द्तु हा–ूँयह भाव त्रबना अपनेस्वरूप आत्मा के बोि हुए नहीं ंआता। सभी शास्ि वेद, पुराण यही भाव व्यक्त करते हैं। इसी समदशी भाव को ग्रहण करके पृथ्वी पर र्वचरण करो। वेद, शास्ि संत, महात्मा- वैराग्यवान व्यप्क्त को जब तक वह बोि प्राप्त नहीं ंकर लेता तब तक उसे पृथ्वी पर स्वतंि रूप से र्वचरण करने

की आज्ञा नहींदेते। कारण फक प्जन-प्जन वंषयों से उसे वैराग्य हुआ है उन्द्हींवंषयों का उसे दशनि होगा। तो ऐसा न हो फक वह पुनः संसार में फूँस जाय और उसका वैराग्य मंद पड़ जाये। यहद ऐसा हुआ तो जहाँसे वह चला था वहीं वापस आ जाएगा। कारण फक अभी समदशी नहीं ंहुआ है। आत्मबिो नहीं हुआ है। इस पररप्स्थतत में यहद वंचरण करेगा तो कहीं बंठिार न हो जाय-यह आशंका लगी रहेगी। यहद वंचरण करे भी तो स्वतंत्ररूप से नहीं, फकसी संत, महान पुरुष की सेवा में रहकर उसके साथ वंचरण करे। नहीं ंतो एकांत में गंगा के फकनारे रहकर खुष्टन्द्याय के समान वैराग्य को पकावे और फकसी संत की शरण में होकर बिो प्रातत करे।

त्वंतुसवं ंपररत्यझय स्नेहं स्वजनबनधुषु ।
य्यावेश्य नंः सम्यक् सदृग् ्ववचरस्व गार् ्।।

(11 - 7 - 6)

यददद नंसा वाचा चषुथ्यां ंश्रवणाददभभः ।
नश्वरं गृह्यर्राणं ंच ववद्धध र्ायानोंर्यर् ्।।

(11 - 7 - 7)

भगवान उद्वि को कहते हैं- भैया! यहददं मनसा वाचा चिुभ्याम् ्श्रवणाहदमभः मन, वाणी, नेि, श्रवणेप्न्द्रय एवंअन्द्य इप्न्द्रयों द्वारा जो कुछ भी ग्रहण फकया जाता है, वह सब नश्वर है। वंषय ग्राह्य है और इप्न्द्रयाँग्राहक हैं। वंषय पाचूँ हैं- शधद, स्पश,ि रूप, रस और गंि मन जहाँतक मनन करे, बुद्धि जहा ंँतक तनश्चय करे, धचि जहाँ तक धचंतंन करे, वाणी जहाँ तक कथन करे, नेि जहाँ तक देखे, कान जहाँ तक सुने इत्याहद सबके सब नश्वर हैं, मनोमय यानी मनरधचत है।

यददद नंसा वाचा चषुथ्यां ंश्रवणाददभभः ।
नश्वरं गृह्यर्राणं ंच ववद्धध र्ायानोंर्यर् ्।।

(11-7-7)

अब यहाँ पर उद्वि का भगवान से प्रश्न होता है-भगवन्!् फकसी समय आप सनक, सनन्द्दन, सनातन, सनत कुमारों को जो (हंस) रूप िारण करके तत्व का उपदेश हदये हैं, उस रूप और उस तत्व ज्ञान का मुझे ेउपदेश दीप्जये वह प्रसंग मुझे ेसमझाइए। उसे जाननेकी मेरी प्रबल इचछा है-

यदा त्वंसनकाददभ्यो येन रूपेण किव ।
योगर्ाददष्टवानेतदूपूभर्छ्ाभर् वेददतुर् ्।।

(11 - 13 - 15)

श्री भगवानुवाच -

पुत्रा दहरण्यगभस्मय र्ानसाः सनकादयः ।

पप्रछुः वपतरं सूक्ष्मां योगस्यैकान्नतकी गनतर् ्।।

(11 - 13 - 16)

हे उद्वि ! हहरण्यगभ िजो भगवान ब्रह्माजी हैं उनके मानमसक पुि सनक, सनन्दन, सनातन, सनत कुमारों नेफकसी समय अपनेर्पता ब्रह्माजी के पास जाकर सूक्ष्म जो योग की अंततम गतत है, उसे पूछा। अथिात् ्आत्मानुभूतत क्या है और उसे कैसे प्रातत करना चाहहये? इस पर भगवान कहतेहैं-

यह श्रीमद् भागवत के एकादश स्कन्द्का 13 वाँूअध्याय है-

गुणेष्वाववतेचेतो गुणाश्चेतभस च प्रभो ।

कथर्नयोनयसंत्यागो र्ुर्ुषोरनततनततीषोः ।।

(11-13-17)

गुणेष्वार्वशते ेचेतो गुणश्येतमस च प्रभो-इन्द्रयों के जो र्वषय हैं, उन्द्हें गुण कहते ेहैं- हे प्रभो! शधद, स्पश,ि रूप, रस, गंि इन पाचोंू र्वषयों का धचि में प्रवेश होता है अथवा इन र्वषयों में धचि प्रवेश करता है और मोि की इचछा रखने वाला मुमुिधचि और र्वषय इन दोनों को अलग-अलग कैसे करें ? यह हंसोपाख्यान् ्है। मौमलक प्रश्न है- श्रीभगवानुवाच -

एवं पृष्ठो र्हदेवः स्वयंम्भूभूतमभावनः ।

ध्यायर्ानः प्रश्नबीजं ंनाभ्यपद्यत कर्धमीः ।।

(11-13-18)

सनकाहदकों के इस प्रकार पूछने ेपर स्वयंभू जो भगवान ब्रह्माजी हैं उन्द्होंनेप्रश्नबीज यानी प्रश्नोिर देने के मलए ध्यान फकया (कोमशश की) परन्द्तु प्रश्न जहटल होने ेके कारण उिर देने में समथ िनहीं हुए। कमजाल में फैसी हुई बुद्धि के कारण ब्रह्माजी इस आत्मपरक प्रश्न का उिर नहींदे सके। इससे यह मसद्होता है फक कमकांडी की बुद्धि आत्मतत्व का र्वचार करने ेमें समथ िनहीं ंहोती क्योंफक कमकांडी देहात्मवादी होता है। यह साढ़े तीन हाथ के शरीर को ही अपना स्वरूप मानकर कम िकरता है। उसकी बुद्धि स्थूल होती है, क्योंफक यह तनर्वववाद मसद्िांत है जो जैसा अपनेआपको मानता है वैसी ही उसकी बुद्धि, उसके संकल्प एवं उसके काय िभी होतेहैं। इसमलए प्जतने भी कमकांडी हैं सब अध्यात्म से दूरू रहतेहैं।

उन्द्हें जूड़ी आ जाती है, भागतेहैं। जब र्पतामह ब्रह्मा (र्विाता सृपृष्टकता)ि की यह दशा है तो फफर संसारी कमकिाण्डयों की तो बात ही क्या है। इसी प्रकार का प्रश्न प्जज्ञासुराजा प्राचीनबहह िने भगवान नारद से फकया था। उस हदन भी कहा गया था फक कमकिाण्डी-देहात्मवादी होता है, उपासक-जीववादी और ज्ञानी-ब्रह्मवादी होता है। ॐमशव ! अध्यात्म में ये तीनों वाद छूट जाते हैं- न कम,ि न उपासना, न ज्ञान, कुछ नहीं ंरहता। ये तीनों बीमाररयाँू यानी अध्यास साफ हो जाते हैं। भैया! यह बड़ा आरोग्य देश है।

ाकि, र्ोह, भय, हरष, ददवस, ननभि, दि, काल, जहं नाहीं।

यही आत्मदेश का पररचय है-यह गोस्वामी जी की र्वनय पत्रिका है।

ाकि, र्ोह, भय, हरष, ददवस, ननभि, दि, काल, जहं नाहीं।
तुलभसदास अस दिाहीन संयि ननरूलम न जाहीं ।। रघुपनत भगनत... ।।

हा–ँू ऐसा सुंदर देश है फक कोई वादी नहीं। न कोई वादी है, न कोई प्रततवादी। वकीलों को देखकर याद आ गई, भाई। यह र्वकल्प उठा। ऐसा सुंदर देश है-कमकिाण्डी अपने को साढ़े तीन हाथ का देह मानता है। देह न मानेगा तो कम िफकससे करेगा, कैसे करेगा? इसी बुद्धि के कारण तो ब्रह्मा जी चकवर में पड़ गये, उनका मन र्खन्द्न हो गया और इिर सनकाहदकों को अमभमान हो गया। ब्रह्माजी के चारों मुख से चारों वेद-ऋग्,् यजुः, साम, अथव ितनकले हैं। परन्द्तु कमासक्ति होने के कारण ब्रह्माजी सनतकुमारों के प्रश्न का समािान न कर सके। तो उनका धचि र्वभुधि हो गया एवं लप्ज्जत हो गये और उिर सनकाहदकों को अमभमान हो गया फक हमारे र्पता ब्रह्माजी भी हमार प्रश्न का उिर नहीं दे सके।

एवंपृषूटो महादेवः स्वयंम्भूभूतिभावनः ।
ध्यायमानः प्रश्नबीजं ंनाभ्यपद्यत कर्मीः ।।

(11 - 13 - 18)

स र्ार्धचनतयद्देवः प्रश्नपारनततीषयमा ।
तस्याहं हंसरूपेण सकािर्गरं् तदा ।।

(11 - 13 - 19)

उस समय जब ब्रह्मा जी को कुछ नहीं सूझा तो उन्द्होंने मुझ भगवान आत्मा का धचंतंन फकया। भगवान का धचंतंन क्या है? क्या धचंतंन फकया? देखो जीवन में जब कभी गंभीर प्रश्न या कोई जहटल समस्या आ जाती है, उसका समािान नहीं ंहोता फक क्या उिर देना है तो तुम तनःसंकल्प हो जाते हो। यह तनःसंकल्प होना ही भगवान आत्मा का धचंतंन है। रात-हदन यार! सब के सब इसी में रहते हो, सारा प्रपंच करते हो, गंभीरता से सोचते हो। जहाँू मन को समेटकर तनःसंकल्प प्स्थतत में प्स्थत हुए फक फट से उिर तनकल आता है यही भगवान आत्मा का धचंतंन

है, स्मरण है। सभी रात-हदन इसी प्स्थतत में अपना व्यवहार पालन करते हैं। उस समय धचि को तनःसंकल्प करने के मलए कौन-सा सािन (अभ्यास) करते हो? जहा ँजब इचछा हुई मन को तनःसंकल्प कर लेते हो। कारण? धचि पर तुम्हारा पूण ि अधिकार है। इतना आधिपत्य है फक प्जस समय चाहो उसी समय तनःसंकल्प कर लेते हो। मा ब्रूहहं ं दीनंवचः। शास्त्रों का यही उपदेश है। फकसी से हदन वचन न बोलो। इस गरीबी को, हृदय को सुरता को तनकाल दो। जब चाहते हो घंटों तनःसंकल्प रहतेहो, फकसी सािन की जरूरत नहीं पड़ती। हा–ँवैसे तुम तनःसंकल्प होने के मलए सािन जगत में दौड़ लगाओ पर ममलेगा कुछ नहीं-यही मस्ती है। अरे। जहा ँबैठे हो, वहींहम बता रहे हैं। तुम्हें उठाकर कहीं अन्यि नहींसरका रहे हैं। यही प्राप्तत की प्राप्तत है। सब मस्त हैं। चाहे कोई र्वद्वान हो या अपढ़ हो, इसी मस्ती में सारा संसार मस्त है।

जो बतलावै साधना आप अधूरा होय ।
भर्लत भर्लावै रार् सों सतगुरु कदहये सोय ।।

कोई नई चीज नहीं ंबतला रहे हैं-भैया। तुम अपनेही घर में हो, घंटों तनःसंकल्प रहते हो। फकताब पढ़ रहे हो-कानून पढ़ रहे हो, फकसी र्वचार में मग्न हो, तो फकतना तनःसंकल्प रहते हो, अगर धचि पर तुम्हारा आधिपत्य न हो, कमाण्ड न हो तो कैसे यह हो सकता है। यारों! मसफि इसको समझने की जरूरत है-इप्न्द्रयों पर, धचि पर तुम्हारा पूण ि आधिपत्य है।

यद्भायात् ्वानत वातोऽयंसूयूस्मतपनत यद्भयात् ्।
वषतमीनद्रो दहत्यन्वनरॄत्मयुशुचरनत यभयात् ्।।
भयादस्यान्वनस्तपनत भयिापनत सूयूःम ।
भयाददनद्रश्च वायुश्च रॄतॄयुधुावमनत पछचर्ः ।।

(कठोपतनषद्)

प्जसके भय से सूय ितपता है, प्जसके भय से वायु बहती है, प्जसके भय से इन्द्र वषिाकरता है, प्जसके भय से अप्न काष्ठ को दहन करती है। प्जसके भय से मृतूयुचराचर को ग्रसता है, वह आत्मा 'म' ैं हूँ। मेरा शासन तो सारे र्वश्व में है। 'म' ैं अपनी हस्ती खींच लूं तो सूय िभी नहीं रहेगा। यही मुझ भगवान आत्मा की महानता है। जी हा!ँ हर वक्त तुम तनःसंकोच हो, बस इसे ही समझना है। वैसे तो तनःसंकोच अवस्था में ही त्रबना प्रयास के स्वभावतः समस्त व्यवहार रात-हदन हो रहे हैं। त्रबना फकसी सािन के तनः संकल्पता मसद्ि है। यहद सािन के द्वारा तनःसंकल्पता मसद्ि करना चाहो तो यह संभव नहीं है कारण फक सािन का फल सदैव अतनत्य होता है, तनत्य नहीं होता। िर्णक ही होगा, धचर (स्थाई) नहीं। जब तक सािन करते रहोगे तभी तक तनःसंकल्पता रहेगी। जब तक सािन जगत में रहतेहो तभी तक तनःसंकल्पता भामसत होती है, परन्द्तु जहा ँबाहर आये तो फफर मन संकल्प-र्वकल्प करनेलगता है। इस अपनी महहमा को तयारे ! भूलना नहीं। अपनी महहमा को न जानकर ही तुम सािन की अपेिा रखते हो। सािन द्वारा धचि को तनःसंकल्प करना ही अपनी महहमा का भूलना है। तनःसंकल्प तो हो

ही। र्वषयों की अनुभूतत तनःसंकल्प होकर ही करते हो। अभी यहा ूँकथा सुन रहे हो तो तनःसंकल्प अवस्था में सुन रहे हो या संकल्प-र्वकल्प की अवस्था में? तनःसंकल्प अवस्था में। सारा र्वश्व तनःसंकल्प है। इस महहमा से प्जस समय अलग होता है, इस भगवत् ्महहमा से जब अलग होकर र्वकल्प करता है, ऐसी कल्पना करता है फक धचि को सिान द्वारा तनःसंकल्प करना है, तब फफर प्राणायाम, समाधि का अभ्यास करता है। परन्द्तु बार-बार सिान करता है और फफर भी सिान द्वारा िर्णक तनःसंकल्पता ही हाथ लगती है। इसमलए मुक्ता बार-बार यही कहता है फक भैया ! इसके मलए कुछ नहींकरना। कुछ फकया नहीं फक बंठिाार हो गया, कुछ ममलने का नहीं। यह करने की चीज नहीं है, क्योंफक जो चीज कुछ सिान करके प्रातत की जाती है, उसका कालांतर में नाश हो जाता है, क्योंफक सिान का फल अतनत्य होता है। जो स्वयं मसद् है, वह सिान से क्या प्रातत होगा? बस ! यह असाध्य रोग है।

तो कहने ेका मतलब यह है फक ब्रह्मा जी से सनकाहदकों के प्रश्न का उिर देनेके मलए मुझ भगवान आत्मा का ध्यान फकया वह इसी तनःसंकल्प प्स्थतत का पयायि है। अरे यार! मुझ भगवान आत्मा के ध्यान में संकल्प- र्वकल्प कहाूँ-तभी तो भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में अजुनि से कहा है फक- तस्मात् ्सवेषु ुकालेषु मामनुस्मर युध्य च। सविकाल में मेरा स्मरण भी कर और युद् भी कर। कन्द्हैया जैसा टेढ़ा है, वैसा ही उसका वचन भी टेढ़ा है। युद् भी कर और स्मरण भी कर। युद् सरीखे भीषण समय में अपनी रिा करना, सारथी की रिा करना, घोड़ों की रिा करना, और सन्द्मुख शिु को मारना इत्याहद फकतनी भारी प्जम्मेदारी सैतनक पर होती है और भगवान कहते ेहैं फक युद् कि और स्मरण भी कर। तो वह कौन-सा स्मरण है, प्जसमें फक युद् भी होता रहे और स्मरण भी? यहद धचि में संकल्प-र्वकल्प होता रहे तो फफर युद् और स्मरण दोनों नहीं ंहोगा। इसमलए तनःसंकल्प अवस्था में ही युद् और स्मरण दोनों काय िहो सकतेहैं। जब ब्रह्मा जी ने मुझ आत्मा का ध्यान फकया तो म ैंहंसरूप में प्रगट हो गया।

षष्ठर् ददवस : दूसूरी बेला

दोपहर 2.00 से 4.00 बजे तक

दृष्ट्वा र्ां ंच उपव्रझय कृत्वा पादाभभवनदनर् ्।
ब्रह्माणर्ग्रतः कृत्वा पप्रछुः को भवानननत ।।

(11-13-20)

भगवान कहते ेहैं फक जब म ैंहंस रूप में प्रगट हुआ तो मुझे ेवहाूँदेखकर सनकाहदक ऋर्षयों ने ब्रह्माजी को आगे करके पादामभवन्द्दनम् ्कृत्वा-मेरे चरणों की वंदना कर मुझसे पूछा फक को भवान्–आप कौन हैं?

इत्यहं रुनुनभभः पृष्टस्तत्वन्जज्ञासुभुभस्तदा ।

यदवोचहं तेभ्‍यस्तदुद्धव ननबोध रे् ।।

(11 - 13 - 21)

हे उद्वि ! तत्वप्‍जज्ञासु सनकाहदक ऋर्षयों के इस प्रकार पूछने ेपर मेरे द्वारा जो कथन हुआ उसे तुम समझो। हालांफक उनका प्रश्न युक्तसंगत यानी ठीक नहींथा, परन्द्तु थे तो आत्मतत्व के प्‍जज्ञासुही इसमलए उन्द्हें आत्मतत्व का प्‍जज्ञासु ुजानकर आत्मोपदेश का अधिकारी समझकर मनैं ेउनसे कहा फक-

वस्तुनो यद्यनानात्वर्ा्त्‍नः प्रश्न ईदृः ।
कथं ंघटेत वो ववप्रा वक्तुवा मरे् क आश्रयः ।।

(11 - 13 - 22)

पंछचात्‍केषु ुभूतूेषु सर्ानेषु च वस्तुतः ।
को भवानननत वः प्रश्नो वाचारम्भो ह्यनथकमः ।।

(11 - 13 - 23)

सनकाहदकों ! तुम लोगों ने जो पूछा है फक को भवान् ्- आप कौन हैं? तो फकस दृष्ट को लेकर पूछा है? यहद आत्म दृष्ट से पूछा है तो आत्मा तो नाना नहींहै, अनाना है यातन एक है और जब आत्मा एक है तो जो आत्मा तुम हो वही आत्मा म ैंहूँ-तो भला बताओ, एक में भी कहीं ंप्रश्न बनता है?

पछचात्‍केषु ुभूतूेषु सर्ानेषु च वस्तुतः ।
को भवानननत वः प्रश्नो वाचारम्भो ह्यनथकमः ।।

(11 - 13 - 23)

और यहद शरीर दृष्ट से प्रश्न करते हो फक आप कौन हैं? तो शरीर भी पंच भूतात्मक होने ेके कारण एक ही है, वह अनेक नहीं ंहै, प्‍जन पंच तत्वों से तुम्हारा शरीर बना है उन्द्हीं पंच तत्वों से ही यह हंस शरीर भी बना है और सारा चराचर ही पंच भूतात्मक है। इसमलए शरीर भी एक ही है। शरीर दृष्ट से भी तुम्हारा प्रश्न अनथ िहै, वाणी का र्वकार मिा है। कहनेका मतलब यह फक तुम्हारा प्रश्न न आत्म दृष्ट से बनता है और न शरीर दृष्ट से? यहद कोई शरीर पांच तत्वों से बना हो और कोई चार, छह तत्वों से बना हो तब तो शरीर अनेक कहा जा सकता है, परन्द्तु ऐसा नहीं ंहै। इसमलए तुम्हारा प्रश्न ही गलत है। सनाहदकों की अमभमान हो गया था फक हमारे प्रश्न का उिर ब्रह्मा जी भी नहीं ंदे सके तो भगवान ने पहले ही उनके अमभमान को नष्ट कर हदया, क्योंफक उनका प्रश्न ही गलत था। न तो आत्म दृष्ट से प्रश्न बनता है और न देह दृष्ट से। यहद अपनेआपको आत्मा जानते हो तो आत्मा एक है, दो नहीं। इसमलए प्रश्न नहीं ंबनता और यहद अपनेआपको शरीर मानतेहो तो शरीर भी पंचात्मक होने ेसे एक है, वह भी दो नहीं। इसमलए शरीर दृष्ट से भी प्रश्न नहीं बनता। इस तरह हंस भगवान सनकाहदकों को उपदेश कर रहे हैं-

र्नसा वचसा दृष्टया गृह्यतेऽनयैरपीन्द्रयैः ।
अहरे्व न रि्ऽनयददनत बुध्यध्वर्छजसा ।।

(11-13-24)

मनसा वचसा दृष्टया मन द्वारा, दृष्ट द्वारा एवं अन्द्य इप्न्द्रयों के द्वारा भी जो कुछ ग्रहण फकया जाता है, वह सब 'म ै ही हूूँ-मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ भी नहीं–इसको हे ऋर्षयों ! सरलतापूवकि समझ लो-इसका अनुभव करो। आत्म प्जज्ञासुओं! इसको अचछी तरह समझ लो-देखो उस समय के प्रसंग में भगवान श्रीकृष्ण ने उद्वि से कहा था-

यददद ं र्नसा वाचा चषुथ्या ं श्रवणाददभभः ।
नश्वरं गृह्यर्ाणं च ववद्धध र्ायार्नोर्यर् ्।।

(11-7-7)

मन द्वारा, वाणी द्वारा एवं अन्द्य इप्न्द्रयों द्वारा जो ग्रहण फकया जाता है वह नश्वर है और अभी क्या कहते हैं- जो कुछ भी इप्न्द्रयों द्वारा ग्रहण फकया जाता है वह सब 'म ै ही हूूँ। श्रीकृष्ण मुख से कहते हैं फक ये सब नश्वर है और अब हंस मुख से कहते हैं फक ये सब 'म ै ही हूूँ-तो अब समझो अब लगाओ इसका भाव तो भैया ! इप्न्द्रयों के ग्रहण काल में ये सब गुण यानी र्षय नश्वर है और प्जसका 'म ै आत्मा अनुभव करता हूूँ-वह 'म ै ही हूूँ। इसका भी अनुभव करायेंगे-तब पता चलेगा। देखो, इप्न्द्रयाूँजो हैं वह र्षय को ग्रहण करती हैं फक वस्तु को ग्रहण करती हैं? शधद, स्पशि, रूप, रस, गंि ये पाचूँों र्षय हैं। अचछा, तो इप्न्द्रयों के ग्राह्य यही पाचूँों र्षय हैं। प्रश्न पहहले समझ लो-इप्न्द्रयों का ग्राह्य वस्तु है अथवा र्षय? वस्तुसे समझना आत्मा-तो सहज में समझ लोगे फक इप्न्द्रयों का ग्राह्य र्षय है, वस्तु नहीं और र्षय जो है वह र्कल्प है, न फक वस्तु। र्षय जो है वह र्कल्प है अथवा र्कल्पािार? र्षय र्कल्प है। प्जतने शधदाहदक र्षय हैं ये सब र्कल्प रूप हैं और र्कल्प अप्स्तत्वहीन होता है। शधदज्ञानानुपाती वस्तुशून्द्यो र्कल्पः (यो.द.)- शधद का तो ज्ञान हो, परन्द्तु वस्तु का अभाव हो उसे र्कल्प कहते हैं। तो सबसे पहले ग्राह्य का र्कल्प होता है। ग्राह्य-र्षय है और ग्राहक-इप्न्द्रयाूँ। (ताली पीटकर स्वामी जी बता रहे हैं) यह शधद र्षय है। अचछा-शधद हुआ, परन्द्तु अभी इसका र्कल्प मत करो। जब तक शधद र्षय का र्कल्प न करोगे तब तक इसके सुनने के मलए कणेप्न्द्रय नहींपैदा होगी। ग्राहक और ग्राह्य दोनों का र्कल्प एक ही काल में होता है। र्षय और इप्न्द्रयाूँ साथ- साथ ही बनती हैं। दोनों एक ही समय प्रगट होते हैं और इस व्यापार में मुझ आत्मा का क्या काम होता है? इप्न्द्रयाूँर्षय को ग्रहण करती हैं और म ै आत्मा इसका अनुभव करता हूूँ। अरे भाई! देखो कान से सुनाई पड़ा और कान से सुनाई नहीं पड़ा, यानी कान के सुनने और न सुनने का जो अनुभव करता है वह 'म ै आत्मा हूूँ। आूँख के देखने को और आूँख के न देखने को 'म ै आत्मा अनुभव करता हूूँ। इप्न्द्रयों का काम र्षय को ग्रहण करने का है। र्षयों के अनुभवकाल में यहद र्षयानुभूतत हो तब तो र्षय है और यहद र्षयों के अनुभवकाल में र्षयानुभूतत न हो तो 'म ै ही हूूँ। एक बार

 फफर अनुभव करायगें-वर्षय के अनुभवकाल में वर्षय का अनुभव न हो तो वह वर्षय नहीं ंहै, 'म' ैं ही हूँ। देखो-देख
रहे हो? यह रूप वर्षय है-प्जस समय रष्टा दृश्य को देखता है तो दृश्य के दशनिकाल में रष्टा को (आगे-पीछे नहीं, त्रबल्कुल ठीक देखने के टाइम में) यह दृश्य है और म ैंइसका रष्टा हूँ, ऐसा अनुभव होता है? नहीं। दृश्य के अनुभवकाल की अनुभूतत हो, तब तो दृश्य है और नहीं तो दृश्य नहीं 'म' ैं ही हूँ। रष्टा जब दृश्य का अनुभव करता है तो यही होकर अनुभव करता है या उससे मभन्द्न होकर यह इसकी समझने की दूसूरी युप्क्त है) वही होकर अनुभव करता है। त्रबल्कुल ठीक-वही होकर उसका अनुभव करता है। वर्षय बड़ा सूक्ष्म है-अरे भाई! यह म ैंपहले ही समझा चुका हूँ फक वर्षय ग्राह्य है और इप्न्द्रयाँ ग्राहक। वर्कल्प भाव में वर्षय है फक वर्कल्पाभाव में? वर्कल्प भाव में वर्षय है और ठीक अनुभवकाल में वर्कल्पाभाव है, तो वह 'म' ैं ही हूँ। वर्कल्प भाव- यह ग्राह्य और इप्न्द्रयाँ-ग्राहक हैं। दोनों का वर्कल्प एक ही समय में होता है। लकड़ी न हो तो डंडा कहाँ, डंडे ेका वर्कल्प तो लकड़ी पर ही है। वर्कल्प रूप डंडे ेकी स्वतंत्रिा कहा-ँलकड़ी नहीं तो डण्डे ेका वर्कल्प भी नहीं। समस्त वर्कल्पों का आिार 'म' ैं आत्मा हूँ। यहद 'म' ैं आत्मा न होऊँ तो उन वर्कल्पों का आिार कौन होगा? इसमलए अहमेव - 'म' ैं ही हूँ। इसको हे उद्वि ! तुम सरलतापूवकि समझ लो। फकसी वर्षय के अनुभवकाल में वर्षय है, ऐसा अनुभव नहीं ंहोता। अनुभवकाल में वर्षय है ऐसा अनुभव हो तो वर्षय है, नहींतो 'म' ैं ही हूँ। 'वर्षयानुभूतत ही स्वात्मानुभुतत है'-इस सूि पर अब कुछ कहेंगे। जो हदखता है, वह हदखता है, 'म' ैं हदखता हूँ, तब हदखता है, इस रहस्य को जान मलया फफर हदखना कहाँ जो हदखता है, देखने वाला ही है जो हदख रहा है, जो हदख रहा है, वह हदख रहा है। क्या डंडा हदख रहा है? अरे! नहीं, लकड़ी हदख रही है। डंडा यहद लकड़ी के त्रबना हदखे तो डंडे ेका अप्स्तत्व है, नहीं ंतो लकड़ी ही है जो हदख रही है। 'म' ैं के त्रबना यहद ये पाचँों वर्षय हदखे तब तो फफर इनका अप्स्तत्व है और त्रबना 'म' ैं आत्मा के यहद ये नहीं ंहदखते तो इसका कोई वजूद नहींरहता। तो म ैंही हूँ, मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ भी नहीं ंइसमलए अहमेव। यह
बात है- मशव ! इसमलए वर्षयानुभूतत ही आत्मानुभूतत है-

श्रीमद् भागवत के प्रथम स्कन्द्ि का पहला श्लोक-

जनराद्यस्य यतोऽनवयाददतरतश्चाथेष्वभभज्ञः स्वरा्,
तेने ब्रह्म हृदा य आददकवये रुह्ुयन्न्त यत्सूरूयः ।
तेजोवाररर्दृां यथा ववननर्यो यत्र त्रत्रसगोऽर्ृषा,
धाम्ना स्वेन सदा ननरस्तकुहकं सत्यं परं धीर्दह ।।

(श्रीमद् भागवत 1-1-1)

यहा ूँपर महर्ष वेदव्यास जी ने वेदांत दशनि के कुछ सूिों को ही छंदबद्ि करके रख हदया। यहाँ मलखा है- अथेष्वमभज्ञः अथेषुकोऽथःर्विषयेषु, अमभसम्यक् जानातत यः सः अथेष्वमभज्ञः । वर्षयों को जो सम्यक् प्रकार से जानता है उसे कहते ेहैं अथेष्वमभज्ञ। भगवान आत्मा प्जस वर्षय को जानता है तो वही होकर उस वर्षय को जानता है इसमलए उसे अथेष्वमभज्ञ कहतेहैं। अब समझो यहद वर्षय से 'म' ैं मभन्द्न हूँ तो वर्षय नहींऔर अमभन्द्न

हूँ, तो फफर अहमेव। इसी प्रकार मन को ले लो-प्जस मन से सभी परेशान हैं-मन है-यह जो 'है' है वह मन का है या म ॅ आत्मा का ? 'म'ॅ आत्मा का है। तो फफर मन का अप्स्तत्व 'म'ॅ आत्मा हूँ फक मन? मन का अप्स्तत्व 'म'ॅ आत्मा हूँ। मन यहद 'म'ॅ से मभन्द्न है तो मन नहींऔर अमभन्द्न है तो 'म'ॅ ही हूँ प्जसका नाम मन है। लहर है-तो लहर का अप्स्तत्व जल है फक लहर? लहर का अप्स्तत्व जल है, क्योंफक जल के त्रबना लहर का अप्स्तत्व ही नहींरहता। यहद लहर को पकड़नेचलो तो लहर को न पकड़ पाओगे। तो क्या पाओगे? जल। इसी तरह फकसी भी देश, काल, वस्तु ु का कुछ भी अप्स्तत्व नहींहै इसमलए अहमेव। आत्मा से मभन्द्न कुछ भी नहीं। र्वकल्पों का जाल त्रबछा हुआ है।

र्नसा वचसा दृष्टया गृह्ययेऽनयैरपीन्न्द्रयैः ।
अहरे्व न र्ोऽनयददनत बुध्यध्वर्ंजसा ।।

(11-13-24)

अहमेव - 'म'ॅ ही हूँ। देखो-प्जस तरह मुझ आत्मा के त्रबना मन नहीं इस तरह आत्मा के त्रबना कुछ भी नहीं। इप्न्द्रयाँ फकसे कहते हैं? पंच र्वषय, पंच प्राण, मन, बुद्धि, धचि, अहंकार, सत, रज, तम यह फकसे कहते हैं? अपने'म'ॅ को (अप्स्तत्व को) तनकाल लो, यहद वह वस्तु रहे तब तो समझो फक वह है- परन्द्तु उसका स्वतंि अप्स्तत्व नहींतो फफर वह अहमेव - 'म'ॅ ही हूँ। मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ भी नहीं। सिा से मभन्द्न कुछ भी नहीं। अपने'म'ॅ अपनेस्वरूप आत्मा से फकसी भी चीज को अलग करके देखो। यह डंडा है-यह इप्न्द्रयाँग्राह्य र्वषय है। र्वकल्प इप्न्द्रय ग्राह्य है न फक प्रतीयमान। प्रतीतत कहते ेहैं भास को-प्रतीतत का अथ िदेखना नहीं ंहोता, प्रतीतत का अथ िभासना होता है। महीने दो महीने का बचचा है, उसके मलए यह सब संसार र्वषय केवल प्रतीतत मिा है। वह प्रतीयमान जगत में रहता है, र्वकल्प जगत में नहीं ंरहता। बालक के सामनेयहद मसंह भी आ जाय तो भी उस बालक को कोई भय नहीं है, उसे भय न लगेगा, क्योंफक उसे मसंह भासता है और जो र्वकल्प करेगा फक मसंह है तो फफर वह डरेगा-उसके हाथ पैर ढीले पड़ जायगें। बालक के मलए मसंह र्वकल्पाभाव है और दूसूरों के मलए र्वकल्पभाव है। र्वकल्प ही इप्न्द्रय ग्राह्य है और प्जस पर यह र्वकल्प है वह 'म'ॅ ही हूँ। यह जो कुछ प्रतीत हो रहा है, यह हदख नहींरहा है, भास रहा है। र्वकल्प न करो फक यह डंडा है, जब र्वकल्प न करोगे तो हदखेगा फक भासेगा? भासेगा। (ताली पीटतेहैं)- र्वकल्प न करो फक यह शधद र्वषय है? भास है। तो इप्न्द्रय ग्राह्य र्वकल्प है और भास है वह 'म'ॅ ही हूँ इसमलए अहमेव क्योंफक प्रतीतत में भय नहीं-भय तो वैकप्ल्पक जगत में है, 'म'ॅ में कहा।ूँ जो प्रतीतत है वह भगवान आत्मा 'म'ॅ हूँ। प्रतीतत पर जो र्वकल्प है वह संसार है और यही इप्न्द्रय ग्राह्य र्वषय है। मसफि र्वकल्प हटा देना है-वस्तु तो पहले से ही पररपूण िहै इसमलए जो र्वकल्प है वह मनोमय है, नश्वर है। नश्वर और प्रतीतत है, भास है, वह 'अहमेव'। भगवान का कहना यही है।

र्नसा वचसा दृष्टया गृह्यतेऽनयैरपीन्न्द्रयैः ।
अहरे्व न र्ोऽनयददनत बुध्यध्वर्ंजसा ।।

(11 - 13 - 24)

देखो-इस गावूँ को क्या कहतेहैं? झंडापुर। तो भैया ! यहाँूइतने बैठे हो जरा कोई आकर हमें झंडापुर हाथ से पकड़कर हदखा दो फक यह झंडापुर है- क्या यह मकान झंडापुर है या यह सामने जो महुआ का पेड़ है वह झंडापुर है? सुनी सुनाई बात न बताना-ठीक-ठीक बताना-हमें हाथ से झंडापुर पकड़वा दो-तो भैया ! ढूँढ़ने ेचलोगे तो तुम्हें झंडापुर न ममलेगा-कारण? झंडापुर एक र्वकल्प है, न फक प्रतीतत। इसी तरह न कुंडा तहसील, न उिर प्रदेश, न भारत वष,ि न संसार। संसार भी नहीं 'अहमेव'- 'म ै ही हूँ। भगवान कहते हैं फक इसको सफलतापूवकि समझ लो- इसको समझने में कोई कहठनाई नहीं है। हा,ूँ यहद बुद्धि से समझनेकी कोमशश करोगे तो कहठनाई है, परन्द्तु 'म ै को 'म ै से समझने ेमें कोई कहठनाई नहींहै। वाह 'म ै ही 'म ै को समझा रहा है। भगवान के मसवाय कोई दूसूरी सिा नहीं ंहै। इसमलए 'अहमेव'।

साकी ने वहदत का एक जार् वपलाया था।
उस रोज से हर कतरा दररया नजर आता है ।।

वासुदेवः सवमिमतत-आत्मैवेद् सवंम्–्सब 'म ै ही हूँ। स एवेदं सवम्–्

न्जधर देखता हूँ जहाुँदेखता हूँ ।
र् ैअपनी ही ताव और ि ुदेखता हूँ ।।
रिंका र् ैहूँ परवाना, कोई कुछ सरिे कोई कुछ सरिे ै।
यार पे र् ैहूँ दीवाना, कोई कुछ सरिे कोई कुछ सरिे ै।।1 ।।
यार की यारी र्ें खोया, न्जतनेदुनुनयाुँके थे फंदे ।
है यही यार का याराना, कोई कुछ सरिे ैकोई कुछ सरिे ।।2 ।।
वहदतेवपलाया र्य साकी, ददल जेर िबर बेलार् हुआ ।
वरहना घूर्ता स्र्ताना, कोई कुछ सरिे ैकोई कुछ सरिे ।।3 ।।

वरहना कहते ेहैं नंगे को। जब तक यह मान्द्यता है फक म ैअमुक हूँ, ब्रह्म हूँ, ब्राह्मण हूँ, ित्रिय हूँ, वैश्य हूँ, ब्रह्मचारी हूँ, गृहस्थी, वानप्रस्थी हूँ, संन्द्यासी हूँ, तब तक मान्द्यता जगत है और जब अहंभाव दूरू हो गया-माया से परे हुआ, समस्त अमुक भावों (र्वकल्पों) का जब अभाव हो गया-मान्द्यता न रही फक म ैअमूक हूँ, तो रह गया वरहना। यही तो पदिा था फक कुछ न कुछ अपनेआपको मानना, मान्द्यताओं के आड़ में ही पदानिशींबैठा हुआ है।

वहदतेवपलाया र्य साक्री, ददल जेर िबर बेलार् हुआ ।
वरहना घूर्ता स्र्ताना, कोई कुछ सरिे ैकोई कुछ सरिे ।।3।।

मस्ताना डोलत फफरै ज्यों सरकारी सांड़-सांड़ दो प्रकार के होते हैं-एक लोकल और दूसूरा सरकारी। लोकल सांड़ को कभी-कभी कांजी हाउस में भी डाल देते हैं और कभी जोत भी लेते हैं-परन्द्तु सरकारी सांड़-उसके पुढे पर सरकारी मुहर लगी रहती है-कहीं ांजाय, कहीं सोये-कोई कहने ेवाला नहीं है।

स्तााना डोलत कफरै, झयो सरकारी सांड़ ।
डर काहू की है नहीं, ं खसर् त्रबना जस रांड़ ।।
अरे भाई खसर् के रहतेतक ही तो डर है।
खसर् त्रबना जस रांड़, चाहै जागै चाहै सोवै।
र्न र्ाना जग रुआ, भला अब ककसको रोवै।।
कहता रुक्ता सत्य, र्ान त्रबन न्जसने जाना।
हुआ ननरंकुि पुरुष दीवाना स्तााना ।।

तो भैया !

बेचश्र् हुआ तब चश्र् खुली, बेन्जस् हुआ तब न्जस् भर्ली ।
कुछ रहा न अपना बेग़ाना, कोई कुछ सरर्् कोई कुछ सरर्् ै।।4।।

जब तक साढ़े तीन हाथ की तनगाह थी तभी तक म ैंशरीर हूँ और मेरा शरीर है, यह मान्द्यता थी, भगवान से दूरू था और जब मान्द्यता चली गई अथाित् ्बेचश्म (त्रबना आूँख का) हो गया, सीममत दृष्ट खतम हो गई तो अंदर की आूँख जो हदव्य दृष्ट है वह खुल गई। जब इस शरीर का भाव नहीं रहा, इसके अप्स्तत्व का अभाव हो गया, तब सारा चराचर अपना ही स्वरूप भासने लगा।

खुदी गुर्ी गुर्ुदा भर्ला, तर्ननाय ेंसब काफ़ूर हुई ।
पस हो गई दुनुनया ुँअफ़साना, कोई कुछ सरर््कोई कुछ सरर््।।5।।

जब खुदी अथाित् ्देहामभमान नष्ट हो गया तब गुमशुदा यानी जो खोया हुआ था, प्जसके स्वरूप का अज्ञान था, पता नहीं ंथा फक कहा ूँहै, वह सप्च्चदानंद घनभूत परमात्मा प्रातत हो गया। उसके स्वरूप का बोि हो गया। जब शरीर से मभन्द्न अपने'म'ैं को जाना, पहचाना तो तमन्द्नायेंकाफ़ूर हो गईं। पस-इसमलए, अफसाना-कहानी, तमन्द्नाएं-आशाएं।

रुक्ता जब भर्ला सर्ुंदर से, कफर कौन ककसी को याद करै ।
बस इसी लहर र्ें लहराना, कोई कुछ सरर्् कोई कुछ सरर्् ै।।6।।

नदी जब समुर में ममलती है तो नदी को यह याद नहीं रहता फक आज के पहले म ैंगंगा, यमुना थी, अब समुर हो गई। जब नदी को यह भान हो फक म ैंअमुक हूँ, म ैंगंगा हूँ, म ैंयमुना हूँ, तो समझ लो फक अभी समुर से

 उसका ममलाप नहीं ंहुआ है। जब संत कृपा से, गुरु कृपा से, सेल्फ ररयलाइजेशन (स्वरूप का ज्ञान) हो जाता है तो

इसके पहहले म ंैजीव था-अब ब्रह्म हुआ, म ंैब्रह्म हूँ, तुम जीव हो, ये सब भाव नहीं रहते। हा–ूँजब तक ऐसा भाव है तो जान लो फक अभी कुछ नहीं पाया।

रुक्ता जब भर्ला सरुंदर से, कफर कौन ककसी की याद करै ।
बस इसी लहर र्ें लहराना, कोई कुछ सरिे कोई कुछ सरिे ं।।6।।

आज के पहहले 'म'ं ही था और आज भी 'म'ं ही हूँ और आगे भी 'म'ं ही रहूँगा। तो इसका क्या प्रमाण है फक आज के पहहले 'म'ं ही था? यहद कहो फक आज के पहहले 'म'ं नहींहोता तो पुनजन्द्मि फकसका होता? तो जानेदो- पुनजन्द्मि तो जीव जगत की बात है। मीमांसा दशनि तो जीव जगत के ही मलए है, भगवान आत्मा के मलए नहीं। इसमलए आज के पहहले 'म'ं ही था, इसका क्या प्रमाण है? अरे ! इसका प्रमाण 'म'ं ही हूँ, इसका प्रमाण म ंैही होऊँगा- कोई दूसूरा थोड़े ेही होगा-कैसे? यहद कहो फक आज के पहहले 'म'ं नहीं ंथा तो 'म'ं के नहींथा को नहीं था ने देखा था फक था ने देखा? अरे ! 'म'ं के अभाव का सिाी यानी 'म'ं नहीं था और 'म'ं नहींथा, इसको कौन जानता है? इसका अनुभवकतिाकौन है? आज के पहहले भी 'म'ं था, इन दोनों को मसद्ध किरने वाला तो 'म'ं ही हूँ। आगे भी 'म'ं ही रहूंगा और 'म'ं नहीं रहूंगा इसको भी मसद्ध किरनेवाला 'म'ं ही हूँ 'म'ं ही अनुभवकता िहूँ। सब का मसद्ध किरने वाला 'म'ं ही हूँ। आत्मा कहतेहैं अप्स्तत्व को। ब्रह्मा से लेकर तृणृ पयन्द्ति सारे चराचर का र्वकल्प मुझ आत्मा पर ही है। वस्तुतो एक ही है, र्वकल्प अनेक करते रहो, चाहे जो मजी हो। र्वकल्प इप्न्द्रय ग्राह्य है-र्वकल्पाभाव अहं ग्राह्य है-प्रतीतत अहं ग्राह्य है। इस तरह जो इप्न्द्रय ग्राह्य है वह नश्वर है और प्रतीतत जो अहंग्राह्य है वह अहमेव- वह तो 'म'ं ही हूँ।

र्नसा वचसा दृष्ट्या गृह्यतेऽनयैरपीन्न्द्रयैः ।
अहरे्व न र्त्तोऽनयददनत बुध्यध्वर्ंजसा ।।

(11 - 13 - 24)

इसको हे उद्धि ! तुम अचछी तरह से सरलतापूवकि समझ लो।

जब भगवान हंस रूप से सनक, सनन्द्दन, सनातन, सनत कुमार चारों ऋर्षयों को प्रबोि कर चुके तब

फफर जो प्रश्न इन ऋर्षयों ने अपनेर्पता ब्रह्माजी से फकया था उसे समझाने लगे।

गुणेष्वाववभिते चेतो गुणाश्चेतभस च प्रजाः ।
जीवस्य देह उभयं गुणाश्चेतो र्दात्र्नः ।।

(11-13-25)

सनकाहदकों ! गुणेष्वार्वशते ◌ेचेतो गुणाश्चेतमस च प्रजाः तुम लोगों ने यह पूछा था फक र्वषयों में धचि

प्रवेश करता है फक र्वषय धचि में प्रवेश करते हैं? तो सुनो-र्वषय और धचि ये दोनों जीव के देह हैं-जीवस्य देह उभयं और वस्तुतः धचि और र्वषय इन दोनों की मुझ आत्मा से ही उत्पत्ति जानों, क्योंफक 'म'◌ैं आत्मा सवािार हूँ। देखो सुषुप्तत अवस्था गाढ़ी नींद में जब धचि नहींरहता, अपने कारण अज्ञान में लीन हो जाता है तो म ◌ैंजीव हूँ, क्या यह भाव रहता है? धचि के अभाव में जीव भाव नहीं ◌ंरहता इसमलए धचि जीव का देह है और र्वषय के त्रबना जीव का जीवन नहीं इसमलए र्वषय जीव का दूसूरा देह है। गुणाश्चेतो मदात्मनः गुण और धचि दोनों को मुझ आत्मा से जानो। दोनों का र्वकल्प फकस पर हुआ? मुझ आत्मा पर तो इन दोनों का आिार 'म'◌ैं आत्मा हूँ। इसमलए-

गुणेुष्वाववितेचेतो गुणाश्चेतभस च प्रजाः ।
जीवस्य देह उभयं गुणाश्चेतो दात्रनः ।।

(11 - 13 - 25)

गुणेषु चाववविन्चिर्भीक्ष्णं ◌ंगुणुसेवया ।
गुणाश्च धचिप्रभवा द्रूपू उभयं त्यजेत् ◌्।।

(11 - 13 - 26)

यह जो धचि है वह र्वषय का सेवन करते-करते र्वषय रूप ही हो जाता है। तो सनकाहदकों, इन दोनों को एक-दूसूरे से अलग करने की आवश्यकता नहीं ◌ंहै। मरूपू उभयंत्यजेत-धचि और र्वषय दोनों को अपना स्वरूप जानकर, अनुभव कर दोनों का पररत्याग कर देना चाहहए। यहाँगीता के 6वें अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण अजुनि के प्रश्न का उिर देते हुए इसी र्वषय को समझाते हैं-

चंचलं ◌ंदह नःः कृष्ण प्रर्ाधथ बलवदृढर् ◌्।
तस्याहं ननग्रहं नये वायोररव सुदुषुकरर् ◌्।।

(गीता 6-34)

असंयिंर्हाबाहो नों दुनुनग्रमहं चलर् ◌्।
अभ्यासेन तु कौनतेय वैरावयेण च गृहृयते।।

(गीता 6-35)

अभ्यास और वैराग्य से इसको पकड़ना चाहहए-यहाँ अभ्यास और वैराग्य का क्या स्वरूप है? अभ्यास नहीं ◌ंकरना, यही अभ्यास है और जगत का अप्स्तत्व तीनों काल में है ही नहीं, यह जानना वैराग्य है। बात तो है सही, सोलह आना-परन्द्तु है-अभ्यास न करना, यही अभ्यास है। आज हदन तक मन के मारनेका, मन को न रोकने

 का अभ्यास फकये हो, अब मुक्ता की वाणी पर र्वश्वास करके, मन को रोकनेका, अभ्यास करके देखो-जो दवा
फायदा करे उसी को खाओ। हा–ँूएक बात हम कहेंगे, अपनेआपको संसारी जीव मानकर नहीं, अपनेआपको भगवान आत्मा जानकर करो। इतना तो संशोिन हम अवश्य करेंगे। भाई ! अपनेआपको संसारी जीव मानकर ही तो तुम मन रोकने ेका अभ्यास करते हो और तुम्हें आज तक क्या ममला, इसके सािी तुम स्वयं हो। अब लो-अपने आपको शरीर से मभन्द्न आत्मा जानकर मन के न रोकने का अभ्यास करो। पुडड़या फायदा करे तो खाओ और नहीं तो मन के रोकनेका अभ्यास तो कर ही रहे हो। मन को रोकनेको रोकना यही तो अभ्यास है और मन तीन काल में है ही नहीं-यही त्याग है। इसी का नाम वैराग्य है। यहाँूदेखो-घर में जाकर जो पुडड़या फायदा करे सेवन करो-हम तो लाखों को इस पुडड़या से फायदा पहुूँचाये हैं, यह बड़ी हाई पोटैन्द्शी पुडड़या है। इसके सेवन करने ेसे मज िऔर मरीज दोनों खतम हो जाते हैं। प्रश्न होता है फक स्वामी जी ! मज ितो जाना चाहहए, ठीक है परन्द्तु मरीज को क्यों खतम करते हो? भैया ! जब मज िही न रहा तो मरीज फकसको कहोगे-बस, अपनेआपको जानकर, मानकर नहीं-जानकर, अब कुछ न करनेका अभ्यास करो।

जाग्रत्स्वप्नः सुषुप्तं ंच गुणुतो बुद्धधवृियः ।
तासां ंववलषणो जीवः साक्षषत्वेन ववननन्श्चतः ।।

(11-13-27)

जाग्रत स्वतनः सुषुततं ंच गुणतो बुद्धिवृियः जाग्रत, स्वतन और सुषुप्तत, मन की ये तीनों अवस्थाय ें तीन गुण की हैं। रजोगुण की जाग्रत अवस्था, तमोगुण की सुषुप्तत अवस्था और सतोगुण की स्वतनावस्था। परन्द्तु तासांर्वलिणो जीवः - जीव इन तीनों अवस्थाओं से र्वलिण है, क्योंफक तीनों अवस्थाओं से परे और सािी है, ऐसा जानो।

जाग्रत्स्वप्नः सुषुप्तं ंच गुणुतो बुद्धधवृियः ।
तासां ंववलषणो जीवः साक्षषत्वेन ववननन्श्चतः ।। (11 - 13 - 27)
यदहसंमसृंनृतबनधोऽयर्ात्नो गुणुवृविदः ।
र्नय तुये न्स्थतो जह्यात्त्यागस्तद्गुणुचेतसार् ्।।

(11-13-28)

ये बात - तीन गुण की जो तीन अवस्थाएँू हैं- जाग्रत, स्वतन और सुषुप्तत, वही संसार है और आत्मा का बंनि है, तो फफर 'म'ैं जो आत्मा तुरीय पद हूू उसमें प्स्थत होकर गुण और धचि दोनों का पररत्याग कर दें।

अहंकारकृतं बनधर्ात्नोथवमवपययमर् ्।
ववद्वान्ननववद्मय संसांरधचनता तुये न्स्थतस्त्यजेत् ्।।

(11 - 13 - 29)

यावननानाथघमीः पुंसो न ननवतेत युन्क्तभभः ।
जागत्यवमप स्वपननज्ञः स्वप्ने जागरणं ंयथा ।।

(11 - 13 - 30)

आत्म का संशय-र्वपययि क्या है? म ैंशरीर हूँ फक आत्मा-इसका नाम संशय है और अपनेस्वरूप आत्मा को कुछ न कुछ मान लेना, यही र्वपययि है। म ैंअमुक हूँ-ऐसा मानना ही बंनि है और यही आत्मा का र्वपययि है। इसमलए-र्वद्वान तनर्वद्यि संसारधचन्द्तां तुयेप्स्थतस्त्यजेत् ्।। र्वद्वान को चाहहए फक इस अमुक भाव रूपी बंनि को काटकर 'म'ैं जो तुरीय पद आत्मा हूँ, उसमें प्स्थर होकर, संसार धचंतां का पररत्याग कर दे।

यावननानाथघ्मधीः पुंसो न ननवतेत युन्क्तभभः ।
जागत्यवमप स्वपननज्ञः स्वप्ने जागरणं ंयथा ।।

अस्तीतत यो वप्क्त न तस्य मोहो र्वतनगतिो तनरतवत प्रज्ल्पः - भगवान हंस कहते हैं फक महानपुरुषों की युप्क्तयों के द्वारा नानाथाकिार बुद्धि (अनन्द्त मान्द्यतायें) की तनवृर्त्ति जब तक नहींहो जाती तो यही समझना चाहहए फक वह व्यप्क्त अभी जागते हुए स्वतन देख रहा है। जहाँ तक इप्न्द्रयगम्य पदाथ िहै वे सभी नानाथ िहैं और अप्स्तत्व (म)ैं आत्मा पर ही आिाररत है। अथवा उन सभी र्वकल्पों का आिार म ैंआत्मा हूँ। युप्क्तयों के द्वारा नानाथाकिार बुद्धि अथवा अध्यास का नाश होता है। कतिा, फक्रया के बीच जो कुछ भी अमुक भाव है, यह सभी कम िहैं, ऐसा तनश्चय ही महान पुरुषों की युप्क्त है। इन युप्क्तयों द्वारा यहद नानाथकिार बुद्धि की तनवृर्त्ति नहीं हो जाती तो समझो फक वह व्यप्क्त जागते हुए कैसे स्वतन देख रहा है जैसे फक स्वतनकाल का जागरण।

यावननानथधमीः पुंसो न ननवतेत युन्क्तभभः ।
जागत्यवमप स्वपननज्ञः स्वप्ने जागरणं ंयथा ।।

(11-13-30)

'म'ैं आत्मा जैसा हूँ वैसा ही हूँ, ऐसा न जानकर कुछ का कुछ मान लेना, यह नानाथकिार बुद्धि है। इस भ्रिखे (अज्ञान) से तनवृि हो जाना चाहहए। जब सोया हो तो जगाया जा सकता है, परन्द्तु जो जागते हुए सोया है तो तुम उसके सामने चाहे ढोल पीटो वह जागेगा नहीं, ंकारण वह सोया ही कहा ूँहै-ऊपर से खराटिा ले रहा है, परन्द्तु भीतर से तो जाग ही रहा है, तो वह कब जागने वाला है-नहींजागेगा। प्जस तरह कोई स्वतन देख रहा है, तो उस स्वतन रष्टा को स्वतनावस्था में म ैंस्वतन देख रहा हूँ, ऐसा भान नहींहोता और जागनेपर अपनेआप ही कहता है फक आज मनैं ऐसा स्वतन देखा। इसी प्रकार इस संसार स्वतन का रष्टा यह नहीं जानता फक म ैंसंसार स्वतन देख

 रहा हूँ। जब संसार स्वतन से उपरत होगा, तभी वह संसार स्वतन को जानेगा। क्यों नहीं ंरामायण के पदों पर ध्यान
करते-रामायण तो सभी पढ़ते हो-

उरा कहउं र् ँअनुभव अपना। सत हरर भजन जगत सब सपना ।।

क्यों नहीं इन मंर्तिं पर, इन पंक्तयों पर ध्यान देते-जब तक अपने आप में जागा नहीं तब तक उपरोक्त पंक्तयों पर उसकी आस्था नहींहोगी।

अनाददर्याययासुपुतोयदा जीवःप्रबुध्यते।
अजर्ननद्रर्स्वप्रर्द्वैतं बुध्यते तदा ।।

(गौ.का. अगम-16)

अथात्ि्अनाहदकाल से अर्वद्या की घोर तनरा में सोता हुआ जीव जब जागता है तब अपने आपको अजन्द्मा, अर्वनाशी, अवस्थाओंसे परे, कालातीत जानता है। यानी सारा चराचर 'म'ँ आत्मा हूँ, मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ भी नहीं। यह प्स्थतत र्वकल्पगम्य नहीं ंहै। एक तृणृ को भी अगर अलग मानता है तो वह व्यप्क्त अभी मोह तनरा से जगा नहीं ंहै। वासुदेवः सवममितत - आत्मा के अततररक्त कुछ है ही नहीं

यावननानाथधमीः पुंसो न ननवतेत युन्क्तभभः ।
जागत्यवमप स्वपननज्ञः स्वप्ने जागरणं ंयथा ।।

(11 - 13 - 30)

असत्वादात्नोऽनयेषांभावानां ंतत्कृता भभदा ।
गतयो हेतवश्चास्य रॄषा स्वप्नदृो यथा ।।

(11 - 13 - 31)

यो जागरे बदहरनुषणधभर्णमोऽथानमभुङ्क्ते ।।
स्र्तकरणैर्हृदद तत्सदृषान् ्। स्वप्ने सुषुप्त उपसंहरते ेस एकः
स्रृतृयनवयान्त्रगुणुवृविदृधगन्नद्रयिः ।।

(11-13 - 32)

सुनो-अब भगवान आत्मा की तनत्यता का भास, सव िअवस्था में एकरस है। अब बता रहे हैं-सुनो-

यो जागरे बदहरनुषणधभर्णमोऽथानमभुङ्क्ते ।।
सस्र्तकरणैर्हृदद तत्सदृषान् ्।

स्वप्ने सुषुप्त उपसंहंरते स एकः
स्मृत्यनवयान्त्रगुणवृविदृधगन्नद्रयिः ।।

(11 - 13 - 32)

जो भगवान आत्मा 'म'ै सव िका सव,ि जाग्रत अवस्था के प्रपंच को जानता हूँ, अनुभव करता हूँ वही 'म'ै आत्मा स्वतनावस्था के प्रपंच को जानता हूँ और सुषुप्तत के आनंद का अनुभव करता हूँ। अरे! मेरे कहने से न मानो। जब तक तुम्हारे हृदय में यह र्वषय त्रबल्कुल हृदयङ्गम न हो जाय तब तक न मानो। अनुभव करायगें-जो प्रतीतत है वह सब 'म'ै आत्मा हूँ-बाकी फफर हरर ॐ तत्सत्।् देखो-सबेरे जब तुम सोकर उठे तो तुम्हारी घड़ी में क्या बजेथे?े पाचूँ बजेथे। तो पाचूँ बजेवाले काल में तुम थे फक नहीं?ं 'म'ै था, तभी तो पाचूँ बजेवाले काल को जाना। अब काल बदल रहा है तो काल के साथ ही प्रपंच भी बदलता जा रहा है, क्योंफक प्रपंच कालानुगामी है। परन्द्तु क्या 'म'ै आत्मा भी बदल जाता हूँ? जी, नहीं, म ैआत्मा नहींबदलता। सुबह सोकर उठनेके बाद जब तक म ैसो नहीं ं जाता, तब तक जो अवस्था है वह जाग्रत अवस्था कहलाती है। म ैआत्मा जाग्रत अवस्था के प्रपंच को जानता हूँ। स्वतनावस्था के स्वतन प्रपंच को म ैआत्मा जानता हूँ, क्योंफक यहद 'म'ै आत्मा न रहूँ तो सुबह उठनेपर यह कौन बतलायेगा फक आज मनैं ेस्वतन देखा। सुषुप्तत गाढ़ी नींद में समस्त प्रपंचों को समेटकर जब म ैसो जाता हूँ तो 'म'ै आत्मा एकमिा रह जाता हूँ। तभी तो जागनेपर कहता हूँ फक आज जब म ैसोया तो मुझे ेबड़ा आनंद आया। कहने े का मतलब यह है फक तीनों अवस्थाओं का म ैरष्टा सिी हूँ। तीनों अवस्थाओं में एकरस रहता हूँ इसमलए मुझ आत्मा को तीनों अवस्थाओं की स्मृतत रहती है।

एवंववर्शय गुणुतो र्नसस्त्रतयवस्था र्नर्ायया र्नय कृता इनत ननन्श्चताथाःम ।
संनंछद्य हादमर्नुर्ानसदुनुक्ततीक्ष्णज्ञानाभसना भजत र्ाणखलसंयािधधर् ्।।

(श्रीमद् भागवत 11-13-33)

ये जो तीन गुण की तीन अवस्थाय ेहैं-जाग्रत, स्वतन और सुषुप्तत ये मन की हैं, मुझ आत्मा की नहीं। मेरी माया करके, मेरे द्वारा रधचत हैं ऐसा तनश्चयकर, ज्ञानरूपी खड्ग से सम्पूण िसंशय, र्वपयिय के समूह का नाश कर, अपने स्वस्वरूप भगवान आत्मा में प्स्थत हो जा-यह जो संसार रूपी वैकप्ल्पक जाल है, इसको क्या जानो-

ईषेत ववभ्रर्भदं र्नसो ववलासं ंदृष्टं ववनष्टर्नतलोलर्लातचक्रर् ्।
ववज्ञानर्ेकरुरुधेव ववभानत र्ाया स्वप्नस्त्रधा गुणुववसगकृमतो ववकल्पः ।।

(11-13-34)

यह मन का र्वलास रूप है। दृष्ट र्वनष्टमततलोलमलातचक्रम्–्देखो- अलातचक्र कहतेहैं फक भ्जिली लकड़ी को, प्जसकी आग बुझी नहीं ंहै और बहुत प्रज्जवमलत भी नहीं है-उसे भन्द्नाटी (भनेटी) के समान घुमाने ेसे

अनधगनती धचनगाररयाँ तनकलती हैं, प्जसका प्रकाश चक्र की नाई फैल जाता है-उजाला गोलाकार हदखता है। इसी तरह बुद्धि में मन के र्वकल्पों का चकाचौं अिलातचक्र के समान संसार घूम रहा है।

ईषेत ववभ्रर्भर्दं र्नसो ववलासं ्दृष्टं ववनष्टर्नतलोलर्लातचक्रर्् ्।
ववज्ञानर्ेकरुरुधेव ववभानत र्ाया स्वप्नस्त्रधा गुणुववसगकृमतो ववकल्पः ।।

(11-13-34)

भगवान कहते हैं फक मसद् यानी महानपुरुष जो फक अपने स्वस्वरूप भगवान आत्मा में प्स्थत है, जो अपनेस्वरूप का अनुभव कर लेता है, वह इतना उन्धि हो जाता है फक जैसे महदरा पीकर व्यप्क्त शरीर पर वस्् है या नहीं, ं इसे भूल जाता है, उसे भान नहीं होता। उसी प्रकार जो मसद् पुरुष हैं उन्द्हें नश्वर शरीर के प्रतत आस्था नहीं ंरहती। शरीर खड़ा है या बैठा है इसका उसे भान नहीं होता। उसका शरीर प्रारधि के वशीभूत होता है, जहाँ प्रारधि ले जाय।

देहोऽवप दैवविगः खलु ुकर्यमावत् ्स्वारम्भकं प्रनतसर्ीषत एव सासुः ।
तं सप्रपछचर्धधरुढसर्ाधधयोगः स्वाप्नंपुनन मभजते ेप्रनतबुद्धवस्तुः ।।

(11 - 13 - 37)

सासुः - प्राणः । देह भी जब तक दैववशगः प्रारधि के वशीभूत है, तब तक प्रारधि जहाँ ले जाय वहाँचला जाता है। प्राण पर चलता रहता है, परन्द्तु उस शरीर के प्रतत उसकी आस्था नहीं ंरहती। जो समाधि योग यानी आत्मयोग में प्स्थत अथात् ्स्वस्वरूपस्थ हैं। उसकी प्रपंच में आस्था वैसे ही नहीं ंहोती जैसे फक जागने पर स्वतन के प्रतत आस्था नहीं रहती। देखो-भैया ! ऊपर जो श्लोक है यो जागरे बहहरनुिणिममणोऽथान्- से लेकर यहाँ तक भगवान आत्मा के सत्य, चैतन्द्य, हंस स्वरूप से जो प्रश्न था उसका उिर देते हुए आत्मा की अनुभूतत तीनों श्लोकों में समझाये हैं और अभी के श्लोक से भगवान आत्मा 'म' ैं क्या नहीं ंजानता, फकसको नहींजानता। 'म' ैं आत्मा सव ि का सव, ि रष्टा, सािी ज्ञाता हूँ, सव िकी आत्मा हूँ, इसका हदग्दशनि कराये हैं। भगवान को श्रुतत प्रज्ञानघन कहती है। प्रज्ञानघन उसे कहते हैं जो ज्ञानपुञ्ज हो, प्जसका ज्ञान ठोस हो, अखण्ड हो। भगवान आत्मा 'म' ैं को फकसी भी देश, काल, वस्तु को जानने के मलए काल की सीमा नहीं है। जैसा फक इस डंडा (डंडा हदखाकर छुपा लेते हैं) अब इसे जानने ेके मलए मुझ आत्मा को फकनता समय लगा? कुछ तो समय लगना चाहहए। एक ममनट, दो ममनट या 1-2 सेकंड। म ैंआत्मा को इसका अनुभव करने के मलए काल की कोई सीमा नहीं ंहै अथात् ्तत्काल ही 'म' ैं जानता हूँ इसमलए 'म' ैं प्रज्ञानघन हूँ (पू. ू श्री स्वामीजी ताली पीटकर समझाते हैं) यह शधद र्वषय है, अब इसका अनुभव करने के मलए फकतना समय लगा? कोई समय नहीं लगा, तत्काल ही 'म' ैं इसका अनुभव फकया। मुझको फकसका ज्ञान नहीं– 'म' ैं आत्मा सव िको जानता हूँ और सवकिाल, सव िअवस्था में जानता हूँ इसमलए म ैंभगवान आत्मा प्रज्ञानघन हूँ। अब यहाँपर न्द्याय दशनि का कहना है फक वृर्ि और आत्मा दोनों का जब संयोग होता है तब आत्मा फकसी चीज का अनुभव करता है, जानता है। जाग्रत अवस्था में रजोगुण की वृर्ि रहती है इसमलए जाग्रत अवस्था के प्रपंच को

आत्मा जानता है। स्वतनावस्था में सतोगुण की वृत्ति रहती है इसमलए स्वतनावस्था के प्रपंच का आत्मा अनुभव करता है। सुषुप्तत अवस्था में तमोगुण की वृत्ति रहती है। ऐसा सोया फक मुझे ुकुछ पता ही नहींरहा-यही तमोगुण की वृत्ति है। इसके साथ जब आत्मा का संयोग होता है तो सुषुप्तत के आनंद का अनुभव करता है। मूछाविस्था में दुःखाकार वृत्ति रहती है। समाधि अवस्था में शुद्धि सतोगुण की वृत्ति रहती है। इससे मसद्ि होता है फक त्रबना वृत्ति के आत्मा फकसी भी देश, काल, वस्तु को जाननेमें समथ िनहीं ंहै। नहींतो हमें इसका प्रमाण दो फक त्रबना वृत्ति के आत्मा फकसी देश, काल, वस्तु का अनुभव करता है। लिणप्रमाणाभ्यां वस्तुमसद्धिः न तु प्रतीज्ञावाक्येन-लिण प्रमाण से वस्तु की मसद्धि होती है, प्रततज्ञावाक्य से नहीं। तो इस पर वेदांत कहता है फक देखो अनुभव करो-एक वृत्ति अन्द्तःकरण से उदय हुई और इस शधद र्वषयमें आई और दूसूरी वृत्ति अभी उदय नहीं ंहै, इन दोनों वृत्तियों की मध्यमावस्था को 'म'ै आत्मा जानता हूँ फक नहीं?ं जानता हूँ। वृत्ति रहहत होकर जानता हूँ या वृत्ति सहहत होकर जानता हूँ? वृत्ति रहहत होकर जानता हूँ। देखो जाग्रत अवस्था जा रही है और सुषुप्तत अवस्था आई नहींहै, तो इन दोनों संधियों यानी मध्यावस्था को म ैआत्मा जानता हूँ फक नहीं?ं जानता हूँ। वृत्ति रहहत होकर जानता हूँ या वृत्ति सहहत? वृत्ति रहहत होकर जानता हूँ। यहाँूपर न्याय अपना बोररया-त्रबस्तर लेकर भाग जाता है तो इससे मसद्ि होता है फक मुझ भगवान आत्मा को फकसी भी देश, काल, वस्तु का अनुभव करने ़के मलए फकसी उपकरण की आवश्यकता नहींहै। प्जस चीज का 'म'ै अनुभव करता हूँ तो अनुभव करनेके मलए इप्न्द्रयाहदक उपकरणों की जरूरत मुझ आत्मा को नहीं पड़ती। हा–ूँउसे अमभव्यक्त (जाहहर) करने के मलए मुझ आत्मा को इप्न्द्रयों की जरूरत पड़ती है। कहने का मतलब यह फक 'म'ै आत्मा तनत्यज्ञान स्वरूप प्रज्ञानघन हूँ।

देहं च नश्वरर्वन्स्थतरुुत्थतंवा
भसद्धो न पश्यनत यतोऽध्यगत्स्वरुपर् ्।।

(11 - 13 - 36)

इस तरह जो स्वरूप में प्स्थत है उसका दैवादपेतमुत दैववशादुपेुतंवासो यथा पररकृतं ं महदरामदान्द्िः। जैसे महदरा पीकर व्यप्क्त इतना मदान्द्ि हो जाता है फक उसका वस्त्र भी शरीर से यहद धगर जाय तो उसे इसका भान नहीं होता, उसे होश ही नहीं ंरहता। इसी प्रकार ब्रह्मानंद रूपी महदरा को पान करके जो योगी उन्द्मि है, वह संसार से परे रहता है और यहद दैवयोग से उसका शरीर पात भी हो जाय तो उसे इसका भान नहीं ंहोता फक अब यह शरीर न रहा।

खे ध्र्ये कुरुचात्र्ानर्ात्र्ा ध्र्ये च खं कुरु । सवं
ंच खर्यंकृत्वा न ककन्छचदवप धचनतय ।।

अपनी आत्मा को आकाश में देखो और आकाश को अपने 'म'ै आत्मा में देखो। सारे चराचर को आकाशमय करके कुछ भी धचंतंन न करो-जाग्रत अवस्था स्वतन में नहीं, स्वतनावस्था सुषुप्तत गाढ़ी नींद में नहीं, सुषुप्तत अवस्था जाग्रत और स्वतन में नहीं। इन अवस्थाओंका एक-दूसूरे में व्यमभचार है, परन्द्तु'म'ै आत्मा इन

तीनों अवस्थाओं में एकरस रहता हूँ। मुझ भगवान आत्मा का इन अवस्थाओं में अव्यमभचार है। ऐसा प्जसको तनश्चय है वही प्स्थतप्रज्ञ है, वही बंनि से मुक्त है। फफर उसे संसार स्वतन के प्रतत आस्था नहींरहती। इस प्रकार हंस रूप में भगवान ने सनकाहदक ऋर्षयों को उनके प्रश्नों का उिर देकर आत्मतत्व का सािात्कार कराया। यही हंसोपाख्यान है और इस समय की कथा का यहीं ़उपसंहार है।

श्रीकृष्ण गोववंदं हरे ुरारे, हे नाथ नारायण वासुदेव ।।

सततम हदवस

परीक्षित मिो

24-2-1969, प्रातः 10.00 से 12.00 बजे तक

अनन्द्त नाम, रूपों में अमभव्यक्त, अहमत्वेन प्रस्फुररत, महामहहम स्वात्म- स्वरूप सकल चराचर एवं ं समुपप्स्थत आत्मप्जज्ञासुगणः -

उविष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्ननबोधत ।।

(कठो.)

अनाहदकाल से अर्वद्या की घोर तनरा में सोनेवालों भव्य जीवो ! 'उरि्ष्ठत'-उठो, स्वस्वरूप भगवान आत्मा में जागो और फकसी श्रे्ष्ठ महापुरुष के उपसन्द्न होकर अपना आत्मकल्याण करो-अनन्द्त जन्द्मों के पूवाप्जिति पुण्य उदय होने पर यहाँूपर श्रीमद् भागवत परमहंस संहहता के माध्यम से आत्मतत्व का तनरूपण हो रहा है प्जसकी आज पूणाहुितत है। प्जस समय योगेश्वर भगवान की कृपा से महाभागवत श्री उद्वि को आत्म सािात्कार हो गया, उसी समय भगवान को उद्विजी दण्ड प्रणाम कर द्वाररकापुरी छोड़कर बदररकाश्रम को चले गये। भगवान द्वाररकापुरी से यदुवंुमशयों को लेकर प्रभासक ि़ेि पहुँचे। वहाँू पर ब्राह्मणों के अमभशाप के कारण यदुवंुशीगण महदरापान करके उन्द्मि हो गये और उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई। आपसमें राग-द्वेष बढ़ा और घोर महायुद् हुआ, फफर कौन फकसको जानता है, आपस में सब लड़ मरे-प्रभु की जैसी इचछा- भगवप्चछा गरीयसी। भगवान बलराम जी यदुवंुमशयों को समझाने के मलए उठे, परन्द्तु उनकी भी फकसी ने न सुनी, उन्द्होंने ेश्री बलराम जी पर ही आक्रमण शुरू कर हदये। तो क्रोि में बलरामजी हल-मूसल लेकर दौड़े ेऔर यदुवंुमशयों का संहार हो गया। इसके बाद ही श्री बलराम जी भी अपनी योगलीला समातत कर हदये। भगवान श्रीकृष्ण पीपल के वृि के नीचेएक चरण दूसूरे पर रखकर बैठे थे, े तो जरा नामक व्यिा ने भगवान के कमल- चरणों की रेखाओं के हदव्य प्रकाश को मृग की आँूख की ज्योतत समझकर बाण मारा। लीला समाप्तत का कोई न कोई तनममि कारण होता है। बाद में जब

 व्यिा आया और देखा तो उसे बहुत दु:ख हुआ और उसने िमा प्राथनिा की। जब परमिाम जाने लगे तो भगवान ने
सारथी के हाथ संदेश भेजा फक द्वाररकापुरी में जो यदुवुंशी रह गये हैं, उन्द्हें कह देना फक यहाूँजो यदुवुंशी आये थे वे मर गये और तुम लोग द्वाररकापुरी छोड़ दो। कारण, द्वाररकापुरी आज के सातवें हदन जलमग्न हो जायेगी। इसमलए शीघ्र से शीघ्र द्वाररकापुरी छोड़कर बाहर तनकल जाय।ें अब म ैंअपनी योगलीला समातत करूंगा और मेरे संकल्प द्वारा तनममति जो द्वाररकापुरी हैं वह समुर में डूब जाएगी। मेरे ही संकल्प से यह पुरी समुर के बीच तनममति हुई थी। अब वह नहीं रहेगी। भगवान श्रीकृष्ण उन्द्हींयदुवुंमशयों को प्राभसक िे ले गये थे ेजो सोलह हजार एक सौ आठ रातनयों से उत्पन्द्न हुए थे और बाकी सब द्वाररकापुरी में ही थे। जब भगवान परमिाम जानेके मलए प्रस्तुत हुए तो ब्रह्माहदक देवता आकाश मंडल से नीचे उतरे और स्तुतत करने लगे। उसी समय देवताओं के ही मंडल में भगवान ने अपनी योगलीला समातत कर दी। तत्पश्चात् ्भगवान के परमिाम जानेके बाद ही कमलकाल आ गया। श्री स्वामी शुकदेव जी फफर आगे जो यदुवुंशी और अनेकानेक राजे-महाराजेहोंगे उनका वणनि फकये हैं। फकसका राज्य फकतनेवषों का होगा और उनके पुि-पौि फकतनेहदन राज्य करेंगे आहद वणनि फकये हैं। स्वामी शुकुदेव जी राजा परीक्षित से कहते हैं-यह बारहवें स्कन्द्ि के पाचूँवें अध्याय में वर्णति है-

अत्रानुवण्यतेमऽभीक्ष्णं ंववश्वात्रा भगवानहररः ।
यस्य प्रसादजो ब्रह्मा रुद्रः क्रोधसरुदुभवः ।।

(12 - 5 - 1)

राजन् ्! आज तो श्रीहरर भगवान वर्श्वात्मा को ही म ैंकह रहा हूूँ। अब कथा भाग नहीं ंरहा, सब सुना चुका।

अत्रानुवण्यतेमऽभीक्ष्णं ंववश्वात्रा भगवानहररः ।
यस्य प्रसादजो ब्रह्मा रुद्रः क्रोधसरुदुभवः ।।

(12-5-1)

त्वंतुराजनर्ररष्येनत पिुबुदुधधभर्ां जदह ।
न जातः प्रागभूतोऽद्य देहवत्वं न नङ्ङ्षयभस ।।

(12 - 6 - 2)

परीक्षित ! अभी तक जो तू अपनेआपको छः उममियों वाला शरीर मानकर जन्द्म मरण वाला मानता था, यह तेरी महान भूल है, ऐसी पशुबुद्धि का नाश कर। तू ूभगवान आत्मा न जन्द्मा है और व भर्वष्य में मरेगा। तनम्नमलर्खत शरीर की उममियाूँ हैं-जायते, अप्स्त, विति, र्वपररणते, अपिीयते, मृयुते-ेगभिान होता है, पैदा होता है, बढ़ता है, युवा होता है, वृद्ि होता है, मरता है। ये छः उममियाूँ र्वकार-शरीर की है, म ैंआत्मा की नहीं। जब म ैंशरीर के िमों को अपना िम िमान लेता हूूँ तब म ैंवणी हूूँ, आश्रमी हूूँ, स्िी हूूँ, पुरुष हूूँ, बालक, युवा, वृद्ि हूूँ

इत्याहद मानता हूँ। जब अपने आपको जीव मानता हूँ तब जीव के िमों को अपने ऊपर आरोर्पत करता हूँ फक म ें सुखी हूँ, दु:खी हूँ, स्वगी-नरकी हूँ, िमी-अिमी हूँ, पुण्यी-पापी हूँ, बद्-मुक्त हूँ, ज्ञानी-अज्ञानी हूँ आहद। इस िारणा को पशुबुद्धि कहतेहैं, तो इस पशुबुद्धि का अब नाश कर। आज के पहहले भी तू ूथा और आगे भी रहेगा, तेरा कभी नाश नहीं ंहै। इस पर हटक जा- आज के पहहले पैदा नहीं ंहुआ था और न आगे मरेगा-ये सब पशु ुबुद्धि की िारणाय ेंहैं।

त्वंतुराजन् ्रररष्येनत पिुबुद्धधभर्ां जदह ।
न जातः प्रागभूतोऽद्य देहवत्वं न नङ्क्ष्यभस ।।

(12 - 6 - 2)

देह के नाश हो जानेसे जीवात्मा का नाश नहींहोता। इसमलए परीक्षित ! तू यह जान ले, इस समय इसका अनुभव कर-

न भववष्यभस भूतूवा त्वंपुत्रपौत्राददरूपवान् ्।
बीजाङ्कुरवद् देहादेव्वव्यनतररक्तो यथानलः ।।
यस्मात् ्पश्यनत देहस्य तत आत्मा ह्यजोऽर्ः ।। (12-5-3)

(12 - 5 - 4)

स्वतन में स्वतनदृष्टा देख रहा है फक उसका मसर कट गया है, तो भला बताओ प्जसका मसर कट गया है क्या वह अपने कटे हुए मसर को देखेगा? स्वतननर का मसर कटा है, स्वतनरष्टा का नहीं। उस कटे हुए मसर को जो देखता है, अनुभव करता है, वही अजर-अमर आत्मा अवाङ्मनसगोचर तू ूहै।

घटे भभनने यथाऽऽकिा आकिाः स्याद् यथा पुरा ।
एवं देहेर्तृ जीवो ब्रह्म सम्पद्यते पुनः ।।

(12-5-5)

परीक्षित् ्! घड़े ेके फूट जानेसे घड़े ेके अंदर का जो पोल आकाश है वह कहीं नहीं ंजाता, क्योंफक कहींबाहर से आया नहीं है, वह महाकाश हो जाता है। क्योंफक वह अमभन्द्न है, घटाकाश महाकाश एक ही है। इसी तरह शरीर और जीवात्मा को समझो। शरीर के छूट जानेपर जीवात्मा कहीं ंनहीं आता जाता, वह तो परमतत्व है, परमात्मा है। इसमलए परमात्मा हो जाता है, क्योंफक वस्तु का कहींआना-जाना नहींहै।

चोददतो ववप्रवाक्येन न त्वां धक्ष्यनत तषकः ।
र्तृयवो नोपधक्ष्यन्नत र्तृयूनांर्तृयुरीश्वरर् ्।।

(12-5-10)

र्वप्रवाक्येन चोहदतः पे्रेररतः तिकः सपःर्मृतूयूनांमृतूयुमीश्वरम् ्त्वांआत्मानंन िक्ष्यतत। ब्राह्मण वाक्य द्वारा पे्रेररत तिक सप िअभी डसने आयेगा, उस समय तू यही िारणा करना फक मुझ अजर, अमर, अर्वनाशी भगवान आत्मा को तिक नहींडसेगा, क्योंफक म ैंकालों का काल महाकाल भगवान आत्मा हूूँ। कैसे? जब तुम आज सोकर उठे तो घड़ी में क्या बजा था। मान लो 5-6 बजेथा, तो 6 बजेनाम के काल को 'म ैं ने भिण कर मलया। 'म ैं नहींखाया तो फफर और फकसने उस 6 बजे ेवाले काल को खाया? 'म ैं ने। यहद 'म ैं आत्मा 6 बजे न होता

तो 6

बजेके काल को 'म ैं कैसे जानता? तो 6 बजे को खाया 7-8-9 कालों को खाया-चतुयुगि सहस्र्ाणि हदनमेकं र्पतामह सतयुग, िेता, द्वापर, कमलयुग, ये चारों युग जब एक हजार बार बीत जाते हैं तब ब्रह्मा का एक हदन होता है। हजार चौकड़ी युग का ब्रह्मा का एक हदन होता है और ब्रह्मा की इतनी ही बड़ी रात्रि होती है। इस तरह ब्रह्माजी सौ वष िके हो जाते हैं। इस तरह ब्रह्माजी सौ वष िके हो जाते हैं तो फफर ब्रह्माजी भी लुढ़क जाते हैं। फफर दूसूरे ब्रह्मा पैदा होते हैं। अभी जो समय चल रहा है उसे ब्राह्मण र्वद्वान संकल्प में क्या पढ़ते हैं-द्र्वतीय प्रहरिो श्री श्वेतवाराहकल्पे-ब्रह्माजी अब अिेड़ हो गये हैं। 50 वष िब्रह्माजी का बीत चुका है। 51 वें वष िका पहला हदन है और मसफि दस बजा हैं। इसे दूसूरा प्रहर कहते ेहैं। प्जस तरह तुम्हारे यहाूँके हदन को सोम, मंगल, बुि, बृहस्पतत, शुक्र, शतन, रर्व कहते हैं इसी तरह ब्रह्माजी के हदन को कूम िकल्प, मत्स्य कल्प, वाराह कल्प इत्याहद कहते हैं। ब्रह्माजी के इस हदन का नाम वाराह कल्प है। ब्रह्माजी के इसी कल्प में भगवान का वाराहावतार हुआ था। इसमलए जब ब्रह्मा का हदन होता है तो रात्रि भी होती है और जब हदन, रात है तो उसका नाश भी है। काल तो ब्रह्माजी को भी नहीं ंछोड़ता, खा जाता है। फकसी को नहींछोड़ता और इसका वेग इतना तेज है- गतत इतनी प्रखर है फक िड़ाड़ वतमिान भूत हो रहा है और भर्वष्य वतमिान-

जो कालहूू कर काल भयंकर। वरनत उग्र िारदा िंकर ।।

तो 'म ैं ने 8 बजे ेको खाया, 9-10 बजेको खाया। परन्द्तु मुझ आत्मा भगवान को खाने वाला कोई नहीं है। परीक्षित् ्को इस प्रकार बोि कराकर-

चोददतो ववप्रवाक्येन न त्वां धक्ष्यनत तषकः ।

रृतूयवो नोपधक्ष्यन्नत रृतूयूनांरृतूयुरीश्वरर् ्।।

(12 - 5 - 10)

इसमलए तू मृतूयुओंका मृतूयु महाकाल भगवान आत्मा है। अस्तु-ब्राह्मण वाक्य द्वारा पे्रेर्षत तिक आयेगा तो तुझेनहीं ंकाटेगा क्योंफक तू तो महाकाल है।

दिनतंतषकं पादे लेभलहानं ववषाननैः ।

न द्रक्ष्यभस िरीरं च ववश्वंच पृथृगात्नः ।।

(12-5-12)

अभी तिक जीभ लपलपाता हुआ आयेगा, उस समय फकस िारणा में प्स्थत होना। तू ्क्या तनश्चय करना-प्जतने भी मरनेवाले बैठे हो, अरे ! शंका मत करो-प्जतनेभी पैदा होतेहैं सभी काल कलेवा होते हैं, मरते हैं। म ैंभगवान आत्मा हूँ ऐसी भावना फकस हृदय में उठती है? तो मरने वाले बैठे हो कहे तो क्या बुरा कहे। स्वामी शुकुदेव जी महाराज परीक्षित् ्को अनुभव करा रहे हैं- अभी तिक जीभ लपलपाते हुए तुझेडसने आयेगा तो तू क्या तनश्चय रखना, फकस मसद्धांत में प्स्थत रहना फक म ैंभगवान आत्मा हूँ। शरीर को और समस्त वंश्व प्रपंच को अपनेस्वरूप भगवान आत्मा से मभन्द्न नहीं देखना। यही अंत समय यानी मृतूयु काल की िारणा है। आत्मैवेद् सवम्ि्- म ैंआत्मा हूँ, मुझ आत्मा से जब एक कण भी मभन्द्न नहींहै, तो काल भी तो 'म'ैं ही हूँ। अब यहाँपर प्रश्न होता है फक पहहले तो शरीर से मभन्द्न करके आत्मा को बताया गया और बाद में कहते हैं फक शरीर भी 'म'ैं ही हूँ। तो देखो पहले श्लोक में अन्द्वय है और दूसूरे श्लोक में व्यततरेक है। पहले श्लोक में कहतेहैं फक शरीर के नाश हो जाने पर, देही जो जीवात्मा है उसका नाश नहीं ंहोता इसमलए शरीर नहीं ंम ैंआत्मा हूँ-शरीर से अलग आत्मा को जानना और दूसूरे श्लोक में कहते हैं फक अपने स्वरूप भगवान आत्मा से वंश्व (प्रपंच) को अलग नहींदेखना ? यही अनुभव करना फक शरीर और वंश्व (प्रपंच) भी म ैंआत्मा ही हूँ। शुरू में कहे, शरीर नहींम ैंआत्मा हूँ-यह वेदांत की प्रफक्रया है, इसे अन्द्वय कहते ेहैं। शरीर भी 'म'ैं हूँ-इसे व्यततरेक कहतेहैं। यह वेदांत का मसद्धांत है और शरीर तीन काल में है ही नहीं, 'म'ैं ही 'म'ैं हूँ-यह वेदांत है। अब यहाँ पर प्रश्न होता है फक पहहले तो शरीर से मभन्द्न करके आत्मा को बताया गया और बाद में कहते ेहैं फक शरीर भी 'म'ैं ही हूँ। तो देखो पहले श्लोक में कहतेहैं फक शरीर के नाश हो जानेपर, देही जो जीवात्मा है उसका नाश नहीं ंहोता इसमलए शरीर नहीं म ैंआत्मा हूँ-शरीर से अलग आत्मा को जानना और दूसूरे श्लोक में कहते ेहैं फक अपनेस्वरूप भगवान आत्मा से वंश्व (प्रपंच) को अलग नहींदेखना? यही अनुभव करना फक शरीर और वंश्व (प्रपंच) भी म ैंआत्मा ही हूँ। शुरू में कहे, शरीर नहींम ैंआत्मा हूँ-यह वेदांत की प्रफक्रया है, इसे अन्द्वय कहते ेहैं। शरीर भी 'म'ैं हूँ-इसे व्यततरेक कहतेहैं। यह वेदांत का मसद्धांत है और शरीर तीन काल में है ही नहीं,ं 'म'ैं ही 'म'ैं हूँ-यह वेदांत है। मशव ! देखो, अब तीनों का अंतर-पहहले प्रफक्रया, फफर मसद्धांत और फफर वस्तु(वेदांत) । देखो, सुनो ध्यान से-यह आखरी उपदेश है-बड़ी सरलता के साथ समझायगें। सोना है- तो सोना पीला होता है, मुलायम होता है और वजनदार होता है। पीला, वजन, मुलायम ये तीन लिण प्जसमें हो उसे सोना कहतेहैं। यहद सोना अपनेपीलापन को, वजनपनेको, मुलायनपनेको यानी अपनेस्वरूप को भूल जाये और अपनेको कणफूिल, बाली, टॉतस, कंगन, लाकेट, चूड़ी, अंगूठी, चेन इत्याहद आभूषण मानेतो यह सोनेका अज्ञान है। सोना अपने वजनपन, पीलापन और मुलायमपने ेको भूलकर अपने आपको आभूषण मानने ेलगे, तो क्या वह सोना रहेगा? सोनेका आभूषणामभमान हटाने ेके मलए उसे अपनेस्वरूप का अनुभव करना होगा फक वह पीला, वजनदार और मुलायम है। उस सोनेसे यही कहना होगा फक ऐ सोना। प्जस आभूषण को तू अपना स्वरूप मानता है वह तूनहींहै, उसको आभूषण से अलग करके बताना पड़ेगा फक तू आभूषण नहींवरन पीला, वजनदार एवं मुलायम तीन लिणों वाला सोना है, यही तेरा असली स्वरूप है-यही प्रफक्रया है। अब चलो मसद्धांत समझाय।ें ऐ

सोना ! देख तुझ स्वण िके त्रबना क्या आभूषण है और जब नहीं ंहै तो आभूषण भी तू ूसोना ही है-यही मसद्धांत है। अब वस्तु का अनुभव करायें। ऐ सोना ! क्या तुझ स्वण िदेश में आभूषण है? आभूषण तो तेरे स्वरूप में तीन काल में है ही उनहीं-यही बोि है। तो सव िभगवान है, मसद्ध हुआ। भगवान देश में सभी भगवान है यह बोि है। भगवान देश में सब पदाथ िओोररत है-अब यह प्रफक्रया है। अहमप्स्म- म ैंहूूँ-यह बोि है, वेदान्द्त है। पहहले प्रफक्रया और समझायगें। पहहले भी यहाूँपर जब चतुःश्लोकी भागवत का तनरूपण फकया गया उस हदन भी प्रफक्रया समझाई गई थी परन्द्तुउस समय इतने लोग नहीं ंथे इसमलए आज और समझायगें। इतने हृदय उस समय नहीं थे–यह आर्खरी हदन है, फफर समझ लो। म ैंऔर मेरा, ये दो शधद हैं। इन शधदों का अथ िएक ही नहींहोता। मेरा संबंिवाचक शधद है और म ैंकतृिवाचक। स्वयंअपनेआपके मलए 'म'ैं कहते ेहो और अपने से संबंधित पदाथ िके मलए मेरा कहा जाता है। इसमलए 'म'ैं का मतलब मेरा नहीं ंऔर मेरा मतलब 'म'ैं नहीं-इसको खूब समझ लो। जब कहता हूूँ मेरी साइफकल, मेरा घर, मेरा डण्डा, तो यहद मेरा का अथ िम ैंहो तो म ैंसाइफकल हो जाऊूँ, घर हो जाऊूँ, डण्डा हो जाऊूँ। इसमलए मेरा का अथ ि'म'ैं नहींहोता। मेरा उसके मलए होता है, प्जससे अपना संबंि होता है। भैया ! मेरा नाम देवदि, यज्ञदि, जमुनाप्रसाद, मनोहरलाल है तो मेरा होने ेके नाते म ैंदेवदि, यज्ञदि, जमुनाप्रसाद आहद नहीं ंहूूँ। नाम तो पैदा होने के बाद रखा जाता है। यहद पहले से ही मेरा नाम देवदि होता तो जब म ैंपैदा हुआ तभी घर के लोग कहते-भाई ! दौड़ो, देवदि पैदा हुआ है परन्द्तु ऐसा नहीं होता। मेरा नाम देवदि है, इसमलए नाम से म ैंअलग हुआ। मेरा का अथ ि 'म'ैं नहीं होता। तो मेरा हाथ कहने से ही मालूम होता है फक म ैंहाथ, पैर, शरीर आहद नहींहूूँ और म ैंशरीर भी नहीं, शरीर तो पंचमहाभूतों का काय िहै। प्जस प्रकार मकान ईंटा, चूना, गारा से बनता है। इसी तरह शरीर भी मांस, मज्जा, रक्त आहद से बना है। प्जस तरह मकान में खम्भे होतेहैं वैसे ही इस शरीर रूपी मकान के हाथ पैर खम्भे हैं। मकान में बप्ल्लयाूँ लगी रहती हैं, शरीर में हड्डी रुपी बप्ल्लयां लगी है। मकान में दरवाजेहोतेहैं तो इस शरीर में नौ दरवाजे होतेहैं। मकान घास-फूस से छाते हो तो यह शरीर चमड़ी से छाया गया है। जैसे मकान पीला, लाल, सफेद आहद रंग से पोता जाता है वैसे ही यह शरीर भी मकान की नाई कोई गोरा, तो कोई काला, तो कोई साविूँला है और जैसे 'म'ैं मकान नहींवैसे ही 'म'ैं शरीर नहीं। हाूँ–शरीर में रहने की गरज से 'म'ैं कहता हूूँ फक यह मेरा शरीर है। तो न 'म'ैं शरीर हूूँ, न मेरा शरीर है। शरीर पंचभूतों का काय िहै, मल, मूत्र का भांड है, माता-र्पता के रज, वीय िसे बना है। इसे अचछी तरह समझ लो। जब 'म'ैं शरीर न मेरा शरीर और यह शरीर ही बालक, युवक और वृद्ध होकर नाश हो जाता है। तो शरीर ही उत्पन्द्न होता है और शरीर ही मर जाता है। 'म'ैं तो ज्यों का त्यों हूूँ। शरीर मरता है तो 'म'ैं मरता हूूँ, यह तुम्हारी समझ गलत है। शरीर घटता, बढ़ता है 'म'ैं नहीं। जैसे फकसी ममत्र के साथ तुम फकसी के घर गये तो वह तुमसे पूछता है फक साथ में जो महाशय आये हैं उनकी क्या तारीफ है, 'म'ैं इनको नहीं पहचानता। तो तुम कहते हो फक ये मेरे बचपन के साथी हैं। 'म'ैं इनके साथ प्रायमरी पढ़ा, हाईस्कूल पास फकया, कॉलेज में पढ़ा। जब अपने ममत्र के साथ तुम प्रायमरी में पढ़ते थे,े तो क्या तुम ऐसे ही थे जैसे अब हो? क्या उस समय भी तुम्हारी दाढ़ी, मूँछ थी? तो उस समय तुम्हारा और तुम्हारे ममत्र का शरीर छोटा-सा था। तो, शरीर ही तो बदला। यहद 'म'ैं शरीर होता तो म ैंआत्मा भी बढ़ा होता, बदल जाता। तो फफर यह याद फकसको रहती फक बचपन में 'म'ैं इसके साथ पढ़ा था। तो शरीर बढ़ता-घटता है, 'म'ैं नहीं। नहीं तो म ैंआत्मा भी शरीर के साथ फफर बुड्ढ़ा हो जाता। शरीर के मरनेसे 'म'ैं आत्मा मरता नहीं। 'म'ैं फकसी का नहीं ंऔर न कोई मेरा है। तो इसी तरह 'म'ैं न ब्राह्मण, न क्षत्रिय, न

वैश्य, न शुर, न संन्द्यासी, न उदासी, न तनवाणि ी, न तनमोही, न रिास्वामी, न वल्लभी, न प्रणामी, न जयकृष्णी, न मुसलमान, न ईसाई, न यह पंथी, न वह पंथी। अभी भारत में दो हजार नौ सौ तनन्द्यानबे पंथ हैं और हदन-प्रततहदन बनते ही जा रहे हैं। आपस में न बनी, चलो एक पंथ और तनकल गया। तो हमें कोई पंथ नहींबनाना है। अलग-अलग पंथ तनकलते चले जा रहे हैं। खैर, ये सब पंथ-पंथाई शरीर से संबंधित हैं और न 'म' ैं शरीर, न मेरा शरीर। तो फफर क्या म ैंमन हूँ? मेरी बुद्धि कहता हूँ इसमलए म ैंबुद्धि में भी नहीं। क्या म ैंप्राण हूँ? नहीं। मेरा प्राण कहता हूँ इसमलए म ैंप्राण नहीं। तो, न म ैंशरीर, न नाम, न हाथ-पैर, न मुँह, न मन, बुद्धि, धचि, अहंकार, प्राण ये सब संबंविाचक हैं। कहते ेहो-मेरी आत्मा-हालांफक आत्मा शधद स्वयं के मलए आता है, मेरी आत्मा कहना ठीक नहीं ंहै। परन्द्तु चलो तुम्हारी ही बात सही-मेरी आत्मा। तो अब क्या बचा? 'म' ैं। तो, 'म' ैं क्या चीज हूँ-इसको प्रफक्रया कहते ेहैं। इस प्रफक्रया की आवश्यकता इसमलए है फक अनाहदकाल से यह िारणा बन रही है फक म ैंसाढ़े तीन हाथ का शरीर हूँ। इस अज्ञान का नाश करना जरूरी है करके प्रफक्रया समझाई जाती है- फक 'म' ैं शरीर नहीं, ं न मेरा शरीर है, 'म' ैं आत्मा हूँ। दिू में मक्खन हदखाई नहींदेता-जब तक फक मन्द्थन न फकया जाये। तो यह प्रफक्रया मन्द्थन करना है। म ैंआत्मा सव िमें ओत-प्रोत हूँ, रग-रग में हूँ-तो अभी र्वचार रूपी मथानी से मन्द्थन कर रहे हैं-र्वचार करने से शरीर से म ैंआत्मा अलग हो जाता हूँ। सुनार सोनेको गलाकर खोट भाग अलग और खरा भाग अलग करता है। प्जसको मेरा कहते ेहैं-वह खोट है, उसको अलग करो और 'म' ैं को ग्रहण कर लो। मेरा मन, मेरा प्राण, मेरी आत्मा, अब बाकी क्या बचा? 'म' ैं। चलो, र्वचार करें फक 'म' ैं क्या हूँ? अचछा एक बात और सुन लो-स्वामी जी अपने'म' ैं को 'म' ैं कहते हैं तो क्या मेरा 'म' ैं स्वामीजी के 'म' ैं से अलग है? नहीं। समझ लो फक जो 'म' ैं इस समय गद्दी से आत्मा का ज्ञान करा रहा है, उपदेश कर रहा है, तत्व का बोि करा रहा है, वही 'म' ैं आत्मा सव िस्थानों से सुन रहा है। हाँ, शरीरों का भेद है। सव िका सव िआत्मा एक का एक ही है। जो सब में समान रूप से प्रस्फुररत है। चलो-सब शरीर से जो 'म' ैं सुन रहा है, वही 'म' ैं एक शरीर से उपदेश कर रहा है। ये सारे शरीरों में 'म' ैं एक हूँ। समझो ! कभी शरीर में कहीं ंददि हो जाय, कांटा लग जाय, मसर में ददि हो जाये तो 'म' ैं सब स्थानों से ददि को जानता हूँ। पैर का ददि पैर से, मसर का ददि मसर से। 'म' ैं शरीर में यहद एक जगह होता तो शरीर के उसी भाग के ददि को जानता-प्जसमें 'म' ैं होता, परन्द्तु 'म' ैं सारे शरीर में व्यापक हूँ इसमलए शरीर के सभी भागों के दुःख-सुख को जानता हूँ, अनुभव करता हूँ।

ॐ !!!

***

महर्ष िमुकुत.

महर्ष िमुक्त जैसे थे वैसे ही थे। यहद यह कोई दावा करे फक ऐसे थे और वैसे थे, े तो उनका दावा एकदम गलत ही होगा। अपनेपररचय में वे ेस्वयंकहा करते थे ेफक हैं तो हम अजन्द्मा लेफकन हमें आप लोगों के खाततर आना पड़ा।

उन्द्होंने यह भी कहा था फक " भगवान को तो जान सकते हो क्योंफक तुम्हारा आत्मा है परन्द्तुमुक्त को समझना बहुत ही कहठन है (सम्भव नहीं)ं" आत्मा का लिण होता है परन्द्तुइनका तो कोई लिण ही नहीं ंथा। ऐसे अलिण को यहद कोई जान, जाय तो बन्द्ध्या का पुि मसंहं का मशकार कर सकता है।

अपनेपचास वषों के अनवरत प्रचार में प्जस मसद्िांि या िम िकी इन्द्होंने प्रततष्ठा की उस िम िको महात्मा करपािी जी ने 'प्ुन्द्िा वेदान्द्त' कहा है और यह भी कहा उन्द्होंने फक अभी र्वश्व में प्ुन्द्िा वेदान्द्त (सत्य मि)ि का प्रचार कोई कर रहे हैं तो वे महर्षि िमुक्त ही हैं।

• शास्त्रीं ने इनका पररचय इस प्रकार हदया है-

यस्यानतं नादद ध्र्यंनदह कर चरणंनार् गोत्रं ंन सूत्रर्,

नो जानतनैवै वणाःम नदह भवनत पुरुषो न नपुंसो न च स्त्री।

नाकारं नैवकारं नदह जनन र्णं नान्स्त पुण्यं न पापर्,

तत्वंनो तत्वरे्कं सहज सर्सं, सदगुरूं तननराभर् ।

प्रकािक

र्वष मरुक्तानुभूनत सादहत्य प्रचारक सभर्नत

रुख्यालय-आननद भवन, 61/152, बंधवापारा,

पुरानी बस्ती, रायपुर (छ.ग.)

www.maharshimukta.org